चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा

(प्रथम खण्ड)

प्रस्तुति

आर्यिका श्री १०५ विज्ञानमति माता जी

प्रकाशक

श्रावक संस्कार साहित्य केन्द्र

भोपाल (मध्यप्रदेश)

चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा (प्रथम खण्ड)

प्रस्तुति : आर्यिका श्री १०५ विज्ञानमति माताजी

संयोजन : आर्यिका श्री १०५ आदित्यमति माताजी

सम्पादन : डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी, जोधपुर

संस्करण : चतुर्थ, जनवरी, २०२३

आवृत्ति : ११००

पुण्यार्जक : श्रीमती संगीता जैन-पदम जैन, आर्जव जैन, संस्कृति जैन
जैननगर, लालघाटी, भोपाल (मध्यप्रदेश)

प्राप्तिस्थान : श्रावक संस्कार साहित्य केन्द्र
तीर्थधाम श्री नन्दीश्वर द्वीप जिनालय
जैन नगर, लालघाटी, भोपाल-४६२०३२
९४२५३-७४८९७

संकल्पना : निधि कम्प्यूटर्स, जोधपुर

मुद्रक : विकास ऑफसेट प्रिंटर्स एण्ड पब्लिसर्स
भोपाल (मध्यप्रदेश)

卐 सम्पादकीय 卐

जैन मत में उपदेश चार अनुयोगों के माध्यम से दिया गया है। पूजा के अन्त में बोले जाने वाले शान्तिपाठ में चारों अनुयोगों का क्रम इस तरह बताया है - **प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः,** यह क्रमपद परम्परा से चल रहा है और यह क्रम स्वाध्याय के लिए अनुकरणीय भी है। परन्तु आज के जैन परिदृश्य पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि सबसे कम प्रतिशत करणानुयोग के स्वाध्यायियों का है। **त्रिलोकसार टीका** में ''**केवलज्ञानसमानं करणानुयोगनामानं परमागमं**.....'' इन शब्दों द्वारा करणानुयोग को केवलज्ञान समान कहा है, परमागम कहा है।

करणानुयोग में सूक्ष्मतम कर्मसिद्धान्त तथा लोकरचना, कालप्ररूपण, तीर्थंकरों का अन्तराल आदि प्ररूपित होते हैं। इस अनुयोग के स्वाध्याय से बुद्धि अतिशय सूक्ष्मज्ञ हो जाती है तथा तत्त्वज्ञान निर्मल होजाता है। **मोक्षमार्ग प्रकाशक** में **पं. टोडरमल जी** लिखते हैं –

''बहुरि करणानुयोगविषै जीवनि की वा कर्मनि का विशेष वा त्रिलोकादिक की रचना निरूपण करि जीवनि को धर्मविषै लगाईए है।......बहुरि ऐसे विचारविषै उपयोग रमि जाय, तब पाप प्रवृत्ति छूटि स्वयमेव तत्काल धर्म उपजै है। तिस अभ्यासकरि तत्त्वज्ञान की प्राप्ति शीघ्र हो है। बहुरि ऐसा सूक्ष्म यथार्थ कथन जिनमत विषै ही है, अन्यत्र नाहीं, ऐसे महिमा जानि जिनमत का श्रद्धानी हो है।..... इस अभ्यास तैं तत्त्वज्ञान निर्मल हो है।..... तत्त्वज्ञान निर्मल भए आप ही विशेष धर्मात्मा हो है। बहुरि अन्य ठिकाने उपयोग को लगाईए तो रागादिक की वृद्धि होय अर छद्मस्थ का एकाग्र निरन्तर उपयोग रहे नाहीं। तातैं ज्ञानी इस करणानुयोग का अभ्यास विषै उपयोग को लगावै है।''

करणानुयोग में गणित वर्णन की मुख्यता है। ग्रन्थ भी प्राकृत, संस्कृत के हैं, इस प्रकार विषय और भाषा-दोनों की दुर्बोधता के कारण इसके अध्ययन में सहज प्रवृत्ति नहीं होती परन्तु आज प्राय: समस्त ग्रन्थों का हिन्दी भाषा में अनुवाद हो चुका है और युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप इन मूल ग्रन्थों के आधार से अनेक लघु ग्रन्थ भी लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। नियमित सामूहिक स्वाध्याय के अभाव की पूर्ति, आज लघु अवधि के शिक्षणशिविरों के आयोजनों के माध्यम से करने का प्रयास किया जा रहा है अत: तदनुरूप 'प्रश्नोत्तरी' विधा में नवीन साहित्य का निर्माण भी हो रहा है और सार स्वरूप करण, भाव, गुणस्थान, मार्गणा, चौबीस ठाणा आदि करणानुयोगी विषयों पर लघु रचनाएँ भी प्रकाश में आरही हैं।

बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से ज्ञानप्राप्ति की एक दीर्घ परम्परा रही है जो आज भी जीवन्त है। **षट्खण्डागम** के **प्रथम खण्ड जीवस्थान** में गुणस्थान, मार्गणा, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण आदि बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से जीवराशि का विस्तृत अध्ययन है। **धवला टीका** में भी **आचार्य वीरसेन** ने प्रत्येक भेद में बीस प्ररूपणाओं को घटित करते हुए आलाप बताये हैं। आलापों के माध्यम से वैविध्य

का व्यापक ज्ञान होता है। प्रारम्भ में बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से ही चर्चा की जाती रही है। **गोम्मटसार जीवकाण्ड** की **कर्णाट वृत्ति** और **जीवतत्त्व प्रदीपिका** नामक टीका में भी इन बीस प्ररूपणाओं को घटित किया गया है।

विक्रम की १६वीं शताब्दी में हुए **तारणस्वामी** ने चौदह ग्रंथों की रचना की। उनमें से एक ग्रन्थ है - '**चौबीस ठाणा**'। इसमें उन्होंने ध्यान, आस्रव, जाति और कुल इन चार स्थानों को जोड़ा और बीस प्ररूपणाएँ, 'चौबीस ठाणा' जानी जाने लगीं। तब से ये इसी रूप में अध्ययन की जाती रही हैं। विगत सदी में सन् १९७९ में **पण्डित रतनचन्द जी जैन मुख्तार** ने आचार्यकल्प १०८ श्री श्रुतसागर जी महाराज की प्रेरणा से '**गुणस्थान - मार्गणा चर्चा**' नामक लघु पुस्तक धवल, जयधवल आदि ग्रन्थों के आधार से लिखी। इसमें उन्होंने बीस प्ररूपणाओं (स्थानों) में सात स्थान-बंधप्रत्यय, ध्यान, जघन्यकाल, उत्कृष्टकाल, जघन्य अंतर, उत्कृष्ट अंतर और भाव-जोड़कर २७ स्थान सम्बन्धी आलाप घटित किये। यह पुस्तक शांतिवीरनगर श्रीमहावीरजी से प्रकाशित हुई है।

अब तक 'चौबीस ठाणा' प्रकरण केवल तालिकाओं के रूप में प्रकाशित होते रहे हैं। अब प्रश्नोत्तरों सहित उनका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है। गत माह में (स्व.) आर्यिका वर्धितमती माताजी की छठी पुण्यतिथि के अवसर पर **पूज्य आर्यिका प्रशान्तमती माताजी** द्वारा प्रस्तुत '**गुणस्थान मार्गणा में जीव-विवेचन**' (चौबीस ठाणा प्रश्नोत्तरी) पुस्तक श्रुतोदय ट-स्ट, धरियावद से प्रकाशित हुई है। इसमें प्रारम्भ में चौबीस स्थानों के भेदों के लक्षण हैं। अनन्तर प्रत्येक प्रकरण में तत्सम्बन्धी तालिका एवं प्रश्नोत्तर भी हैं। तालिकाओं की संख्या ७४ और प्रश्नोत्तरों की संख्या लगभग ६५० है।

अब आपके कर-कमलों में है पूज्य **आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी** द्वारा प्रस्तुत **चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा** का प्रथम खण्ड। इस खण्ड में गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान और संयम मार्गणा के प्रकरण संकलित हैं। प्रारम्भ में चौबीस स्थानों के नाम व भेद हैं। अनन्तर प्रत्येक भेद के सामान्य प्रश्नोत्तर, फिर तालिका, फिर विशेष प्रश्नोत्तर, फिर समुच्चय प्रश्नोत्तर दिये गये हैं। अन्त में, पाठकों की बुद्धि की परीक्षा हेतु प्रकरण से सम्बन्धित पाँच प्रकार के कुल २८ प्रश्न दिये हैं और इनके उत्तर भी लिखे गये हैं। अध्येताओं को इससे विशेष लाभ होगा।

आठ मार्गणाओं से सम्बन्धित इस विवेचन में कुल ४२ तालिकाएँ और ६३८ प्रश्नोत्तर संकलित हैं। इनका सम्यक् अध्ययन पाठकों के उपयोग को एकाग्र करेगा, ऐसा विश्वास है। पूज्य माताजी ने '**स्वकथ्य**' और '**नेपथ्य में**' कृति की उद्भावना पर प्रकाश डालते हुए अपने अनुभव को ऐसी ही अभिव्यक्ति दी है। निश्चय ही, पूज्य माताजी की यह नवीन कृति पूर्वरचित कृतियों के समान ही स्वाध्यायी बन्धुओं की सराहना का विषय बनेगी। असाधारण आत्मबल की धनी पूज्य माताजी अपनी अभीक्ष्ण ज्ञानाराधना के फलस्वरूप अपने पल-पल को शुभोपयोग में ही व्यतीत करती हैं। इन प्रश्नोत्तरों के लेखन के लिए भी पूज्य माताजी ने अनेक ग्रन्थों का गहन अध्ययन-पारायण किया है। प्रश्न का उत्तर

लिखते हुए ग्रन्थ का सन्दर्भ दिया है। मैं विदुषी **आर्यिकाश्री विज्ञानमती माताजी** के श्रीचरणों में सविनय वन्दामि निवेदन करता हूँ।

पू.माताजी की संघस्थ शिष्या **आर्यिकाश्री आदित्यमती माताजी** ने 'नेपथ्य में' लेख के माध्यम से पूज्य माताजी के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डाला है और **'चौबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा'** को प्रकाश में लाने की पृष्ठभूमि स्पष्ट की है। मैं आपका आभारी हूँ।

प्रस्तुत कृति के सम्पादन-प्रकाशन का भार मुझ अल्पज्ञ पर डालकर आर्यिकासंघ ने मुझ पर जो अनुग्रह किया है और फलस्वरूप जिनवाणी की सेवा का जो अवसर मुझे प्रदान किया है, एतदर्थ मैं पूज्य आर्यिका विज्ञानमती माताजी व उनके संघस्थ सभी आर्यिकाओं का चिर कृतज्ञ हूँ। मैं पूज्य माताजी व संघस्थ आर्यिकावृन्द के श्रीचरणों में सविनय वन्दामि निवेदन करता हूँ।

ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु **श्रीमती संगीता जैन पदम जैन, आर्जव जैन, संस्कृति जैन, जैन नगर, लालघाटी, भोपाल** (म.प्र.) ने पूर्ण आर्थिक सहयोग प्रदान किया है, एतदर्थ मैं सभी सदस्यों को हार्दिक धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों ने अपेक्षित सूचनाएँ व निर्देश भेज कर मेरे कार्य को आसान किया है, एतदर्थ मैं उनका आभारी हूँ।

तालिकाओं सहित इस ग्रन्थ के सुन्दर एवं सुसंयोजित कम्प्यूटरीकरण के लिए मैं **निधि कम्प्यूटर्स, जोधपुर** के **डॉ. क्षेमंकर** को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। स्वच्छ एवं सुरुचिपूर्ण मुद्रण के लिए **हिन्दुस्तान प्रिंटिंग हाउस** के कर्मचारी धन्यवाद के पात्र हैं।

ग्रन्थ प्रकाशन में सहयोगी सभी श्रुतप्रेमियों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ और अपने प्रमाद व अज्ञान से ग्रन्थ के सम्पादन-प्रकाशन में रही खामियों के लिए सविनय क्षमायाचना करता हूँ। शीघ्र ही, दूसरा खण्ड भी आपके कर-कमलों में पहुँचेगा।

विनीत

डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी
'अविरल', ५४-५५, इन्द्रा विहार
सेक्शन ७, न्यू पावर हाउस रोड, जोधपुर

♦♦♦

卐 स्वकथ्य 卐

लगभग ४०-५० वर्ष पहले 'चउबीस ठाणा' का एक गुटका निकला था। आज भी घरों में वृद्ध लोगों के पास वह गुटका मिलता है। 'चउबीस ठाणा' पढ़ने की कई लोगों की बहुत रुचि भी रहती है, पढ़ते भी हैं लेकिन सामान्य रूप से यदि चउबीस ठाणा का एक पाठ पढ़ते हैं तो पाँच सात मिनट में एक पाठ पूरा हो जाता है, क्योंकि चौबीस स्थानों में से जिसको हम पढ़ रहे हैं उस स्थान में कौन-कौन से स्थान के कितने-कितने उत्तर भेद पाये जाते हैं, इतना ही कथन करना होता है। इसलिए एक पाठ को हम एक-डेढ़ घंटे तक नहीं पढ़ सकते हैं। वास्तव में, चउबीस ठाणा को यदि गहराई से पढ़ा जावे तो एक-एक पाठ को पढ़ने में घंटों लग सकते हैं।

'चउबीस ठाणा' एक गहन वन है जिसमें चौदह मार्गणा रूप फलों से लदे लाखों वृक्ष हैं, गुणस्थानादि की प्ररूपणा रूप खुशबू वाले हजारों बेल-बूटे हैं, एक मार्गणा से दूसरी मार्गणा तथा इनमें भी निर्वृत्यपर्याप्तक, पर्याप्तक, विग्रहगति आदि रूप सैकड़ों पगडण्डियाँ हैं जिनके माध्यम से एक-एक वृक्ष, लता तथा फुलवारियों में पहुँचकर उनमें घूमने का आनन्द लिया जा सकता है। ऋषि-मुनि तथा प्राज्ञजन इसी वन में अपने मन मर्कट को रमाते रहते हैं, विद्वान् रूपी पक्षी कलरव करते हुए चित्त प्रसन्न करते हैं।

हम भी इसका आस्वादन ले सकते हैं। ध्यान के समय अथवा बीमारी, उपसर्ग, परिषहादि के समय इनमें डूबकर सहज रूप से साधक समता भाव को धारण कर सकता है। सच में जब ज्येष्ठ-वैशाख का महीना आता है, लम्बे-लम्बे दिन होते हैं, शरीर से पसीने की धाराएँ बहती रहती हैं, ऊपर से गरम-गरम लू, लपटें चलती रहती हैं उस समय यदि हम लोग 'चउबीस ठाणा' पढ़ने बैठ जाते हैं तो दोपहरी के दो-तीन घंटे तो कैसे और कब निकल जाते हैं, पता ही नहीं लग पाता है।

कभी किसी का स्वास्थ्य खराब होने लगता है, जी मचलाता है, कैसा-ही-कैसा लगता है तो 'चउबीस ठाणा' की क्लास लगा लेते हैं तो उपयोग ऐसा बदल जाता है कि क्या और कैसी वेदना हो रही थी कुछ भी समझ में नहीं आता है। हम लोगों ने लगभग ५ वर्ष तक 'चउबीस ठाणा' को सामूहिक क्लास लगाकर पढ़ा। क्लास के समय यदि कोई आता है और वह चउबीस ठाणा से परिचित है तो उसे इस प्रकार से चउबीस ठाणा पढ़ने का उत्साह और रुचि अवश्य ही उत्पन्न हो जाती है और यदि वह चउबीस ठाणा से परिचित नहीं है लेकिन स्वाध्याय के प्रति उसकी रुचि है तो भले ही क्लास में कुछ भी समझ में नहीं आवे, उसे आनन्द अवश्य आता है। कोई तो पूछ ही बैठता है कि क्या हम रोज आपकी क्लास में आ सकते हैं ? इन सबसे लगता है कि चउबीस ठाणा को पढ़ने की यदि विधि आ जावे और एक बार भी चउबीस ठाणा पढ़ ले तो उसे जैन तत्त्वों का काफी ज्ञान हो सकता है। उसे लगभग सभी ग्रन्थ थोड़े-थोड़े तो समझ में आने ही लगते हैं। **यह 'चउबीस ठाणा' प्रकरण भी तत्त्वार्थसूत्र के समान जैनागम, जैनधर्म को समझने की कुंजी है।**

'चउबीस ठाणा' की क्लास में उपस्थित होने वाले कई गृहस्थों, ब्रह्मचारियों तथा संघस्थ आर्यिकाओं की भी भावना थी कि इन प्रश्नों का संकलन करके यदि एक ग्रन्थ बन जावे तो कई लोगों को 'चउबीस ठाणा' पढ़ने की विधि आ सकती है, वे भी इस गम्भीर विषय का आनन्द ले सकते हैं। सबकी भावना को देखते हुए मेरा भी भाव हो गया कि 'चउबीस ठाणा' के प्रश्नोत्तरों का संकलन कर ही देना चाहिए ताकि सबको लाभ मिल सके और हमारी संस्कृति जीवन्त बनी रहे।

इस ग्रन्थ में चौबीस स्थानों के उत्तर भेदों के लक्षण आचार्यप्रणीत ग्रन्थों से लिखे गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर भी आचार्य महाराज के शब्दों में ही दिये गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर आगम को आधार बनाकर अपनी भाषा में लिखे गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर मैंने अपने तथा विद्वानों के विचारों से लिखे हैं। विद्वानों के विचार तो अनुमोदनीय हैं लेकिन मेरी अल्पज्ञता से जो लिखे गये हैं, उनमें यदि कोई त्रुटि हो, आगम के विरुद्ध कथन हो तो विद्वद्जन सूचित अवश्य करें ताकि आगे सुधार किया जा सके।

'चउबीस ठाणा' कैसे पढ़ें-पढ़ावें

चउबीस-ठाणा पढ़ने के लिए सबसे पहले चौबीस स्थानों के उत्तर भेद तथा उनके नाम अच्छी तरह स्मरण कर लें। उसके बाद चौबीस स्थानों के किस उत्तर भेद में कौन-कौन सा गुणस्थान पाया जाता है, अथवा कितने गुणस्थान होते हैं, इसे अपने दिमाग में अच्छे से बिठालें। तत्पश्चात् चउबीस-ठाणा पढ़ना प्रारंभ करें। सबसे पहले गति-मार्गणा को पढ़ते समय गति एवं उसके उत्तर भेदों, लक्षणों को ध्यान से पढ़ लें। उसके बाद आप नरक-गति का विवरण पढ रहे हैं तो नरक में एकेन्द्रिय...... आदि जाति क्यों नहीं होती है ? कौन-कौन से योग होते हैं। कौन-कौनसे योग नहीं होते हैं, आहारकद्विक काय योग क्यों नहीं होता है ? नारकी के कार्मण-काययोग किस-किस गुणस्थान में होता है ? क्या सभी नारकियों की व्यवस्थाएँ एक जैसी होती हैं ? नारकियों में कम-से-कम कितनी कषायें होती हैं ? किस नरक में कौन सी लेश्या होती है ? कौन से सम्यक्त्व को लेकर जीव नरक में जा सकता है ? सम्यक्त्व को लेकर कौन से नरक में नहीं जा सकते हैं ? नारकी असंज्ञी क्यों नहीं होते हैं ? नारकी के दूसरे गुणस्थान में अनाहारक-अवस्था क्यों नहीं होती है ? नारकियों के कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ और प्राण होते हैं ?.... आदि अनेक प्रकार के प्रश्न उठाकर पढ़ें-पढ़ावें तो एक पाठ अर्थात् मात्र नरकगति के पाठ को पढ़ने में एक घण्टा सहज रूप से लग सकता है।

उदाहरण के तौर पर इसी प्रकार योग-मार्गणा पढ़ते समय **प्रश्न** उठायें कि औदारिक काययोग किसके होता है ? **उत्तर** - मनुष्य तिर्यञ्चों के।

प्रश्न - क्या भगवान के भी औदारिक काययोग होता है ? **उत्तर** हाँ।

प्रश्न - क्या सभी भगवन्तों के भी औदारिक काययोग होता है **? उत्तर** - नहीं, चौदहवें गुणस्थान वाले अरहंत भगवान तथा सिद्ध भगवान के कोई भी योग नहीं होता है क्योंकि वे अयोगी होते हैं।

प्रश्न - मनुष्य-तिर्यंचों के वैक्रियिक काययोग क्यों नहीं होता है ?

उत्तर - क्योंकि वैक्रियिक काय-योग देव-नारकियों के ही होता है।

प्रश्न - ऐसा कौनसा काय-योग है, जो तीन समय से ज्यादा नहीं होता है ?

उत्तर - कार्मण-काययोग।

प्रश्न - क्या संसार में ऐसे कोई जीव हैं, जिनके काययोग नहीं है ?

उत्तर - ना, क्योंकि काययोग एकेन्द्रिय से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक होता है। अथवा अयोगी भगवान के कोई भी योग नहीं होता है, तो भी वे संसारी ही हैं, क्योंकि उनके त्रस नाम कर्म का उदय पाया जाता है।

प्रश्न - क्या मनोयोग के बिना भी जीव जीवित रह सकता है ?

उत्तर - हाँ, एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों तक के मनोयोग नहीं पाया जाता है।

प्रश्न - क्या कोई ऐसा योग है जो चींटी के भी हो और भगवान के भी हो ?

उत्तर - हाँ, अनुभय वचनयोग चींटी के भी होता है और भगवान के भी होता है।

इस प्रकार अनेकानेक प्रश्न उठाकर तालिका पढ़ें। उसके बाद इस ग्रंथ में दिये गये प्रश्नोत्तर पढ़ें-पढ़ावें। यदि इस ढंग से कोई पूरा **चउबीस ठाणा** पढ़ ले तो मुझे विश्वास है कि वह करणानुयोग में प्रवेश कर सकता है।

इस ग्रन्थ में, वास्तव में, मेरा कुछ भी नहीं है। यह गुरुओं से प्राप्त ज्ञान का ही प्रसाद है कि मुझ अल्पज्ञा में 'चउबीस ठाणा' जैसे कठिन विषय में भी प्रवेश करने का साहस आ पाया। मेरे विचार से तो गुरुओं के आशीर्वचन एवं प्रसाद के बिना मोक्ष-मार्ग में एक कदम भी नहीं बढ़ा जा सकता है। अपने मोक्षमार्ग की पूर्णता हेतु दीक्षागुरु परम पूज्य स्वर्गीय **आचार्यकल्प श्री विवेकसागर जी महाराज** एवं **आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागर जी महाराज** के चरणों में कोटि-कोटिश:वन्दन निवेदित करती हूँ।

'आचारसार' आदि ग्रन्थों के रचयिता एवं टीकाकार आचार्यवर्यों, मुनिवृन्दों के चरणों में भी मेरा बार-बार नमोऽस्तु।

इस ग्रन्थ के लेखन में प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से सहयोग करने वाले सभी के लिए मेरा यथायोग्य विनय, स्नेह, वात्सल्य। सबके कर्मों का क्षय हो, दु:खों का क्षय हो, बोधि की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधिमरण हो, यही भावना।

– आर्यिका विज्ञानमती

♦♦♦

卐 नेपथ्य में...... 卐

परम पूज्या **आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी** का जन्म कुँवार शुक्ला पंचमी सन् १९६३ को भीण्डर नगर (जिला उदयपुर राजस्थान) में श्रेष्ठी बालूलाल जी की धर्मपरायणा पत्नी श्रीमती कमला देवी की कुक्षि से हुआ। आप बचपन से ही धार्मिक संस्कारों की फुलवारी में ही खेली और पली-पुषी हैं। उसकी सुरभि से ही आपका जीवन सुरभित रहा है। ८ वर्ष की उम्र में ही आपको आचार्य शिवसागर जी महाराज के चरणों में बैठकर धार्मिक अध्ययन करने का सौभाग्य मिला। उसी समय से जैनागम का अध्ययन करने की आपकी ललक बनी रही और जब कभी साधु-संतों का सान्निध्य मिलता, आप उनके पास जाकर जैन-सिद्धान्तों का अध्ययन अवश्य करतीं एवं स्वाध्याय करके अपने परिणामों में निर्मलता बनाये रखतीं। घर में रहकर भी अपने आपको पापों से बचाने का प्रयास करतीं और आत्मकल्याण की भावना भाते-भाते यही सोचती कि काश! मैं भी आर्यिका बन जाऊँ। आत्मिक पुरुषार्थ करने पर भी पूर्वोपार्जित चारित्रमोहनीय कर्म के उदय के कारण, न चाहते हुए भी माता-पिता ने आपका विवाह कर दिया, फिर भी आपकी भावना भोगों में नहीं रही। गृहस्थी रूपी कीचड़ में जाने के बाद भी आप कमल की भाँति निर्लिप्त रहीं, आपके भाग्य से ही १९८२ में **आचार्यकल्प श्री विवेकसागर जी म.** का पावन वर्षायोग भीण्डर में हो गया। संघस्थ **ब्र. कुसुम दीदी** से सीमित व निश्चित समय में आपने तत्त्वार्थ सूत्र का अध्ययन किया और उसका अभ्यास गृहस्थी के व्यस्त कार्यकलापों के बीच में भी विधिपूर्वक करती रहीं तथा उसे अपने अंदर आत्मसात् कर लिया। दीदी का सान्निध्य पाकर आपने अपनी भावना को प्रोत्साहन देना शुरू कर दिया, क्योंकि अब गुरु का सहारा मिल गया था। दीदी के माध्यम से स्वाध्याय के साथ-साथ वैराग्य को भी गति मिल गयी और ऐसी गति मिली कि विवाह के १८ माह पूरे होते-होते तो आप घर छोड़कर गुरु के चरणों में आ गयीं और १५ माह बाद ही गुरु कृपा से आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर ली। तभी से **आर्यिका श्री विशालमती माताजी** (ब्र. कुसुम दीदी) के साथ निरन्तर मौनपूर्वक स्वाध्याय और साधना में निरत रही और लगभग ७-८ वर्ष में ही अपने अथक परिश्रम और एकाग्र बुद्धि से पूज्या आर्यिका श्री विशालमती माताजी का प्रबल निमित्त पाकर आपने जैनागमों का अध्ययन कर लिया। पू. आर्यिकाश्री सदैव सभी को स्वाध्याय करने की प्रेरणा देती रहती हैं। इन्हीं प्रबल पुरुषार्थी के श्रम से नि:सृत **तत्त्वार्थ मञ्जूषा** के **दो खण्ड** प्राज्ञजनों को स्वत: ही स्वाध्याय करने की प्रेरणा देते हैं और अब स्वाध्यायार्थ प्रस्तुत है माताजी की नवीन कृति **चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा।**

क्या बना प्रबल निमित्त : हुआ यों कि सन २००२ में वर्षायोग स्थापना के पूर्व आरौन नगर में पूज्य आर्यिका श्री गुणमती माताजी के संघ से हमारा मिलन हुआ। तब हमारी दीक्षागुरु पू. आर्यिकाश्री ने उनसे स्वाध्याय संबंधी चर्चा के दौरान कहा कि ''माताजी ! आपका सिद्धान्तज्ञान अच्छा है अत: आप हमें भी कुछ पढ़ाइये।'' तब उन्होंने अपनी लघुता प्रगट करते हुए कहा- ''माताजी ! आपसे तो मैं पद मैं भी छोटी हूँ और ज्ञान में भी छोटी हूँ, मैं आपको क्या पढ़ा सकती हूँ।'' यह सुनकर पू. आर्यिकाश्री

ने कहा ''नहीं माताजी। अपन सब बराबर हैं, कौन छोटा कौन बड़ा। फिर आप इन लोगों को पढ़ा दो, ये तो आपसे बहुत छोटी हैं।'' हम लोगों ने कहा- ''जी, माताजी! आप हम लोगों को पढ़ाइये, हमें कुछ भी नहीं आता है।'' उस समय उन्होंने हम लोगों से दो चार प्रश्न **चउबीस ठाणा** और **सम्यग्दर्शन** से संबंधित पूछे। हम लोगों को एक का भी उत्तर नहीं आया। इससे हमें बहुत ही शर्मिन्दगी महसूस हुई। कितनी लज्जा की बात है कि हमारी गुरु माँ इतनी विदुषी और हम उनकी शिष्या होकर भी सामान्य से प्रश्नों का भी उत्तर नहीं दे पाये.....।

आ गई पूर्व बातें याद : जब एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं बना तब मुझे बीती बातें याद आ गईं। जब मैंने मोक्षमार्ग पर कदम रखा ही था तब पूज्या आर्यिकाश्री मुझे सदैव स्वाध्याय करने को कहतीं.... कि स्वाध्याय कर लो, पढ़ो-लिखो, अभी अवस्था है, दिमाग भी अच्छा है, स्वास्थ्य भी ठीक है सो अच्छा स्वाध्याय कर लो, क्योंकि स्वाध्याय करने से ही चारित्र में निर्मलता आती है, व्रतों में दृढ़ता बनती है। अपने आचार्यों के प्रति श्रद्धा बढ़ने से, उनके प्रति बहुमान आने से अपनी चर्या में सुधार आता है। इसलिए अच्छी पढ़ाई कर लो, लेकिन हमने उस समय उनकी बातों पर ध्यान न देकर अपना समय यूँ ही गँवा दिया। कई बार पूज्य मुनिश्री अभयसागर जी ने भी कहा कि मात्र इस थाली से उस थाली में ही नहीं करो अर्थात् आहार में ही नहीं लगे रहो वरन् शास्त्र-स्वाध्याय किया करो। इतना बड़ा असिधारा व्रत लिया तो उसका पालन कैसे करें ? उसमें निर्मलता कैसे लायें ? इसके लिए ही स्वाध्याय करना चाहिए। परन्तु हमें उस समय कुछ भी समझ में नहीं आया....। लोक में कहा जाता है कि ठोकर लगने के बाद ही अक्ल ठिकाने आती है और जब हम पू. गुणमती माताजी के सामने लज्जित हो गये तब ऐसी अनुभूति हुई कि आज हमारे कारण गुरु माँ को भी अपना मुँह नीचे करना पड़ा। नहीं, हम ऐसा कभी नहीं होने देंगे और पूज्या आर्यिकाश्री से प्रार्थना की कि अब आप हम लोगों को पढ़ाइये।

शुरू हुआ स्वाध्याय : हमारी प्रार्थना पर ध्यान देते हुए पू. आर्यिकाश्री ने आरौन वर्षायोग में ही **चउबीस ठाणा, तत्त्वार्थ सूत्र** का अध्ययन करवाया तथा सर्दी में विहारकाल में भी आस्रव-त्रिभंगी, भाव-त्रिभंगी आदि विषयों को पढ़ाती रहीं। जब मालथौन वर्षायोग के बाद दक्षिण-यात्रा के लिए विहार किया तब पूरे पाँच वर्ष तक विहार अवधि में चउबीस ठाणा का ही अध्ययन करवाया जहाँ पर विश्राम किया वहाँ और वर्षायोगों में कर्मकाण्ड, जीवकाण्ड, सर्वार्थसिद्धि, लोकविभाग, श्रावकाचार आदि बड़े ग्रन्थों का अध्ययन करवाया। लेकिन हम लोगों का विहार के समय या शारीरिक पीड़ा के समय जब मन नहीं लगता तब पू. माताजी कहतीं, चलो, अपन चउबीस ठाणा पढ़ते हैं। और जब हम सभी आर्यिकाएँ व बहिनें चउबीस ठाणा पढ़ने लगते तो पता ही नहीं चलता कि विहार की थकान हो रही थी या कोई वेदना भी हो रही थी। न पौष मास की सर्दी परेशान करती, न जेठमास की गर्मी सताती। कब दोपहर से शाम हो जाती, पता ही नहीं लगता। उस अनुभूति को मैं शब्दों से नहीं लिख सकती हूँ। हाँ, इतना अवश्य कहूंगी कि यह अध्ययन कर लेने पर हम विद्वानों की सभा में बैठते तो भले ही हम उनकी शंकाओं का समाधान न कर पाते परंतु उनकी चर्चा अवश्य समझ में आने लगी।

विनम्र निवेदन : उपर्युक्त विधि से अध्ययन करते-करते श्रीरामपुर वर्षायोग में हम सभी ने तथा अन्य भी अनेकानेक त्यागी-व्रती, गृहस्थ विद्वान जिन्होंने 'चउबीस ठाणा' की हमारी कक्षा का लाभ लिया था उन सभी ने भी पू. आर्यिकाश्री से निवेदन किया कि ''आपकी यह चउबीस ठाणा पढ़ाने की शैली बहुत अच्छी लगी, आप इसी शैली में इन प्रश्नोत्तरों को ग्रन्थ रूप में परिणत कर दें तो हम जैसे सभी लोगों को 'चउबीस ठाणा' पढ़ने-पढ़ाने का तरीका मिल जायेगा। जैन समाज में तत्त्वार्थसूत्र की तरह चउबीस ठाणा पड़ने की भी बहुत रुचि है। हम सामान्य से तालिकाओं के आधार से पढ़ाते तो हैं, परंतु आप जो सभी मार्गणाओं में, उनके उत्तरभेदों में सभी स्थानों के भेद-प्रभेद लगाकर और यहाँ-वहाँ के प्रकरणों में लगाकर पढ़ाते हैं तो बड़ा रोचक लग रहा है। जटिल विषय वस्तु भी सरल लग रही है.....।'' तब सभी की प्रार्थना पर पू. आर्यिकाश्री ने उन प्रश्नोत्तरों का लेखनकार्य प्रारंभ किया.... ८ मार्गणाओं पर ही ६३८ प्रश्नोत्तर इस प्रथम खण्ड में संकलित हैं।

अनोखी भावना : अपने निश्छल, सरल, शांत, साधनामय जीवन में रत्नत्रय की आराधना करते करते भी गुरु का उपकार चुकाने की भावना से ही पूज्या आर्यिकाश्री ने हम सभी पर यह महत् उपकार किया है। पू. आर्यिकाश्री का ग्रन्थरचना का मात्र यही उद्देश्य है कि शुभोपयोग के ये कार्य करते समय हमारा एक भी क्षण इधर-उधर के विकल्पों में नहीं जाता है। मात्र अपने विषय पर ही मन केन्द्रित रहता है, जिससे हमें अपना लक्ष्य याद रहता है और उसे प्राप्त करने का ही पुरुषार्थ करते हैं। आर्त्त-रौद्र रूप संक्लेश परिणामों से बचने के लिए ही पू. आर्यिकाश्री ने यह विशिष्ट कार्य किया है। जो सुधी श्रावक, विद्वान, त्यागी-व्रती अहिंसा धर्म की पूर्णता को प्राप्त करना चाहता है तो उसे जीवों के बारे में जानना अति आवश्यक है, वह इन 'चउबीस ठाणा' प्रश्नोत्तरों के माध्यम से जान सकता है कि कहाँ-कहाँ, कैसे-कैसे जीव होते हैं, इन सब स्थानों को पार करके इतना उत्तम स्थान मनुष्य पर्याय प्राप्त कर लिया है तो अब आत्म-कल्याण कर ही लेना चाहिए। संसार रूपी सघन जंगल से निकलने के लिए पगडंडी मिल गयी है, तो मोक्ष मंजिल को अवश्य प्राप्त कर लेना चाहिए। इसी भावना से प्रस्तुत ग्रंथ सुधी पाठकों के कर-कमलों में समर्पित है।

अंत में, मेरी यही भावना है कि मैं अपने आचार्य भगवन्तों की वाणी को आत्मसात् करके, मोक्षमार्ग के अंतिम सोपान बोधि-समाधि को प्राप्त करके सिद्धावस्था को प्राप्त होऊँ। इसी भावनासे पंचपरमेष्ठी को नमन करती हूँ और पूज्या गुरु माँ के चरणारविन्द में वन्दामि निवेदन करती हूँ।

डॉ. चेतनप्रकाश जी पाटनी ने सम्पादन कार्य करके जिनागम की प्रभावना में अमूल्य सहयोग दिया है, उन्हें पू. आर्यिकाश्री का शुभाशिष है कि वे शीघ्र ही मुनि बनकर जिनागम का सार पाकर आत्मकल्याण करें।

ग्रन्थ-प्रकाशन हेतु उदार भावना से दि. जैन समाज, बामौर कलाँ के सभी श्रावकों ने गृहस्थ धर्म के कर्त्तव्य को पूरा किया है सो वे सभी परम्परा से आत्मोपलब्धि को प्राप्त होवें।

– आर्यिका आदित्यमती

♦♦♦

अद्वितीय माँ

वर्ष २०१५ का चमत्कारी चातुर्मास पूज्य गुरु माँ विज्ञानमति माताजी का ससंघ जैननगर नन्दीश्वर द्वीप, लालघाटी, भोपाल में हुआ। हमें भी गुरु माँ के दर्शन एवं प्रवचन का लाभ मिला। गुरु माँ के संघ के नियम, अनुशासन, निष्पक्ष व्यवहार सधी हुई साधना, समय प्रबंधन, गुरु के प्रति अथाह विश्वास, अगाढ़ श्रद्धा और समर्पण हमें तो इस युग में किसी अतिशय से कम नहीं लगा। यह देखकर हम बहुत प्रभावित हुए एवं संघ से जुड़ गए, तभी से हमारे ऊपर गुरु माँ की असीम कृपा बनी हुई है। पंचम काल में इन जैसा साधु बनना तो महान् है।

पूज्य आदित्यमति माता जी की पिच्छी हमें मिली, जिसमें हममें शुद्ध भोजन, कुँए के जल सहित नियम लिए, जिसके फलस्वरूप एक बार पूज्य मुनि श्री उपशान्तसागर जी महाराज के बिना चौके के अचानक पड़गाहन मिला एवं जो शुद्ध भोजन अपने लिए बनाया था, उसी से महाराज जी को आहार कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

गुरु माँ ने एक बार प्रवचन में कहा था कि शुद्ध भोजन का नियम होने से कभी भी चौका लगा सकते। चतुर्थकाल की घटना हुए बिना चौके के आहार दान का लाभ मिला।

तेरा कैसे कर्ज चुकाऊँ।
कितने एहसान गिनाऊँ
तुम देकर भूलने वाली
मैं हर पल हाथ फैलाऊँ
तेरी दहलीज पे आने से पहले
हम बहुत कमजोर होते हैं
मगर दहलीज को छूते ही
हम कुछ और होते हैं।

गुरु माँ की कठिन साधना एवं चतुर्थकालीन चर्या से सभी जगह पर लाखों लोग धर्म कार्य में लग रहे हैं। ऐसी गुरु माँ एवं ससंघ के चरणों में कोटि-कोटि वंदामि वंदामि, भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि गुरु माँ की रत्नत्रय की साधना निर्बाध रूप से चलती रहे एवं आत्म कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करें। पूज्य गुरु माँ के चारित्र शुद्धि विधान के उपवास एवं लगातार आठ उपवास पूर्ण होने के उपलक्ष्य में सादर समर्पित...गुरु माँ के चरणों में वंदामि वंदामि।

उपकार जो हम पर किये गुरुवर भुला ना पाएँगे।
जब तक है तन में साँस हम उपकार गुरु के गाएँगे।

श्रीमती संगीता जैन
जैन नगर, लालघाटी, भोपाल

卐 ग्रन्थ संकेत सूची 卐

क्र.	संकेत	ग्रंथ का नाम	ग्रंथकर्त्ता
१.	आ.सा.	आचार सार अध्याय संख्या/गाथा संख्या	आचार्य श्री वीरनंदी सिद्धान्तचक्रवर्ती
२.	आ.समु	आराधना समुच्चय गाथा संख्या	आचार्य श्री रविचंद्र स्वामी
३.	क.पा.	कषाय पाहुड़	आचार्य श्री गुणभद्र स्वामी
४.	क.वि.	कर्म विपाक	आचार्य श्री सकलकीर्ति महाराज
५.	का. अ.	कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा संख्या	आचार्य श्री कार्तिकेय स्वामी
६.	गो.क.	गोम्मटसार कर्मकाण्ड गाथा संख्या	आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती
७.	गो.जी.	गोम्मटसार जीवकाण्ड गाथा संख्या	आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती
८.	गो.जी.जी.	गोम्मटसार जीवकाण्ड जीव प्रबोधिनी टीका	केशववर्णी
९.	गो.जी.मं.	गोम्मटसार जीवकाण्ड मंद प्रबोधिनी	श्री अभयचन्द्र सूरि
१०.	चा.च.	चारित्र चक्रवर्ती/पृष्ठ संख्या	पं. सुमेरुचन्द्र दिवाकर
११.	चा.सा.	चारित्र सार	आचार्य श्री चामुण्डराय
१२.	ज.ध.	जय धवला पुस्तक संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य वीरसेन स्वामी
१३.	त.अ.	तत्त्वानुशासन	आचार्य श्री अमृतचंद्र स्वामी
१४.	त.वृ.	तत्त्वार्थ वृत्ति	
१५.	त.सू.	तत्त्वार्थसूत्र अध्याय संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य उमास्वामी
१६.	त.सा.	तत्त्वसार/गाथा संख्या	आचार्य देवसेन स्वामी
१७.	ति.प.	तिलोय पण्णत्ति अधिकार संख्या/गाथा सं.	आचार्य यतिवृषभ
१८.	द्र.सं.	द्रव्य संग्रह	आचार्य श्री नेमिचंद्र स्वामी
१९.	ध.पु.	धवला पुस्तक संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य वीरसेन स्वामी
२०.	न.च.	नय-चक्र गाथा संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य माइल्लधवल
२१.	नि.सा.	नियमसार गाथा संख्या	आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी
२२.	पं.सं.प्रा.	पंचसंग्रह प्राकृत अधिकार/गाथा संख्या	अज्ञात
२३.	पं.का.	पंचास्तिकाय तात्पर्यवृत्ति/गाथा संख्या	आचार्य कुन्दकुन्द/आचार्य जयसेन स्वामी
२४.	प.मु.	परीक्षामुख अधिकार संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य माणिक्यनंदी
२५.	प्र.सा.	प्रवचनसार	आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी
२६.	प्र.श्रा.	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार	भट्टारक सकलकीर्ति

क्र.	संकेत	ग्रंथ का नाम	ग्रंथकर्त्ता
२७.	भ.आ.वि.	भगवती आराधना विजयोदय टीका/ गाथा संख्या	अपराजित सूरि
२८.	म.क.	मरणकण्डिका	आचार्य अमितगति स्वामी
२९.	महा.पु.	महापुराण/सर्ग संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य जिनसेन स्वामी
३०.	महाबंध	महाबंध	
३१.	मू.आ.	मूलाचार आचार वृत्ति/गाथा संख्या	आचार्य सिद्धांतचक्रवर्ती वसुनंदी
३२.	मू.प्र.	मूलाचार प्रदीप गाथा संख्या	आचार्य सकलकीर्ति स्वामी
३३.	य.ति.च.	यशस्तिलक चम्पू काव्य आश्वास गा.सं.	सोमदेव सूरि
३४.	र.क.श्रा.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा सं.	आचार्य समंतभद्र स्वामी
३५.	रा.वा.	राजवार्तिक अध्याय/सूत्र संख्या	आचार्य अकलंक स्वामी
३६.	ल.सा.	लब्धिसार	आचार्य नेमिचंद्र स्वामी
३७.	व.च.	वरांग-चरित्र सर्ग संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य जटासिंह नन्दी
३८.	वृ.द्र.सं.टी.	वृहद् द्रव्य संग्रह टीका/गाथा संख्या	आचार्य ब्रह्मदेव सूरि
३९.	शा.पु.	शान्ति पुराण	आचार्य सकलकीर्ति
४०.	श्लो.	श्लोकवार्तिक पुस्तक संख्या/पृ. संख्या	आचार्य विद्यानंद
४१.	स.सा.क.	समयसार कलश	आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी
४२.	स.सा.ता.	समयसार तात्पर्यवृत्ति गाथा संख्या	आचार्य जयसेन स्वामी
४३.	सि.सा.	सिद्धांत सार	आचार्य नरेन्द्र सेन
४४.	सि.सा.दी.	सिद्धान्तसार दीपक अधिकार/गाथा संख्या	आचार्य सकलकीर्ति
४५.	सु.बो.	सुखबोधा टीका तत्त्वार्थ वृत्ति पृ. संख्या	मुनि भास्कर नंदी
४६.	सु.र.सं.	सुभाषित रत्न संदोह	आचार्य अमितगति महा.
४७.	सर्वा.सि.	सर्वार्थसिद्धि अध्याय संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य पूज्यपाद स्वामी
४८.	हरि.पु.	हरिवंश पुराण सर्ग संख्या/गाथा संख्या	आचार्य जिनसेन स्वामी
४९.	क्ष.सा.	क्षपणासार	आचार्य नेमिचंद्र स्वामी
५०.	ज्ञा.	ज्ञानार्णव	आचार्य शुभचन्द्र

◆◆◆

आर्यिका श्री विज्ञानमति माताजी द्वारा रचित कृतियाँ

सिद्धान्त ग्रन्थ

- ❑ तत्त्वार्थमञ्जूषा भाग-१-२
- ❑ चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा १-२
- ❑ तिरेपनभाव प्रश्नोत्तरमञ्जूषा १-२
- ❑ लघु तत्त्वार्थमञ्जूषा
- ❑ कर्म सिद्धान्त (बंध प्रकरण) मञ्जूषा
- ❑ कर्म सिद्धान्त (उदय प्रकरण) मञ्जूषा
- ❑ कर्म सिद्धान्त (सत्व प्रकरण) मञ्जूषा

नैतिक साहित्य

- ❑ संस्कारमञ्जूषा १-२
- ❑ शीलमञ्जूषा
- ❑ पलायन क्यों ?
- ❑ अच्छी सास
- ❑ बहू कैसी
- ❑ समझदार बेटा
- ❑ संस्कारित बेटी
- ❑ सभ्य परिवार

श्रावकचर्या सम्बन्धी साहित्य

- ❑ विवेकमञ्जूषा
- ❑ अनर्थ दण्ड क्या ?
- ❑ सम्यक्त्वमञ्जूषा
- ❑ सच्चे देव का स्वरूप
- ❑ प्रवचनमञ्जूषा
- ❑ आहार विधि मञ्जूषा
- ❑ भोगोपभोगपरिमाण विधि

पद्यात्मक

- ❑ भूषणद्वय महाकाव्य
- ❑ सुदर्शन चरित्र
- ❑ बाल संस्कारमञ्जूषा
- ❑ धीवर की धी
- ❑ भक्तिपुञ्जमञ्जूषा

जीवनी

- ❑ मारवाड़ का मार्तण्ड (विवेकसागर जी पर आधारित)
- ❑ राणोली रत्नाकर (आचार्य ज्ञानसागरजी की)
- ❑ विशाल व्यक्तित्व (आर्यिका विशालमति जी पर आधारित)
- ❑ विशुद्धि के विलक्षण पल

विधान

- ❑ कल्पद्रुम मण्डल विधान
- ❑ श्री सिद्धचक्र विधान
- ❑ सहस्रनाम विधान
- ❑ चारित्र शुद्धि विधान
- ❑ उपसर्गहर रक्षाबंधन विधान
- ❑ तत्त्वार्थसूत्र विधान
- ❑ चौंसठ ऋद्धि विधान (बृहद् एवं लघु)
- ❑ भक्तामर विधान
- ❑ श्री बड़ेबाबा विधान
- ❑ चतुर्विंशति विधान (सामूहिक)
- ❑ चतुर्विंशति विधान (अलग-अलग)
- ❑ पंचविधान संग्रह

पर्व विधान

- ❑ सोलहकारण विधान
- ❑ दशलक्षण विधान (बृहद् एवं लघु)
- ❑ श्री नन्दीश्वर विधान
- ❑ पंचमेरु विधान
- ❑ पर्व विधान मञ्जूषा
- ❑ श्री सम्मेदशिखर विधान
- ❑ यागमण्डल विधान एवं पंचकल्याणक विधान
- ❑ श्रुतपंचमी विधान
- ❑ समवसरण विधान
- ❑ यागमण्डल एवं पंचकल्याणक विधान
- ❑ रत्नत्रय विधान
- ❑ चारित्र शुद्धि विधान
- ❑ आचार्य छत्तीसी
- ❑ जिनगुण सम्पत्ति विधान
- ❑ गणधर वलय विधान
- ❑ पंचपरमेष्ठी विधान
- ❑ कवल चान्द्रायण विधान
- ❑ पंच बालयति तीर्थंकर विधान
- ❑ त्रयपद धारक तीर्थंकर विधान
- ❑ कर्मदहन विधान
- ❑ पंचधाम विधान (पाँच सिद्धक्षेत्रों पर आधारित)

आर्यिका श्री का जीवन वृत्त—लीला, मेवाड़ की महाव्रती, पथ के साथी, भाग-१-२, नाव के खिवैया, माँ की चिंतन लहरें।

अनुक्रम

ॐ

।। श्रीवीतरागाय नमः ।।

卐 चउबीस ठाणा 卐

प्रश्नोत्तर मञ्जूषा

卐 मङ्गलाचरण 卐

(छन्द-ज्ञानोदय)

क्षमावन्त सिरि पंच परम गुरु, पूज्य रहे त्रय लोकों में।
इनके चरण कमल की पूजा, पार करे त्रय लोकों से।।
नमस्कार कर इनको ठाणा, चार-बीस बतलाऊँ मैं।
फल में भाव शुभाशुभ तज कर, शुद्ध भाव को पाऊँ मैं।।

दोहा : ज्ञान बढ़े विद्या मिले, विवेक हो भरपूर।
विशालता की खान गुरु, नमूँ करो मद चूर।।

१. प्रश्न : चउबीस ठाणा किसे कहते हैं?

उत्तर : जहाँ गति मार्गणा आदि चौबीस स्थानों में जीव का विशेष वर्णन किया गया है, उन्हें चउबीस ठाणा कहते हैं।

२. प्रश्न : चउबीस ठाणा का अध्ययन क्यों करना चाहिए ?

उत्तर : बोधिदुर्लभ भावना का चिन्तन करने के लिए चउबीस ठाणा का अध्ययन करना चाहिए। अपने उपयोग को चौबीस स्थानों के उत्तर भेदों में लगाना चाहिए और विचार करना चाहिए कि किस-किस स्थान पर रत्नत्रय प्राप्त किया जा सकता है। हम कितने-कितने नगण्य स्थानों को छोड़कर यहाँ आ गये हैं। सब कुछ अनुकूलता मिल जाने पर भी यदि हम रत्नत्रय धारण नहीं कर पाये तो सबकुछ व्यर्थ है। लोक भावना भाने के लिए भी 'चउबीस ठाणा' समझना चाहिए।

पापों, आर्त्त-रौद्र ध्यान और विषय-कषायों से बचने के लिए, आपत्ति के समय उपयोग को लगाने के लिए तथा पूर्वोपार्जित पापों का क्षय करने के लिए चउबीस ठाणा का अध्ययन करना चाहिए।

३. प्रश्न : **चौबीस स्थान कौन-कौनसे हैं ?**

उत्तर : **गइ इन्दिये च काये, जोगे वेदे कषाय णाणे य।**
संजम दंसण लेस्सा, भविया समत्त सण्णि आहारे ।।गो.सा. जीव. गाथा १४२
गुण जीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणाओ ।
उवओगो विय कमसो, बीसं तु परूवणा भणिया।। गो.सा. जीव. गाथा २

झाणा वि य पच्चा वि य, जाइ य कुल कोडि संजुया सव्वे,
गह्मति येण भणिया, कमेण चउबीस ठाणाणि।।

अर्थ - गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, गुणस्थान, जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, उपयोग, ध्यान, आस्रव के प्रत्यय, जाति और कुल इस प्रकार चौबीस स्थान हैं। इन्हीं को हिन्दी में इस प्रकार पढ़ सकते हैं-

卐 ज्ञानोदय छन्द 卐

गति इन्द्रिय में काय योग में, वेद कषायों ज्ञानों में,
संयम दर्शन लेश्या भविजन, समकित सैनि अहारों में।
गुणथानों में जीव समासों, पर्याप्ती में प्राणों में,
संज्ञा मार्गण उपयोगों में, बीस परूपण जानो ये।।१।।

ध्यान कहे हैं प्रत्यय जाती, कुल कोटी को और कहे,
चार-बीस हैं थान इन्हीं में, जीव कथा को खास कहे।
क्रम से इनको चौबिस ठाणा, में कहते हैं जिनवर जी,
नमन उन्हें हो नमन करूँ मैं, पाने को नित शिवमग जी।।२।।

४. प्रश्न : **चौबीस स्थानों के उत्तर भेद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर : चौबीस स्थानों के उत्तर भेद –

(१) **गति-चार** : नरकगति, तिर्यञ्च गति, मनुष्य गति और देवगति।

(२) **इन्द्रिय-पाँच** : एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय।

(३) **काय - छह** : पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पति कायिक तथा त्रस कायिक।

(४) **योग - पन्द्रह** : ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, ७ काययोग

४ मनोयोग - सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग, अनुभयमनोयोग।

४ वचनयोग - सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, अनुभयवचनयोग।

७ काययोग - औदारिक-औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिक-वैक्रियिक मिश्रकाययोग, आहारक-आहारकमिश्रकाययोग तथा कार्मण काययोग।

(५) **वेद तीन** : स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(६) **कषाय पच्चीस** : ४ अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ।

९ नोकषाय - हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(७) **ज्ञान-आठ** : ३ कुज्ञान-कुमति, कुश्रुत, कुअवधि।

५ ज्ञान-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान।

(८) **संयम-सात** : सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय, यथाख्यात, संयमासंयम तथा असंयम।

(९) **दर्शन-चार** : चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन तथा केवलदर्शन।

(१०) **लेश्या-छह** : कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या।

(११) **भव्यत्व-दो** : भव्य, अभव्य।

(१२) **सम्यक्त्व-छह** : क्षायिक सम्यक्त्व, क्षयोपशम, उपशम, सासादन, मिश्र और मिथ्यात्व।

(१३) **संज्ञी-दो** : संज्ञी, असंज्ञी।

(१४) **आहार-दो** : आहारक, अनाहारक।

(१५) **गुणस्थान-चौदह** : मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत-सम्यग्दृष्टि, संयमासंयम,

प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, उपशान्तकषाय-छद्मस्थ, क्षीणकषायछद्मस्थ, सयोगकेवलीजिन तथा अयोगकेवलीजिन।

(१६) जीवसमास-उन्नीस : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, नित्यनिगोद और इतरनिगोद ये छहों सूक्ष्म भी होते हैं और बादर भी होते हैं अत: १२+सप्रतिष्ठित प्रत्येक+ अप्रतिष्ठितप्रत्येक=१४+ द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञीपंचेन्द्रिय, असंज्ञीपंचेन्द्रिय=१९

(१७) पर्याप्ति-छह : आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा तथा मन:पर्याप्ति।

(१८) प्राण-दस : ५ इन्द्रिय (स्पर्शनादि), ३ बल (मन, वचन, काय), श्वासोच्छ्वास और आयु।

(१९) संज्ञा-चार : आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा और परिग्रह संज्ञा।

(२०) उपयोग-बारह : ८ ज्ञानोपयोग-कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय तथा केवल ज्ञानोपयोग।

४ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन तथा केवलदर्शनोपयोग।

(२१) ध्यान-सोलह : ४ आर्त्तध्यान - इष्ट वियोगज, अनिष्ट संयोगज, वेदना और निदान।

४ रौद्रध्यान - हिंसानन्दी, मृषानन्दी, चौर्यानन्दी और परिग्रहानन्दी।

४ धर्मध्यान - आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थान विचय।

४ शुक्लध्यान - पृथक्त्ववितर्क वीचार, एकत्ववितर्क अवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

(२२) आस्रव के प्रत्यय-५७ : ५ मिथ्यात्व-विपरीत, एकान्त, विनय, संशय और अज्ञान।

१२ अविरति - ५ इन्द्रिय तथा मन को वश में करने तथा षट्काय के जीवों की रक्षा करने का संकल्प नहीं लेना।

२५ कषाय - अनन्तानुबन्धी आदि।

१५ योग - सत्य-मनोयोगादि।

(२३) जाति-८४ लाख :

(१)	नित्य निगोद	- ७ लाख	(८)	द्वीन्द्रिय	- २ लाख
(२)	इतर निगोद	- ७ लाख	(९)	त्रीन्द्रिय	- २ लाख
(३)	पृथ्वीकायिक	- ७ लाख	(१०)	चतुरिन्द्रिय	- २ लाख
(४)	जलकायिक	- ७ लाख	(११)	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च	- ४ लाख
(५)	अग्निकायिक	- ७ लाख	(१२)	नारकियों की	- ४ लाख
(६)	वायुकायिक	- ७ लाख	(१३)	देवों की	- ४ लाख
(७)	वनस्पतिकायिक	- १० लाख	(१४)	मनुष्यों की	- १४ लाख।

(२४) कुल - १९९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ :

(१)	पृथ्वीकायिक	- २२ लाखकरोड़	(८)	चतुरिन्द्रिय	- ९ लाखकरोड़
(२)	जलकायिक	- ७ लाखकरोड़	(९)	जलचर	- १२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़
(३)	अग्निकायिक	- ३ लाखकरोड़	(१०)	थलचर	- १९ लाखकरोड़
(४)	वायुकायिक	- ७ लाखकरोड़	(११)	नभचर	- १२ लाखकरोड़
(५)	वनस्पतिकायिक	- २८ लाखकरोड़	(१२)	नारकी	- २५ लाखकरोड़
(६)	द्वीन्द्रिय	- ७ लाखकरोड़	(१३)	देव	- २६ लाखकरोड़
(७)	त्रीन्द्रिय	- ८ लाखकरोड़	(१४)	मनुष्य	- १४ लाखकरोड़[१]

१. मनुष्यों के १२ लाख करोड़ कुल होते हैं। (गो.जी. ११६)

चौबीस स्थानों में गुणस्थान

१. गति-मार्गणा

	गति	गुणस्थान	विवरण
१.	नरक गति	चार	पहले से चौथे तक
२.	देव गति	चार	पहले से चौथे तक
३.	तिर्यञ्च गति	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	मनुष्यगति	चौदह	पहले से चौदहवें तक

२. इन्द्रिय-मार्गणा

	इन्द्रिय	गुणस्थान	विवरण
१.	एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक	दो	पहला, दूसरा
२.	पंचेन्द्रिय	चौदह	पहले से चौदह तक

३. काय-मार्गणा

	काय	गुणस्थान	विवरण
१.	पृथ्वी, जल, वनस्पति-कायिक	दो	पहला-दूसरा गुणस्थान
२.	अग्नि-वायुकायिक	एक	पहला गुणस्थान
३.	त्रसकायिक	चौदह	पहले से चौदह तक

४. योग-मार्गणा

	योग	गुणस्थान	विवरण
१.	सत्य-अनुभय मनोयोग	१३	पहले से तेरहवें तक
२.	सत्य अनुभय वचनयोग	१३	पहले से तेरहवें तक
३.	औदारिक काययोग	१३	पहले से तेरहवें तक
४.	असत्य उभय मनोयोग	१२	पहले से बारहवें तक
५.	असत्य उभय वचनयोग	१२	पहले से बारहवें तक
६.	औदारिक मिश्र काययोग	४	पहला, दूसरा, चौथा और तेरहवाँ
७.	कार्मण काययोग	४	पहला, दूसरा, चौथा और तेरहवाँ
८.	वैक्रियिक काययोग	४	पहले से चौथे तक
९.	वैक्रियिक मिश्र काययोग	३	पहला, दूसरा, चौथा
१०.	आहारक द्विक	१	छठा

५. वेद-मार्गणा

	वेद	गुणस्थान	विवरण
१.	तीनों वेद	नौ	पहले से नौवें तक

६. कषाय-मार्गणा

	कषाय	गुणस्थान	विवरण
१.	अनंतानुबंधी चतुष्क	दो	पहला-दूसरा
२.	अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क	चार	चौथे तक
३.	प्रत्याख्यानावरण चतुष्क	पाँच	पाँचवें तक
४.	संज्वलनत्रिक	नौ	पहले से नवम तक
५.	संज्वलन लोभ	दस	पहले से दसवें तक
६.	हास्यादि षट्कषाय	आठ	पहले से आठवें तक
७.	तीन वेद	नौ	पहले से नवम तक

७. ज्ञान-मार्गणा

	ज्ञान	गुणस्थान	विवरण
१.	कुमति, कुश्रुत, कुअवधि	दो	पहला, दूसरा
२.	मति-श्रुत-अवधि	नौ	चौथे से बारहवें तक
३.	मन:पर्ययज्ञान	सात	छठे से बारहवें तक
४.	केवलज्ञान	दो	तेरहवाँ-चौदहवाँ

८. संयम-मार्गणा

	संयम	गुणस्थान	विवरण
१.	असंयम	चार	पहले से चौथे तक
२.	संयमासंयम	एक	पाँचवाँ
३.	सामायिक-छेदोपस्थापना	चार	छठे से नवम तक
४.	परिहारविशुद्धि	दो	छठा-सातवाँ
५.	सूक्ष्मसाम्पराय	एक	दसवाँ
६.	यथाख्यात	चार	ग्यारहवें से चौदहवें तक

९. दर्शन-मार्गणा

	दर्शन	गुणस्थान	विवरण
१.	चक्षु-अचक्षु दर्शन	बारह	पहले से बारहवें तक
२.	अवधि दर्शन	दस	तीसरे से बारहवें तक
३.	केवल दर्शन	दो	तेरहवाँ चौदहवाँ

१०. लेश्या-मार्गणा

	लेश्या	गुणस्थान	विवरण
१.	कृष्ण-नील-कापोत	चार	पहले से चौथे तक
२.	पीत-पद्म	सात	पहले से सातवें तक
३.	शुक्ल	तेरह	पहले से तेरहवें तक

११. भव्य-मार्गणा

	भव्य	गुणस्थान	विवरण
१.	भव्य	१४	पहले से चौदहवें तक
२.	अभव्य	१	पहला

१२. सम्यक्त्व-मार्गणा

	सम्यक्त्व	गुणस्थान	विवरण
१.	क्षायिक	ग्यारह	चौथे से चौदहवें तक
२.	क्षायोपशमिक	चार	चौथे से सातवें तक
३.	औपशमिक	आठ	चौथे से ग्यारहवें तक
४.	सासादन सम्यक्त्व	एक	दूसरा
५.	सम्यग्मिथ्यात्व	एक	तीसरा
६.	मिथ्यात्व	एक	पहला

१३. संज्ञी मार्गणा

	संज्ञी	गुणस्थान	विवरण
१.	संज्ञी	बारह	पहले से बारहवें तक
२.	असंज्ञी	दो	पहला-दूसरा

१४. आहारक-मार्गणा

	आहारक	गुणस्थान	विवरण
१.	आहारक	तेरह	पहले से तेरहवें तक
२.	अनाहारक	पाँच	पहला, दूसरा, चौथा, तेरहवाँ, चौदहवाँ

१५. गुणस्थान

नोट : गुणस्थानों का कथन स्वकीय रूप होगा। अर्थात् जिस गुणस्थान का कथन है वही गुणस्थान होगा।

१६. जीवसमास

अ.	जीवसमास	गुणस्थान	विवरण
१.	नित्य निगोद सूक्ष्म	एक	पहला
२.	नित्य निगोद बादर	एक	पहला
३.	इतर निगोद सूक्ष्म	एक	पहला
४.	इतर निगोद बादर	एक	पहला
५.	पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
६.	जलकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
७.	अग्निकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
८.	अग्निकायिक बादर	एक	पहला
९.	वायुकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
१०.	वायुकायिक बादर	एक	पहला
ब.	**जीवसमास**	**गुणस्थान**	**विवरण**
१.	पृथ्वीकायिक बादर	दो	पहला-दूसरा
२.	जलकायिक बादर	दो	पहला-दूसरा
३.	सप्रतिष्ठित वनस्पति	दो	पहला-दूसरा
४.	अप्रतिष्ठित वनस्पति	दो	पहला-दूसरा
५.	द्वीन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
६.	त्रीन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
७.	चतुरिन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
८.	असंज्ञी पंचेन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
स.	**जीवसमास**	**गुणस्थान**	**विवरण**
१.	संज्ञी पंचेन्द्रिय	१२	पहले से बारहवें तक

१७. पर्याप्ति

	पर्याप्ति	गुणस्थान	विवरण
१.	(चार तथा पाँच) आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा	एक	पहला
२.	आहार, शरीर, इन्द्रिय श्वासोच्छ्वास, भाषा, मन	चौदह	पहले से चौदहवें तक

१८. प्राण[1]

	प्राण	गुणस्थान	विवरण
१.	१	एक	चौदहवाँ
२.	२	एक	तेरहवाँ
३.	४	तीन	पहला, दूसरा, तेरहवाँ
४.	३,५,६	दो	पहला-दूसरा
५.	८,९	एक	पहला
६.	७	चार	पहला, दूसरा, चौथा, छठा
७.	१०	बारह	पहले से बारहवें तक

१९. संज्ञा

	संज्ञा	गुणस्थान	विवरण
१.	आहार	छह	पहले से छठा
२.	भय	आठ	पहले से आठवाँ
३.	मैथुन	नौ	पहले से नौवाँ
४.	परिग्रह	दस	पहले से दसवाँ

२०. उपयोग

	उपयोग	गुणस्थान	विवरण
१.	मति-श्रुत-अवधि ज्ञानोपयोग	नौ	चौथे से बारहवें तक
२.	मन:पर्यय ज्ञानोपयोग	सात	छठे से बारहवें तक
३.	केवलज्ञानोपयोग	दो	तेरहवाँ - चौदहवाँ

१. विशेष वर्णन देखें प्राण प्ररूपणा में....

४.	कुमति, कुश्रुत, कुअवधिज्ञानोपयोग	दो	पहला, दूसरा
५.	चक्षु-अचक्षु दर्शनोपयोग	बारह	पहले से बारहवें तक
६.	अवधि दर्शनोपयोग	दस	तीसरे से बारहवें तक
७.	केवलदर्शनोपयोग	दो	तेरहवाँ - चौदहवाँ

२१. ध्यान

	ध्यान	गुणस्थान	विवरण
१.	निदान रहित तीन आर्त्त ध्यान	छह	पहले से छठे तक
२.	निदान आर्त्तध्यान एवं चार रौद्र ध्यान	पाँच	पहले से पाँचवें तक
३.	पहला धर्मध्यान	पाँच	तीसरे से सातवें तक
४.	दूसरा धर्मध्यान	चार	चौथे से सातवें तक
५.	तीसरा धर्मध्यान	तीन	पाँचवें से सातवें तक
६.	चौथा धर्मध्यान	दो	छठा-सातवाँ
७.	पहला शुक्ल ध्यान	पाँच	आठवें से बारहवें तक
८.	दूसरा शुक्ल ध्यान	एक	बारहवाँ
९.	तीसरा शुक्ल ध्यान	एक	तेरहवाँ
१०.	चौथा शुक्ल ध्यान	एक	चौदहवाँ

२२. आस्रव के प्रत्यय

	आस्रव	गुणस्थान	विवरण
१.	पाँच मिथ्यात्व	एक	पहला
२.	बारह अविरति	चार	पहले से चौथे तक
३.	ग्यारह अविरति (त्रस बिना)	एक	पाँचवाँ

विशेष : कषाय तथा योग संबंधी आस्रव-प्रत्ययों के गुणस्थान देखें - कषाय और योग मार्गणा में।

२३. जाति

	जाति	गुणस्थान	विवरण
१.	२८ लाख (इतर निगोद, नित्यनिगोद, अग्निकायिक वायुकायिक)	एक	पहला
२.	३० लाख (पृथ्वी, जल, वनस्पतिकायिक, विकलत्रय)	दो	पहला, दूसरा
३.	४ लाख (पंचे. तिर्यंच)	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	८ लाख (देव-नारकी)	चार	पहले से चौथे तक
५.	१४ लाख (मनुष्य)	चौदह	पहले से चौदहवें तक

२४. कुल

	कुल	गुणस्थान	विवरण
१.	१० लाख करोड़ (अग्निकायिक, वायुकायिक)	एक	पहला
२.	८१ लाख करोड़ (पृथ्वी. जल. वनस्पतिकायिक विकलत्रय)	दो	पहला, दूसरा
३.	४३ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ (तिर्यंच पंचे.)	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	५१ लाख करोड़ (देव नारकी)	चार	पहले से चौथे तक
५.	१४ लाख करोड़ (मनुष्य)	चौदह	पहले से चौदहवें तक

❊ मार्गणा ❊

१. प्रश्न : मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : प्रवचन में जिस प्रकार से देखे गये हों, उसी प्रकार से जीवादि पदार्थों का जिन भावों के द्वारा अथवा जिन पर्यायों में विचार-अन्वेषण किया जाय उन्हें मार्गणा कहते हैं। **(गो. जी. १४१)**

जिन धर्मविशेषों से जीवों की खोज हो सके उन धर्मविशेषों से जीवों को खोजना **मार्गणा है।**

मार्गणा, गवेषणा और अन्वेषण ये तीनों शब्द एकार्थवाची हैं। सत्-संख्या आदि अनुयोग द्वारों से युक्त-चौदह जीवसमास जिसमें या जिसके द्वारा खोजे जाते हैं उसे **मार्गणा** कहते हैं। **(ध. १/१३२)**

२. प्रश्न : मार्गणाएँ कितनी होती हैं ?

उत्तर : मार्गणाएँ चौदह होती हैं - (१) गति (२) इन्द्रिय (३) काय (४) योग (५) वेद (६) कषाय (७) ज्ञान (८) संयम (९) दर्शन (१०) लेश्या (११) भव्यत्व (१२) सम्यक्त्व (१३) संज्ञी (१४) आहार।

३. प्रश्न : संसारी जीवों के कौनसी मार्गणाओं का अभाव भी हो सकता है?

उत्तर : संसारी जीवों के पाँच मार्गणाओं का अभाव भी हो सकता है –

१. योग – १४वें गुणस्थान में।
२. वेद – नौवें गुणस्थान के अवेदभाग से १४वें गुणस्थान तक।
३. कषाय – ग्यारहवें गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक।
४. लेश्या – चौदहवें गुणस्थान में।
५. संज्ञी – तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में।

४. प्रश्न : सिद्ध भगवान के कौन-कौनसी मार्गणाएँ होती हैं?

उत्तर : सिद्ध भगवान के चार मार्गणाएँ होती हैं –

१. ज्ञान – केवलज्ञान।
२. दर्शन – केवलदर्शन।
३. सम्यक्त्व – क्षायिक सम्यक्त्व।
४. आहारक – अनाहारक।

विशेष : वैसे सिद्ध भगवान मार्गणातीत होते हैं लेकिन ये चार मार्गणाएँ उपचार से कही गई हैं, क्योंकि सिद्ध भगवान के ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व आदि शुद्ध गुण होते हैं।

१. गति मार्गणा

१. **प्रश्न : गति मार्गणा किसे कहते हैं ?**

उत्तर : गति नाम कर्म के उदय से उस-उस गति विषयक भाव के कारणभूत जीव की अवस्था विशेष को **गति** कहते हैं।

जिसके उदय से आत्मा भवान्तर को जाता है, वह गति नामकर्म है। **(मू. १२३६)**

गति नामकर्म के उदय से होने वाली जीव पर्याय को अथवा चारों गतियों में गमन के कारण को गति कहते हैं। **(गो. जी. १४६)**

नोट - इन गतियों में जीवों की खोज करने को **गति मार्गणा** कहते हैं।

२. **प्रश्न : गति मार्गणा कितने प्रकार की है ?**

उत्तर : गति मार्गणा चार प्रकार की होती है- (१) नरकगति (२) तिर्यञ्चगति (३) मनुष्यगति (४) देवगति। **(वृ. द्र.सं. १३ टी.)** नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, देवगति तथा सिद्धगति में भी जीव होते हैं। **(ध.७/५२२)**

३. **प्रश्न : नरकगति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जो द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में स्वयं तथा परस्पर में प्रीति को प्राप्त नहीं होते हैं उनको नारक कहते हैं। नारक की गति को **नरकगति** कहते हैं। **(गो. जी. १४७)**

नीचे अधोलोक में घम्मा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मघवा तथा माघवी नामकी सात पृथिवियाँ हैं। उनमें नारकी जीव रहते हैं। वे नारकी क्षेत्रजनित, मानसिक और शारीरिक आदि अनेक प्रकार के दु:खों को दीर्घ काल तक भोगते हैं, उनकी गति को **नरकगति** कहते हैं।

४. **प्रश्न : तिर्यञ्चगति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : देव, नारकी तथा मनुष्यों को छोड़कर शेष सभी तिर्यञ्च कहलाते हैं। तियञ्चों की गति को **तिर्यञ्चगति** कहते हैं। **(त. सू. ४/२७)**

(१) जो मन-वचन-काय की कुटिलता से युक्त हो।

(२) जिनकी आहारादि संज्ञा व्यक्त (स्पष्ट) हो।

(३) जो निकृष्ट अज्ञानी हो।

(४) जिनमें अत्यन्त पाप का बाहुल्य पाया जाय वे तिर्यञ्च हैं। इन तिर्यञ्चों की गति को तिर्यञ्चगति कहते हैं। **(गो. जी. १४८)**

५. प्रश्न : **मनुष्यगति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिनके मनुष्यगति नामकर्म का उदय पाया जाता है उन्हें मनुष्य कहते हैं। उनकी गति को मनुष्य गति कहते हैं।

(१) जो नित्य हेय-उपादेय, तत्त्व-अतत्त्व, आप्त-अनाप्त, धर्म-अधर्म आदि का विचार करे,

(२) जो मन से गुण-दोषादि का विचार, स्मरण आदि कर सके,

(३) जो मन के विषय में उत्कृष्ट हो,

(४) जो शिल्प-कला आदि में कुशल हो तथा

(५) जो युग की आदि में मनुओं से उत्पन्न हों, वे मनुष्य हैं उनकी गति को **मनुष्यगति** कहते हैं। **(गो. जी. १४९)**

६. प्रश्न : **देवगति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : भवनवासी आदि चार प्रकार के देवों की गति को **देवगति** कहते हैं।

(१) जो देवगति में पाये जाने वाले परिणाम से सदा सुखी हों,

(२) जो अणिमादि गुणों से सदा अप्रतिहत (बिना रोक-टोक) विहार करते हों,

(३) जिनका रूप-लावण्य-यौवन सदा प्रकाशमान हो, वे देव हैं। उन देवों की गति को **देवगति** कहते हैं। **(गो. जी. १५१ मं.)**

७. प्रश्न : **सिद्धगति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : यद्यपि सिद्ध भगवान के किसी गति नामकर्म का उदय नहीं है फिर भी आठ कर्मों का नाश करके सिद्ध भगवान लोक के अग्र भाग में गमन करते हैं।

(१) जो एकेन्द्रिय आदि जाति, बुढ़ापा, मरण तथा भय से रहित हों,

(२) जो इष्ट-वियोग, अनिष्ट संयोग से रहित हों,

(३) जो आहारादि संज्ञाओं से रहित हों,

(४) जो रोग, आधि-व्याधि से रहित हों, वे सिद्ध भगवान हैं, उनकी गति को सिद्धगति कहते हैं। **(गो. जी. १५२)**

जो ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से रहित हैं, अनन्त सुख रूप अमृत के अनुभव करने वाले शान्तिमय हैं, नवीन कर्म बन्ध के कारणभूत मिथ्यादर्शनादि भाव कर्म रूपी अञ्जन से रहित हैं, नित्य हैं, जिनके सम्यक्त्वादि भाव रूप मुख्य गुण प्रकट हो चुके हैं, जो कृतकृत्य हैं, लोक के अग्रभाग में निवास करने वाले हैं, उनको सिद्ध कहते हैं और उनकी गति को सिद्धगति कहते हैं। **(गो. जी. ६८)**

तालिका संख्या १

नरक-गति

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	नरकगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ मनो. ४ वच. ३ काय.	औदारिकद्विक तथा आहारकद्विक नहीं हैं।
५.	वेद	१	नपुंसक	
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद नहीं हैं
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान, ३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु, अचक्षु, अवधि	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	३	कृ. नी. का.	शुभ लेश्याएँ नहीं हैं।
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षयो.उप.सासा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	मि. सा. मिश्र अविरत.	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रि., ३ बल, श्वा. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनोपयोग	
२१.	ध्यान	९	४ आ. ४ रौ. १ धर्म.	आज्ञाविचय धर्मध्यान होता है।
२२.	आस्रव	५१	५ मि.१२ अ.२३ क.११ यो.	
२३.	जाति	४ लाख	नरक सम्बन्धी	तिर्य., मनुष्य तथा देवों की जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	२५ ला.क.	नरक सम्बन्धी	तिर्य., मनुष्य तथा देवों के कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : नरक कितने हैं ?

उत्तर : नरक सात हैं - (१) रत्नप्रभा (२) शर्कराप्रभा (३) बालुकाप्रभा (४) पंकप्रभा (५) धूमप्रभा (६) तम:प्रभा (७) महातम:प्रभा। ये सात पृथिवियाँ हैं। **(त.सू.३/१)**

इनमें सात नरक हैं- (१) घम्मा (२) वंशा (३) मेघा (४) अंजना (५) अरिष्टा (६) मघवा (७) माघवी। **(ति.प. १/१५३)**

२. **प्रश्न : नरकों में सभी पंचेन्द्रिय ही होते हैं तो वहाँ कीड़ों से भरी नदी कैसे बताई गई है?**

उत्तर : यह सत्य है कि नरकों में सभी पंचेन्द्रिय ही होते हैं। एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीव तिर्यञ्चगति में ही पाये जाते हैं। नरकों में जो वैतरणी नदी को कीड़ों से भरी हुई बतलाया है वे कीड़े स्वयं नारकी अपनी विक्रिया के बल से बन जाते हैं। उनका कीड़ों का आकार आदि होने पर भी वे नारकी ही होते हैं क्योंकि उनके नरकगति, नरकायु आदि प्रकृतियों का उदय होता है। जैसे- नारकी हांडी, वसूला, करौत, भाला आदि रूप विक्रिया कर लेने से अजीव नहीं हो जाते, गाय आदि की विक्रिया कर लेने से गाय आदि के समान दूध देने में समर्थ नहीं हो जाते हैं वैसे ही कीड़ों के बारे में भी समझना चाहिए। **(ति. प.२/३१८-३२२ के आधार से)**

३. **प्रश्न : क्या नरक में स्थावर जीव नहीं पाये जाते हैं ?**

उत्तर : सूक्ष्म स्थावर जीव सर्व लोक में ठसाठस भरे हुए हैं। **(गो.जी. १८४)** अत: यदि नरकों में स्थावर जीव होवे तो कोई आश्चर्य नहीं है, लेकिन वे स्थावर जीव नरक की भूमि में रहने मात्र से नारकी नहीं हो जाते और न वे नरकगति के जीव ही कहला सकते हैं, क्योंकि नारकी तो वही होता है जिसके नरकायु आदि का उदय होता है। इन स्थावरों के इन प्रकृतियों का उदय नहीं होता है। अत: वे नरक भूमि में रहकर भी नारकी नहीं कहलाते हैं। जैसे- असुरकुमार आदि देव भी नरक में जाते हैं। कुछ समय तक वहाँ रुकते भी हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि वे नारकी हो जाते हैं क्योंकि उनके देवगति नामकर्म का उदय है।

४. **प्रश्न : नारकियों के कार्मण-काययोग में कौन-कौनसा गुणस्थान हो सकता है ?**

उत्तर : नारकियों के कार्मण काययोग में दो गुणस्थान हो सकते हैं- (१) मिथ्यात्व (२) अविरत सम्यग्दृष्टि।

नोट-(१) कोई भी जीव दूसरे गुणस्थान को लेकर नरक गति में नहीं जाता तथा तीसरे गुणस्थान में मरण नहीं होता **(ध. १)** अत: ये दोनों गुणस्थान नारकियों की कार्मण काययोग अवस्था में नहीं होते हैं। (२) चौथा गुणस्थान मात्र प्रथम नरक की कार्मण अवस्था में ही होता है, अन्य नरकों में नहीं।

५. **प्रश्न : नारकियों के निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में सासादन गुणस्थान क्यों नहीं होता ?**

उत्तर : सासादन गुणस्थान वाला नरक में उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि सासादन गुणस्थान वाले के नरकायु का बन्ध नहीं होता है। जिसने पहले नरकायु का बन्ध कर लिया है, ऐसे जीव भी सासादन गुणस्थान को प्राप्त होकर नारकियों में उत्पन्न नहीं होते हैं; क्योंकि नरकायु का बन्ध करने वाले जीव का सासादन गुणस्थान में मरण नहीं होता है। **(ध. १ /३२५-२६)**

६. प्रश्न : नारकियों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितने योग होते हैं ?

उत्तर : नारकियों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में एक योग ही होता है- वैक्रियिकमिश्रकाय योग। क्योंकि कार्मण-काययोग विग्रहगति में तथा शेष योग पर्याप्त अवस्था में ही होते हैं।

७. प्रश्न : नारकियों के आहारक अवस्था में कितने योग होते हैं ?

उत्तर : नारकियों के आहारक अवस्था में दस योग होते हैं –

४ मनोयोग, ४ वचनयोग, २ काययोग (वैक्रियिक द्विक)

८. प्रश्न : नारकियों के नपुंसक वेद ही क्यों होता है ?

उत्तर : नरक गति पाप के उदय से प्राप्त होती है। वहाँ जीवों को दु:ख ही दु:ख होते हैं। स्त्रीवेद वाला पुरुष के साथ तथा पुरुषवेद वाला स्त्री के साथ रमण करके सुख प्राप्त कर लेता है। नपुंसकवेद वाले की वासनाएँ स्त्री-पुरुष वेद वालों की अपेक्षा कई गुणी होती है, लेकिन वह न पुरुष के साथ रम सकता है और न स्त्री के साथ इसलिए वह वासनाओं से संतप्त रहता है। नरकों में यदि स्त्री-पुरुष वेद होगा तो उन्हें सुख मिल जायेगा। परन्तु वहाँ पंचेन्द्रियजनित विषयों से उत्पन्न कोई सुख नहीं होता है, शायद इसीलिए उनके नपुंसक वेद ही होता है।

निरन्तर दु:खी होने के कारण उनके दो (स्त्री-पुरुष) वेद नहीं होते हैं। **(ध. १/३४७)**

९. प्रश्न : चतुर्थ नरक के नारकियों के कितनी कषायें होती हैं ?

उत्तर : चतुर्थ नरक के नारकियों के अधिक से अधिक २३ कषायें होती हैं – अनन्तानुबन्धी चतुष्क, अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क, प्रत्याख्यानावरण चतुष्क, संज्वलन चतुष्क तथा स्त्रीवेद-पुरुषवेद के बिना हास्यादि ७ नोकषाय, कम-से-कम १९ कषायें होती हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्क का अभाव होने पर सम्यग्दृष्टि जीव के १९ कषायें होती हैं।

नोट : इसी प्रकार सभी नरकों में जानना चाहिए।

१०. प्रश्न : क्या कोई ऐसा सम्यग्दृष्टि नारकी है जिसके अवधिज्ञान नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, जो सम्यग्दृष्टि जीव (मनुष्य) अवधिज्ञान लेकर नरक में नहीं जाता है, उस सम्यग्दृष्टि नारकी के विग्रहगति में निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में तथा पर्याप्त अवस्था में जब तक अवधिज्ञान उत्पन्न नहीं होता तब तक उस सम्यग्दृष्टि नारकी के अवधिज्ञान नहीं होता है।

११. प्रश्न : क्या सभी नारकियों के छहों ज्ञान होते हैं ?

उत्तर : नहीं, सभी नारकियों के छहों ज्ञान नहीं होते हैं-

सम्यग्दृष्टि नारकी के तीन ज्ञान होते हैं - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान।

मिथ्यादृष्टि तथा सासादन सम्यग्दृष्टि के तीन - कुज्ञान (अज्ञान) होते हैं
कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान
मिश्र गुणस्थानवर्ती नारकी के तीनों ही ज्ञान मिश्र रूप होते हैं।

१२. प्रश्न : क्या सभी नारकियों के समान रूप से तीनों अशुभ लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : नहीं, सभी नरकों में अलग-अलग लेश्याएँ होती हैं -

नरक	-	**लेश्या**
प्रथम नरक में	-	जघन्य कापोत।
दूसरे नरक में	-	मध्यम कापोत।
तीसरे नरक में	-	उत्कृष्ट कापोत तथा जघन्य नील।
चतुर्थ नरक में	-	मध्यम नील।
पंचम नरक में	-	उत्कृष्ट नील तथा जघन्य कृष्ण।
छठे नरक में	-	मध्यम कृष्ण।
सातवें नरक में	-	उत्कृष्ट कृष्ण। **(त. सा. २० टी.)**

१३. प्रश्न : नारकियों के अशुभ लेश्या ही क्यों होती है ?

उत्तर : नारकियों के नित्य संक्लेश परिणाम ही होते हैं, इसलिए उनके अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

१४. प्रश्न : क्या नारकियों के द्रव्य और भाव से अशुभ लेश्या ही होती है ?

उत्तर : हाँ, नारकियों के शरीर नियम से हुण्डक संस्थान वाले ही होते हैं, इसलिए उनके द्रव्य से अशुभ लेश्या ही होती है। सभी नारकियों के पर्याप्तावस्था में द्रव्य से कृष्ण लेश्या ही होती है। **(ध. २/४५०)**

नारकानित्याशुभ. (त. सू. ३/३) के अनुसार उनके भाव भी हमेशा अशुभतर ही रहते हैं इसलिए उनके भाव से भी अशुभ लेश्या ही होती है।

१५. प्रश्न : नारकियों की अपर्याप्त-अवस्था में कितने सम्यक्त्व होते हैं ?

उत्तर : नारकियों की अपर्याप्त-अवस्था में तीन सम्यक्त्व होते हैं-(१) मिथ्यात्व (२) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व (३) क्षायिक सम्यक्त्व।

(१) घम्मा नरक की अपर्याप्त अवस्था में तीनों सम्यक्त्व होते हैं। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कृतकृत्यवेदक की अपेक्षा समझना चाहिए। वंशा आदि माघवी पर्यन्त नरकों की अपर्याप्त अवस्था में केवल एक मिथ्यात्व ही होता है।

नोट – बद्धायुष्क तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला भी क्षायोपशमिक सम्यक्त्व को लेकर प्रथम नरक में नहीं जा सकता है। क्योंकि बद्धायुष्क कृतकृत्य वेदक तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टि को छोड़कर शेष कोई भी जीव सम्यग्दर्शन को लेकर नरक में नहीं जा सकता है।

(२) प्रथमोपशम सम्यक्त्व तथा मिश्र सम्यक्त्व में मरण नहीं होता और सासादन को लेकर जीव नरक में नहीं जाता इसलिए नारकियों की अपर्याप्त अवस्था में ये तीनों सम्यक्त्व नहीं होते हैं।

१६. प्रश्न : नारकी कौन-कौनसा सम्यग्दर्शन उत्पन्न कर सकते हैं ?

उत्तर : नारकी दो सम्यग्दर्शन उत्पन्न कर सकते हैं- (१) प्रथमोपशम-सम्यग्दर्शन (२) क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन।

नारकी क्षायिक सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं कर सकते; क्योंकि क्षायिक सम्यग्दर्शन का प्रारम्भ कर्मभूमिया मनुष्य ही करते हैं। कृतकृत्य वेदक वहाँ जाकर सम्यक् प्रकृति का क्षय करके क्षायिक सम्यग्दर्शन का निष्ठापन कर सकता है।

नोट – सम्यक्त्व मार्गणा में से नारकी मिथ्यात्व, सासादन तथा मिश्र सम्यक्त्व को भी उत्पन्न कर सकते हैं।

१७. प्रश्न : नारकियों की पर्याप्त अवस्था में कितने सम्यक्त्व होते हैं ?

उत्तर : प्रथम नरक के नारकियों की पर्याप्त अवस्था में सभी सम्यक्त्व होते हैं। दूसरे से सातवें नरक तक क्षायिक सम्यग्दर्शन नहीं होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव मरकर प्रथम नरक से आगे नहीं जाता है। अर्थात् प्रथम नरक में सभी सम्यक्त्व होते हैं और शेष नरकों में क्षायिक सम्यक्त्व के बिना पाँच ही सम्यक्त्व होते हैं।

१८. प्रश्न : नारकियों में पंचमादि गुणस्थान क्यों नहीं होते ?

उत्तर : अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय से सहित हिंसा में आनन्द मानने वाले और नाना प्रकार के प्रचुर दु:खों से संयुक्त उन सब नारकी जीवों के देशविरत आदिक उपरितन दश गुणस्थानों के हेतुभूत जो विशुद्ध परिणाम हैं, वे कदाचित् भी नहीं होते हैं। **(ति. प. २/२७५-७६)**

प्रथमादि चार गुणस्थानों के अतिरिक्त ऊपर के गुणस्थानों का नरक में सद्भाव नहीं है; क्योंकि संयमासंयम और संयम पर्याय के साथ नरकगति में उत्पत्ति होने का विरोध है। **(ध. १/२०८)**

१९. प्रश्न : नारकियों के आर्त्तध्यान कैसे घटित होते हैं ?

उत्तर : नारकियों में आर्त्तध्यान –

इष्ट वियोगज : नारकी जब अपनी विक्रिया से शस्त्रादि बनाते हैं, उसको यदि दूसरे नारकी

छीन ले, ध्वस्त (नष्ट) कर दे तो इष्ट वियोग हो सकता है, हो जाता है। तीसरे नरक तक कोई देव किसी को सम्बोधन करने गया। वह जब संबोधन करके चला जाता है, तो उसके वियोग में नारकी को इष्ट वियोग आर्त्तध्यान हो सकता है।

अनिष्ट संयोगज : एक नारकी को जब दूसरे नारकी मारते हैं, दु:ख देते हैं तो उन्हें दूर करने के लिए बार-बार विचार उत्पन्न होते हैं तब उस नारकी के अनिष्ट संयोगज आर्त्तध्यान हो सकता है।

वेदना-आर्त्तध्यान : नारकियों के शीत-उष्ण आदि वेदनाओं को दूर करने की भावनाओं से वेदना आर्त्तध्यान संभव है।

निदान-आर्त्तध्यान : नारकी जातिस्मरण से भोगों को जानकर भावी भोगों की आकांक्षा कर सकते हैं।

तीसरे नरक तक आये हुए देवों के वैभव को देखकर निदान कर सकते हैं। नारकियों में ऐसे ही और भी आर्त्तध्यान हो सकते हैं।

२०.प्रश्न : नारकी जीव भगवान के दर्शन, पूजा, स्वाध्याय, गुरुओं की भक्ति, आहारदान आदि कुछ नहीं कर सकता है, तो उसके धर्मध्यान कैसे हो सकता है ?

उत्तर : भगवान की पूजा, दर्शनादि कार्य एकान्त से धर्मध्यान नहीं हैं। पूजा आदि कार्य धर्मध्यान प्राप्त करने की पूर्व भूमिका है। इन सब कार्यों को करते हुए भी मिथ्यादृष्टि जीव के धर्मध्यान नहीं होता है। सम्यग्दृष्टि नारकी के ''जो जिनेन्द्र भगवान ने सच्चे देव-शास्त्र -गुरु, तत्त्व, द्रव्य, मोक्षमार्ग आदि का स्वरूप बताया है वही सच्चा है, उसी से मेरा कल्याण अर्थात् मुझे शाश्वत सच्चे सुख की प्राप्ति हो सकती है'' इस प्रकार की श्रद्धा (आज्ञा सम्यक्त्व) होती है और इसी रूप में नारकी के एक आज्ञाविचय धर्मध्यान होता है।

२१.प्रश्न : सम्यग्दृष्टि नारकी के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : प्रथम नरक में सम्यग्दृष्टि नारकी के आस्रव के ४२ प्रत्यय होते हैं- १२ अविरति, १९ कषाय (अनन्तानुबन्धी चतुष्क तथा दो वेद रहित) तथा ११ योग (औदारिकद्विक तथा आहारकद्विक बिना)। दूसरे आदि नरकों में वैक्रियिक मिश्र तथा कार्मण काय योग सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय भी निकल जाने से ४० प्रत्यय ही होते हैं।

तालिका संख्या २

तिर्यंच-गति

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यंचगति	
२.	इन्द्रिय	५	पाँचों इन्द्रियाँ	
३.	काय	६	१ त्रस. ५ स्थावर	
४.	योग	११	४ मन. ४ वचन ३ काय.	वैक्रियिकद्विक तथा आहारकद्विक नहीं हैं।
५.	वेद	३	तीनों वेद	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान, ३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	२	संयमासंयम, असंयम	सामायिकादि संयम नहीं हैं।
९.	दर्शन	३	चक्षु, अचक्षु, अवधि	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	द्रव्य और भावरूप से सभी लेश्याएँ	
११.	भव्यत्व	२	भव्यत्व, अभव्यत्व	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा. क्षयो. उप. सासा. मिश्र. मि.	क्षायिक सम्यक्त्व भोगभूमि की अपेक्षा होता है।
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	५	मि. सा. मिश्र. अवि. संयमा.	पाँचवाँ गुणस्थान कर्म-भूमि की अपेक्षा होता है।
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर, ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	छहों पर्याप्तियाँ	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रि., ३ बल, श्वा. आयु.	१० प्राण संज्ञी पंचेन्द्रिय के ही होते हैं।
१९.	संज्ञा	४	चारों संज्ञाएँ	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनोपयोग	
२१.	ध्यान	११	४ आ. ४ रौ. ३ धर्म.	संस्थान विचय धर्मध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	५३	५ मि. १२ अ. २५ क. ११ यो.	
२३.	जाति	६२लाख	एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच तक	नरक, मनुष्य तथा देव सम्बन्धी जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	१३४$\frac{१}{२}$ ला.क.	एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच तक	नरक, मनुष्य तथा देव सम्बन्धी कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : तिर्यञ्च कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : तिर्यञ्चगति के जीव पृथ्वी आदि एकेन्द्रिय के भेद से, शम्बूक, जू, मच्छर आदि विकलेन्द्रिय के भेद से, जलचर-थलचर, नभचर, द्विपद, चतुष्पदादि पंचेन्द्रिय के भेद से बहुत प्रकार के होते हैं। **(पं.का.ता.११८)**

जन्म की अपेक्षा तिर्यञ्च दो प्रकार के होते हैं-(१) गर्भज (२) सम्मूर्च्छिम जन्म वाले **(का. अ. १३०)**

२. प्रश्न : तिर्यञ्च जीव कहाँ-कहाँ रहते हैं ?

उत्तर : पन्द्रह कर्म-भूमियों में भी तिर्यञ्च रहते हैं। ढाईद्वीप के बाहर असंख्यात द्वीप-समुद्रों में स्थित सभी भोगभूमियों तथा आधे स्वयंभूरमण द्वीप और स्वयंभूरमण समुद्र में तिर्यञ्च ही रहते हैं। भोग-भूमियों में भी तिर्यञ्च रहते हैं। विशेष रूप से एकेन्द्रिय तिर्यञ्च सर्वलोक में ठसाठस भरे हुए हैं।

३. प्रश्न : किन-किन तिर्यञ्चों के नपुंसक वेद ही होता है ?

उत्तर : एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के सभी जीव और सम्मूर्च्छन पर्याप्त पंचेन्द्रिय तथा लब्ध्यपर्याप्तक पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च भी नपुंसकवेद वाले ही होते हैं। **(त. सू. २/५०)**

४. प्रश्न : तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में तीन अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं क्योंकि तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वाले देव यदि तिर्यञ्चों में उत्पन्न होते हैं तो नियम से उनकी शुभ लेश्याएँ नष्ट हो जाती हैं इसलिए तिर्यञ्चों के निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं। **(ध. २/४७३)**

५. प्रश्न : तिर्यञ्चों में क्षायिकसम्यग्दर्शन किस अपेक्षा से होता है ?

उत्तर : जिस मनुष्य ने तिर्यञ्च आयु का बन्ध कर लिया है फिर क्षायिकसम्यक्त्व का प्रतिष्ठापक हुआ है या क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया है तो वह मरकर भोगभूमि में तिर्यञ्च बनता है। कर्मभूमिया तिर्यञ्चों के किसी भी अपेक्षा क्षायिक सम्यग्दर्शन नहीं होता है।

६. प्रश्न : क्या बद्धायुष्क सम्यग्दृष्टि मनुष्य के समान बद्धायुष्क सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च भी भोगभूमि में जा सकता है ?

उत्तर : नहीं, तिर्यञ्च क्षायिक सम्यग्दर्शन का प्रतिष्ठापक नहीं होता और न कर्मभूमिया तिर्यञ्चों को क्षायिकसम्यग्दर्शन ही होता है, क्योंकि, क्षायिक-सम्यग्दर्शन का प्रारम्भ कर्मभूमिया मनुष्य ही केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में करते हैं। तथा जिसने तिर्यञ्च, मनुष्य और नरकायु को बाँध लिया है वह मिथ्यात्व के साथ ही मरणकर तिर्यञ्चादि गतियों में जाता

है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य (बद्धायुष्क मनुष्य को छोड़कर) और तिर्यञ्च नियम से स्वर्ग में ही जाते हैं।

७. प्रश्न : **बद्धायुष्क किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिसने अगले भव की आयु बाँध ली है वह बद्धायुष्क कहलाता है। बद्धायुष्क का कथन क्षायिक एवं कृतकृत्यवेदक की मुख्यता से ही किया गया है।

८. प्रश्न : **क्या इसी प्रकार बद्धायुष्क मुनि भी भोगभूमिया तिर्यञ्च बन सकता है ?**

उत्तर : नहीं, जिस मनुष्य ने देवायु को छोड़कर शेष किसी भी आयु का बन्ध कर लिया है, वह अणुव्रत तथा महाव्रत धारण नहीं कर सकता है, ऐसा नियम है। इसलिए बद्धायुष्क मुनि भी भोगभूमि में उत्पन्न नहीं हो सकता है। **(गो. क. ३३४)** इसी प्रकार देवायु को छोड़कर शेष आयु बाँधने वाला तिर्यञ्च भी अणुव्रत धारण नहीं कर सकता है।

९. प्रश्न : **क्या मत्स्य भी क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो सकता है ?**

उत्तर : नहीं, मत्स्य क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता है क्योंकि तिर्यञ्चों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव भोग-भूमियों में ही होते हैं। भोग-भूमि में जलचर जीव नहीं पाये जाते हैं **(ति.प. ४/३२८)** इसलिए मत्स्य क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता है। मत्स्य नियम से कर्मभूमि में ही होते हैं।

नोट - इसी प्रकार सम्मूर्च्छन मत्स्य के प्रथमोपशम सम्यक्त्व भी नहीं होता है क्योंकि प्रथमोपशमसम्यक्त्व गर्भज जीवों के ही होता है। **(ध.पु.)**

१०.प्रश्न : **सम्मूर्च्छन तिर्यञ्चों के कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ?**

उत्तर : सम्मूर्च्छन तिर्यञ्चों के चार सम्यक्त्व हो सकते हैं- (१) मिथ्यात्व (२) सासादन (३) सम्यग्मिथ्यात्व (४) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व। भोगभूमि में सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रिय जीव नहीं होते हैं, इसलिए सम्मूर्च्छन तिर्यञ्चों में क्षायिक-सम्यक्त्व नहीं कहा है।

११.प्रश्न : **यदि सम्मूर्च्छन जीवों के उपशम-सम्यक्त्व नहीं होता है, तो उनके सासादन-सम्यक्त्व कैसे हो सकता है, क्योंकि उपशम सम्यक्त्व के बिना सासादन सम्यक्त्व नहीं हो सकता है ?**

उत्तर : यद्यपि सम्मूर्च्छन जीवों के प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं होता है फिर भी पूर्व भव से अर्थात् कोई मनुष्य-तिर्यञ्च सासादन-सम्यक्त्व को लेकर सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होता है तो उसके सासादन-सम्यक्त्व का अस्तित्व बन जाता है।

१२.प्रश्न : **क्या तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक-अवस्था में भी सभी सम्यक्त्व होते हैं ?**

उत्तर : नहीं, तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक-अवस्था में चार सम्यक्त्व होते हैं- (१) मिथ्यात्व (२) सासादन (३) क्षयोपशम और (४) क्षायिक सम्यक्त्व। उपशम और मिश्र नहीं होते हैं।

नोट – क्षयोपशम सम्यक्त्व भोगभूमि में जाते समय कृतकृत्य वेदक की अपेक्षा कहा गया है। क्षायिक-सम्यक्त्व भोगभूमि की अपेक्षा है।

१३. प्रश्न : किन-किन तिर्यञ्चों के पंचमगुणस्थान नहीं होता है?

उत्तर : (१) एकेन्द्रियादि असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवों के।

(२) संज्ञी पंचेन्द्रिय में भी लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के।

(३) समस्त भोगभूमिज तथा कुभोगभूमिज जीवों के[1] तथा

(४) म्लेच्छखण्ड में तिर्यञ्चों में पंचम गुणस्थान प्राप्त करने की योग्यता नहीं है।

नोट – म्लेच्छखण्ड से यहाँ आकर हाथी-घोड़ा आदि कोई पंचमगुणस्थान प्राप्त कर सकते हैं। (मनुष्यों के समान तिर्यञ्चों का कथन आगम में नहीं आता है)

१४. प्रश्न : क्या भोगभूमि में किसी भी अपेक्षा पंचमगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्च नहीं हो सकते हैं?

उत्तर : भोगभूमि में भी पंचमगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्च हो सकते हैं। वैर के सम्बन्ध से देवों अथवा दानवों के द्वारा कर्मभूमि से उठाकर लाये गये कर्मभूमिज तिर्यञ्चों का सब जगह सद्भाव होने में कोई विरोध नहीं आता है, इसलिए वहाँ पर अर्थात् भोग-भूमि में भी पंचम गुणस्थानवर्ती तिर्यञ्च का अस्तित्व बन जाता है। **(ध. १/४०४)**

नोट : इसी प्रकार संयतासंयत मनुष्य व संयत मुनि भी पाये जा सकते हैं।

१५. प्रश्न : क्या क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों के संयतासंयत गुणस्थान हो सकता है ?

उत्तर : नहीं; क्योंकि तिर्यञ्चों में यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं तो वे भोगभूमि में ही उत्पन्न होते हैं, दूसरी जगह नहीं। परन्तु भोगभूमि में उत्पन्न हुए जीवों के अणुव्रतों की उत्पत्ति नहीं होती है, वहाँ पर अणुव्रत होने में आगम से विरोध है। **(ध. १/४०५)**

१. हुण्डावसर्पिणी काल के प्रभाव से भगवान आदिनाथ स्वामी के समय में भोगभूमि में ही तीर्थंकर, संयमी, संयमासंयमी आदि हुए थे।

१६.प्रश्न : किन-किन तिर्यञ्चों के कितने-कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : **तिर्यञ्चों के प्राण –**

तिर्यञ्च	प्राण		
	निर्वृत्य-पर्याप्तावस्था	**पर्याप्तावस्था**	**विशेष**
एकेन्द्रियों के	३	४	(स्पर्शन इन्द्रिय, कायबल, श्वासोच्छ्वास, आयु)
द्वीन्द्रियों के	४	६	(२ इन्द्रिय, वचन-कायबल, श्वासोच्छ्वास, आयु)
त्रीन्द्रियों के	५	७	(३ इन्द्रिय, २ बल श्वासो. आयु)
चतुरिन्द्रियों के	६	८	(४ इन्द्रिय, २ बल श्वासो. आयु)
असैनी पंचेन्द्रियों के	७	९	(५ इन्द्रिय, २ बल श्वासो. आयु)
सैनी पंचेन्द्रियों के	७	१०	(५ इन्द्रिय, ३ बल श्वासो. आयु)

नोट - • सभी जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में श्वासोच्छ्वास, वचनबल तथा मनोबल नहीं होते हैं। • असैनी पर्यन्त जीवों के मनोबल नहीं होता है।

१७.प्रश्न : सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों के आस्रव के कितने प्रत्यय हो सकते हैं?

उत्तर : चतुर्थगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्चों के आस्रव के ४४ प्रत्यय हो सकते हैं-

१२ अविरति २१ कषाय (अनन्तानुबन्धी बिना) तथा

११ योग (४ मनो. ४ वचन. ३ काय.)

औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग भोगभूमि की अपेक्षा बन जायेंगे।

१८.प्रश्न : तिर्यञ्चों की बासठ लाख जातियाँ कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर : तिर्यञ्चों की जातियाँ -

(१) नित्यनिगोद की - ७ लाख
(२) इतर निगोद की - ७ लाख
(३) पृथ्वीकायिक की - ७ लाख
(४) जलकायिक की - ७ लाख
(५) अग्निकायिक की - ७ लाख
(६) वायुकायिक की - ७ लाख
(७) वनस्पतिकायिक की - १०लाख
(८) द्वीन्द्रिय की - २ लाख
(९) त्रीन्द्रिय की - २ लाख
(१०) चतुरिन्द्रिय की - २ लाख
(११) पंचेन्द्रिय की - ४ लाख

कुल = ६२ लाख

१९. प्रश्न : तिर्यञ्चों के १३४$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : तिर्यञ्चों के कुल-

(१) पृथ्वीकायिक के	- २२ लाख करोड़	(७) त्रीन्द्रिय के	-८ लाख करोड़
(२) जलकायिक के	- ७ लाख करोड़	(८) चतुरिन्द्रिय के	-९ लाख करोड़
(३) अग्निकायिक के	- ३ लाख करोड़	(९) जलचर के	-१२$\frac{१}{२}$ लाख करोड़
(४) वायु कायिक के	- ७ लाख करोड़	(१०) थलचर के	- १९ लाख करोड़
(५) वनस्पतिकायिक के	-२८ लाख करोड़	(११) नभचर के	-१२ लाख करोड़
(६) द्वीन्द्रिय के	- ७ लाख करोड़	**योग =**	**१३४$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल**

२०. प्रश्न : भोगभूमिया तिर्यञ्चों के कितने कुल होते हैं ?

उत्तर : भोगभूमिया तिर्यञ्चों के ३१ लाख करोड़ कुल होते हैं–

थलचर के - १९ लाख करोड़ तथा नभचर के १२ लाख करोड़। भोगभूमि में एकेन्द्रिय, विकलत्रय तथा जलचर जीव नहीं पाये जाते हैं। इसलिए उनके कुल ग्रहण नहीं किये है।

नोट - यद्यपि वहाँ एकेन्द्रिय जीव होते हैं, लेकिन वे भोगभूमिया नहीं होते हैं, सामान्य एकेन्द्रिय हैं, इसलिए यहाँ उनके कुलों का ग्रहण नहीं किया है।

तालिका संख्या ३

मनुष्य-गति

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्य गति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१३	४ मन. ४ वच. ५ काय.	आहारकद्विक ६ठे गुणस्थान में ही होते हैं
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञान, ५ ज्ञान	५ ज्ञान सम्यग्दृष्टि के ही होते हैं
८.	संयम	७	सा.छे.परि.सू.यथा.संय.असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु, अचक्षु, अव. केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प. शुक्ल	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा. क्षयो. उप. सा. मिश्र. मि.	
१३.	संज्ञी	१	संज्ञी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१४	पहले से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	संज्ञी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रि., ३ बल, श्वा. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञान, ४ दर्शन	
२१.	ध्यान	१६	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ४ शुक्ल	
२२.	आस्रव	५५	५ मि. १२ अवि. २५ क. १३ यो.	वैक्रियिकद्विक नहीं होते हैं।
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : मनुष्य कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : मनुष्य दो प्रकार के होते हैं- (१) आर्य मनुष्य (२) म्लेच्छ मनुष्य **(त. सू. ३/३६)**

(१) कर्मभूमिज मनुष्य (२) भोग भूमिज मनुष्य **(नि.सा. १६)**

मनुष्य तीन प्रकार के होते हैं- (१) पर्याप्तक मनुष्य (२) निर्वृत्यपर्याप्तक मनुष्य (३) लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य। **(ति. प. ४/२९७९)**

मनुष्य चार प्रकार के होते हैं- (१) कर्मभूमिज (२) भोगभूमिज (३) अन्तरद्वीपज (४) सम्मूर्च्छनज। **(भ.आ. ७८०/क्षेपक)**

२. प्रश्न : आर्य आदि मनुष्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : आर्य मनुष्य - गुण और गुणवानों से जो सेवित हैं वे आर्य कहलाते हैं।**(रा.वा.३/३६)**

म्लेच्छ मनुष्य - पाप क्षेत्र में जन्म लेने वाले म्लेच्छ कहलाते हैं। उनका आचार खान-पान आदि असभ्य होता है। **(नि.सा. १६)**

कर्म भूमिज - जहाँ शुभ और अशुभ कर्मों का आस्रव हो उसे कर्मभूमि कहते हैं। वहाँ उत्पन्न होने वाले कर्मभूमिज कहलाते हैं। **(स.सि.३)**

भोगभूमिज - भोगभूमि में रहने वाले मनुष्यों को भोगभूमिज कहते हैं। **(भ.आ.)**

लब्ध्यपर्याप्तक - जो जीव श्वास के अठारहवें भाग में मर जाते हैं वे लब्ध्यपर्याप्तक जीव हैं। **(गो.जी. १२२)**

अंतर्द्वीपज - जो अंतर्द्वीपों में उत्पन्न होते हैं वे अंतर्द्वीपज मनुष्य कहलाते हैं। **(सर्वा. ३/३९)**

सम्मूर्च्छनज - लब्ध्यपर्याप्तक ही होते हैं। **(का.अ. १३२-३३)**

३. प्रश्न : क्या मनुष्य के पेट में जो कीड़े पाये जाते हैं वे भी मनुष्य हैं ?

उत्तर : नहीं, मनुष्य के पेट, घाव आदि में पड़ने वाले कीड़े मनुष्य नहीं हैं यद्यपि मनुष्य के पेट में पड़ने वाले कीड़े, पटार आदि औदारिक शरीर तथा मल-मूत्र, भोजन आदि में उत्पन्न होते हैं लेकिन वे दो इन्द्रिय ही होते हैं इसलिए वे तिर्यञ्चगति के जीव ही हैं, मनुष्य नहीं।

४. प्रश्न : किन-किन मनुष्यों को केवलज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता है ?

उत्तर : जिनको केवलज्ञान नहीं हो सकता है वे मनुष्य हैं- (१) लब्ध्यपर्याप्तक (२) आठ वर्ष से कम उम्र वाले (३) १२६ भोगभूमियों में उत्पन्न (४) पाँचवें-छठे नरक से आये हुए (५) सूक्ष्म निगोद से आये हुए (६) अभव्य तथा अभव्यसम भव्य (७) वज्रवृषभनाराचसंहनन

को छोड़कर शेष संहनन वाले (८) बद्धायुष्क मनुष्य (९) द्रव्य स्त्री एवं द्रव्य नपुंसक वेद वाले आदि।

५. प्रश्न : एक सौ छब्बीस भोगभूमियाँ कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर : एक सौ छब्बीस भोगभूमियाँ-

१० जघन्य भोगभूमियाँ – ५ हैमवत, ५ हैरण्यवत क्षेत्र की।

१० मध्यम भोगभूमियाँ – ५ हरिवर्ष, ५ रम्यक क्षेत्र की।

१० उत्तम भोगभूमियाँ – ५ देवकुरु, ५ उत्तरकुरु की।

९६ अन्तरद्वीपों में पाई जाने वाली कुभोगभूमियाँ। कुल १२६ भोगभूमियाँ। इनमें मनुष्य भी रहते हैं। शेष ढाईद्वीप के बाहर असंख्यात द्वीप-समुद्रों में जघन्य भोगभूमियाँ हैं, जहाँ केवल तिर्यञ्च ही रहते हैं। **(ति.प.)**

नोट-४८ लवण समुद्र सम्बन्धी तथा ४८ कालोदधिसमुद्र सम्बन्धी इस प्रकार ९६ अन्तरद्वीप हैं।

६. प्रश्न : क्या कुभोगभूमियों में तिर्यञ्च भी पाये जाते हैं ?

उत्तर : हाँ, कुभोगभूमियों में तिर्यञ्च भी पाये जाते हैं। यद्यपि इन भोगभूमियों में किस-किस आकृति वाले तिर्यञ्च रहते हैं, क्या खाते हैं आदि वर्णन जिस प्रकार मनुष्यों के बारे में आता है, वैसा तिर्यञ्च के बारे में नहीं मिलता है, फिर भी वहाँ तिर्यञ्च पाये जाते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है क्योंकि **आचार्य यतिवृषभमहाराज तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थ के चौथे अध्याय की २५१५ वीं गाथा में कहते हैं** कि इन द्वीपों में जिन मनुष्य-तिर्यञ्चों ने सम्यग्दर्शन रूप रत्न को ग्रहण किया है वे मरकर सौधर्म-ऐशान स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं। इससे सिद्ध है कि वहाँ तिर्यञ्च भी पाये जाते हैं।

७. प्रश्न : क्या अंधे, काणे, लूले-लँगड़े मनुष्य को भी केवलज्ञान हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, अंधे, काणे, लूले, लँगड़े आदि मनुष्यों को भी केवलज्ञान हो सकता है। यद्यपि अंधा, काणा, लूला, लँगड़ा व्यक्ति दीक्षा की पात्रता नहीं रखता और दीक्षा लिये बिना केवलज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता, लेकिन यदि कोई मनुष्य दीक्षा लेने के बाद अर्थात् मुनि बनने के बाद आँख फूटने के कारण काणा, मोतियाबिन्द आदि के कारण अंधा हो जावे, लकवा आदि के कारण लूला-लँगड़ा हो जावे तो केवलज्ञान होने में कोई बाधा नहीं है। कभी-कभी उपसर्गादि के कारण भी ऐसा हो सकता है। केवलज्ञान प्राप्त करने के लिए तो वज्रवृषभनाराचसंहनन, द्वितीयशुक्ल ध्यान, चार घातिया कर्मों का क्षय होना आवश्यक है। केवलज्ञान होने पर शरीर सांगोपांग हो जायेगा।

८. प्रश्न : क्या कुबड़े-बौने आदि को भी केवलज्ञान हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, कुबड़े-बौने आदि बेडौल शरीर वाले को भी केवलज्ञान हो सकता है, क्योंकि तेरहवें गुणस्थान तक छहों संस्थानों का उदय पाया जाता है **(गो.क.)** फिर भी मुनि बनने के योग्य संस्थान होना आवश्यक है।

९. प्रश्न : किन-किन मनुष्यों के कौन-कौन सी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : मनुष्यों में लेश्याएँ-

	मनुष्य	**पर्याप्तापर्याप्त**	**लेश्या**
१.	कर्मभूमिया	पर्याप्तक	६ लेश्या
२.	कर्मभूमिया	निर्वृत्यपर्याप्तक	६ लेश्या
३.	लब्ध्यपर्याप्तक		३ अशुभलेश्या
४.	भोगभूमिया सम्यग्दृष्टि	निर्वृत्यपर्याप्तक	१ कापोत लेश्या **(ति.प.४/४२४)**
५.	भोगभूमिया मिथ्यादृष्टि	निर्वृत्यपर्याप्तक	३ अशुभलेश्या **(ति.प.४/४२४)**
६.	भोगभूमिया सासादन सम्यग्दृष्टि	निर्वृत्यपर्याप्तक	३ अशुभलेश्या **(ति.प. ४/४२६)**
७.	भोगभूमिया	पर्याप्तक	३ शुभलेश्या
८.	कुभोग भूमि	निर्वृत्यपर्याप्तक	३ अशुभ लेश्या
९.	कुभोग भूमि	पर्याप्तक	१ पीतलेश्या **(त्रि. सा. ९२०)**
१०.	अन्तरद्वीपज म्लेच्छ	–	४ लेश्या
११.	कर्मभूमिया म्लेच्छ	–	६ लेश्या
१२.	विद्याधर	पर्याप्तापर्याप्त	६ लेश्या

१०.प्रश्न : क्या म्लेच्छ खण्ड के मनुष्यों को सम्यग्दर्शन हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, म्लेच्छ खण्ड के मनुष्यों को भी सम्यग्दर्शन हो सकता है। दिग्विजय के लिए गये हुए चक्रवर्ती के स्कन्धावार (कटक सेना) के साथ जो म्लेच्छ राजा आदिक आर्यखण्ड में आ जाते हैं, और उनका यहाँ वालों के साथ विवाहादि सम्बन्ध हो जाता है, तो उनके

संयम धारण करने में कोई विरोध नहीं है। अथवा दूसरा समाधान यह भी किया है कि चक्रवर्ती आदि को विवाही गई म्लेच्छ कन्याओं के गर्भ से उत्पन्न हुई सन्तान की मातृपक्ष की अपेक्षा यहाँ 'अकर्मभूमिज' पद से विवक्षा की गई है, क्योंकि अकर्मभूमिज सन्तान को दीक्षा लेने की योग्यता का निषेध नहीं पाया जाता है। **(ध. पु.)**

अन्तर्द्वीपों में रहने वाले म्लेच्छों को भी सम्यग्दर्शन होता है,

वे मरकर सौधर्म-ऐशान स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं। **(ति.प. ४/२५१५)**

११.प्रश्न : पाँच वर्ष के बच्चे को सम्यक्त्व मार्गणा का कौन-कौनसा स्थान हो सकता है?

उत्तर : पाँच वर्ष का बच्चा यदि पुरुष है तो उसके मिथ्यात्व, क्षायोपशमिक एवं क्षायिक सम्यक्त्व हो सकता है और यदि वह स्त्री या नपुंसक है तो मात्र मिथ्यात्व ही होगा; क्योंकि सम्यग्दृष्टि स्त्री तथा नपुंसक नहीं बनता है। यदि वह बच्चा सादि मिथ्यादृष्टि है, तो उसके सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय आने पर वह सम्यग्मिथ्यादृष्टि तथा सम्यक् प्रकृति का उदय आ जावे तो वह क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि बन सकता है, लेकिन उपशमसम्यग्दृष्टि नहीं बन सकता है; क्योंकि उपशम सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के लिए कम से कम भी आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त्त की उम्र होना आवश्यक है। इसी प्रकार सासादन सम्यग्दृष्टि भी नहीं बन सकता है, क्योंकि उपशम सम्यक्त्व के काल में से ही उत्कृष्ट छह आवली तथा जघन्य एक समय शेष रहने पर सासादनसम्यक्त्व होता है।

इसी प्रकार ८ वर्ष अन्तर्मुहूर्त तक की आयु वाले कर्म भूमियाँ मनुष्यों के जानना चाहिए। विशेषता वह है कि इनके निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में सासादन सम्यक्त्व हो सकता है, क्योंकि सासादन सम्यक्त्व को लेकर जीव मनुष्यों (तीनों वेद वाले) में उत्पन्न हो सकता है। भोगभूमि की अपेक्षा पाँच वर्ष का (बालक/बालिका) क्षायिक सम्यक्त्व को छोड़कर शेष सभी स्थानों को प्राप्त कर सकता है; क्योंकि जघन्य भोगभूमि में भी ४९ दिन की उम्र होने पर प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने की योग्यता आ जाती है। सम्यक्त्व को लेकर जाने वाला पुरुष ही बनता है इसलिए पाँच वर्ष के बालक में क्षायिक सम्यक्त्व भी हो सकता है।

नोट - १. उत्तम भोगभूमि में २१ दिन में तथा मध्यम भोगभूमि में ३५ दिन में सम्यक्त्व प्राप्ति के योग्य हो जाता है। २. इसी प्रकार सभी भोगभूमियों में जानना चाहिए।

१२.प्रश्न : क्या लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य भी सैनी ही होते हैं ?

उत्तर : हाँ, लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य भी सैनी ही होते हैं, **(द्र.सं. १२ टीका)** क्योंकि उनके भी नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम रूप भावमन तो पाया ही जाता है। इसलिए उन्हें सैनी कहा गया है लेकिन द्रव्यमन के अभाव में वे अपना (मन सम्बन्धी) काम करने में समर्थ नहीं होते हैं। मन: पर्याप्ति पूर्ण होने पर ही द्रव्यमन की पूर्णता होती है।

१३. प्रश्न : लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं ?

उत्तर : कर्मभूमिया स्त्रियों की काँख, योनिस्थान तथा स्तनों के मूल में तथा चक्रवर्ती की पटरानी के सिवाय अन्य स्त्रियों के मूत्र, विष्टा आदि अशुचि स्थानों में लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य उत्पन्न होते हैं। **(गो.जी.जी. ९२)** कर्मभूमि में चक्रवर्ती, बलभद्र आदि बड़े-बड़े राजाओं की सेना जहाँ मल-मूत्र का क्षेपण करती हैं ऐसे स्थानों पर वीर्य, नाक का मल, कफ, कान और दाँतों का मल तथा अत्यन्त अपवित्र प्रदेश इनमें तत्काल सम्मूर्च्छन मनुष्य उत्पन्न होते हैं। **(भ.आ.वि.)**

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य इतने हैं कि यदि वे पर्याप्तक होकर कबूतर के बराबर भी अपना शरीर बना लें तो तीन लोक में नहीं समायेंगे।

विशेष- (१) भोगभूमि तथा म्लेच्छ खण्डों में लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य नहीं होते हैं। (२) लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य का पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक अन्तर भी पड़ता है। अर्थात् संभव है कि इतने काल तक कोई लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य न हो। **(गो.जी. १४३)**

१४. प्रश्न : क्या सभी मनुष्यों के दस प्राण होते हैं ?

उत्तर : नहीं, पर्याप्त मनुष्य के चाहे वह गर्भ में स्थित हो पर्याप्ति पूर्ण हो जाने पर १० प्राण पाये जाते हैं।

- चाहे कोई गूंगा भी हो तो उसके भी वचन बल होता है, क्योंकि उसके भी स्वर नाम कर्म का उदय पाया जाता है।
- पागल व्यक्ति के भी मनोबल प्राण होता है, क्योंकि उसके भी अनिन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम पाया जाता है।
- लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों के ७ प्राण ही पाये जाते हैं, क्योंकि वे पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं।
- निर्वृत्यपर्याप्तक मनुष्यों के ७ प्राण पाये जाते हैं, क्योंकि श्वासोच्छ्वास आदि पर्याप्ति पूर्ण हुए बिना श्वासोच्छ्वास आदि प्राण नहीं होते हैं।

नोट - गूंगे, पागल आदि व्यक्तियों के इन्द्रियों की विकलता (सही रचना नहीं) होने के कारण वे अपना सही काम नहीं कर पाती हैं।

१५. प्रश्न : लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों के इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है अत: उनके इन्द्रिय प्राण कैसे हो सकते हैं?

उत्तर : ५ इन्द्रिय प्राण द्रव्येन्द्रिय की अपेक्षा नहीं होते, अपितु भावेन्द्रिय की अपेक्षा होते हैं। इसलिए लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों के इन्द्रियप्राण होने में कोई बाधा नहीं है, क्योंकि उनके भी इन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम पाया जाता है।

विशेष-इसी प्रकार सभी अपर्याप्तक /निर्वृत्यपर्याप्त तथा कार्मणकाययोगस्थ जीवों के जानना चाहिए।

१६. प्रश्न : मनुष्यों में कौन-कौनसा ध्यान पाया जाता है ?

उत्तर : मनुष्यों में ध्यान –

मनुष्य	**ध्यान**
कर्मभूमिया पर्याप्त	१६ ध्यान
कर्मभूमिया निर्वृत्यपर्याप्त	१२ ध्यान (आहारकमिश्र[१] की अपेक्षा तीसरा चौथा धर्मध्यान)
भोगभूमिया	१० ध्यान (४ आ. ४ रौ. २ धर्म.)
विद्याधरों के (विद्यासहित)	११ ध्यान (४ आ. ४ रौ. ३ धर्म.)
विद्याधरों के (विद्या छोड़ने पर)	१६ ध्यान
म्लेच्छ	८ ध्यान (४ आर्त्त. ४ रौद्र)
लब्ध्यपर्याप्तक	८ ध्यान (४ आर्त्त. ४ रौद्र)

१७. प्रश्न : भोगभूमिया जीवों के द्वितीय और तृतीय गुणस्थान में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : भोगभूमिया जीवों के द्वितीय गुणस्थान में आस्रव के ४७ प्रत्यय होते हैं - १२ अविरति + २४ कषाय (१ नपुं. बिना) + ११ योग (४ मनो. ४ वचनयोग, ३ काय योग) = ४७। तृतीय गुणस्थान में ४१ आस्रव होते हैं। १२ अविरति+ २० कषाय (अन., १ नपुं. बिना) + ९ योग (४ मनो. ४ वचन १ औ.का.)= ४१।

१८. प्रश्न : सामान्य मनुष्यों की अपेक्षा भोगभूमिया मनुष्यों में क्या विशेषताएँ हैं ?

उत्तर : सामान्य मनुष्यों की अपेक्षा भोगभूमिया मनुष्यों की विशेषताएँ–

	विशेष मार्गणाएँ	**विशेषता**
१.	योग	भोगभूमि में आहारकद्विक योग नहीं है।
२.	वेद	नपुंसक वेद नहीं है।
३.	कषाय	नपुंसक वेद नोकषाय नहीं है।
४.	ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं है।
५.	संयम	देशसंयम आदि छह संयम नहीं हैं।
६.	दर्शन	केवलदर्शन नहीं है।
७.	लेश्या	पर्याप्तावस्था में शुभ लेश्या ही होती हैं।
८.	गुणस्थान	आदि के चार गुणस्थान ही होते हैं।
९.	उपयोग	२ ज्ञानोपयोग तथा एक दर्शनोपयोग नहीं हैं।
१०.	ध्यान	२ धर्मध्यान और शुक्लध्यान नहीं हैं।
११.	आस्रव	आहारकद्विक तथा नपुंसक वेद ये आस्रव नहीं हैं।

१. आहारक मिश्र में कोई विशेषता हो तो बतावें।

१९. प्रश्न : भोगभूमिया जीवों के पर्याप्तावस्था में अशुभ लेश्याएँ क्यों नहीं होतीं ?

उत्तर : तीव्र कषाय का अभाव होने से भोगभूमिया जीवों के पर्याप्तावस्था में अशुभ लेश्याएँ नहीं होती हैं। **(त.सा. २० टी.)**

२०. प्रश्न : सामान्य मनुष्यों से लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों में क्या विशेषताएँ हैं ?

उत्तर : सामान्य मनुष्यों से लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों में विशेषताएँ-

विशेष मार्गणाएँ	विशेषता
१. योग	४ मनो. ४ वच. औदारिक तथा आहारक द्विक नहीं हैं।
२. वेद	स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद नहीं हैं।
३. कषाय	स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद नोकषाय नहीं हैं।
४. ज्ञान	कुअवधि तथा ५ ज्ञान नहीं है।
५. संयम	देशविरतादि ६ संयम नहीं हैं।
६. दर्शन	अवधिदर्शन-केवलदर्शन नहीं है।
७. लेश्या	अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं।
८. सम्यक्त्व	मिथ्यात्व ही होता है।
९. गुणस्थान	एक पहला गुणस्थान ही है।
१०. पर्याप्ति	६ अपर्याप्तियाँ।
११. प्राण	७ प्राण (श्वा.,वचन तथा मनोबल नहीं है)
१२. उपयोग	६ ज्ञानो. २ दर्शनो. नहीं हैं।
१३. ध्यान	४ धर्म. ४ शुक्ल ध्यान नहीं हैं।
१४. आस्रव	२ वेद तथा ११ योग नहीं हैं।

२१. प्रश्न : सामान्य मनुष्यों से विद्याधरों में क्या विशेषताएँ हैं ?

उत्तर : विद्या छोड़ने के बाद विद्याधर मनुष्यों का सब कथन सामान्य मनुष्यों के समान ही जानना चाहिए। सामान्य मनुष्यों से विद्या सहित विद्याधरों में विशेषताएँ-

मार्गणा	विद्याधर
१. योग	आहारकद्विक योग नहीं है।
२. ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं हैं।
३. संयम	सामायिकादि पाँच संयम नहीं हैं।
४. दर्शन	केवलदर्शन नहीं है।
५. गुणस्थान	छठे से चौदहवें तक के गुणस्थान नहीं हैं।
६. उपयोग	२ ज्ञानोपयोग और एक दर्शनोपयोग नहीं है।
७. ध्यान	१ धर्म, ४ शुक्ल-ध्यान नहीं हैं।
८. आस्रव	आहारकद्विक सम्बन्धी आस्रव नहीं है।

तालिका संख्या ४

देव-गति

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	देवगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ मन. ४ वच. ३ का.	औदारिकद्विक तथा आहारकद्विक नहीं हैं।
५.	वेद	२	स्त्री और पुरुष वेद	नपुंसकवेद नहीं है।
६.	कषाय	२४	१६ कषाय ८ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान, ३ ज्ञान	मन: पर्यय और केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु, अचक्षु, अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प. शुक्ल	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा. क्षयो. उप. सा. मिश्र. मि.	
१३.	संज्ञी	१	संज्ञी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	पहले से चौथे तक	
१६.	जीवसमास	१	संज्ञी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श. इ. श्वा.भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रि., ३ बल, श्वा. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनोपयोग	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	विपाकविचय तथा संस्थानविचय धर्मध्यान नहीं हैं।
२२.	आस्रव	५२	५ मि. १२ अ. २४ क. ११यो.	
२३.	जाति	४ ला.	देव सम्बन्धी	
२४.	कुल	२६ ला.क.	देव सम्बन्धी	

१. प्रश्न : देव कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर : देव चार प्रकार के हैं- (१) भवनवासी (२) व्यन्तर (३) ज्योतिष्क (४) वैमानिक।

भवनवासी - भवन में रहना जिनका स्वभाव है, वे भवनवासी देव हैं।

व्यंतर - जिनका नाना देशों में निवास है, वे व्यन्तर हैं।

ज्योतिष्क - जो ज्योतिर्मय होते हैं, वे ज्योतिष्क देव हैं।

वैमानिक - जो विमानों में रहते हैं, वे वैमानिक हैं। (सर्वा. ४६१-४३)

२. प्रश्न : देवों के उत्तर भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : **भवनवासी देव** १० प्रकार के हैं – १. असुरकुमार २. नागकुमार ३. विद्युतकुमार ४. सुपर्णकुमार ५. अग्निकुमार ६. वातकुमार ७. स्तनितकुमार ८. उदधिकुमार ९. द्वीपकुमार १०. दिक्कुमार।

व्यन्तरदेव आठ प्रकार के हैं – १. किन्नर २. किंपुरुष ३. महोरग ४. गन्धर्व ५. यक्ष ६. राक्षस ७. भूत ८. पिशाच।

ज्योतिष्क देव पाँच प्रकार के हैं – १. सूर्य २. चन्द्रमा ३. ग्रह ४. नक्षत्र ५. तारे।

वैमानिक देव दो प्रकार के हैं – १. कल्पोपपन्न २. कल्पातीत

कल्पोपपन्न - सौधर्मादि सोलहवें स्वर्ग पर्यन्त के देव कल्पोपपन्न हैं।

कल्पातीत - नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश, ५ अनुत्तर कल्पातीत विमान हैं। **(त.सू. ४अ.)**

३. प्रश्न : सम्यग्दृष्टि भूत-पिशाच के कितने योग हो सकते हैं?

उत्तर : सम्यग्दृष्टि भूत-पिशाच के ९ योग हो सकते हैं- ४ मनोयोग, ४ वचनयोग तथा १ वैक्रियिक काययोग।

वैक्रियिकमिश्र तथा कार्मण काययोग नहीं हैं; क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव भवनत्रिक में उत्पन्न नहीं होते हैं।[१]

४. प्रश्न : देव गति में ऐसे कौन-कौनसे स्थान हैं, जहाँ स्त्रीवेद नहीं पाया जाता है ?

उत्तर : सोलहवें स्वर्ग से ऊपर नव ग्रैवेयकों में, नव अनुदिश में, पाँच अनुत्तर विमानों में तथा लौकान्तिकदेवों में स्त्रीवेद नहीं पाया जाता है। **(त.सू. ४/९)**

५. प्रश्न : देवों के नपुंसकवेद क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : संसार में विषयभोग की दृष्टि से सबसे ज्यादा सुख देवगति में है। वहाँ यदि नपुंसक वेद होगा तो वे दु:खी हो जावेंगे। फिर पुण्यशाली जीव ही देवों में जाते हैं। उनके नपुंसक वेद कैसे हो सकता है, नहीं होता है। (देवायु का बन्ध संक्लेश परिणामों से नहीं होता है इसलिए पुण्यशाली को देव-गति प्राप्त होती है)

१. आराधना समुच्चय गा. ३४

६. प्रश्न : सर्वार्थसिद्धि के देवों की अनाहारक अवस्था में कितने ज्ञानोपयोग होते हैं?

उत्तर : सर्वार्थसिद्धि के देवों की अनाहारक अवस्था में तीन ज्ञानोपयोग हो सकते हैं- १. मतिज्ञानोपयोग २. श्रुतज्ञानोपयोग ३. अवधिज्ञानोपयोग। कुज्ञानोपयोग नहीं होते हैं; क्योंकि सर्वार्थसिद्धि विमान में सम्यग्दृष्टि जीव ही जाते हैं।

७. प्रश्न : देवों के छहों लेश्याएँ किस अपेक्षा से कही गई हैं?

उत्तर : सभी देवों की पर्याप्त अवस्था में तीन शुभ लेश्याएँ ही होती हैं तथा भवनत्रिक देवों के अपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभलेश्याएँ होती हैं। इस अपेक्षा से देवों के छहों लेश्याएँ बन जाती हैं। **(त.सू. ४ अ.)**

प्रथम-द्वितीय गुणस्थानवर्ती देव भी मरण के समय शुभ लेश्या से च्युत होकर अशुभलेश्या में आ जाते हैं। **(ध. २/६५६)**

८. प्रश्न : देवों में कौन-कौन सी लेश्या होती हैं ?

उत्तर : देवों में लेश्याएँ-

देव	पर्याप्तापर्याप्त	लेश्या
१. सौधर्मैशान	पर्याप्त-निर्वृ.	पीत
२. सानत्कुमार-माहेन्द्र	प. निर्वृ.	उत्कृष्ट पीत जघन्य पद्म
३. ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ	प. निर्वृ.	मध्यम पद्म
४. शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रार	प. निर्वृ.	उत्कृष्ट पद्म जघन्य शुक्ल
५. आनतादि नव ग्रैवेयक तक	प. निर्वृ.	मध्यम शुक्ल
६. नव अनुदिश, पंच अनुत्तर	प. निर्वृ.	उत्कृष्ट शुक्ल
७. भवनत्रिक देव	निर्वृत्यपर्याप्त	तीन अशुभ
८. भवनत्रिकदेव	पर्याप्त	पीत **(रा.वा. ४/२२)**

९. प्रश्न : देवियों के कौनसी लेश्या होती है ?

उत्तर : भवनत्रिक देवियों के अपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभ लेश्याएँ तथा पर्याप्त अवस्था में पीत लेश्या ही होती है। सौधर्म स्वर्ग से सोलहवें स्वर्ग तक की देवियों के पर्याप्त तथा निर्वृत्यपर्याप्त दोनों अवस्थाओं में पीत लेश्या ही होती है क्योंकि वैमानिक देवियों का उपपाद सौधर्म-ऐशान स्वर्ग में ही होता है।

सर्व वैमानिक देवियों के मध्यम पीतलेश्या ही होती है। **(त.सा. २० टी.)**

सोलहवें स्वर्ग से आगे देवियाँ नहीं होती हैं।

१०.प्रश्न : देवों की अपर्याप्त अवस्था में कौन-कौनसा सम्यक्त्व हो सकता है ?

उत्तर : भवनत्रिक देव, उनकी देवियाँ तथा वैमानिक देवियों की अपर्याप्तक अवस्था में दो सम्यक्त्व होते हैं- १. मिथ्यात्व २. सासादन। क्योंकि सम्यग्दृष्टि इन पर्यायों में उत्पन्न नहीं होता अर्थात् सम्यग्दृष्टि की देव-दुर्गति नहीं होती है।

वैमानिक देवों में सौधर्मस्वर्ग से नव ग्रैवेयक पर्यन्त देवों की अपर्याप्त अवस्था में पाँच सम्यक्त्व हो सकते हैं-

१. मिथ्यात्व २. सासादन ३. उपशम सम्यक्त्व ४. क्षायोपशमिक ५. क्षायिक सम्यक्त्व। क्योंकि ग्रैवेयक तक मिथ्यादृष्टि उत्पन्न हो सकता है।

नव अनुदिश और पाँच अनुत्तर देवों की अपर्याप्त अवस्था में तीन सम्यक्त्व होते हैं- १. उपशम[1] २. क्षायोपशमिक सम्यक्त्व ३. क्षायिकसम्यक्त्व। क्योंकि वहाँ सभी सम्यग्दृष्टि ही उत्पन्न होते हैं।

लौकान्तिक देवों में सभी सम्यग्दृष्टि ही उत्पन्न होते हैं इसलिए उनकी अपर्याप्त अवस्था में भी ३ सम्यक्त्व पाये जाते हैं।

१. उपशम सम्यक्त्व २. क्षयोपशम सम्यक्त्व ३. क्षायिक सम्यक्त्व

११.प्रश्न : वैमानिक देवों की अपर्याप्त अवस्था में उपशम सम्यक्त्व कैसे हो सकता है क्योंकि उपशम सम्यक्त्व में तो मरण ही नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, प्रथमोपशम सम्यक्त्व में मरण नहीं होता है लेकिन द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में मरण होने में कोई बाधा नहीं है क्योंकि उपशम श्रेणी में चढ़ने वाले और उतरने वाले जीवों का आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग को छोड़कर अन्य समय तथा अन्य गुणस्थानों में जब मरण होता है तो वे नियम से वैमानिक देवों में ही उत्पन्न होते हैं। वहाँ उनके (वैमानिक देवों के) निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में उपशम सम्यक्त्व का सद्भाव बन जाता है। इसलिए देवों की अपर्याप्त अवस्था में उपशम सम्यक्त्व कहा गया है।

१२.प्रश्न : क्या भूत, राक्षस, चन्द्रमा, शनि आदि को भी सम्यग्दर्शन हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, भूत, राक्षस, डाकिनी, सूर्य, चन्द्रमा आदि को भी सम्यग्दर्शन हो सकता है। यद्यपि भवनत्रिक को देवदुर्गति माना गया है इसलिए कोई भी वहाँ सम्यग्दर्शन लेकर उत्पन्न नहीं हो सकता है, फिर भी वे वहाँ जाकर जातिस्मरण, जिनमहिमादर्शन, देवऋद्धिदर्शन तथा धर्मोपदेश रूप निमित्तों से प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकते हैं। वहाँ सादि मिथ्यादृष्टि क्षयोपशमसम्यक्त्व भी प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन उनको क्षायिक सम्यग्दर्शन किसी भी

---

१. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा कहा गया है।

अवस्था में नहीं हो सकता है। अर्थात् वे सम्यक्त्व मार्गणा में से पाँच स्थान प्राप्त कर सकते हैं – १. मिथ्यात्व २. सासादन ३. मिश्र ४. उपशम ५. क्षयोपशम।

इसीप्रकार सभी देवांगनाओं में तथा भवनत्रिक में जानना चाहिए।

१३. प्रश्न : देवदुर्गति किसे कहते हैं ?

उत्तर : देवगति में भी जो स्थान अच्छे नहीं माने जाते हैं उन स्थानों में जन्म होना देवदुर्गति कहलाती है। देवों में कन्दर्प, आभियोग्य, किल्विष, सम्मोहत्व और असुर आदि नीच योनि में उत्पन्न होने वाले जो देव हैं उन्हीं की गति को देवदुर्गति कहते हैं। **(मू.प्र.)**

भवनत्रिक तो देव दुर्गति में है ही लेकिन वैमानिक देवों में भी कन्दर्प, आभियोग्य आदि नीच जाति भी देवदुर्गति में आती है।

१४. प्रश्न : ऐसा कौनसा जीव है जो देवगति में जाकर नियम से सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है?

उत्तर : शची (इन्द्राणी) यहाँ से नियम से मिथ्यात्व सहित ही जाती है; क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव स्त्रियों में उत्पन्न नहीं होता है लेकिन वह स्वर्ग में जाकर तीर्थंकर के जन्मकल्याणक आदि के समय (निमित्त से) तीर्थंकर बालक को देखकर सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेती है।

१५. प्रश्न : किन-किन देवों के प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं हो सकता है ?

उत्तर : जिनको प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं हो सकता है वे देव हैं-

१. सर्व लौकान्तिक देव।

२. सभी क्षायिक सम्यग्दृष्टि देव।

३. नव अनुदिश तथा विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित तथा सर्वार्थसिद्धि विमानों में प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन नहीं हो सकता है क्योंकि इन सभी स्थानों में सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते हैं। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व छोड़कर मिथ्यादृष्टि होकर (उद्वेलना काल बीतने पर) प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है लेकिन इन स्थानों पर रहने वाले जीव सम्यक्त्व से च्युत नहीं होते हैं। **(ध. २/५६६ के आधार से)**

१६. प्रश्न : किन-किन देवों के क्षायिकसम्यक्त्व नहीं होता है?

उत्तर : वे देव जिनको क्षायिकसम्यक्त्व नहीं होता है-

१. सर्व देवियों में तथा भवनत्रिक देवों में, २. आभियोग्य, किल्विषक, प्रकीर्णक देवों में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि, एक तो वहाँ पर दर्शनमोह की क्षपणा नहीं होती है, दूसरे जिन्होंने पूर्व पर्याय में दर्शनमोह का क्षय कर दिया है उनकी भवनवासी आदि अधम देवों में और सभी देवियों में उत्पत्ति नहीं होती है। **(ध. १/३३९, ४०८)**

३. प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि, क्षयोपशमसम्यग्दृष्टि (कृतकृत्यवेदक को छोड़कर), मिथ्यादृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टि को भी क्षायिक सम्यग्दर्शन नहीं होता है।

१७. प्रश्न : देवगति तो उत्तम मानी गयी है वहाँ पंचमादि गुणस्थान क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयसहित, विषयों के आनन्द से युक्त, नाना प्रकार की राग क्रियाओं में निपुण उन भवनवासी जीवों (देवों) के देशविरत आदिक उपरितन दस गुणस्थानों के हेतुभूत जो विशुद्ध परिणाम हैं वे कदापि नहीं होते हैं। **(ति. प. ३/१८५-८६)**

नोट - इसी प्रकार अन्य देव-देवियों के भी पंचमादि गुणस्थान नहीं होते हैं।

१८. प्रश्न : देवांगनाओं के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : देवांगनाओं के मिथ्यात्व गुणस्थान में ५१ आस्रव के प्रत्यय होते हैं- ५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २३ कषाय तथा ११ योग।

- उनके सासादन गुणस्थान में ४६ आस्रव के प्रत्यय होते हैं- १२ अविरति, २३ कषाय तथा ११ योग।
- उनके तीसरे गुणस्थान में ४० आस्रव के प्रत्यय होते हैं- १२ अविरति, १९ कषाय तथा ९ योग।
- चतुर्थ गुणस्थान में भी ४० आस्रव के प्रत्यय होते हैं- १२ अविरति, १९ कषाय तथा ९ योग।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : ऐसे कौन-कौनसे स्थान हैं, जिनके सभी उत्तरभेद सभी गतियों में पाये जाते हैं?

उत्तर : ६ स्थानों के सभी उत्तर भेद सभी गतियों में पाये जाते हैं-

१. सम्यक्त्व मार्गणा　२. भव्यत्व मार्गणा　३. आहार मार्गणा
४. पर्याप्ति　५. प्राण　६. संज्ञा।

२. प्रश्न : ऐसी कौनसी गति है, जिसमें दो ही वेद पाये जाते हैं?

उत्तर : देवगति में दो ही वेद पाये जाते हैं तथा भोगभूमिया (कुभोगभूमि और उत्तमादि भोगभूमि में) मनुष्य तिर्यञ्चों के भी स्त्री और पुरुष दो ही वेद पाये जाते हैं।

३. प्रश्न : ऐसी कौन-कौनसी गति है, जहाँ सम्यग्दर्शन को लेकर बद्धायुष्क मनुष्य ही जा सकता है ?

उत्तर : नरकगति में सम्यग्दर्शन को लेकर बद्धायुष्क मनुष्य ही जा सकता है। भोगभूमिया मनुष्य-तिर्यंचों में भी सम्यग्दर्शन को लेकर बद्धायुष्क मनुष्य ही जा सकता है।

४. प्रश्न : ऐसा कौनसा गुणस्थान है, जो चारों गतियों की अनाहारक अवस्था में नहीं पाया

जाता है ?

उत्तर : तीसरा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान चारों गतियों की अनाहारक अवस्था में नहीं पाया जाता है।

५. प्रश्न : भोगभूमि तथा कुभोगभूमि के जीवों के आस्रव के प्रत्ययों में क्या अन्तर है ?

उत्तर : भोगभूमि तथा कुभोगभूमि के जीवों में- मिथ्यादृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि तथा मिश्रगुणस्थान के आस्रव के प्रत्ययों में कोई अन्तर नहीं है। चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवों की अपेक्षा कुभोगभूमि में औदारिक मिश्र तथा कार्मण काययोग सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं।

अर्थात् भोगभूमि के सम्यग्दृष्टि के ४३ आस्रव के प्रत्यय हैं- १२ अविरति, २० कषाय, ११ योग कुभोगभूमि के सम्यग्दृष्टि के ४१ आस्रव के प्रत्यय हैं- १२ अविरति २० कषाय ९ योग। **नोट**-सम्यग्दृष्टि मरकर कुभोगभूमि में नहीं जाता है।

६. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि देवों के जितने आस्रव के प्रत्यय हैं, उतने ही आस्रव के प्रत्यय क्या मनुष्य-तिर्यञ्चों के हो सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, भोगभूमिया मनुष्य-तिर्यञ्चों के भी उतने ही आस्रव के प्रत्यय हैं जितने आस्रव के प्रत्यय देवों के होते हैं। अर्थात् देवोंके भी ५२ आस्रव के प्रत्यय हैं और भोगभूमिया जीवों के भी ५२ आस्रव के प्रत्यय हैं।

७. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि नारकी के बराबर आस्रव के प्रत्यय किनके पाये जाते हैं ?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि नारकी के बराबर आस्रव के प्रत्यय सम्मूर्च्छन तिर्यञ्चों के होते हैं। अर्थात् मिथ्यादृष्टि नारकी के भी ५१ आस्रव के प्रत्यय हैं और सम्मूर्च्छन तिर्यञ्चों के भी ५१ आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

८. प्रश्न : चौदह मार्गणाओं में से किस-किस स्थान के किन उत्तर भेदों में मात्र एक ही गति होती है?

उत्तर : आठ मार्गणाओं के उत्तर भेदों में मात्र एक ही गति होती है –

(१) गति मार्गणा - प्रत्येक गति में एक गति।
(२) इन्द्रिय मार्गणा - एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक - तिर्यंच गति।
(३) काय मार्गणा - पृथ्वी आदि पाँच स्थावर काय में - तिर्यंच गति।
(४) योग मार्गणा - आहारकद्विक - मनुष्य गति।
(५) कषाय मार्गणा - संज्वलन चतुष्क - मनुष्य गति।
(६) ज्ञान मार्गणा - मन:पर्यय एवं केवलज्ञान - मनुष्य गति।
(७) संयम मार्गणा - सामायिकादि पाँच संयम - मनुष्य गति।
(८) दर्शन मार्गणा - केवलदर्शन - मनुष्य गति।
(९) संज्ञी - असंज्ञी - तिर्यंच गति।

नोट–तीन चौकड़ी से रहित संज्वलन चतुष्क मनुष्यों के ही होती है।

प्रश्न-पत्र

१. प्रश्न : उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **किस-किस गति में पंचेन्द्रिय जीव ही होते हैं ?**

(अ) नरक-तिर्यञ्च-मनुष्य (ब) नरक-मनुष्य-देव

(स) नरक-तिर्यञ्च-देव (द) कोई नहीं।

(ii) **सासादन सम्यग्दृष्टि नारकी के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?**

(अ) ४४ (ब) ४२

(स) ४८ (द) कोई नहीं।

(iii) **मनुष्य कौनसी अवस्था में अनाहारक होते हैं ?**

(अ) विग्रहगति (ब) अपर्याप्तावस्था

(स) जीवनभर (द) कभी नहीं।

(iv) **चार लाख जातियाँ किन-किन गति वाले जीवों के होती हैं ?**

(अ) नरक मनुष्य (ब) नरक तिर्यंच

(स) नरक-देव (द) कोई नहीं।

(v) **कौनसी गति में सबसे कम लेश्या होती है ?**

(अ) नरकगति (ब) देवगति

(स) मनुष्यगति (द) कोई नहीं।

२. प्रश्न : एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) सबसे कम कषायें कौनसी गति में होती हैं?

(ii) ऐसा कौनसा काययोग है जो सभी गतियों में पाया जाता है ?

(iii) ऐसी कौनसी गति है जिसमें नपुंसकवेद नहीं होता है ?

(iv) ऐसी कौनसी गति है जिसमें कुल और जाति बराबर पाई जाती है ?

(v) तिर्यञ्चगति में कितनी काय के जीव पाये जाते हैं ?

३. प्रश्न : हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) भवनवासी देवों के नौ योग होते हैं।

(ii) सभी नारकियों के अवधिदर्शन होता है।

(iii) नारकियों के सबसे कम ध्यान होते हैं।
(iv) सबसे ज्यादा योग मनुष्यगति में होते हैं।
(v) सबसे कम लेश्याएँ देवगति में होती हैं।

४. प्रश्न : रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) सम्यग्दृष्टि मनुष्य के............ज्ञान............दर्शन............ ध्यान हो सकते हैं।
(ii) विजय स्वर्ग के देवों के..........प्राण ....संज्ञा .... सम्यक्त्व होते है।
(iii) नारकी के............अवस्था में............तथा............ सम्यक्त्व नहीं होता है।
(iv) कर्मभूमिया तिर्यञ्चों की............अवस्था में............ सम्यक्त्व नहीं होता है।
(v) सासादन सम्यग्दृष्टि नारकी के......... योग .... कषाय तथा कम से कम........प्राण होते हैं।

५. प्रश्न : सही जोड़ी बनाइये-

(i) कल्पातीत - सैनी असैनी
(ii) सात संयम - नवग्रैवेयक
(iii) तिर्यंचगति - २५ ला. क. कुल
(iv) नारकी - मनुष्यगति
(v) एकेन्द्रिय - एक भवावतारी
(vi) सर्वार्थसिद्धि - केवल दर्शन
(vii) मनुष्यगति - देवांगना
(viii) सोलहवें स्वर्गतक - तिर्यंचगति

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) अ (iii) अ (iv) स (v) अ
२. (i) नरकगति (ii) कार्मण (iii) देवगति (iv) कोई नहीं (v) षट्काय
३. (i) ना (ii) ना (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना
४. (i) ५ ज्ञान, ४ दर्शन, १६ ध्यान (ii) १० प्राण, ४ संज्ञा, ३ सम्यक्त्व
(iii) निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में, सासादन, मिश्र। (iv) पर्याप्तावस्था में, क्षायिक सम्यक्त्व
(v) नौ, तेबीस, दस।
५. (i) नवग्रैवेयक (ii) मनुष्य गति (iii) सैनी.असैनी (iv) २५ ला.क.कुल
(v) तिर्यंच गति (vi) एक भवावतारी (vii) केवलदर्शन (viii) देवांगना।

१. मिश्र सम्यक्त्व किसी को भी निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में नहीं होता है।

२. इन्द्रिय मार्गणा

१. प्रश्न : इन्द्रिय किसे कहते हैं ?

उत्तर : जैसे-नवग्रैवेयक आदि में उत्पन्न हुए अहमिन्द्र देव स्वामी-सेवक आदि के भेद से रहित 'मैं ही इन्द्र हूँ।' इस प्रकार मानते हुए एक-एक होकर आज्ञा आदि की पराधीनता से रहित होते हुए अपने को स्वामी मानते हैं, उसी प्रकार स्पर्शन आदि इन्द्रियाँ भी अपने-अपने स्पर्श आदि विषयों में ज्ञान उत्पन्न करने के लिए अन्य इन्द्रियों की अपेक्षा न करते हुए स्वयं समर्थ होती हैं, इस प्रकार अहमिन्द्रों के समान इन्द्रियाँ हैं। **(गो.जी. १६४)**

२. प्रश्न : इन्द्रियाँ कितने प्रकार की होती हैं ?

उत्तर : इन्द्रियाँ दो प्रकार की होती हैं – १. द्रव्येन्द्रिय २. भावेन्द्रिय।

द्रव्येन्द्रिय - पुद्‌गल द्रव्य रूप इन्द्रिय द्रव्येन्द्रिय है अथवा निर्वृत्ति और उपकरण को द्रव्येन्द्रिय कहते हैं।

भावेन्द्रिय - लब्धि और उपयोग को भावेन्द्रिय कहते हैं। **(त.सू. २/१८)**

३. प्रश्न : निर्वृत्ति कितने प्रकार की है ?

उत्तर : निर्वृत्ति दो प्रकार की है – १. बाह्य निर्वृत्ति २. आभ्यन्तर निर्वृत्ति।

बाह्य निर्वृत्ति - चक्षु आदि में मसूर आदि के आकार रूप बाह्य निर्वृत्ति है **(सु. बो. ९४)**

इन्द्रिय नाम वाले आत्मप्रदेशों में प्रतिनियत आकाररूप और नामकर्म के उदय से विशेष अवस्था को प्राप्त जो पुद्‌गल प्रचय होता है, उसे बाह्य निर्वृत्ति कहते हैं। **(सर्वा. २९४)**

आभ्यन्तर निर्वृत्ति - उत्सेधांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण विशुद्ध आत्मप्रदेशों की चक्षुरादि के आकाररूप से रचना होना आभ्यन्तर निर्वृत्ति है। **(रा. वा. ३)**

४. प्रश्न : उपकरण कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : उपकरण दो प्रकार के होते हैं – १. बाह्य उपकरण और २. अभ्यन्तर उपकरण।

बाह्य उपकरण - नेत्र सम्बन्धी पलक, दोनों बरौनी आदि बाह्य उपकरण हैं। इसी प्रकार सभी इन्द्रियों के उपकरण जानना चाहिए।

अभ्यन्तर उपकरण - आँख में सफेद और काला मण्डल अभ्यन्तर उपकरण है। **(श्लो. ५/१३९)**

५. प्रश्न : इन्द्रियाँ कितनी होती हैं ?

उत्तर : इन्द्रियाँ पाँच होती हैं – १. स्पर्शन २. रसना ३. घ्राण ४. चक्षु और ५ कर्ण।

६. प्रश्न : इन्द्रिय मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय आदि सत्त्व, भूत और प्राणियों[१] में जीवों की खोज करने को इन्द्रिय मार्गणा कहते हैं।

७. प्रश्न : इन्द्रिय मार्गणा कितने प्रकार की है ?

उत्तर : इन्द्रिय मार्गणा पाँच प्रकार की है-

(१) एकेन्द्रिय(२) द्वीन्द्रिय (३) त्रीन्द्रिय (४) चतुरिन्द्रिय (५) पंचेन्द्रिय **(बृ.द्र.सं. १३टी.)**

एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तथा अनीन्द्रिय जीव होते हैं। **(ध. १/२३३)**

८. प्रश्न : यहाँ इन्द्रिय मार्गणा में कौनसी इन्द्रिय को ग्रहण करना चाहिए ?

उत्तर : यहाँ आस्रव के कारण प्राण आदि स्थानों पर भावेन्द्रिय को ही ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि, यहाँ पर भावेन्द्रियों की अपेक्षा पंचेन्द्रियपना स्वीकार किया है। **(ध. १/२६५)**

९. प्रश्न : अनीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो नियम से इन्द्रियों के उन्मीलन आदि व्यापार से रहित हैं क्योंकि वे अशरीरी हैं, उनके इन्द्रिय व्यापार का कारण जाति नामकर्म आदि कर्मों का अभाव है, इसी से अवग्रह आदि क्षायोपशमिक ज्ञानों के द्वारा पदार्थों को ग्रहण नहीं करते हैं। तथा इन्द्रिय और विषय के सम्बन्ध से होने वाले सुख से भी युक्त नहीं हैं, वे जिन और सिद्ध नामधारी जीव अनीन्द्रिय अनन्तज्ञान और सुख से युक्त होते हैं; क्योंकि उनका ज्ञान और सुख शुद्ध आत्मस्वरूप की उपलब्धि से उत्पन्न हुआ है। **(गो.जी.१७४ टी.)**

१०. प्रश्न : अनीन्द्रिय जीव कौन-कौनसे हैं ?

उत्तर : तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान वाले तथा सिद्ध भगवान अनीन्द्रिय होते हैं। यद्यपि तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान वाले जीवों के द्रव्येन्द्रियाँ पाई जाती हैं परन्तु उनके भावेन्द्रियाँ नहीं पाई जाती हैं, क्योंकि उनके मतिज्ञानावरणादि कर्मों का क्षयोपशम नहीं पाया जाता है।

---

१. प्राण - विकलत्रय प्राण हैं।

भूत - वनस्पतिकायिक भूत हैं।

जीव - पंचेन्द्रिय जीव हैं।

सत्त्व - पृथ्वी आदि वायु पर्यंत सत्त्व हैं।

तालिका संख्या ५

एकेन्द्रिय

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यंच	
२.	इन्द्रिय	१	एकेन्द्रिय	
३.	काय	५	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु वनस्पति	पृथ्वी आदि पाँचों स्थावरों को ग्रहण करना चाहिए।
४.	योग	३	औदारिकद्विक, कार्मण	
५.	वेद	१	नपुंसक	स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद नहीं हैं
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	
७.	ज्ञान	२	कुमति-कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	१	अचक्षुदर्शन	
१०.	लेश्या	३	कृ. नी. का.	शुभ लेश्याएँ नहीं हैं।
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	मिथ्यात्व, सासादन	सासादन निर्वृत्यपर्याप्तकावस्था में होता है।
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१६.	जीवसमास	१४	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	४	आ. श. इ. श्वासो.	भाषा तथा मन:पर्याप्ति नहीं है।
१८.	प्राण	४	स्पर्श. कायबल. श्वासो. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	३	२ ज्ञानो. १ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आर्त्त, ४ रौद्र	
२२.	आस्रव	३८	५ मि. ७ अ. २३ क. ३ यो.	स्पर्शनइन्द्रिय तथा षट्काय की हिंसा सम्बन्धी अविरति होती है।
२३.	जाति	५२ ला.	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	विकलत्रय एवं पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जाति नहीं है।
२४.	कुल	६७ ला.क.	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	विकलत्रय एवं पंचेन्द्रिय सम्बन्धी कुल नहीं है।

१. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिन जीवों का चिह्न स्पर्शविषयक ज्ञान है, वे जीव एकेन्द्रिय हैं। जिन जीवों के एक ही इन्द्रिय होती है, वे एकेन्द्रिय जीव हैं। जैसे-पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, इतरनिगोद, नित्यनिगोद, आदि। **(गो.जी. १६६)**

२. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के द्रव्यवेद नहीं पाया जाता है, इसलिए उनके नपुंसकवेद का अस्तित्व कैसे बतलाया है ?

उत्तर : एकेन्द्रियों में द्रव्यवेद मत होओ; क्योंकि उसकी यहाँ प्रधानता नहीं है। अथवा द्रव्यवेद की एकेन्द्रियों में उपलब्धि नहीं होती है, इसलिए उसका अभाव सिद्ध नहीं होता है। किन्तु सम्पूर्ण प्रमेयों को जानने वाले केवलज्ञान से उसकी सिद्धि हो जाती है। किन्तु यह ज्ञान छद्मस्थों में नहीं पाया जाता है। **(ध. १/३४६)**

३. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीव स्त्रीभाव व पुरुषभाव नहीं समझते, उनके स्त्री-पुरुष विषयक अभिलाषा कैसे बन सकती है ?

उत्तर : नहीं; क्योंकि जो पुरुष स्त्रीवेद से सर्वथा अनजान है और भूगृह के भीतर वृद्धि को प्राप्त हुआ है, ऐसे पुरुष के भी वासना देखी जाती है, इसलिए एकेन्द्रिय जीवों के स्त्री-पुरुष भाव में नहीं समझने पर भी (नपुंसक) वेद होने में कोई बाधा नहीं है। **(ध. १/३४६)**

४. प्रश्न : एकेन्द्रियों के कषायों का सद्भाव कैसे सिद्ध होता है?

उत्तर : क्वीन्स और न्यू साउथवेल्स के जंगलों में डंक मारने वाले वृक्ष होते हैं। इन वृक्षों पर नुकीले काँटे होते हैं। इनकी पत्तियाँ घने बालों वाली होती हैं। इन वृक्षों के समीप जाने पर पत्तियाँ शरीर से चिपक जाती हैं और अपने रोंयें छोड़ देती हैं, यह उनकी क्रोध कषाय कही जा सकती है।

बरगद आदि वृक्ष अपनी डालियों से शाखाएँ निकालकर भूमि तक पहुँचा देते हैं तथा उन्हें ही अपने जड़ और तने के रूप में परिवर्तित कर लेते हैं। यूकेलिप्टस कुछ ही दिनों में २००-३०० फुट ऊँचाई तक सीधा-सीधा बढ़कर एक प्रकार से अपने अभिमान को ही प्रगट करता है।

कीट-भक्षी पौधे स्पष्टरूप से मायावी दिखाई देते हैं। ये अपने रूप, रस, गंध से कीट, पतंगों आदि को अपनी ओर आकर्षित करके नष्ट कर देते हैं। इसी प्रकार अमरबेल भी धीरे-धीरे बढ़कर उसी वृक्ष को नष्ट कर देती है।

कई वनस्पतियाँ अपना भोजन जमीन के भीतर अपनी जड़ों / तनों में संचित कर लेती हैं। यूकेलिप्टस अपनी आजू-बाजू का इतना पानी इकट्ठा करके रख लेता है कि ४-५

वर्ष तक अकाल पड़ने पर भी वह नहीं सूखता है। यह उसकी लोभ कषाय का परिणाम है।

५. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के मिथ्यात्व कैसे सिद्ध होता है ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के गृहीत-अगृहीत आदि सभी मिथ्यात्व सम्भव हैं; क्योंकि जिनका हृदय सातप्रकार के मिथ्यात्वरूपी कलंक से अंकित है, ऐसे मनुष्यादि गति सम्बन्धी जीव पहले ग्रहण की हुई मिथ्यात्व पर्याय को न छोड़कर जब स्थावर पर्याय को प्राप्त करते हैं, तो उनके सातों[१] ही प्रकार का मिथ्यात्व पाया जाता है। इस कथन में कोई विरोध नहीं है। **(ध. १/२७७)**

६. प्रश्न : क्या सभी एकेन्द्रिय जीवों के सभी मिथ्यात्व हो सकते हैं ?

उत्तर : नहीं, जो एकेन्द्रिय अथवा द्वीन्द्रिय आदि जीव जिन्होंने आज तक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याय को प्राप्त नहीं किया है उनके पाँचों गृहीत मिथ्यात्व नहीं हो सकते हैं, क्योंकि मन के अभाव में जीव में किसी के उपदेश को ग्रहण करने की क्षमता नहीं हो सकती है। उपदेश को ग्रहण किये बिना गृहीत मिथ्यात्व नहीं हो सकता है। **(ध. पु.)**

७. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के कम-से-कम तीन प्राण होते हैं-

१. स्पर्शन २. कायबल ३. आयु।

श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं होता है, इसलिए निर्वृत्यपर्याप्त तथा लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के तीन प्राण होते हैं।

८. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के आहारादि संज्ञाएँ कैसे सिद्ध होती हैं ?

उत्तर : सम्पूर्ण रूप से छाल को उतार देने पर वृक्ष वनस्पति का मरण हो जाता है और जल, वायु आदि के मिलने से वे हरे-भरे हो जाते हैं इसलिए **आहारसंज्ञा** स्पष्ट है।

स्पर्श कर लेने पर लाजवन्ती आदि वनस्पतियाँ संकुचित हो जाती हैं, अत: **भय संज्ञा** भी स्पष्ट है। स्त्रियों के कुल्ले के जल से सिंचित होने से कुछ लताएँ आदि हर्षित (पुष्पित) हो जाती हैं तथा स्त्रियों के पैरों के ताड़न से कुछ वनस्पतियों में पुष्प, अंकुर आदि प्रादुर्भूत हो जाते हैं इसलिए **मैथुन संज्ञा** भी स्पष्ट है।

वृक्ष की जड़ें निधान-खजाने आदि की दिशा में फैल जाती हैं इसलिए **परिग्रह संज्ञा** भी स्पष्ट है। **(मू. आ. २१७)**

---

१. (i) ऐकान्तिक (ii) सांशयिक (iii) मूढ़ (iv) व्युद्ग्रहित (v) वैनयिक (vi) स्वाभाविक (vii) विपरीत।

लगभग पूरी बुझी हुई अग्नि भी थोड़ा वायु का झोंका लग जाने पर या रुई आदि अनुकूल ईंधन मिलने पर सचेत (पुनर्जीवित हुई) देखी जाती है, इसको उनकी **आहार** संज्ञा कह सकते हैं।

अग्नि से अग्नि आगे-आगे बढ़ती हुई देख कर **परिग्रह** संज्ञा कही जा सकती है। इसी प्रकार पृथ्वी आदि में भी संज्ञाएँ पाई जाती हैं।

सिद्धान्त की दृष्टि से वेद कर्म के बन्ध का कारण वेद का उदय कहा गया है। उनके (एकेन्द्रिय जीवों के) वेद का बन्ध होता है इसलिए उनके **मैथुनसंज्ञा** होती ही है, ऐसे ही अप्कायिक आदि के उदय के साथ समझना चाहिए।

९. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के वचनयोग नहीं होता है, फिर उनके मृषानन्दी रौद्रध्यान कैसे हो सकता है ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के भी स्पर्शन इन्द्रिय के माध्यम से झूठ बोलने में आनन्द की तथा झूठ बोलने वाले की अनुमोदना सम्बन्धी कल्पनाएँ हो सकती हैं।

दूसरी बात, रौद्रध्यान के लिए बोलने की या वचनयोग की अतिआवश्यकता भी नहीं है। अतः उनके मृषानन्दी रौद्रध्यान होने में कोई बाधा नहीं है।

१०. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों के अपर्याप्त अवस्था में कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के अपर्याप्त अवस्था में ३६ आस्रव के प्रत्यय होते हैं – ५ मिथ्यात्व, ७ अविरति, २३ कषाय, १ योग (औदारिक मिश्र) काय योग=३६

११. प्रश्न : एकेन्द्रिय जीवों की ५२ लाख जातियाँ कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों की जातियाँ-

पृथ्वीकायिक	७ लाख	नित्यनिगोद	७ लाख
जलकायिक	७ लाख	इतर निगोद	७ लाख
अग्निकायिक	७ लाख	वनस्पति कायिक	१० लाख
वायुकायिक	७ लाख		कुल= ५२ लाख।

१२. प्रश्न : एकेन्द्रिय के कितने कुल हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के ६७ लाख करोड़ कुल हैं-

पृथ्वीकायिक	२२ लाख करोड़	वायुकायिक	७ लाख करोड़
जलकायिक	७ लाख करोड़	वनस्पतिकायिक	२८ लाख करोड़
अग्निकायिक	३ लाख करोड़	योग = ६७ लाख करोड़ कुल	

तालिका संख्या ६

विकलेन्द्रिय (विकलत्रय)

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यञ्चगति	
२.	इन्द्रिय	१	स्वकीय	द्वीन्द्रिय के द्वीन्द्रिय.......
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	४	१ वचनयोग ३ काययोग	अनुभय वचनयोग होता है।
५.	वेद	१	नपुंसक	
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	स्त्री तथा पुरुषवेद नहीं होते हैं
७.	ज्ञान	२	कुमति-कुश्रुतज्ञान	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	१,२	चक्षुदर्शन, अचक्षु.	चक्षुदर्शन चतुरिन्द्रिय के ही होता है।
१०.	लेश्या	३	कृ. नी. का.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	सासा. मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१६.	जीवसमास	स्वकीय	द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय में से	
१७.	पर्याप्ति	५	आ. श. इ. श्वा. भा.	मन:पर्याप्ति नहीं होती है।
१८.	प्राण	६,७,८	द्वीन्द्रिय के ६, त्रीन्द्रिय के ७, चतुरिन्द्रिय के ८ प्राण	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	३,४	२ ज्ञानो. १ दर्शनो,; २ दर्शनो.	चतुरिन्द्रिय जीव के ४ उपयोग हैं।
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	स्वकीय	४०, ४१, ४२	द्वीन्द्रिय के ४०, त्रीन्द्रिय के ४१ चतुरिन्द्रिय के ४२।
२३.	जाति	स्वकीय	२ ला. २ ला. २ला.	
२४.	कुल	स्वकीय	७ ला.क., ८ ला.क. ९ ला.क.	

१. प्रश्न : **द्वीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिनका चिह्न स्पर्श और रस विषयक ज्ञान है वे द्वीन्द्रिय जीव हैं। जिन जीवों के दो इन्द्रियाँ पाई जाती हैं वे द्वीन्द्रिय जीव हैं। जैसे- शंख, कृमि, लट (कैंचुआ), सीप, गिजाई, जौंक, कौड़ी, सूचीमुख, आदि। **(गो. जी. १६६)**

२. प्रश्न : **त्रीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिनका चिह्न स्पर्श, रस तथा गन्ध विषयक ज्ञान है वे जीव त्रीन्द्रिय हैं। जिन जीवों के तीन इन्द्रियाँ होती हैं वे त्रीन्द्रिय जीव हैं। जैसे-कुन्थु, पिपीलिका, चींटा, जूँ, बिच्छू, कनखजूरा, खटमल, लीखें आदि। **(गो.जी. १६६)**

३. प्रश्न : **चतुरिन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिनका चिह्न स्पर्श, रस, गन्ध तथा वर्ण विषयक ज्ञान है वे चतुरिन्द्रिय जीव हैं। जिनके चार इन्द्रियाँ हैं वे चतुरिन्द्रिय जीव हैं। जैस झिंगुर, डाँस, मच्छर, पतंगा, भ्रमर आदि। **(गो.जी. १६६)**

४. प्रश्न : **विकलत्रयों में चींटा-चींटी, भ्रमर-भ्रमरी आदि स्त्री-पुरुष देखे जाते हैं, अत: उनके भी स्त्री-पुरुष वेद मानने में क्या बाधा है ?**

उत्तर : विकलत्रयों में भी स्त्री-पुरुष लिङ्ग वाले नाम देखे जाते हैं। लोक में नपुंसक लिङ्ग वाले शब्दों का उच्चारण भी स्त्री या पुरुष वेद के रूप में ही होता है। जैसे पुस्तक शब्द नपुंसक लिङ्ग का है फिर भी, पुस्तक रखी है, ऐसा ही बोला जाता है। दूध शब्द नपुंसक लिङ्ग का है फिर भी पुल्लिङ्ग में बोला जाता है। इसी प्रकार से विकलत्रय, एकेन्द्रिय आदि में भी बोला जाता है। एकेन्द्रियों में भी कमल-कमलिनी आदि।

इसका अर्थ उनके स्त्री-पुरुष वेद हो गया, ऐसा नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर तो अजीवों में भी चमचा-चमची, भगोना-भगोनी, कटोरा-कटोरी आदि व्यवहार होता है तो उनके भी स्त्री-पुरुष वेद हो जायेगा। लेकिन ऐसा नहीं है, क्योंकि अजीवों के तो वेद ही नहीं हो सकता है। अत: आगम में एकेन्द्रिय तथा विकलत्रयों के नपुंसक वेद ही कहा गया है, सो सत्य है।

५. प्रश्न : **क्या ढाई द्वीप के बाहर के विकलत्रय जीवों में भी नपुंसक वेद ही होता है ?**

उत्तर : नहीं, ढाई द्वीप के बाहर विकलत्रय जीव नहीं होते हैं। विकलत्रय जीव तो मात्र कर्मभूमिया तिर्यंचों में ही होते हैं।

६. प्रश्न : **क्या ढाई द्वीप के बाहर कहीं पर भी विकलत्रय जीव नहीं होते हैं ?**

उत्तर : नहीं, ढाई द्वीप के बाहर असंख्यात द्वीप-समुद्रों में मात्र पंचेन्द्रिय तिर्यंच होते हैं लेकिन

अन्त के स्वयम्भूरमण द्वीप तथा स्वयम्भूरमण समुद्र में विकलत्रय जीव भी पाये जाते हैं। उनके भी नपुंसक वेद ही पाया जाता है। **(ध. ४/२४३)**

७. प्रश्न : **क्या कर्मभूमिया मनुष्य-तिर्यंचों के समान विकलत्रय जीवों के भी वेद की विषमता हो सकती है ?**

उत्तर : नहीं, कर्मभूमिया मनुष्य-तिर्यंचों के समान विकलत्रय जीवों के वेद की विषमता नहीं हो सकती है, क्योंकि कहा है – **नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि।।त.सू. २/५०।।** नारकी एवं सम्मूर्च्छन जन्म वाले जीवों के एक नपुंसक वेद ही होता है। विकलत्रय जीव भी सम्मूर्च्छन जन्म वाले होते हैं इसलिए उनके वेद की विषमता नहीं हो सकती है।

८. प्रश्न : **चींटी आदि के अण्डे देखे जाते हैं, अत: उनके नपुंसक वेद ही कैसे हो सकता है ?**

उत्तर : चींटी आदि जीवों के अण्डों की उत्पत्ति गर्भ से नहीं होती है। चींटियाँ आदि केवल यहाँ-वहाँ के मल-मूत्र आदि गन्दे स्थानों से सड़े-गले पुद्गलों को लेकर विशेष स्थानों में रख लेती है। कालान्तर में वे ही पुद्गल पिण्ड चींटी आदि के शरीर बन जाते हैं। **(श्लो. ५/२५२)**

इसी प्रकार सिर की जुएँ भी जो लीख के रूप में अण्डों जैसी दिखाई देती हैं, उनकी उत्पत्ति भी ऐसे ही जानना चाहिए। इसलिए अण्डाकार दिखाई देने पर भी ये सब नपुंसक वेद वाले ही होते हैं।

९. प्रश्न : **विकलत्रय जीवों के कितने प्राण होते हैं ?**

उत्तर : विकलत्रय जीवों के प्राण-

- दो इन्द्रिय जीवों के पर्याप्तावस्था में ६ प्राण – २ इन्द्रियाँ (स्प.रस.) २ बल (वच.का.) श्वासोच्छ्वास तथा आयु।
- तीन इन्द्रिय जीवों के पर्याप्तावस्था में ७ प्राण – ३ इन्द्रियाँ (स्प.रस.घ्रा.) २ बल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु।
- चतुरिन्द्रिय जीवों के पर्याप्तावस्था में ८ प्राण – ४ इन्द्रियाँ (स्प.रस.घ्रा.च.) २ बल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु।

इन सबके निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में श्वासोच्छ्वास तथा वचन बल नहीं होता है अत: इनके क्रमश: ४, ५ तथा ६ प्राण होते हैं। **(गो.जी. १३३)**

१०. प्रश्न : **विकलत्रय जीवों के कितने उपयोग होते हैं ?**

उत्तर : • द्वीन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय जीवों के ३ उपयोग होते हैं- कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान तथा अचक्षुदर्शन।

● चतुरिन्द्रिय जीवों के ४ उपयोग होते हैं- कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, चक्षुदर्शन तथा अचक्षुदर्शन।

नोट - द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय जीवों के चक्षुइन्द्रिय के अभाव में चक्षुदर्शन नहीं होता हैं।

११. प्रश्न : विकलत्रय जीवों के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : विकलत्रय जीवों के आस्रव के प्रत्यय-

● द्वीन्द्रिय जीवों के ४० आस्रव के प्रत्यय होते हैं – ५ मिथ्यात्व, ८ अविरति (षट्कायिक जीव एवं दो इन्द्रिय सम्बन्धी) २३ कषाय, ४ योग।

● त्रीन्द्रिय जीवों के ४१ आस्रव के प्रत्यय होते हैं – ५ मिथ्यात्व ९ अविरति, २३ कषाय, ४ योग।

● चतुरिन्द्रिय जीवों के ४२ आस्रव के प्रत्यय होते हैं- ५ मिथ्या. - १० अवि. २३ कषाय, ४ योग। इन्हीं जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक तथा लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था में तीन योग (औदारिक काययोग, कार्मणकाययोग तथा वचनयोग) कम करने पर क्रमशः ३७, ३८, ३९ आस्रव के प्रत्यय हैं।

इन्हीं जीवों के विग्रहगति में औदारिकद्विक तथा वचनयोग कम करने पर क्रमशः ३७, ३८, ३९ आस्रव के प्रत्यय हैं।

१२. प्रश्न : एकेन्द्रिय तथा विकलत्रय जीवों के षट्कायिक जीवों की हिंसा सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय कैसे हो सकता है ?

उत्तर : मकड़ी के समान कुछ विशेष जाति की झाड़ियाँ मनुष्य जैसे बड़े-बड़े जीवों को भी पकड़ती हुई देखी जाती हैं। चींटियाँ लट आदि को पकड़कर ले जाते हुए प्रत्यक्ष देखी जाती हैं, गाय, भैंस, मनुष्य आदि को कीड़े-मकोड़े आदि काटते हुए देखे जा सकते हैं अतः उनके भी षट्कायिक जीवों सम्बन्धी आस्रव होता ही है क्योंकि हिंसा का त्याग किये बिना यदि कोई हिंसा नहीं भी करता है या किसी के निमित्त से हिंसा नहीं भी होती है तो भी उसे हिंसा का पाप लगता ही है। अतः एकेन्द्रिय तथा विकलत्रय जीवों के भी षट्कायिक जीवों की हिंसा सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय होते ही हैं।

तालिका संख्या ७

पंचेन्द्रिय

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री, पुरुष, नपुंसक	मनुष्य-तिर्यञ्च की अपेक्षा तीनों वेद होते हैं
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञान, ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा. छे. प. सू. यथा. संय. असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अचक्षु. अवधि. केवल.	मनुष्यों के चारों दर्शन होते हैं।
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा. उ. क्षायो. सा. मिश्र. मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१४	पहले से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	२	सैनी पंचेन्द्रिय, असैनीपंचेन्द्रिय	तिर्यञ्चों की अपेक्षा असैनी सम्बन्धी जीवसमास है।
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ बल, श्वा. आयु	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो,. ४ दर्शनो.	मनुष्यों की अपेक्षा कहे हैं
२१.	ध्यान	१६	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ४ शु.	
२२.	आस्रव	५७	५ मि. १२ अ. २५ क. १५ यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक की जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिनका चिह्न स्पर्श, रस, गंध, वर्ण तथा शब्द विषयक ज्ञान है, वे पंचेन्द्रिय जीव हैं। जिनके पाँच इन्द्रियाँ होती हैं, वे पंचेन्द्रिय जीव हैं। जैसे-देव, नारकी, मनुष्य, हाथी, घोड़ा, बैल आदि। **(गो.जी. १६६)**

मनुष्य, देव, नारकी, तिर्यञ्च संज्ञी, असंज्ञी तिर्यञ्च, साँप, फन वाले नाग, सरकने वाले अजगर आदि तथा चौपाये आदि पाँच इन्द्रिय जीव कहलाते हैं।

२. प्रश्न : पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तीन प्रकार के होते हैं – १. जलचर २. थलचर ३. नभचर।

जलचर – जो पानी में रहते हैं, जल ही जिनका जीवन है वे जलचर जीव हैं। जैसे मछली, महामत्स्य, तन्दुलमत्स्य, आदि।

थलचर – जो धरती पर निवास करते हैं, वे थलचर हैं। जैसे हाथी, घोड़ा, बैल, गाय, चीता, भैंस आदि।

नभचर – जो आकाश में उड़ते हैं, वृक्षों पर रहते हैं, वे नभचर हैं। जैसे कबूतर, चिड़िया, तोता, मैना, कोयल आदि।

३. प्रश्न : क्या कोई ऐसा पंचेन्द्रिय जीव है जो सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेदों को प्राप्त कर सकता है ?

उत्तर : हाँ, एक निकट भव्य पंचेन्द्रिय जीव सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेदों को प्राप्त कर सकता है। जैसे-किसी मिथ्यादृष्टि के मिथ्यात्व होता है। वही जब प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसको प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है। उसी के यदि अनन्तानुबन्धी चतुष्क में से किसी एक का उदय आ जावे तो वह सासादन सम्यग्दृष्टि बन जाता है। उसी के यदि सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय आ जावे तो वह सम्यग्मिथ्यादृष्टि बन जायेगा। उसी के यदि सम्यक् प्रकृति का उदय आता है तो वह क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि होता है।

वही क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि यदि अनन्तानुबन्धी चतुष्क तथा मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व तथा सम्यक् प्रकृति का क्षय कर देता है तो वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है। इस प्रकार एक जीव के सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेद हो जाते हैं।

नोट – १. सम्यक् प्रकृति तथा सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनों के आ सकता है। २. सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेद एक भव में मनुष्यगति वाले के ही हो सकते हैं।

४. प्रश्न : क्या सभी पंचेन्द्रिय जीवों के छहों पर्याप्तियाँ होती हैं ?

उत्तर : नहीं, मात्र सैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के ही छहों पर्याप्तियाँ होती हैं। सैनी लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के छहों पर्याप्तियाँ नहीं होती हैं, क्योंकि शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही उसका मरण हो जाता है इसलिए उनको लब्ध्यपर्याप्तक / अपर्याप्तक कहा जाता है। उसके छह अपर्याप्तियाँ होती हैं।

५. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीवों के पन्द्रह योग किस अपेक्षा होते हैं ?

उत्तर : पंचेन्द्रिय जीवों के - चार मनोयोग तथा ३ वचन योग (अनुभय वचनयोग बिना) संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा तीनों गति के जीवों की अपेक्षा।

अनुभय वचनयोग - संज्ञी तथा असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा।

औदारिकद्विक - मनुष्य - तिर्यञ्च की अपेक्षा।

वैक्रियिकद्विक - देव - नारकी की अपेक्षा।

आहारक द्विक - छठे गुणस्थान की अपेक्षा।

कार्मणकाययोग - विग्रह गति की अपेक्षा तथा केवली समुद्घात की अपेक्षा।

६. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीवों की २६ लाख जातियाँ कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर : पंचेन्द्रिय जीवों की २६ लाख जातियाँ-

नारकियों की ४ लाख, तिर्यञ्चपंचेन्द्रियों की ४ लाख।

मनुष्यों की १४ लाख, देवों की ४ लाख। = कुल २६ लाख।

७. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीवों के १०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : पंचेन्द्रिय के कुल-

नारकियों के - २५ लाख करोड़, तिर्यञ्चों में जलचरों के - १२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़

थलचरों के - १९ लाख करोड़

नभचरों के - १२ लाख करोड़

मनुष्यों के १४ लाख करोड़, देवों के - २६ लाखकरोड़। = १०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़।

८. प्रश्न : किन जीवों के इन्द्रियाँ नहीं होती हैं ?

उत्तर : तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में भावेन्द्रियाँ नहीं होती हैं, क्योंकि वहाँ इन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम नहीं होता है। विग्रहगति में तथा जब तक इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तब तक द्रव्येन्द्रियाँ नहीं होती हैं, क्योंकि वहाँ इन्द्रिय के योग्य नाम कर्म का उदय नहीं होता है।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : **किस इन्द्रिय वाले जीव किस गति में होते हैं ?**

उत्तर : तिर्यंच गति में एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। नरक, मनुष्य तथा देवगति में केवल संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव ही होते हैं। मनुष्य गति में अनिन्द्रिय जीव भी होते हैं। पंचम सिद्ध गति में भी अनिन्द्रिय जीव ही होते हैं।

२. प्रश्न : **कौन-कौनसे प्राण इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में पाये जाते हैं ?**

उत्तर : चार प्राण इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में पाये जाते हैं-

स्पर्शन इन्द्रिय, कायबल, श्वासोच्छ्वास और आयु।

रसनाइन्द्रिय आदि प्राण - एकेन्द्रिय जीवों के नहीं होते।

वचनबल प्राण भी - एकेन्द्रिय जीवों के नहीं होता।

मनोबल प्राण - एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक नहीं होते।

३. प्रश्न : **ऐसे कौन-कौनसे उपयोग हैं जो इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में नहीं पाये जाते हैं ?**

उत्तर : ९ उपयोग इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में नहीं पाये जाते हैं-

६ ज्ञानोपयोग—मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग, मनःपर्ययज्ञानोपयोग, केवलज्ञानोपयोग तथा विभंगावधि ज्ञानोपयोग।

३ दर्शनोपयोग—चक्षुदर्शनोपयोग, अवधिदर्शनोपयोग, केवलदर्शनोपयोग।

इनमें से चक्षुदर्शनोपयोग को छोड़कर शेष आठ उपयोग संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के ही होते हैं। चक्षुदर्शनोपयोग एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय जीवों के नहीं होता है। मात्र तीन उपयोग (कुमतिज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग तथा अचक्षुदर्शनोपयोग) इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में पाये जाते हैं।

४. प्रश्न : **आस्रव के ऐसे कौन-कौनसे कारण हैं, जो इन्द्रियमार्गणा के सभी भेदों में पाये जाते हैं ?**

उत्तर : आस्रव के ३८ प्रत्यय ऐसे हैं, जो इन्द्रिय मार्गणा के सभी भेदों में पाये जाते हैं-

५ मिथ्यात्व, २३ कषाय, ७ अविरति तथा ३ योग= ३८।

स्त्रीवेद, पुरुषवेद - एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक नहीं होते हैं।

रसनाआदि चार इन्द्रिय तथा मन सम्बन्धी अविरति - एकेन्द्रिय आदि जीवों के नहीं होती हैं।

४ मनोयोग ३ वचनयोग - एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक नहीं हैं।

आहारकद्विक तथा वैक्रियिकद्विक
अनुभयवचनयोग - एकेन्द्रिय जीवों के नहीं है।

५. प्रश्न : आस्रव के ऐसे कौन-कौन से प्रत्यय हैं जो एकेन्द्रिय में नहीं होते हैं लेकिन पंचेन्द्रिय के होते हैं ?

उत्तर : आस्रव के १९ प्रत्यय ऐसे हैं जो एकेन्द्रिय के नहीं होते हैं लेकिन पंचेन्द्रिय के होते हैं-

५ अविरतियाँ - रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण तथा मन सम्बन्धी।

२ कषाय - स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद।

१२ योग - ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, आहारकद्विक तथा वैक्रियिकद्विक=१९।

६. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीवों के जाति तथा कुल अधिक हैं या एकेन्द्रिय जीवों के ?

उत्तर : पंचेन्द्रियों में कुल अधिक हैं, लेकिन एकेन्द्रियों में जातियाँ अधिक हैं।

पंचेन्द्रियों में १०८ लाख करोड़ कुल हैं तो एकेन्द्रिय में मात्र ६७ लाख करोड़ कुल ही हैं।

पंचेन्द्रियों के मात्र २६ लाख जातियाँ हैं तो एकेन्द्रिय जीवों की ५२ लाख जातियाँ हैं।

७. प्रश्न : इन्द्रिय मार्गणा के कौनसे भेद में सबसे ज्यादा जीवसमास हैं ?

उत्तर : एकेन्द्रिय जीवों के १४ जीवसमास हैं-

पृथ्वीकायिक के दो, जलकायिक के दो, अग्निकायिक के दो, वायुकायिक के दो तथा वनस्पतिकायिक के छह इस प्रकार = १४ जीवसमास हैं।

८. प्रश्न : कौनसी इन्द्रिय वालों के एक काययोग एवं एक वचनयोग होता है ?

उत्तर : द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तथा असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीवों की पर्याप्त-अवस्था में एक औदारिक काययोग और एक अनुभयवचनयोग होता है।

– प्रश्न पत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **सात प्राण किस इन्द्रिय वाले के होते हैं ?**

(अ) त्रीन्द्रिय (ब) चतुरिन्द्रिय

(स) द्वीन्द्रिय (द) कोई नहीं।

(ii) **तीन योग तथा तीन उपयोग किस इन्द्रिय वाले के होते हैं ?**

(अ) एकेन्द्रिय (ब) पंचेन्द्रिय

(स) द्वीन्द्रिय (द) चतुरिन्द्रिय।

(iii) **किस-किस इन्द्रिय वालों की दो-दो लाख जातियाँ होती हैं ?**

(अ) द्वी.त्री.चतु. (ब) द्वी.चतु.पंचे.

(स) एक.द्वी.चतु. (द) एक.पंच.त्रस।

(iv) **त्रीन्द्रिय जीवों के कितने दर्शन होते हैं ?**

(अ) ४ (ब) १

(स) ३ (द) कोई नहीं।

(v) **किस इन्द्रिय वाले के १६ ही ध्यान होते हैं ?**

(अ) द्वीन्द्रिय (ब) त्रीन्द्रिय

(स) पंचेन्द्रिय (द) कोई नहीं।

२ एक शब्द में उत्तर दो-

(i) विकलत्रयों में सबसे ज्यादा अविरति किसके होती है ?

(ii) सबसे कम प्राण कौनसी इन्द्रिय वालों के हो सकते हैं?

(iii) एकेन्द्रिय जीवों के कितने जीवसमास होते हैं ?

(iv) दो जीवसमास कौनसी इन्द्रिय वालों के होते हैं ?

(v) किस इन्द्रिय वाले के अनुभयवचन योग नहीं होता है ?

३. हाँ या ना में उत्तर दो-

(i) सिद्ध भगवान पंचेन्द्रिय जीवों में आते हैं।

(ii) एकेन्द्रिय जीवों की ५२ लाख जाति नहीं होती है।

(iii) पंचेन्द्रिय जीवों के सत्तावन आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

(iv) क्या ऐसा कोई पंचेन्द्रिय जीव है जिसके लेश्या नहीं होती है।

(v) चतुरिन्द्रिय जीवों के कम-से-कम तीन उपयोग होते हैं।

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) एकेन्द्रिय जीवों के··············योग ही होते हैं।

(ii) पंचेन्द्रिय जीव············गुणस्थान से············गुणस्थान तक होते हैं।

(iii) एकेन्द्रिय जीवों के············तथा पंचेन्द्रिय जीवों के············· उपयोग होते हैं।

(iv) द्वीन्द्रिय जीव·············और पंचेन्द्रिय जीव सैनी तथा············भी होते हैं।

(v) एकेन्द्रिय के··········चतुरिन्द्रिय के···········तथा पंचेन्द्रिय जीवों के··········संयम होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

(i)	एकेन्द्रिय	-	सूक्ष्म साम्पराय
(ii)	संयमासंयम	-	द्वीन्द्रिय
(iii)	४० आस्रव	-	५२ लाख जाति
(iv)	पंचेन्द्रिय	-	९ प्राण
(v)	६७ लाख करोड़	-	पंचेन्द्रिय
(vi)	चार इन्द्रिय	-	सिद्ध भगवान
(vii)	असैनी पंचेन्द्रिय	-	एकेन्द्रिय
(viii)	इन्द्रियातीत	-	चतुरिन्द्रिय

– उत्तरमाला –

१. (i) अ (ii) अ (iii) अ (iv) ब (v) स।

२. (i) चतुरिन्द्रिय (ii) पञ्चेन्द्रिय[१] (iii) चौदह (iv) पंचेन्द्रिय (v) एकेन्द्रिय।

३. (i) ना (ii) ना (iii) हाँ (iv) हाँ[२] (v) ना।

४. (i) तीन (ii) पहले, चौदहवें (iii) तीन, बारह (iv) असैनी, असैनी।
(v) असंयम, असंयम, सभी।

५. (i) ५२ लाख जाति (ii) पंचेन्द्रिय (iii) द्वीन्द्रिय (iv) सूक्ष्मसाम्पराय
(v) एकेन्द्रिय (vi) चतुरिन्द्रिय (vii) ९ प्राण (viii) सिद्ध भगवान।

---

१. चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा एक प्राण होता है।

२. चौदहवें गुणस्थान में भी पंचेन्द्रिय जीव हैं।

३. काय मार्गणा

१. प्रश्न : काय मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : जाति नामकर्म के उदय से अविनाभावी त्रस और स्थावर नामकर्म के उदय से उत्पन्न आत्मा की त्रस तथा स्थावर रूप पर्याय को काय कहते हैं।

व्यवहारी पुरुषों के द्वारा 'त्रस-स्थावर' इस प्रकार से कहा जाता है, वह काय है।

पुद्गल स्कन्धों के द्वारा जो पुष्टि को प्राप्त हो वह काय है।

'काय' में जीवों की खोज करना काय मार्गणा है। **(गो.जी. १८१)**

२. प्रश्न : काय मार्गणा कितने प्रकार की है ?

उत्तर : काय मार्गणा छह प्रकार की है- (१) पृथ्वीकाय (२) जलकाय (३) अग्निकाय (४) वायुकाय (५) वनस्पतिकाय (६) त्रसकाय। **(वृ.द्र.सं. १३ टी.)** पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, त्रसकायिक तथा कायातीत जीव भी होते हैं। **(गो.जी. १८१)**

३. प्रश्न : स्थावर जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : स्थावर जीव एक स्पर्शन इन्द्रिय के द्वारा ही जानता है, देखता है, खाता है, सेवन करता है, उसका स्वामीपना करता है इसलिए उसे एकेन्द्रिय स्थावर जीव कहा है।**(ध. १/२४१)**

स्थावर नामकर्म के उदय से जीव स्थावर कहलाते हैं।

स्थावर नामकर्म के उदय से उत्पन्न हुई विशेषता के कारण ये पाँचों ही स्थावर कहलाते हैं। **(ध. १/२६७)**

४. प्रश्न : त्रसकायिक जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : त्रस नामकर्म के उदय से उत्पन्न वृत्तिविशेष वाले जीव त्रस कहे जाते हैं। **(रा.वा. १)**

लोक में जो दो इन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पाँच इन्द्रिय से सहित जीव दिखाई देते हैं उन्हें वीर भगवान के उपदेश से त्रसकायिक जानना चाहिए **(पं.सं.)**

५. प्रश्न : अकाय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिस प्रकार सोलह ताव के द्वारा तपाये हुए सुवर्ण में बाह्य किट्टिका और अभ्यन्तर कालिमा इन दोनों ही प्रकार के मल का बिलकुल अभाव हो जाने पर फिर किसी दूसरे मल का सम्बन्ध नहीं होता, उसी प्रकार महाव्रत और धर्मध्यानादि से सुसंस्कृत एवं सुतप्त आत्मा में से एक बार शुक्ल ध्यान रूपी अग्नि के द्वारा बाह्य मल काय और अंतरंग मल कर्म के सम्बन्ध के सर्वथा छूट जाने पर फिर उनका बन्ध नहीं होता और वे सदा के लिए काय तथा कर्म से रहित होकर सिद्ध हो जाते हैं। **(गो. जी. २०३)**

तालिका संख्या ८

पृथ्वीकायिकादि चार

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यञ्चगति	
२.	इन्द्रिय	१	एकेन्द्रिय	
३.	काय	स्वकीय	पृथ्वीकायिकादि	पृथ्वीकायिक में पृथ्वीकायिक....
४.	योग	३	औदारिकद्विक और कार्मण	
५.	वेद	१	नपुंसक	
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	
७.	ज्ञान	२	कुमति, कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	१	अचक्षुदर्शन	
१०.	लेश्या	३	कृ. नी. का.	शुभ लेश्या नहीं है।
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	मिथ्यात्व, सासादन	अग्निकायिक, वायुकायिक में सासादन सम्यक्त्व नहीं है।
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	पहला, दूसरा	
१६.	जीवसमास	स्वकीय	अपने-अपने सूक्ष्म बादर की अपेक्षा दो-दो।	
१७.	पर्याप्ति	४	आ. श. इ. श्वासो.	
१८.	प्राण	४	१ इ. १ बल, श्वा. आ.	कायबल होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	३	२ कुज्ञान. १ दर्शनो.	अचक्षुदर्शन होता है
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	३८	५ मि. ७ अ. २३ क. ३ यो.	
२३.	जाति	स्वकीय	अपनी-अपनी ७-७ लाख	
२४.	कुल	स्वकीय	पृ. २२ ला.क., ज. ७ ला.क. अग्नि ३ ला.क., वायु ७ ला.क.	

१. प्रश्न : पृथ्वी कितने प्रकार की है ?

उत्तर : पृथ्वी चार प्रकार की है – १. पृथ्वी २. पृथ्वीकाय ३. पृथ्वीकायिक ४. पृथ्वी जीव।

पृथिवी (पृथ्वी) जो अचेतन है, प्राकृतिक परिणमनों से बनी है और कठिन गुणवाली है वह पृथिवी या पृथ्वी है यह पृथिवी आगे के तीनों भेदों में पायी जाती है।

पृथिवीकाय - काय का अर्थ शरीर है, अत: पृथिवीकायिक जीव के द्वारा जो शरीर छोड़ दिया जाता है वह पृथिवीकाय कहलाता है। यथा-मरे हुए मनुष्य का शरीर-शव।

पृथिवी कायिक - जिस जीव के पृथ्वी रूप काय विद्यमान है, उसे पृथिवी कायिक कहते हैं।

पृथ्वी जीव - कार्मण काययोग में स्थित जिस जीव ने जब तक पृथिवी को काय रूप में ग्रहण नहीं किया है तब तक वह पृथ्वी जीव कहलाता है। **(सर्वा. २८६)**

२. प्रश्न : पृथिवीकायिक जीव कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : मिट्टी, बालू, शर्करा, स्फटिकमणि, चन्द्रकान्तमणि, सूर्यकान्तमणि, गेरू, चन्दन (एक पत्थर होता है, कारंजा में इस पत्थर की प्रतिमा है) हरिताल, हिंगुल, हीरा, सोना, चाँदी, लोहा, ताँबा आदि छत्तीस प्रकार के पृथिवीकायिक जीव हैं। **(मू. २०६-९)**

३. प्रश्न : जल कितने प्रकार का है ?

उत्तर : जल चार प्रकार का है- १. जल २. जलकाय ३. जलकायिक ४. जलजीव।

जल - जो जल आलोड़ित हुआ है, उसे एवं कीचड़ सहित जल को जल कहते हैं।

जलकाय - जिस जलकायिक में से जीव नष्ट हो चुके हैं अथवा गर्म पानी जलकाय है।

जलकायिक - जल जीव ने जिस जल को शरीर रूप में ग्रहण किया है, वह जलकायिक है।

जलजीव - विग्रहगति में स्थित जीव जो एक दो या तीन समय में जल को शरीर रूप में ग्रहण करेगा, वह जल जीव है। **(सि.सा.दी. ११/१४-१५)**

४. प्रश्न : जलकायिक जीव कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : ओस, हिम (बर्फ), कुहरा, मोटी बूँदें, शुद्ध जल, नदी, सागर, सरोवर, कुआ, झरना, मेघ से बरसने वाला जल, चन्द्रकान्तमणि से उत्पन्न जल, घनवात आदि का पानी जलकायिक जीव है। **(मू. २१० आ.)**

५. प्रश्न : अग्नि कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : अग्नि चार प्रकार की होती है-

१. अग्नि २. अग्निकाय ३. अग्निकायिक ४. अग्निजीव।

अग्नि - प्रचुर भस्म से आच्छादित अग्नि अर्थात् जिसमें थोड़ी उष्णता है वह अग्नि है।

अग्निकाय - भस्म आदि से अथवा जिस अग्निकायिक को अग्नि जीव ने छोड़ दिया है वह अग्निकाय है।

अग्निकायिक - जिस अग्नि रूपी शरीर को अग्नि जीव ने धारण कर लिया है वह अग्निकायिक है।

अग्निजीव - जो जीव अग्नि रूप शरीर को धारण करने के लिए जा रहा है, विग्रहगति में स्थित है, ऐसा जीव अग्नि जीव है। **(सि.सा.दी. ११/१७-१८)**

६. प्रश्न : अग्निकायिक जीव कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : अंगारे, ज्वाला, लौ, मुर्मुर, शुद्धाग्नि और अग्नि ये सब अग्निकायिक जीव हैं।

अंगारे, ज्वाला, लौ, मुर्मुर, शुद्धअग्नि, धुआँ सहित अग्नि, बड़वाग्नि, नन्दीश्वर के मंदिरों में रखे हुए धूप घटों की अग्नि, अग्निकुमार देवों के मुकुटों से उत्पन्न अग्नि आदि सभी अग्निकायिक जीव हैं। **(मू. २११ आ.)**

७. प्रश्न : वायु कितने प्रकार की है ?

उत्तर : वायु चार प्रकार की है - १. वायु २. वायुकाय ३. वायुकायिक ४. वायुजीव।

वायु - धूलि का समुदाय जिसमें है ऐसी भ्रमण करनेवाली वायु, वायु है।

वायुकाय - जिस वायुकायिक में से जीव निकल चुका है, ऐसी वायु का पौद्गलिक वायुदेह वायुकाय है।

वायुकायिक - प्राण युक्त वायु को वायुकायिक कहते हैं।

वायुजीव - वायु रूपी शरीर को धारण करने के लिए जाने वाला ऐसा विग्रहगति में स्थित जीव वायु जीव है। **(सि.सा.दी. ११/२०-२१)**

८. प्रश्न : वायुकायिक जीव कौन-कौनसे हैं ?

उत्तर : घूमती हुई वायु, उत्कलि रूप वायु, मण्डलाकार वायु, गुंजावायु, महावायु, घनोदधि वातवलय की वायु और तनु-वातवलय की वायु से सब वायुकायिक जीव हैं। **(मू. २१२ आ.)**

९. प्रश्न : पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यन्त कौनसी गति के जीव हैं ?

उत्तर : पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यन्त सभी तिर्यञ्चगति के जीव हैं। ये पाँचों स्थावर कहलाते हैं। लेकिन स्थावर कोई गति नहीं है। कहा भी है-''**औपपादिक मनुष्येभ्य: शेषास्तिर्यग्योनय:**'' **(त.सू.४/२७)** अर्थात् उपपाद जन्म वाले देव, नारकी और मनुष्यों को छोड़कर शेष सभी तिर्यञ्च हैं।

१०.प्रश्न : स्थावर जीवों के कृष्णलेश्या कैसे सिद्ध होती है ?

उत्तर : तीव्रक्रोध, वैरभाव, क्लेश संताप, हिंसा से युक्त तामसी भाव कृष्णलेश्या के प्रतीक हैं। तस्मानिया के जंगलों में 'होरिजन्टिल-स्कन' नामक वृक्षों की डालियाँ व जटायें जानवरों या मनुष्यों के निकट आते ही उनके शरीर से लिपट जाती हैं। तीव्र कसाव से (कस जाने के कारण) जीव उससे छुटकारा पाने की कोशिश करते हुए अन्तत: वहीं मरण को प्राप्त हो जाता है, इस क्रिया से उनकी हिंसात्मक प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से समझ में आती है, यह कृष्ण लेश्या की प्रतीक है।

११.प्रश्न : स्थावरों में नीललेश्या कैसे समझ में आती है ?

उत्तर : आलस्य, मूर्खता, भीरुता, अतिलोलुपता आदि नीललेश्या के प्रतीक हैं। कई वनस्पतियाँ आलसी एवं हठी होती हैं। उनके बीज सुषुप्तावस्था में पड़े रहते हैं। शंख पुष्पी, बथुआ, बैंगन आदि के बीजों को अंकुरित कराने के लिए उपचारित करना पड़ता है उन्हें उच्चताप, निम्नताप, प्रकाश, अम्ल, पानी या रासायनिक पदार्थों से सक्रिय किया जाता है तभी वे अंकुरित होते हैं। इसी प्रकार तम्बाखू, गोखरू, सिंघाड़ा आदि की भी स्थिति है।

कलश, पादप, सनड्यू आदि पौधे गंध, रंग, रूप आदि से कीड़ों को आकर्षित करते हैं। उन्हें खाने की लोलुपता इनमें विशेष रहती है। युटीकुलेरियड का पौधा स्थिर पानी में उगता है। इसकी पत्तियाँ सुई के आकार की होती हैं और पानी में तैरती हैं। पत्तियों के बीच में छोटे-छोटे हरे रंग के गुब्बारे के आकार के फूले अंग रहते हैं। पौधा इन्हीं गुब्बारों से कीड़ों को पकड़ता है। गुब्बारे की भीतरी दीवारों से पौधा एक रस छोड़ता है कीड़ों को नष्ट कर देता है इसे इसकी अतिलोलुपता अर्थात् नील लेश्या का प्रतीक माना जा सकता है।

१२.प्रश्न : स्थावरों में कापोतलेश्या को कैसे समझा जा सकता है ?

उत्तर : निन्दा, ईर्षा, रोष, शोक, अविश्वास आदि कापोत लेश्या के लक्षण हैं। इस लेश्या वाले दूसरों को पीड़ा पहुँचाने वाले होते हैं। नागफनी, काकतुरई, क्रौंच, चमचमी आदि वनस्पतियाँ काँटे, दुर्गन्ध या खुजली पहुँचाने वाले होते हैं। इनको छूने से या इनके निकट जाने से कुछ कष्ट अवश्य होता है। इसे कापोतलेश्या के रूपमें स्वीकार किया जा सकता है।

अशुभलेश्या के उदाहरण वनस्पति में स्पष्ट रूपसे समझ में आते हैं। पृथ्वी आदिमें इनका

स्पष्टीकरण नहीं होता है फिर भी पानी में भँवर आना, वायु में चक्रवात, अग्नि में बड़वानल, दावानल, ज्वालामुखी आदि प्रवृत्तियों से अशुभलेश्याओं का अनुमान लगाया जा सकता है।

१३. प्रश्न : क्या पृथ्वीकायिकादि पाँचों स्थावरों में सासादन गुणस्थान होता है ?

उत्तर : पृथ्वीकायादि पाँच स्थावरों में सासादन गुणस्थान सम्बन्धी दो विचार हैं –

(१) इन्द्रिय मार्गणा की अपेक्षा एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवों में मिथ्यात्व और सासादन ये दो गुणस्थान होते हैं। यहाँ यह विशेष ज्ञातव्य है कि उक्त जीवों में सासादन गुणस्थान निर्वृत्यपर्याप्त दशा में ही सम्भव है, अन्यत्र नहीं; क्योंकि पर्याप्त दशा में तो वहाँ एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। **(पं.सं.प्रा.)**

एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तथा असैनी में तो अपर्याप्त तथा सैनी के पर्याप्त-अपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान होता है। **(गो.जी.जी. ६९५)**

एकेन्द्रियों में जाने वाले वे जीव बादर पृथिवीकायिक, बादरजलकायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्तकों में ही जाते हैं, अपर्याप्तकों में नहीं। **(ध. ६/४६०)**

(२) कौन कहता है कि सासादन सम्यग्दृष्टि जीव एकेन्द्रियों में होते हैं ? किन्तु वे उस एकेन्द्रिय में मारणान्तिक समुद्घात करते हैं ऐसा हमारा निश्चय है, न कि वे अर्थात् सासादनसम्यग्दृष्टि एकेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं; क्योंकि उनमें आयु के छिन्न होने के समय सासादन गुणस्थान नहीं पाया जाता है।**(ध. ४/१६२)** सासादन सम्यग्दृष्टियों की एकेन्द्रियों में उत्पत्ति नहीं है। **(ध. ७/४५७)**

१४. प्रश्न : पृथ्वीकायिकादि में कितनी व कौन-कौन सी अविरतियाँ होती हैं?

उत्तर : पृथ्वीकायिकादि में सात अविरतियाँ होती हैं – षट्कायिक जीवों की हिंसा के अत्यागरूप छह तथा स्पर्शन इन्द्रिय को वश में नहीं करने रूप एक = कुल सात।

तालिका संख्या ९

वनस्पति कायिक

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यञ्चगति	
२.	इन्द्रिय	१	एकेन्द्रिय	
३.	काय	१	स्वकीय	वनस्पतिकायिक
४.	योग	३	औदारिकद्विक, कार्मण	
५.	वेद	१	नपुंसक	
६.	कषाय	२३	१६ क. ७ नोक.	स्त्री तथा पुरुषवेद नहीं हैं
७.	ज्ञान	२	कुमति, कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	१	अचक्षुदर्शन	
१०.	लेश्या	३	कृ. नी. का.	शुभ लेश्या नहीं होती है।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१६.	जीवसमास	६	वनस्पति सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	४	आ. श. इ. श्वा.	
१८.	प्राण	४	१ इ. १ ब. श्वा. आ.	स्पर्शन इन्द्रिय होती है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	३	२ ज्ञानो. १ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	३८	५ मि. ७ अ. २३ क. ३ यो.	
२३.	जाति	२४ लाख	वनस्पति सम्बन्धी	नित्यनिगोद तथा इतरनिगोद सम्बन्धी जाति भी ग्रहण करना चाहिए।
२४.	कुल	२८ ला.क.	वनस्पति सम्बन्धी	

१. **प्रश्न : वनस्पति जीव कितने प्रकार के होते हैं ?**

उत्तर : वनस्पति जीव चार प्रकार के हैं- १. वनस्पति, २. वनस्पति काय, ३. वनस्पतिकायिक ४. वनस्पति जीव।

वनस्पति - जिसका अभ्यन्तर भाग जीवयुक्त है, और बाह्य भाग जीव रहित है, ऐसे वृक्ष आदि को वनस्पति कहते हैं।

वनस्पतिकाय - छिन्न-भिन्न किये गये तृण आदि को वनस्पतिकाय कहते हैं।

वनस्पतिकायिक - जिसमें वनस्पतिकायिक जीव पाये जाते हैं उन्हें वनस्पतिकायिक जीव कहते हैं।

वनस्पतिजीव - आयु के अन्त में पूर्व शरीर को त्याग कर जो जीव वनस्पतिकायिकों में उत्पन्न होने के लिए विग्रहगति में जा रहा है, उसे वनस्पति जीव कहते हैं। **(सि.सा.दी. ११/२२-२५)**

२. **प्रश्न : वनस्पति जीव कौन-कौनसे होते हैं ?**

उत्तर : पर्व, बीज, कन्द, स्कन्ध तथा बीजबीज, इनसे उत्पन्न होने वाली और सम्मूर्छिम वनस्पति कही गयी है। जो प्रत्येक और अनन्तकाय ऐसे दो भेद रूप है। मूल में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियाँ मूल बीज हैं, जैसे-हल्दी आदि। **(गो.जी. १८६)**

३. **प्रश्न : वनस्पति कितने प्रकार की होती है ?**

उत्तर : वनस्पति दो प्रकार की होती है- १. साधारण वनस्पति २. प्रत्येक वनस्पति।

४. **प्रश्न : साधारण वनस्पति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : बहुत आत्माओं के उपभोग के हेतु रूप से साधारण शरीर जिसके निमित्त से होता है, वह साधारण शरीर नामकर्म है।

जिस कर्म के उदय से जीव साधारण शरीर होता है उस कर्म की साधारण शरीर यह संज्ञा है। **(ध. ६/६३)**

जिस कर्म के उदय से एक ही शरीर वाले होकर अनन्त जीव रहते हैं, वह साधारण शरीर नामकर्म है। **(ध. १३/३६५)**

५. **प्रश्न : प्रत्येक वनस्पति किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जिनका प्रत्येक अर्थात् पृथक्-पृथक् शरीर होता है उन्हें प्रत्येक शरीर कहते हैं। जैसे-खैर आदि वनस्पति। **(ध. १/२७०)**

जिस जीव ने एक शरीर में स्थित होकर अकेले ही सुख-दु:ख के अनुभव रूप कर्म उपार्जित किया है वह जीव प्रत्येक शरीर है। **(ध. ३/३३३)**

६. प्रश्न : **स्थावर और एकेन्द्रिय में क्या अन्तर है ?**

उत्तर : एकेन्द्रिय नामकर्म में इन्द्रिय की मुख्यता है और स्थावर नामकर्म में काय की मुख्यता है। एकेन्द्रिय जीवों के एक स्पर्शन इन्द्रिय होती है और स्थावर जीवों के पृथ्वीकायिक आदि नामकर्म का उदय होता है।

७. प्रश्न : **वनस्पति-कायिक सम्बन्धी कितने जीवसमास हैं ?**

उत्तर : वनस्पतिकायिक सम्बन्धी छह जीवसमास हैं-

१. नित्यनिगोद सूक्ष्म   २. नित्यनिगोद बादर।

३. इतरनिगोद सूक्ष्म   ४. इतरनिगोद बादर।

५. सप्रतिष्ठित प्रत्येक   ६. अप्रतिष्ठित प्रत्येक।

८. प्रश्न : **वनस्पति सम्बन्धी २४ लाख जातियाँ कौन-कौनसी हैं ?**

उत्तर : वनस्पति सम्बन्धी २४ लाख जातियाँ-

नित्यनिगोद की - ७ लाख, इतरनिगोद की ७ लाख, तथा वनस्पति कायिक की १० लाख = २४ लाख।

नोट - नित्यनिगोद एवं इतर निगोद को वनस्पतिकायिक में ग्रहण नहीं करने पर १० लाख जातियाँ ही होती हैं।

९. प्रश्न : **क्या ऐसे कोई वनस्पतिकायिक जीव हैं, जिनके कार्मण काययोग होता ही नहीं है ?**

उत्तर : हाँ, जो वनस्पतिकायिक जीव ऋजुगति से जाते हैं, उनके कार्मण काययोग नहीं होता है।

नोट : इसी प्रकार ऋजुगति से जाने वाले सभी जीवों के जानना चाहिए।

तालिका संख्या १०

त्रसकायिक

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. दे.	
२.	इन्द्रिय	४	द्वी. त्री. चतु. पंचे.	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ मनो. ४ व. ७ काय.	मनोयोग सैनी जीवों के ही होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञा. ५ ज्ञान	५ ज्ञान सम्यग्दृष्टि के ही होते हैं।
८.	संयम	७	सा.छे.प.सू.यथा.संय.असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच. अव. केव.	केवलदर्शन मनुष्यों में ही होता है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	असैनी जीव तिर्यञ्चों में ही होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१४	पहले से १४ वें तक	
१६.	जीवसमास	५	द्वी.त्री.चतु.सै.असैनी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	मन:पर्याप्ति सैनी जीवों के ही होती है।
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१६	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ४ शु.	
२२.	आस्रव	५७	५ मि.१२अवि. २५क.१५यो.	
२३.	जाति	३२ला.	द्वी. २ ला., त्री. २ ला., चतु. २.ला. पंचे. २६ लाख	पंचेन्द्रिय में नारकी, देव, मनु-तिर्य. सबको ग्रहण करना चाहिए।
२४.	कुल	$१३२\frac{१}{२}$ ला.क.	द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय पर्यन्त सभी जीवों के कुल	

१. प्रश्न : त्रस जीव कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर : त्रस जीव दो प्रकार के हैं- १. विकलेन्द्रिय २. सकलेन्द्रिय।

विकलेन्द्रिय - द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय तथा चतुरिन्द्रिय जीवों को विकलेन्द्रिय जानना चाहिए।

सकलेन्द्रिय - सिंह आदि स्थलचर, मच्छ आदि जलचर, हंस आदि आकाशचर तिर्यञ्च और देव, नारकी, मनुष्य ये सब पंचेन्द्रिय हैं **(मू. २१८-१९आ.)**

अथवा - त्रस जीव १. पर्याप्त तथा २. अपर्याप्त के भेद से भी दो प्रकार के हैं। **(ध. ११/२७२)**

त्रस जीव चार प्रकार के हैं- १. द्वीन्द्रिय २. त्रीन्द्रिय ३ चतुरिन्द्रिय ४. पंचेन्द्रिय। **(न.च. १२२)**

२. प्रश्न : ऐसे कौनसे त्रस जीव हैं, जिनके औदारिक काययोग नहीं होता है ?

उत्तर : वे जीव जिनके औदारिक काययोग नहीं होता है-

१. विग्रहगति, निर्वृत्यपर्याप्त तथा लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था में स्थित त्रस जीव।

२. चौदहवें गुणस्थान वाले अयोग केवली भगवान (इनके योग ही नहीं होता है)

३. देव-नारकी।

४. एक समय में एक जीव के एक ही योग होता है इसलिए किसी भी योग के साथ कोई भी योग नहीं होता है।

३. प्रश्न : क्या ऐसे कोई त्रस जीव हैं जिनके वेद का अभाव हो गया हो ?

उत्तर : हाँ, नवम गुणस्थान की अवेद अवस्था से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक स्थित त्रस जीवों के वेद का अभाव हो जाता है।

४. प्रश्न : त्रस जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : त्रस जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में कम-से-कम २ प्राण होते हैं। १. कायबल, २. आयु ये दो प्राण तेरहवें गुणस्थान वाले केवली भगवान की समुद्घात अवस्था में होते हैं।

५. प्रश्न : क्या ऐसे कोई त्रस जीव हैं जिनके संज्ञाएँ नहीं होती हैं ?

उत्तर : हाँ, ग्यारहवें गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के त्रस जीवों के आहारादि कोई संज्ञाएँ नहीं होती हैं। **(गो.जी.जी. ७०२)**

६. प्रश्न : क्या ऐसा कोई त्रस जीव है, जिसके जीवन में सभी उपयोग हो जावें ?

उत्तर : हाँ, किसी एक तद्भव मोक्षगामी मनुष्य के अपने जीवनकाल में सभी उपयोग हो सकते हैं, अन्य किसी जीव के नहीं हो सकते।

जैसे-किसी मिथ्यादृष्टि मनुष्य ने सम्यग्दर्शन प्राप्त करके अवधिज्ञान प्राप्त कर लिया तो उसके मति, श्रुत, अवधिज्ञान होगा। फिर वही सम्यक्त्व से च्युत हुआ तो उसके कुमति, कुश्रुत तथा कुअवधिज्ञान होगा।

वही पुन: सम्यग्दर्शन प्राप्त कर मुनि बनकर मन:पर्ययज्ञान प्राप्त कर ले तो उसके चार ज्ञान हो जायेंगे।

वही जब चार घातिया कर्मों को नष्ट कर देता है तो उसके केवलज्ञान हो जायेगा। चक्षु तथा अचक्षुदर्शन सभी मनुष्यों के होते हैं जिसने अवधिज्ञान प्राप्त किया उसके अवधि दर्शन होगा तथा घातिया कर्म क्षय करने पर केवलदर्शन हो जायेगा। इस प्रकार एक मनुष्य अपने जीवनकाल में सभी उपयोग प्राप्त कर सकता है, लेकिन छद्मस्थ[१] जीवों के एक समय में एक ही उपयोग होता है और केवली भगवान के दर्शन तथा ज्ञान दोनों उपयोग एक साथ होते हैं।

नोट - कुमति, कुश्रुत, कुअवधिज्ञान सम्यक्त्व प्राप्त होने के पहले भी होते हैं।

७. **प्रश्न : त्रस जीवों के कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं।**

उत्तर : त्रस जीवों के कम-से-कम ७ आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

तेरहवें गुणस्थान में मात्र ७ योग ही आस्रव के कारण हैं। सूक्ष्मदृष्टि से देखा जाय तो मनोयोग और वचनयोग का निरोध हो जाने पर (उस अवस्था में स्थित सभी जीवों के) मात्र एक औदारिक काययोग ही आस्रव का कारण बचता है। इस अपेक्षा त्रस जीवों के कम-से-कम एक आस्रव भी कहा जा सकता है।

अथवा - अयोगी भगवान भी त्रस हैं, उनके एक भी आस्रव का प्रत्यय शेष नहीं है।

८. **प्रश्न : क्या सभी त्रस जीवों के ५७ आस्रव के प्रत्यय हो सकते हैं?**

उत्तर : नहीं, नाना जीवों की अपेक्षा त्रस जीवों के कुल मिलाकर सत्तावन आस्रव के प्रत्यय हो जाते हैं-

सत्यमनो. सत्य वचनयोग तथा अनुभय मनोयोग	-	संज्ञीपंचेन्द्रिय से १३वें गुणस्थान तक।
असत्य उभय मन तथा वचन योग	-	संज्ञीपंचेन्द्रिय से १२वें गुणस्थान तक।
अनुभयवचनयोग	-	द्वीन्द्रिय से १३वें गुणस्थान तक।
औदारिकद्विक	-	मनुष्य-तिर्यञ्चों के।
वैक्रियिकद्विक	-	देव-नारकियों के।
आहारकद्विक	-	छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज के।

१. जो ज्ञानावरण एवं दर्शनावरण कर्म के उदय में स्थित होते हैं उन्हें छद्मस्थ कहते हैं। ये १२वें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

कार्मणकाययोग	-	चारों गति की अपेक्षा कहा गया है।
५ मिथ्यात्व और २३ कषायें	-	मिथ्यादृष्टि विकलत्रय की अपेक्षा।
स्त्रीवेद पुरुषवेद	-	देव, मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की अपेक्षा।
१२ अविरति	-	मात्र संज्ञी पंचेन्द्रिय के ही हो सकती है।

नोट – द्वीन्द्रिय आदि जीवों के बारह में से कुछ-कुछ अविरतियाँ होती हैं।

९. प्रश्न : **त्रस जीवों की ३२ लाख जातियाँ कौन-कौन सी हैं?**

उत्तर : त्रस जीवों की ३२ लाख जातियाँ –

(१) द्वीन्द्रिय की - २ लाख (२) त्रीन्द्रिय की - २ लाख

(३) चतुरिन्द्रिय की - २ लाख (४) पंचेन्द्रिय तिर्यंच की - ४ लाख

(५) नारकियों की - ४ लाख (६) देवों की - ४ लाख

(७) मनुष्य की - १४ लाख

१०. प्रश्न : **त्रस जीवों के १३२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़ कुल कौन-कौनसे हैं ?**

उत्तर : त्रस जीवों के १३२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़ कुल-

द्वीन्द्रियों के	- ७ लाखकरोड़	नारकियों के	-	२५ लाखकरोड़
त्रीन्द्रियोंके	- ८ लाखकरोड़	देवों के	-	२६ लाखकरोड़
चतुरिन्द्रिय के -	९ लाखकरोड़	मनुष्यों के	-	१४ लाखकरोड़

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों में-जलचरों के १२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़, थलचरों के १९ लाखकरोड़, नभचरों के १२ लाखकरोड़ = १३२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : **ऐसी कौनसी कषायें हैं जो त्रस जीवों के तो होती हैं लेकिन स्थावर जीवों के नहीं होती हैं ?**

उत्तर : मात्र दो कषायें ऐसी हैं जो त्रस जीवों के होती हैं लेकिन स्थावर जीवों के नहीं होती- स्त्रीवेद और पुरुषवेद नोकषाय।

२. प्रश्न : **ऐसी कौनसी अविरति हैं जो त्रस तथा स्थावर दोनों के होती हैं ?**

उत्तर : ७ अविरतियाँ त्रस तथा स्थावर दोनों जीवों के होती हैं-

षट्काय की हिंसासम्बन्धी तथा स्पर्शन इन्द्रिय सम्बन्धी।

३. प्रश्न : चौबीस स्थानों में से ऐसे कौन से स्थान हैं जिनके सभी उत्तरभेद त्रसों में पाये जाते हैं ?

उत्तर : चौबीस स्थानों में से १९ स्थान ऐसे हैं जिनके सभी उत्तर भेद त्रसों में पाये जाते हैं-

१. गति	२. योग	३. वेद	४. कषाय
५. ज्ञान	६. संयम	७. दर्शन	८. लेश्या
९. भव्य	१०. सम्यक्त्व	११. संज्ञी	१२. आहारक
१३. गुणस्थान	१४. पर्याप्ति	१५. प्राण	१६. संज्ञा
१७. उपयोग	१८. ध्यान	१९. आस्रव के प्रत्यय	

४. प्रश्न : स्थावर जीवों में किस-किस स्थान के सभी उत्तरभेद नहीं पाये जाते हैं ?

उत्तर : स्थावर जीवों में २१ स्थानों के सभी उत्तर भेद नहीं पाये जाते हैं-

१. भव्य २. आहारक ३. संज्ञा, इन तीन स्थानों को छोड़कर शेष सभी स्थानों के सभी उत्तर भेद स्थावर जीवों में नहीं पाये जाते हैं। अर्थात्, गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, सम्यक्त्व, संज्ञी, गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, उपयोग, ध्यान, आस्रव के प्रत्यय, जाति तथा कुल इन २१ स्थानों के सभी उत्तर भेद नहीं होते हैं।

५. प्रश्न : ऐसे कौन-कौनसे उत्तर भेद हैं जो त्रसों में होते हैं लेकिन स्थावरों में नहीं होते हैं?

उत्तर : २१ स्थान ऐसे हैं जो त्रसों में होते हैं लेकिन स्थावरों में नहीं होते हैं-

(१) ३ गतियाँ	-	देवगति, नरकगति, मनुष्यगति।
(२) ४ इन्द्रियाँ	-	द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय
(३) १ काय	-	त्रस।
(४) १२ योग	-	४ म. ४ व. ४ काययोग।
(५) २ वेद	-	स्त्रीवेद, पुरुषवेद
(६) २ कषाय	-	स्त्रीवेद, पुरुषवेद
(७) ६ ज्ञान	-	५ ज्ञान १ कुअवधिज्ञान
(८) ६ संयम	-	असंयम को छोड़कर शेष संयम
(९) ३ दर्शन	-	चक्षु, अवधि, केवलदर्शन
(१०) ३ लेश्या	-	पीत, पद्म, शुक्ल

(११) सम्यक्त्व	-	मिथ्यात्व और सासादन को छोड़कर।
(१२) १ संज्ञी	-	सैनी
(१३) गुणस्थान	-	तीसरे आदि १२ गुणस्थान
(१४) जीवसमास	-	५ जीवसमास
(१५) २ पर्याप्ति	-	भाषा तथा मन
(१६) ६ प्राण	-	४ इन्द्रिय, वचनबल, मनोबल
(१७) ९ उपयोग	-	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.
(१८) ८ ध्यान	-	४ ध. ४ शु.
(१९) १९ आस्रव के प्रत्यय	-	५ अविरति. २ वेद, १२ योग
(२०) जाति	-	३२ लाख
(२१) कुल	-	१३२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़।

६. प्रश्न : त्रस काय की जाति एवं पंचेन्द्रिय की जाति में क्या अन्तर है ?

उत्तर : त्रस काय की जातियों से पंचेन्द्रिय जीवों में ६ लाख जातियों का अन्तर है। अर्थात् त्रसकाय में ३२ लाख जातियाँ हैं तथा पंचेन्द्रिय जीवों की मात्र २६ लाख जातियाँ हैं। त्रस जीवों में विकलत्रय की जातियाँ भी होती हैं, पंचेन्द्रियों में नहीं।

७. प्रश्न : किस काय वाले के सबसे ज्यादा कुल होते हैं ?

उत्तर : त्रसकायिक जीवों के कुल सबसे ज्यादा हैं क्योंकि उनमें द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, देव-नारकी-मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंच सबके कुलों का ग्रहण हो जाता है। स्थावरकाय में केवल एकेन्द्रिय जीवों के कुलों का ही ग्रहण होता है। त्रसों के १३२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ तथा पृथ्वीकायिकादि पाँच कायिक में केवल ६७ लाख करोड़ कुल होते हैं।

८. प्रश्न : जलकायिक के कुल के बराबर कुल कौनसी कायवालों के होते हैं ?

उत्तर : जलकायिक के कुल के बराबर कुल वायुकायिक जीवों के होते हैं। दोनों में प्रत्येक के ७ लाख करोड़ कुल होते हैं।

– प्रश्न पत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **त्रस जीवों के कम-से-कम कितने प्राण हो सकते हैं?**

(अ) ७ (ब) ३

(स) १ (द) १०

(ii) **कुअवधिज्ञान किस काय वाले के नहीं हो सकता है ?**

(अ) त्रस काय के (ब) पृथ्वी काय के

(स) दोनों के (द) कोई नहीं

(iii) **किस काय वाले के सबसे ज्यादा जातियाँ होती हैं?**

(अ) एकेन्द्रिय (ब) वनस्पतिकाय

(स) त्रस काय (द) पृथ्वीकाय

(iv) **किस काय में छह जीवसमास होते हैं ?**

(अ) त्रस (ब) वनस्पति

(स) पृथ्वी (द) कोई नहीं

(v) **त्रस जीवों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में अधिक-से-अधिक कितने प्राण होते हैं?**

(अ) ७ (ब) १०

(स) ३ (द) ८

२. एक शब्द में उत्तर दो-

(i) २८ लाख करोड़ कुल कौनसी काय वालों के होते हैं ?

(ii) पृथ्वीकायिक जीव के कितने वेद नहीं होते हैं ?

(iii) त्रसकायिक जीव के कितने संयम नहीं हो सकते हैं ?

(iv) अग्निकायिक जीवों के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

(v) पृथ्वीकायिक में भव्यत्व मार्गणा के कितने भेद हो सकते हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दो-

(i) अग्निकायिक जीवों के सबसे कम कुल होते हैं।

(ii) सबसे अधिक योग त्रसकायिक जीवों के होते हैं।

(iii) त्रस कायिक जीवों के केवलज्ञान होता है।

(iv) त्रसकायिक जीवों के कुअवधिज्ञानोपयोग नहीं होता है।

(v) वायु-कायिक जीव के मैथुनसंज्ञा नहीं होती है।

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

(i) पृथ्वीकायिक जीवों के.................उपयोग तथा.................योग होते हैं।

(ii) जलकायिक जीव ....गति तथा.................वेद वाले होते हैं।

(iii) स्थावर जीवों के.................तथा त्रस जीवों के.................संयम होते हैं।

(iv) मनोयोग.................जीवों के तथा काययोग.................के भी होते हैं।

(v) स्थावर जीवों के.................लेश्या तथा त्रस जीवों के.............. लेश्या भी होती है।

५. सही जोड़ी बनाइये-

(i)	पृथ्वीकायिक	-	१५ योग
(ii)	१० लाख जाति	-	त्रस
(iii)	त्रस	-	२२ ला. क. कुल
(iv)	जलकायिक	-	एक गुणस्थान
(v)	त्रीन्द्रिय	-	वनस्पतिकायिक
(vi)	अग्निकायिक	-	सिद्ध भगवान
(vii)	कायातीत	-	५२ लाख जाति
(viii)	पंचस्थावर	-	आठ लाख करोड़ कुल

– उत्तरमाला –

१. (i) स (ii) ब (iii) स (iv) ब (v) अ।

२. (i) वनस्पतिकायिक (ii) दो (iii) सभी होते हैं (iv) ३८ (v) दो।

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) ना (v) ना।

४. (i) ३, ३ (ii) तिर्यंच, नपुंसक (iii) असंयम, सभी (iv) त्रस, स्थावर
(v) अशुभ, शुभ।

५. (i) २२ लाख क. कुल (ii) वनस्पतिकायिक (iii) १५ योग (iv) ७ लाख जाति
(v) त्रस (vi) एक गुणस्थान (vii) सिद्ध भगवान (viii) ५२ लाख जाति।

४. योग मार्गणा

१. प्रश्न : योग मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : कर्म वर्गणा रूप पुद्गल स्कन्धों को ज्ञानावरण आदि कर्म रूप से और नोकर्म वर्गणा रूप पुद्गल स्कन्ध को औदारिक आदि नोकर्म रूप से परिणमन में हेतु जो सामर्थ्य है तथा आत्मप्रदेशों के परिस्पन्द को योग कहते हैं। जैसे-अग्नि के संयोग से लोहे में दहन शक्ति होती है, उसी तरह अंगोपांग और शरीर नामकर्म के उदय से जीव के प्रदेशों में कर्म और नोकर्म को ग्रहण करने की शक्ति उत्पन्न होती है। **(गो.जी. २१६)**

जीवों के प्रदेशों का जो संकोच-विकोच और परिभ्रमण रूप परिस्पन्दन होता है, वह योग कहलाता है। **(ध. १०/४३७)**

मन, वचन और काय वर्गणा निमित्तक आत्मप्रदेश का परिस्पन्द योग है। **(ध. १०/४३७)**

उपर्युक्त योगों में जीवों की खोज करने को योग मार्गणा कहते हैं।

२. प्रश्न : योग कितने होते हैं ?

उत्तर : योग दो प्रकार के हैं- १. द्रव्य योग २. भाव योग।

योग के तीन भेद हैं- १. मनोयोग २. वचनयोग ३. काययोग। **(त.सू. ६/१)**

योग के पन्द्रह भेद होते हैं -

४ **मनोयोग -** सत्यमनोयोग, मृषामनोयोग, सत्यमृषामनोयोग असत्यमृषामनोयोग। (सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग, अनुभयमनोयोग)

४ **वचनयोग -** सत्यवचनयोग, मृषावचनयोग, सत्यमृषावचनयोग, असत्यमृषा- वचन योग। (सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, अनुभयवचनयोग)

७ **काययोग -** औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग।

३. प्रश्न : द्रव्ययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : भावयोग रूप शक्ति से विशिष्ट आत्मप्रदेशों में जो कुछ हलन-चलन रूप परिस्पन्द होता है वह द्रव्य योग है। **(गो.जी. २१६)**

४. प्रश्न : भावयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : पुद्गल विपाकी अंगोपांग नामकर्म और शरीर नामकर्म के उदय से मन, वचन और काय रूप से परिणत तथा कायवर्गणा, वचनवर्गणा और मनोवर्गणा का अवलम्बन करने वाले

संसारी जीव के लोकमात्र प्रदेशों में रहने वाली जो शक्ति कर्मों को ग्रहण करने में कारण है वह **भावयोग** है। **(गो.जी.२१६)**

५. प्रश्न : मनोयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : अभ्यन्तर में वीर्यान्तराय और नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम रूप मनोलब्धि के सन्निकट होने पर और बाह्य निमित्त रूप मनोवर्गणा का अवलम्बन होने पर मन:परिणाम के प्रति अभिमुख हुए आत्मा के प्रदेशों का जो परिस्पन्द होता है उसे **मनोयोग** कहते हैं। **(रा.वा. ६/१०)**

मनोवर्गणा से निष्पन्न हुए द्रव्य के आलम्बन से जो संकोच-विकोच होता है वह मनोयोग है। **(ध. ७/७६)**

६. प्रश्न : वचनयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : भाषा वर्गणा सम्बन्धी पुद्गल स्कन्धों के अवलम्बन से जीव प्रदेशों का जो संकोच-विकोच होता है वह वचनयोग है। **(ध. ७/७६)**

शरीर नामकर्म के उदय से प्राप्त हुई वचन वर्गणाओं का अवलम्बन लेने पर तथा वीर्यान्तराय का क्षयोपशम और मति अक्षरादि ज्ञानावरण के क्षयोपशम आदि से अभ्यन्तर में वचनलब्धि का सान्निध्य होने पर वचन परिणाम के अभिमुख हुए आत्मा के प्रदेशों का जो परिस्पन्दन होता है वह वचनयोग कहलाता है। **(सर्वा. ६१०)**

७. प्रश्न : काययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम होने पर औदारिक आदि सात प्रकार की कायवर्गणाओं में से किसी एक के अवलम्बन की अपेक्षा करके जो आत्मा के प्रदेशों में परिस्पन्दन होता है, वह काययोग है **(सर्वा. सि. ६/१)** जो चतुर्विध शरीरों[1] के अवलम्बन से जीवप्रदेशों का संकोच-विकोच होता है, वह काययोग है। **(ध.७/७६)**

वात, पित्त व कफ आदि के द्वारा उत्पन्न परिश्रम से जीव प्रदेशों का जो परिस्पन्द होता है वह काययोग कहा जाता है। **(ध. १०/४३७)**

८. प्रश्न : योग मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : योग मार्गणा के अनुवाद की अपेक्षा मनोयोगी, वचनयोगी, काययोगी तथा अयोगी जीव होते हैं। **(ष.खं. १/२७८-८०)** अत: योग मार्गणा तीन प्रकार की होती है – मनोयोग, वचनयोग, काययोग।

---

१. औदारिक, वैक्रियिक, आहारक एवं कार्मण शरीर।
तैजस शरीर के निमित्त से योग नहीं बनता है, इसलिए उसे ग्रहण नहीं किया है।

९. प्रश्न : योगमार्गणा में द्रव्य योग को ग्रहण करना चाहिए या भावयोग को ?

उत्तर : योगमार्गणा में भावयोग को ही ग्रहण करना चाहिए। सूत्र में आये हुए **'इमानि'** पद से प्रत्यक्षीभूत भावमार्गणा स्थानों का ग्रहण करना चाहिए। द्रव्य मार्गणाओं का ग्रहण नहीं किया गया है, क्योंकि द्रव्य मार्गणाएँ देश, काल और स्वभाव की अपेक्षा दूरवर्ती हैं, अतएव अल्पज्ञानियों को उनका प्रत्यक्ष नहीं हो सकता है। **(ध. १/१३१)**

१०. प्रश्न : योग क्षायोपशमिक है तो केवली भगवान के योग कैसे हो सकता है ?

उत्तर : वीर्यान्तराय और ज्ञानावरण कर्म के क्षय हो जाने पर भी सयोगकेवली के जो तीन प्रकार की वर्गणाओं की अपेक्षा आत्मप्रदेश-परिस्पन्दन होता है वह भी योग है, ऐसा जानना चाहिए। **(सर्वा. ६१०)**

सयोग केवली में योग के अभाव का प्रसंग नहीं आता, योग में क्षायोपशमिक भाव तो उपचार से हैं। असल में तो योग औदयिक भाव ही है और औदयिक योग का सयोग केवली में अभाव मानने में विरोध आता है। **(ध. ७/७६)**

शरीर नामकर्मोदय के उदय से उत्पन्न योग भी तो लेश्या माना गया है, क्योंकि वह भी कर्मबन्ध में निमित्त होता है। इस कारण कषाय के नष्ट हो जाने पर भी योग रहता है। **(ध. ७/१०५)**

नोट - शरीर नाम कर्म की उदीरणा व उदय से योग उत्पन्न होता है इसलिए योग मार्गणा औदयिक है। **(ध. ९/३१६)**

११. प्रश्न : अयोग केवली (योग रहित जीव) कैसे होते हैं ?

उत्तर : जिन आत्माओं के पुण्य-पाप रूप प्रशस्त और अप्रशस्त कर्मबन्ध के कारण मन, वचन, काय की क्रिया रूप शुभ और अशुभ योग नहीं हैं वे आत्माएँ चरम गुणस्थानवर्ती अयोगकेवली और उसके अनन्तर गुणस्थानों से रहित सिद्ध पर्याय रूप परिणत मुक्त जीव होते हैं।**(गो.जी. २४३)** जो मन, वचन, काय वर्गणा के अवलम्बन से कर्मोंके ग्रहण करने में कारण आत्मा के प्रदेशों का परिस्पन्दन रूप जो योग है, उससे रहित चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी जिन होते हैं। **(बृ.द्र.सं.टी. १३)**

तालिका संख्या ११

सत्यमनवचन तथा अनुभय मनोयोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	एकेन्द्रियादि के ये योग नहीं हैं।
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	सत्यमनोयोगी के सत्यमनोयोग
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञा. ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा.छे.प.सू.यथा.संय.असं.	
९.	दर्शन	४	च. चक्षु. अ. केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी-असैनी से रहित के भी होते हैं।
१४.	आहार	१	आहारक	अनाहारक अवस्था में पर्याप्ति पूर्ण नहीं होने से ये तीनों योग नहीं होते।
१५.	गुणस्थान	१३	पहले से १३ वें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शु.	आदि के दो शुक्ल ध्यान हैं
२२.	आस्रव	४३	५ मि.१२अवि. २५क. १यो.	स्वकीय योग
२३.	जाति	२६ला.	ना.म. देव तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंच की	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी
२४.	कुल	१०८$\frac{१}{२}$ ला.क.	ना.म. देव तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंच की	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी

१. प्रश्न : सत्य मनोयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : सम्यग्ज्ञान के विषयभूत अर्थ को सत्य कहते हैं। जैसे-जल ज्ञान का विषय जल सत्य है, क्योंकि स्नान-पान आदि अर्थक्रिया उसमें पाई जाती हैं। सत्य अर्थ का ज्ञान उत्पन्न करने की शक्ति रूप भाव मन सत्य मन है। उस सत्य मन से उत्पन्न हुआ योग अर्थात् प्रयत्न विशेष सत्य मनोयोग है। **(गो.जी.जी. २१७-१८)**

२. प्रश्न : सत्य वचनयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : सत्य अर्थ का वाचक वचन सत्य वचन है। स्वर नामकर्म के उदय से प्राप्त भाषा पर्याप्ति से उत्पन्न भाषा वर्गणा के आलम्बन से आत्मप्रदेशों में शक्ति रूप जो भाव वचन से उत्पन्न योग अर्थात् प्रयत्न विशेष है, वह सत्यवचन योग है। **(गो.जी. २२० सं.प्र.)**

दस प्रकार के सत्यवचन में वचन वर्गणा के निमित्त से जो योग होता है वह सत्य वचन योग है। **(पं.सं.प्रा.)**

३. प्रश्न : अनुभय मनोयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो मन सत्य और असत्य से युक्त नहीं होता, वह असत्यमृषामन है अर्थात् अनुभय अर्थ के ज्ञान को उत्पन्न करने की शक्ति रूप भावमन से उत्पन्न प्रयत्न विशेष अनुभय मनोयोग है। **(गो.जी. २१९)**

अनुभय ज्ञान का विषय अर्थ अनुभय है, उसे न सत्य ही कहा जा सकता है और न असत्य ही कहा जा सकता है। जैसे-कुछ प्रतिभासित होता है। यहाँ सामान्य रूप से प्रतिभासमान अर्थ अपनी अर्थक्रिया करने वाले विशेष के निर्णय के अभाव में सत्य नहीं कहा जा सकता और सामान्य का प्रतिभास होने से असत्य भी नहीं कहा जा सकता। इसलिए जात्यन्तर होने से अनुभय अर्थ स्पष्ट चतुर्थ अनुभय मनोयोग है। जैसे-किसी को बुलाने पर 'हे देवदत्त' यह विकल्प अनुभय है। **(गो.जी. २१७)**

४. प्रश्न : सत्य तथा अनुभय मन-वचनयोग का कारण क्या है ?

उत्तर : सत्य तथा अनुभय मन-वचनयोग का मूल कारण (निमित्त) प्रधानकारण पर्याप्त नामकर्म और शरीर नामकर्म का उदय है। **(गो.जी. २२७)**

५. प्रश्न : सत्य मनोयोगी के क्षायिकसम्यक्त्व में कितने गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : सत्य मनोयोगी के क्षायिक सम्यक्त्व में चौथे से तेरहवें गुणस्थान तक के १० गुणस्थान होते हैं।

६. प्रश्न : सत्य वचनयोगी के केवलदर्शन में कितने गुणस्थान हो सकते हैं ?

उत्तर : सत्य वचनयोगी के केवलदर्शन में एक ही गुणस्थान होता है-तेरहवाँ।

७. प्रश्न : सत्य मनोयोगी जीव के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : सत्य मनोयोगी जीव के कम-से-कम चार प्राण होते हैं- १. वचन बल २. कायबल ३. श्वासोच्छ्‌वास ४. आयु। ये चार प्राण सयोगकेवली की अपेक्षा कहे गये हैं।

८. प्रश्न : केवली भगवान के मनोयोग है तो मनोबल क्यों नहीं कहा गया है ?

उत्तर : अंगोपांग नामकर्म के उदय से हृदयस्थान में जीवों के द्रव्य मन की विकसित खिले हुए अष्टदल पद्‌म के आकार रचना हुआ करती है। यह रचना जिन मनोवर्गणाओं के द्वारा होती है उनका श्रीजिनेन्द्र भगवान सयोगिकेवली के भी आगमन होता है इसलिए उनके उपचार से मनोयोग कहा गया है। लेकिन ज्ञानावरण तथा अन्तराय कर्म का अत्यन्त क्षय हो जाने से उनके मनोबल नहीं होता है। क्योंकि मनोबल की उत्पत्ति ज्ञानावरण तथा अन्तराय कर्म के क्षयोपशम से होती है। **(गो.जी. २२९)**

९. प्रश्न : क्या ऐसे कोई सत्य मनोयोगी हैं जिनके मात्र दो संज्ञाएँ हों ?

उत्तर : हाँ, नवम गुणस्थान के सवेदी मनोयोगी मुनिराज के मात्र दो संज्ञाएँ पाई जाती हैं- १. मैथुन संज्ञा २. परिग्रह संज्ञा।

१०. प्रश्न : सत्यादि तीन योगों में चौदह ध्यान ही क्यों होते हैं?

उत्तर : इन सत्यादि तीन योगों में चार आर्त्तध्यान, चार रौद्रध्यान, चार धर्मध्यान तथा दो शुक्लध्यान होते हैं। तीसरा शुक्लध्यान जब केवली भगवान मनोयोग तथा वचनयोग को नष्ट कर देते हैं एवं जब सूक्ष्म काययोग रह जाता है तब तीसरा सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान है। अर्थात् तीसरा शुक्लध्यान औदारिक काययोग से ही होता है। जैसा कि तत्त्वार्थसूत्र महाग्रन्थ में भी कहा है- **''त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम्'' (९/४०) शुक्लध्यान .... तीसरा शुक्लध्यान काययोग से होता है मनोयोग तथा वचनयोग से नहीं।** इसीलिए इन तीनों योगों में १४ ध्यान ही कहे हैं, पन्द्रह नहीं।

११. प्रश्न : अनुभय मनोयोगी के आस्रव के कम-से-कम कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : अनुभय मनोयोगी के आस्रव का कम-से-कम एक प्रत्यय हो सकता है। ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें गुणस्थान में केवल एक स्वकीय अर्थात् अनुभयमनोयोग सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय होगा, क्योंकि एक समय में एक ही योग हो सकता है।

तालिका संख्या १२

अनुभय वचनयोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. दे.	
२.	इन्द्रिय	४	द्वी. त्री. चतु. पंचे.	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	अनुभय वचनयोग
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञा. ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा. छे. प. सू. यथा, संय.,असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच. अव. केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१३	पहले से १३ वें तक	
१६.	जीवसमास	५	द्वी.त्री.चतु.सै.असैनी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शु.	तीसरा चौथा शुक्लध्यान नहीं होता है।
२२.	आस्रव	४३	१४ योग बिना	अनुभय वचन योग ही होता है।
२३.	जाति	३२ ला.	द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक	
२४.	कुल	१३२ $\frac{१}{२}$ ला.क.	द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक	एकेन्द्रिय सम्बन्धी कुल नहीं है।

१. प्रश्न : अनुभयवचन योग किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो सत्य और असत्य अर्थ को विषय नहीं करता वह असत्यमृषा अर्थ को विषय करने वाला वचन व्यापार रूप प्रयत्न विशेष अनुभय वचन योग है। दो इन्द्रिय से लेकर असंज्ञी

पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवों की जो अनक्षरात्मक भाषा है तथा संज्ञी पंचेन्द्रियों की जो आमन्त्रण आदि रूप अक्षरात्मक भाषा है जैसे-''देवदत्त ! आओ'', ''यह मुझे दो'' ''क्या करूँ'' आदि सब अनुभयवचनयोग कहे जाते हैं। **(गो.जी. २२१)**

२. प्रश्न : **उपर्युक्त ''देवदत्त आओ'' आदि को अनुभय वचन योग क्यों कहा गया है ?**

उत्तर : ''देवदत्त आओ'' आदि वचन श्रोताजनों को सामान्य से व्यक्त और विशेष रूप से अव्यक्त अर्थ के अवयवों को बताने वाले हैं। इनसे सामान्य से व्यक्त अर्थ का बोध होता है इसलिए इन्हें असत्य नहीं कहा जा सकता और विशेष रूप से व्यक्त अर्थ को न कहने से इन्हें सत्य भी नहीं कहा जा सकता है। **(गो.जी. २२३)**

३. प्रश्न : **अनक्षरात्मक भाषा में सुव्यक्त अर्थ का अंश नहीं होता है, तब वह अनुभय रूप कैसे हो सकती है ?**

उत्तर : अनक्षरात्मक भाषा को बोलने वाले दो इन्द्रिय आदि जीवों के सुख-दुःख के प्रकरण आदि के अवलम्बन से हर्ष आदि का अभिप्राय जाना जा सकता है। इसलिए व्यक्तपना सम्भव है। अत: अनक्षरात्मक भाषा भी अनुभय रूप ही है। **(गो.जी. २२६)**

४. प्रश्न : **सयोग केवली के अनुभय एवं सत्यवचनयोग की सिद्धि कैसे होती है ?**

उत्तर : भगवान की दिव्य ध्वनि के सुनने वालों के श्रोत्र प्रदेश को प्राप्त होने के समय तक अनुभय भाषा रूप होना सिद्ध है। उसके अनन्तर श्रोताजनों के इष्ट पदार्थों में संशय आदि को दूर करके सम्यग्ज्ञान को उत्पन्न करने से सयोग केवली भगवान के सत्यवचनयोगपना सिद्ध है। **(गो.जी.)**

५. प्रश्न : **तीर्थंकर तो वीतराग हैं अर्थात् उनके बोलने की इच्छा का तो अभाव है फिर उनके मात्र सत्य वाणी ही क्यों नहीं खिरी, अनुभय वाणी भी क्यों खिरी ?**

उत्तर : तीर्थंकरों के जीव ने पूर्व में ऐसी भावना भायी थी कि संसार के सभी जीवों का कल्याण कैसे हो। उसी भावना से उनके सहज तीर्थंकर गोत्र (प्रकृति) का बन्ध पड़ गया था । इसी के उदय में वाणी खिरती है। अनादि काल से जीव अज्ञान के कारण पौद्गलिक कर्मों से बँधा हुआ है। ऐसे जीवों को मोक्षमार्ग दिखाने के लिए जीव का तादात्म्य सम्बन्ध अपनी गुण-पर्याय के साथ किस प्रकार का है, उसी का ज्ञान कराने के लिए सत्यवाणी खिरी है और जीव की पौद्गलिक कर्मों के संयोग से कैसी अवस्था हो रही है। इसका ज्ञान कराने के लिए अनुभय वाणी खिरी है। यह दोनों प्रकार की वाणी एक साथ सहज खिर रही है। इस वाणी को सुनकर ही गणधर देवों ने सूत्रों की रचना की है । **(चा.चक्र)**

६. प्रश्न : **क्या, कोई ऐसे अनुभयवचनयोगी है, जिनके वेद नहीं हो ?**

उत्तर : हाँ, नवम गुणस्थान के अवेद भाग से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक के अनुभयवचनयोगी वेद रहित होते हैं। इसी प्रकार सत्यादियोगों में भी जानना चाहिए।

७. प्रश्न : अनुभयवचनयोगी के कम-से-कम कितनी कषायें होती हैं ?

उत्तर : दसवें गुणस्थान की अपेक्षा अनुभयवचनयोगी के कम-से-कम एक कषाय होती है तथा ग्यारहवें से १३ वें गुणस्थान तक अनुभयवचनयोगी कषाय रहित भी होते हैं।

८. प्रश्न : अनुभयवचनयोगी जीव संज्ञी होते हैं या असंज्ञी ?

उत्तर : अनुभयवचनयोगी जीव संज्ञी भी होते हैं और असंज्ञी भी होते हैं तथा इन दोनों से अतीत अर्थात् संज्ञी-असंज्ञीपने से रहित सयोग केवली भगवान के भी अनुभयवचनयोग पाया जाता है।

९. प्रश्न : अनुभयवचनयोगी के अवधिज्ञान में कितने गुणस्थान हो सकते हैं ?

उत्तर : अनुभयवचनयोगी के अवधिज्ञान में चौथे गुणस्थान से १२ वें गुणस्थान तक के ९ गुणस्थान होते हैं।

१०. प्रश्न : अनुभयवचनयोगी के कौनसे संयम में सबसे ज्यादा गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : सामायिक-छेदोपस्थापना संयम में अनुभयवचनयोगी के छठे से नवमे गुणस्थान तक के चार गुणस्थान होते हैं। असंयम में पहले से चौथे तक चार गुणस्थान होते हैं।

११. प्रश्न : क्या ऐसे कोई अनुभयवचनयोगी हैं जिनके मात्र एक ही सम्यक्त्व होता है ?

उत्तर : हाँ, तेरहवें गुणस्थान में तथा क्षपक श्रेणी के ८ वें, ९ वें, १० वें १२ वें गुणस्थान में केवल एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है।

द्वीन्द्रिय से असैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक तक के जीवों में भी सम्यक्त्व मार्गणा में से केवल एक मिथ्यात्व ही होता है।

१२. प्रश्न : अनुभयवचनयोगी अनाहारक क्यों नहीं होते ?

उत्तर : अनुभयवचनयोग में अनाहारकपना नहीं होने के दो कारण हैं-

पहली बात : मात्र कार्मण काययोग में ही जीव अनाहारक होता है। **दूसरी बात :** भाषा पर्याप्ति पूर्ण हुए बिना वचनयोग नहीं होता, अनाहारक अवस्था में भाषा पर्याप्ति पूर्ण होना तो बहुत दूर, प्रारम्भ भी नहीं होती है।

१३. प्रश्न : अनुभय मनोयोग में जातियाँ ज्यादा हैं या अनुभय वचन योग में ?

उत्तर : अनुभयवचनयोग में जातियाँ ज्यादा हैं क्योंकि वह द्वीन्द्रिय जीवों से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक पाया जाता है तथा अनुभयमनोयोग पंचेन्द्रिय से तेरहवें गुणस्थान तक होता है। अर्थात् अनुभय मनोयोग में २६ लाख जातियाँ हैं और अनुभय वचनयोग में ३२ लाख जातियाँ हैं।

तालिका संख्या १३

असत्य - उभय मनोयोग - वचनयोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	असत्यमनोयोग में असत्य-मनोयोग।
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञा. ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	७	सा. छे. प. सू. यथा. संय. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१२	पहले से १२ वें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ धर्म. २ शु.	
२२.	आस्रव	४३	१४ योग बिना	
२३.	जाति	२६ला.	ना.४ ला.ति.४ला.मनु.१४ला. तथा देवों की ४ ला.	
२४.	कुल	१०८$\frac{१}{२}$ला.क.	ना. २५ ला.क., ति.४३$\frac{१}{२}$ ला.क., मनु.१४ ला.क., देव २६ ला.क.	

१. प्रश्न : **असत्यमनोयोग किसे कहते हैं ?**

उत्तर : असत्य अर्थ को विषय करने वाले ज्ञान को उत्पन्न करने की शक्ति रूप भाव मन से उत्पन्न प्रयत्न विशेष मृषा अर्थात् असत्यमनोयोग है। जैसे-मरीचिका में जलज्ञान का विषय जल असत्य है। क्योंकि उसमें स्नान-पान आदि अर्थक्रिया का अभाव है। **(गो.जी.)**

२. प्रश्न : **असत्य वचनयोग किसे कहते हैं ?**

उत्तर : असत्य अर्थ का वाचक वचन असत्यवचन व्यापार रूप प्रयत्न असत्यवचन योग है। **(गो.जी. २२०)**

३. प्रश्न : **उभय मनोयोग किसे कहते हैं ?**

उत्तर : सत्य और असत्य दोनों के विषयभूत पदार्थ को उभय कहते हैं; जैसे-कमण्डलु को यह घट है, क्योंकि कमण्डलु घट का काम देता है इसलिए कथंचित् सत्य है और घटाकार नहीं है इसलिए कथंचित् असत्य भी है। सत्य और मृषा रूप योग को असत्यमृषा मनोयोग कहते हैं। **(गो.जी.२१९)**

४. प्रश्न : **उभयवचनयोग किसे कहते हैं ?**

उत्तर : कमण्डलु में घट व्यवहार की तरह सत्य और असत्य अर्थ विधायक वचन व्यापार रूप प्रयत्न उभय वचनयोग है। **(गो.जी. २२०)**

५. प्रश्न : **प्रमाद के अभाव में श्रेणिगत जीवों के असत्य और उभयमनोयोग कैसे हो सकता है ?**

उत्तर : नहीं, क्योंकि आवरण कर्म से युक्त जीवों के विपर्यय और अनध्यवसाय ज्ञान के कारणभूत मन का सद्भाव मान लेने में कोई विरोध नहीं आता है। परन्तु इसके सम्बन्ध से क्षपक या उपशमक जीव प्रमत्त नहीं माने जा सकते हैं, क्योंकि प्रमाद मोह की पर्याय है। **(ध. १/२८८)**

ऐसी शंका व्यर्थ है क्योंकि असत्यवचन का कारण अज्ञान बारहवें गुणस्थान तक पाया जाता है इस अपेक्षा से वहाँ पर असत्यवचन के सद्भाव का प्रतिपादन किया है और इसीलिए उभयसंयोगज सत्यमृषावचन भी बारहवें गुणस्थान तक होता है, इस कथन में कोई विरोध नहीं आता है। **(ध.१/२९१)**

६. प्रश्न : **ध्यानस्थ अपूर्वकरणादि गुणस्थानों में वचनयोग या काययोग का सद्भाव कैसे हो सकता है ?**

उत्तर : नहीं, क्योंकि ध्यान अवस्था में भी अन्तर्जल्प के लिए प्रयत्न रूप वचनयोग और कायगत सूक्ष्म प्रयत्नरूप काययोग का सत्त्व अपूर्वकरण आदि गुणस्थानवर्ती जीवों के पाया ही जाता है इसलिए वहाँ वचनयोग एवं काययोग भी सम्भव ही हैं। **(ध. २/४३४)**

७. प्रश्न : संसार में ऐसे कौन-कौन से जीव हैं जिनके मनोयोग नहीं होता है ?

उत्तर : संसार के जीव जिनके मनोयोग नहीं होता है, वे

१. एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीव।

२. लब्ध्यपर्याप्त तथा जब तक मन: पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तब तक।

३. तेरहवें गुणस्थान में केवली समुद्घात तथा छठे गुणस्थान में आहारक समुद्घात में जब तक मन: पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती।

४. चौदहवें गुणस्थान में (अयोगी)।

५. मनोयोग का निरोध होने के बाद तेरहवें गुणस्थान में।

८. प्रश्न : क्या लब्ध्यपर्याप्तक सैनी जीवों के भी असत्यवचनयोग होता है ?

उत्तर : नहीं, किसी भी लब्ध्यपर्याप्तक जीव के औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग को छोड़कर अन्य कोई योग नहीं होता है क्योंकि भाषा तथा मन:पर्याप्ति पूर्ण हुए बिना वचन तथा मनोयोग नहीं बन सकता है।

९. प्रश्न : असत्य तथा उभय मन-वचन योग का कारण क्या है ?

उत्तर : आवरण का मन्द उदय होते हुए असत्य की उत्पत्ति नहीं होती अत: असत्यमनोयोग, असत्यवचनयोग, उभय मनोयोग, उभय वचनयोग का मूल कारण आवरण के तीव्र अनुभाग का उदय ही है, यह स्पष्ट है। इतना विशेष है कि तीव्रतर अनुभाग के उदय से विशिष्ट आवरण असत्यमनोयोग और असत्य वचनयोग का कारण है। और तीव्र अनुभाग के उदय से विशिष्ट आवरण उभयमनोयोग और उभयवचनयोग का कारण है। **(गो.जी.२२७)**

१०.प्रश्न : यदि सत्य तथा अनुभय मन-वचन योग का कारण आवरणकर्म का तीव्र मन्द अनुभाग होता है तो केवली भगवान के योग कैसे बनेंगे ?

उत्तर : यद्यपि योग का निमित्त आवरणकर्म का मन्द-तीव्र अनुभाग का उदय है किन्तु केवली के सत्य और अनुभययोग का व्यवहार समस्त आवरण के क्षय से होता है। **(गो.जी. २२७)**

११.प्रश्न : असत्य वचनयोगी के मन:पर्ययज्ञान कितने गुणस्थानों में होता है ?

उत्तर : असत्य वचनयोगी के मन:पर्ययज्ञान छठे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक के सात गुणस्थानों में होता है।

१२.प्रश्न : असत्य और उभय मनोयोगी के कितने कुल नहीं होते हैं ?

उत्तर : असत्य और उभय मनोयोगी के ९१ लाखकरोड़ कुल नहीं होते हैं-

पृथ्वीकायिक के	२२ लाखकरोड़	वनस्पतिकायिक के	२८ लाखकरोड़
जलकायिक के	७ लाखकरोड़	द्वीन्द्रिय के	७ लाखकरोड़
अग्निकायिक के	३ लाखकरोड़	त्रीन्द्रिय के	८ लाखकरोड़
वायुकायिक के	७ लाखकरोड़	चतुरिन्द्रिय के	९ लाखकरोड़

तालिका संख्या १४

औदारिक काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	२	तिर्यञ्च, मनुष्य	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु. पंचे.	
३.	काय	६	पृथ्वी आदि ५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	औदारिककाययोग
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञा. ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा.छे.प.सू.यथा.संय.असं.	अस. तथा संयमा.तिर्यञ्च के भी होते हैं।
९.	दर्शन	४	च. अच. अव.केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	अनाहारक नहीं होते हैं।
१५.	गुणस्थान	१३	पहले से १३ वें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ एकेन्द्रियसम्बन्धी, ५ त्रस के	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१५	४ आ. ४ रौ. ४ धर्म. ३ शु.	अन्तिम शुक्लध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	४३	५ मि. १२ अ. २५ क. १ योग	
२३.	जाति	७६ ला.	६२ ला. ति., १४ ला. मनु.	देव नारकियों की जाति नहीं है।
२४.	कुल	१४८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	१३४ $\frac{१}{२}$ ला.क. तिर्यञ्च के १४. ला.क. मनुष्य के	देव नारकियों के कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : औदारिक काययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : औदारिक शरीर के लिए आत्मप्रदशों की जो कर्म और नोकर्म को आकर्षण करने की शक्ति है उसे ही औदारिक काययोग कहते हैं। ऐसी अवस्था में औदारिक वर्गणा के स्कन्धों का औदारिककाय रूप परिणमन में कारण जो आत्मप्रदेशों का परिस्पन्द है वह औदारिककाययोग है। **(गो.जी. २३०)**

उदार या स्थूल में जो उत्पन्न हो उसे औदारिक जानना चाहिए। उदार में होने वाला जो काययोग है वह औदारिककाययोग है। **(पं.सं.प्रा.)**

औदारिक शरीर द्वारा उत्पन्न हुई शक्ति से जीव के प्रदेशों में परिस्पन्द का कारणभूत जो प्रयत्न होता है उसे औदारिककाययोग कहते हैं। **(ध.१/२९१)**

२. प्रश्न : औदारिक काययोग किस-किस के होता है ?

उत्तर : औदारिक काययोग –

१. पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि के,

२. वृक्ष, लता, गुल्म, आम्र, जामफल, लौकी, परवल आदि सब्जियों के,

३. गाय, भैंस, हाथी, घोड़ा, कबूतर, चिड़िया, मयूर आदि के,

४. चींटी, कीड़े, भ्रमर, लट, केंचुआ आदि के,

५. भोगभूमिया, कर्मभूमिया, कुभोगभूमिया मनुष्य-तिर्यंचों के,

६. तीर्थंकर भगवान, अरिहन्त केवली, ऋद्धिधारक मुनिराज आदि के,

७. ८५० म्लेच्छ खण्डों में, आर्यखण्डों में तथा समस्त पर्याप्त तिर्यंच-मनुष्यों के औदारिक काययोग होता है।

३. प्रश्न : क्या ऐसे कोई औदारिक काययोगी हैं जिनके कषायें नहीं होती हैं ?

उत्तर : हाँ, ग्यारहवें, बारहवें तथा तेरहवें गुणस्थान वाले औदारिक काययोगी के कषायें नहीं होती हैं। यद्यपि चौदहवें गुणस्थान में भी कषायें नहीं होती हैं लेकिन वहाँ औदारिक काययोग नहीं होता है।

४. प्रश्न : क्या ऐसा कोई औदारिक काययोगी है जिसके मतिज्ञान नहीं होता ?

उत्तर : हाँ, प्रथम, द्वितीय, तृतीय गुणस्थान में तथा तेरहवें गुणस्थान वाले जीवों के मतिज्ञान नहीं होता है। यद्यपि चौदहवें गुणस्थान में भी मतिज्ञान नहीं है लेकिन वहाँ योग का अभाव है।

५. प्रश्न : औदारिक काययोग में केवलदर्शन किस अपेक्षा से पाया जाता है ?

उत्तर : औदारिक काययोग में केवलदर्शन सयोगकेवली भगवान की अपेक्षा होता है। यद्यपि केवलदर्शन अयोगी केवली और सिद्ध भगवान के भी होता है लेकिन उनके कोई योग नहीं होता है इसलिए औदारिक काययोग में केवल तेरहवें गुणस्थान में ही केवलदर्शन कहा है।

६. प्रश्न : औदारिक काययोग में कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?

उत्तर : औदारिक काययोग में कम-से-कम चार पर्याप्तियाँ होती हैं- आहार पर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति तथा श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति। ये चार पर्याप्तियाँ एकेन्द्रिय की अपेक्षा जाननी चाहिए।

७. प्रश्न : औदारिक काययोग में कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : औदारिक काययोग में कम-से-कम २ प्राण होते हैं-

- तेरहवें गुणस्थान में श्वासोच्छ्वास तथा वचनयोग का निरोध होने पर उनके औदारिक कायबल एवं आयु प्राण।
- औदारिक काययोग में अधिक-से-अधिक १० प्राण होते हैं-

  ५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु

  १० प्राण संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के होते हैं।

८. प्रश्न : क्या औदारिक काययोगी के आठों ज्ञानोपयोग एक साथ हो सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, यद्यपि नाना जीवों की अपेक्षा औदारिक काययोगी के आठों ज्ञानोपयोग एक साथ हो जाते हैं लेकिन एक जीव की अपेक्षा आठों ज्ञानोपयोग एक साथ नहीं हो सकते हैं। क्योंकि अभिव्यक्ति की अपेक्षा एक जीव के एक समय में एक ही ज्ञानोपयोग हो सकता है। फिर भी एक जीव के नाना समयों की अपेक्षा आठों ज्ञानोपयोग एक जीवन में हो सकते हैं।

- औदारिक काययोगी मिथ्यादृष्टि एवं सासादन सम्यग्दृष्टि के तीन कुज्ञान होते हैं- कुमति ज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग,कुअवधिज्ञानोपयोग।
- चौथे, पाँचवें गुणस्थान में तीन ज्ञानोपयोग होते हैं-

  मति, श्रुत तथा अवधिज्ञान ज्ञानोपयोग ।
- छठे से १२ वें गुणस्थान तक ४ ज्ञानोपयोग होते हैं-

  मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग और मन:पर्ययज्ञानोपयोग।
- तेरहवें गुणस्थानवर्ती औदारिक काययोगी के १ ज्ञानोपयोग है- केवलज्ञानोपयोग।

तालिका संख्या १५

औदारिकमिश्र काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	२	तिर्यञ्च, मनुष्य	
२.	इन्द्रिय	५	एके.द्वी.त्री.चतु.पंचे.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	औदारिकमिश्र
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	२ कुज्ञा. ४ ज्ञान	कुअवधि तथा मन:पर्ययज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	२	असं. यथा.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच. अव. केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	४	क्षा. क्षायो. सा. मि.	मिश्र और उपशम नहीं होते।
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	४	१ला. २ रा. ४ था. १३ वाँ	
१६.	जीवसमास	१९	१४ एके. ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	२	आ. श.[1]	इन्द्रिय श्वासोच्छ्वासादि पर्याप्तियाँ पर्याप्तक के ही होती हैं।
१८.	प्राण	७	५ इन्द्रिय, १ बल, आयु	कायबल होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	१०	६ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	
२२.	आस्रव	४३	५ मि. १२ अ. २५ क. १ योग.	१४ योग नहीं हैं।
२३.	जाति	७६ला.	६२ ला. तिर्य. १४ ला. मनु.	देव और नारकियों की जाति नहीं है।
२४.	कुल	१४८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	तिर्यञ्च और मनुष्यसम्बन्धी	देव और नारकियों के कुल नहीं है।

१. जो आचार्य शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने पर पर्याप्त मानते हैं उनकी अपेक्षा दो पर्याप्तियों में ही औदारिक मिश्र काययोग होता है।

१. प्रश्न : **औदारिकमिश्र काययोग किसे कहते हैं ?**

उत्तर : शरीर पर्याप्ति से पूर्व कार्मण शरीर की सहायता से होने वाले औदारिक काययोग को औदारिक मिश्रकाययोग कहते हैं। क्योंकि यह योग औदारिक वर्गणाओं और कार्मणवर्गणाओं इन दोनों के निमित्त से होता है। अतएव इसको औदारिक मिश्र काययोग कहते हैं। **(गो.जी. २३१)**

औदारिकमिश्र वर्गणाओं के अवलम्बन से जो योग होता है वह औदारिकमिश्र काययोग है।

२. प्रश्न : **यदि कार्मण काययोग की सहायता से मिश्रयोग होता है तो ऋजुगति से जाने वाले के मिश्रयोग कैसे बनेगा ?**

उत्तर : सर्वाथसिद्धि आदि ग्रन्थों में सात प्रकार की काय वर्गणाएँ बताई गई हैं। उनमें से जो औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र तथा आहारकमिश्र वर्गणाएँ हैं उनको औदारिक मिश्रादि अवस्थाओं में ग्रहण करने से औदारिक मिश्र आदि योग बन जाते हैं। इसमें कोई बाधा नहीं है।

नोट - इसी प्रकार केवलीसमुद्घात में औदारिक मिश्र काययोग बन जाता है।

३. प्रश्न : **किन-किन जीवों के औदारिक मिश्रकाययोग ही होता है ?**

उत्तर : जो जीव ऋजुगति से लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्च-मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं उनके औदारिकमिश्रकाययोग ही होता है क्योंकि वे औदारिककाययोग होने के पहले ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं तथा ऋजुगति से आने के कारण कार्मणकाययोग नहीं है।

४. प्रश्न : **क्या कोई ऐसे जीव भी हैं जिनके औदारिकमिश्र काययोग के समान वैक्रियिकमिश्र काययोग ही हो ?**

उत्तर : नहीं, संसार में ऐसे कोई जीव नहीं हैं जिनके औदारिकमिश्र काययोग के समान वैक्रियिकमिश्रकाययोग ही हो, क्योंकि मनुष्य-तिर्यञ्चों के समान देव-नारकियों में कोई भी जीव शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।[१] वहाँ वैक्रियिकमिश्रकाययोगवाले जीव नियम से वैक्रियिक काययोगी बनते ही हैं। इसलिए केवल वैक्रियिकमिश्र काययोगी जीव नहीं हो सकते हैं।

५. प्रश्न : **औदारिकमिश्र काययोग में कम-से-कम कितनी कषायें हो सकती हैं ?**

उत्तर : औदारिकमिश्रकाययोग में कम-से-कम १९ कषायें हो सकती हैं – ४ अप्रत्याख्यानावरण, ४ प्रत्याख्यानावरण, ४ संज्वलन ६ हास्यादि नोकषायें तथा पुरुष वेद।

ये १९ कषायें चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीव की अपेक्षा कही गई हैं। अर्थात् औदारिकमिश्र योग वाले सम्यग्दृष्टि जीवों के अनन्तानुबन्धी चतुष्क, स्त्रीवेद तथा नपुंसक वेद नहीं होते हैं। तेरहवें गुणस्थान में भी औदारिकमिश्र काययोग है लेकिन वहाँ कषायें नहीं होती हैं।

---

१. शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने पर जीव पर्याप्त होता है। (ध. १/२६७)

६. प्रश्न : क्या ऐसे कोई औदारिकमिश्र काययोग वाले जीव हैं जो भव्य ही हों ?

उत्तर : हाँ, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान वाले और तेरहवें गुणस्थान वाले औदारिकमिश्र काययोगी जीव भव्य ही होते हैं तथा औदारिकमिश्रकाययोगी सादि मिथ्यादृष्टि जीव भी भव्य ही होते हैं।

७. प्रश्न : औदारिकमिश्रकाययोग में कौन-कौनसे सम्यक्त्व नहीं होते हैं ?

उत्तर : औदारिकमिश्रकाययोग में दो सम्यक्त्व नहीं होते हैं- १. सम्यग्मिथ्यात्व २. उपशम सम्यक्त्व। क्योंकि इन दोनों सम्यक्त्वों में मरण नहीं होता है। यद्यपि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में मरण होता है लेकिन वे मरकर मनुष्य-तिर्यञ्चों में उत्पन्न नहीं होते हैं जिससे उनके औदारिकमिश्रकाययोग बन जावे।

८. प्रश्न : औदारिकमिश्रकाययोग में क्षायिक सम्यग्दर्शन किस-किस अपेक्षा पाया जाता है?

उत्तर : औदारिकमिश्रकाययोग में क्षायिक सम्यग्दर्शन की अपेक्षाएँ-

१. बद्धायुष्क मनुष्य जब क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करके अथवा कृतकृत्य वेदक बनकर भोगभूमि में जाता है।

२. क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव-नारकी मरकर जब मनुष्य बनते हैं।

३. तेरहवें गुणस्थान की समुद्घात अवस्था में जब औदारिकमिश्रकाययोग होता है।

९. प्रश्न : औदारिक मिश्रकाययोगी सम्यग्दृष्टि के छहों लेश्याएँ कैसे सम्भव हैं ?

उत्तर : छठी पृथ्वी से निकलकर जो अविरतसम्यग्दृष्टि मनुष्य पर्याय में आते हैं उनके अपर्याप्तकाल में वेदक सम्यक्त्व के साथ कृष्णलेश्या पाई जाती है। **(ध. २/७५२)**

पहली से छठी पृथ्वी तक के असंयतसम्यग्दृष्टि नारकी जीव अपने-अपने योग्य कृष्ण, नील, कापोत लेश्या के साथ मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। उसी प्रकार असंयतसम्यग्दृष्टि देव भी अपने-अपने योग्य पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याओं के साथ मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार अविरतसम्यग्दृष्टि मनुष्यों के अपर्याप्त काल में अर्थात्-औदारिकमिश्रकाययोग में छहों लेश्याएँ बन जाती हैं।

१०. प्रश्न : औदारिक मिश्र काययोग में कम-से-कम आस्रव के कितने प्रत्यय हैं ?

उत्तर : औदारिकमिश्रकाययोग में कम-से-कम आस्रव का एक प्रत्यय होता है-

तेरहवें गुणस्थान में समुद्घात की अपेक्षा केवल औदारिकमिश्र काययोग सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय पाया जाता है।

११. प्रश्न : औदारिक मिश्र काययोग में कौन-कौनसी जातियाँ नहीं होती हैं ?

उत्तर : औदारिकमिश्रकाययोग में ८ लाख जातियाँ नहीं होती हैं-

४ लाख देवों की, ४ लाख नारकियों की।

तालिका संख्या १६

वैक्रियिक काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	२	नरक, देव	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	वैक्रियिक काययोग
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान. ३ ज्ञान	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	४	पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	
२२.	आस्रव	४३	५ मि. १२ अ. २५ क. १ यो.	१४ योग नहीं हैं।
२३.	जाति	८ ला.	४ ला.नार.४ला. देव.	मनुष्य तिर्यञ्चों की जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	५१ ला.क.	२५ ला.क. नरक के २६ ला.क. देवों के	मनुष्य तिर्यञ्चों के कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : वैक्रियिककाययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : नाना प्रकार के गुण और ऋद्धियों से युक्त देव तथा नारकियों के शरीर को वैक्रियिक अथवा विगुर्व कहते हैं और इसके द्वारा होने वाले योग को वैगूर्णिक अथवा वैक्रियिक काययोग कहते हैं। **(गो.जी. २२२)**

२. प्रश्न : वैक्रियिक शरीर एवं वैक्रियिक काययोग में क्या विशेषता है ?

उत्तर : वैक्रियिक शरीर एवं वैक्रियिक काययोग में विशेषता –

१. तेजकायिक तथा वायुकायिक और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्यों के भी वैक्रियिक शरीर होता है लेकिन वैक्रियिक काययोग नहीं होता है। देव-नारकियों के वैक्रियिक शरीर भी होता है और वैक्रियिक काययोग भी होता है।

२. मनुष्य-तिर्यञ्चों के वैक्रियिक शरीर में नाना गुणों और ऋद्धियों का अभाव है लेकिन देवों के वैक्रियिक शरीर में नाना गुण और अणिमादि ऋद्धियाँ होती हैं।

३. अष्टाह्निका में नन्दीश्वर द्वीप में पूजा के लिए, पंचकल्याणक आदि के समय देवों का मूल वैक्रियिक शरीर नहीं जाता है फिर भी यदि उस समय काययोग होता है तो वैक्रियिक काययोग ही होता है।

४. नारकियों के वैक्रियिक शरीर की अपृथक् विक्रिया होती है, देवों के वैक्रियिक शरीर की पृथक् तथा अपृथक् दोनों विक्रिया होती हैं लेकिन दोनों के वैक्रियिक काययोग ही होता है।

३. प्रश्न : वैक्रियिक काययोग वालों के उपशम सम्यक्त्व कितनी बार हो सकता है ?

उत्तर : वैक्रियिक काययोग वालों के अपने जीवन में अनेक बार उपशम सम्यक्त्व हो सकता है क्योंकि एक बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने के बाद पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण काल व्यतीत होने पर जीव पुन: प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने के योग्य हो जाता है। वैक्रियिक काययोग वालों की उत्कृष्ट आयु तैंतीस सागरोपम प्रमाण होती है इसलिए उनके अनेक बार उपशम सम्यक्त्व होने में कोई बाधा नहीं है। **(ध.५ के आधार से)**

४. प्रश्न : वैक्रियिक काययोग वालों के पंचमादि गुणस्थान क्यों नहीं होते है ?

उत्तर : वैक्रियिक काययोग वालों के पंचमादि गुणस्थान नहीं होने के कारण-

(१) वैक्रियिक काय वालों के अप्रत्याख्यानावरण तथा प्रत्याख्यानावरण कषाय का तीव्र उदय पाया जाता है इसलिए उनके संयमासंयम तथा संयम नहीं हो सकता है अर्थात् पंचमादि गुणस्थान नहीं हो सकते।

(२) भोगभूमि में पंचमादि गुणस्थान न होने का कारण भोग की प्रधानता कही गई है

फिर देवों में तो भोगभूमि से भी ज्यादा भोग पाये जाते हैं फिर वहाँ संयम कैसे हो सकता है और नारकियों में कषायों की सहज रूप से तीव्रता रहती है, उनके संयम कैसे हो सकता है?

(३) जिनके नियत भोजन है अर्थात् इतने समय के बाद नियम से उनको भोजन करना ही होगा। ऐसी स्थिति में त्याग रूप प्रवृत्ति कैसे हो सकती है? संभवत: वैक्रियिक काययोग वालों के संयम नहीं होने का एक कारण यह भी माना जा सकता है।

५. प्रश्न : **वैक्रियिक काययोग वाले देव महीनों/वर्षों/पक्षों तक भोजन नहीं करते हैं, इसी प्रकार नारकी भी बहुत काल के बाद थोड़ी सी मिट्टी खाते हैं उनके नित्य आहार संज्ञा कैसे कही जा सकती है ?**

उत्तर : वैक्रियिक काययोग वाले भले ही पक्षों/महीनों तक भोजन नहीं करें फिर भी उनके आहार संज्ञा का अभाव नहीं हो सकता, क्योंकि आहार संज्ञा जिनागम में छठे गुणस्थान तक बताई गई है और उसका अंतरंग कारण असातावेदनीय कर्म का उदय/उदीरणा कहा गया है। ये दोनों ही कारण वैक्रियिक काययोग वालों के पाये जाते हैं इसलिए उनके भी नित्य आहार संज्ञा कहने में कोई विरोध नहीं है। **(गो.जी. १३५ के आधार से)**

६. प्रश्न : **वैक्रियिक काययोग में छहों लेश्याएँ किस अपेक्षा पायी जाती हैं ?**

उत्तर : वैक्रियिक काययोग में तीन अशुभ लेश्याएँ नारकियों की अपेक्षा होती हैं तथा तीन शुभ लेश्याएँ देवों की अपेक्षा होती हैं।

७. प्रश्न : **वैक्रियिक काययोगी के तीसरे गुणस्थान में कितने उपयोग होते हैं ?**

उत्तर : तीसरे गुणस्थान वाले वैक्रियिक काययोगी के ६ उपयोग होते हैं-

३ ज्ञानोपयोग - मिश्रमतिज्ञानोपयोग, मिश्रश्रुतज्ञानोपयोग तथा मिश्र अवधिज्ञानोपयोग।

३ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधि दर्शनोपयोग।

८. प्रश्न : **वैक्रियिक काययोगी सम्यग्दृष्टि के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?**

उत्तर : वैक्रियिक काययोगी सम्यग्दृष्टि के आस्रव के ३४ प्रत्यय होते हैं-

१२ अविरति, २१ कषाय, १ योग (वैक्रियिक काययोग) = ३४

तालिका संख्या १७

वैक्रियिक मिश्र काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	२	नरक, देवगति	मनुष्य-तिर्यञ्च गति नहीं हैं।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	वैक्रियिक मिश्र
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	५	२ कुज्ञा. ३ ज्ञान	कुअवधि, मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	५	क्षा.क्षायो.उ.सा.मि.	सासादन तथा उपशम सम्यक्त्व देवों की अपेक्षा।
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	३	पहला, दूसरा, चौथा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	२	आ. श.	इ.श्वा.भा.मन:पर्याप्ति नहीं हैं।
१८.	प्राण	७	५ इन्द्रिय १ बल आयु.	श्वासो. वचन तथा मनोबल प्राण नहीं हैं।
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	८	५ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	विपाकविचय तथा संस्थानविचय धर्म ध्यान नहीं हैं।
२२.	आस्रव	४३	५ मि. १२ अ. २५ क. १ यो.	वैक्रियिकमिश्रकाययोग
२३.	जाति	८ ला.	४ ला. नार.४ ला. देव.	मनुष्य तिर्यञ्चों की जातियाँ नहीं हैं
२४.	कुल	५१ ला.क.	२५ ला.क. नरक के २६ ला.क. देवों के	मनुष्य तिर्यञ्चों के कुल नहीं हैं

१. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : जब तक वैक्रियिक शरीर पूर्ण नहीं होता तब तक उसको वैक्रियिकमिश्र कहते हैं और उसके द्वारा होने वाले योग को, आत्मप्रदेश परिस्पन्दन को वैक्रियिक मिश्रकाययोग कहते हैं। **(गो.जी. २३४)**

२. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोग में कम-से-कम कितनी कषायें होती हैं ?

उत्तर : वैक्रियिक मिश्रकाययोग में कम-से-कम २० कषायें होती हैं- अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन तीनों के क्रोध मान, माया, लोभ। ८ नोकषाय, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, नपुंसक वेद। उपर्युक्त कषायें चतुर्थ गुणस्थानवर्ती सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा कही गयी हैं।

नोट : यहाँ नपुंसक वेद सम्यग्दर्शन को लेकर प्रथम नरक में जाने वाले की अपेक्षा कहा गया है अन्यथा सम्यग्दृष्टि मरकर नपुंसक वेद वाला नहीं बनता है।

३. प्रश्न : किन-किन जीवों के वैक्रियिकमिश्र काययोग में अवधिज्ञान होता है ?

उत्तर : जो जीव मनुष्य पर्याय में गुणप्रत्यय अवधिज्ञान प्राप्त करते हैं, वे अनुगामी अवधिज्ञान को लेकर जब नरकगति (बद्धायुष्क क्षायिक सम्यग्दृष्टि वा कृतकृत्य वेदक की अपेक्षा) में जाते हैं तथा मनुष्य-तिर्यञ्च अनुगामी अवधिज्ञान को लेकर देवगति में जाते हैं तब उनके वैक्रियिक मिश्रकाययोग में अवधिज्ञान का अस्तित्व बन जाता है। अर्थात् वैक्रियिक मिश्र काययोग में स्थित सम्यग्दृष्टि जीव के अवधिज्ञान हो सकता है।

४. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोगी अभव्य जीवों के कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : वैक्रियिक मिश्र काययोगी अभव्य जीवों के छहों लेश्याएँ होती हैं – तीन अशुभ लेश्याएँ नारकियों तथा भवनत्रिक की अपेक्षा तथा तीन शुभ लेश्याएँ देवों की अपेक्षा होती हैं। शुक्ल लेश्या भी बन जाती है क्योंकि अभव्य जीव का उत्पाद नवें ग्रैवेयक तक माना गया है।

५. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्र काययोगी क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कितने वेद होते हैं ?

उत्तर : वैक्रियिक मिश्र काययोगी क्षायिक सम्यग्दृष्टि के दो वेद होते हैं –

पुरुषवेद - वैमानिक देवों की अपेक्षा।

नपुंसक वेद - प्रथम नरक की अपेक्षा।

६. प्रश्न : ऐसा कौनसा सम्यक्त्व है जो वैक्रियिक मिश्रकाययोग में तो होता है लेकिन औदारिकमिश्रकाययोग में नहीं होता है ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व श्रेणी में अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के साथ मरण की अपेक्षा वैक्रियिकमिश्रकाययोग में हो सकता है, लेकिन औदारिक मिश्रकाययोग में नहीं हो सकता है, क्योंकि कोई भी देव-नारकी द्वितीयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता। इसका भी कारण यह है कि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व उपशम श्रेणी के सम्मुख मुनिराज के ही होता है। उतरते समय अन्य गुणस्थानों में भी हो सकता है।

७. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोग में कितने सम्यक्त्व नहीं होते हैं ?

उत्तर : वैक्रियिकमिश्रकाययोग में दो सम्यक्त्व नहीं होते हैं- १. मिश्र २. प्रथमोपशम। क्योंकि इन दोनों में मरण नहीं होता है।

सासादन सम्यक्त्व एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व देवों की अपेक्षा वैक्रियिकमिश्रकाययोग में बन जायेंगे।

८. प्रश्न : किन जीवों के वैक्रियिक मिश्रकाययोग में क्षयोपशम सम्यक्त्व पाया जाता है ?

उत्तर : वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाले सम्यग्दृष्टि जीव अथवा कृतकृत्य वेदक जीवों के वैक्रियिकमिश्रकाययोग में क्षायोपशमिक सम्यक्त्व पाया जाता है।

बद्धायुष्क (जिसने नरकायु को बाँध लिया है) कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि जब प्रथम नरक में जाता है उसके भी वेदक (क्षायोपशमिक) सम्यक्त्व पाया जाता है।

९. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोग में दो धर्मध्यान किस अपेक्षा कहे जाते हैं ?

उत्तर : वैक्रियिक मिश्र काययोग में दो धर्मध्यान – आज्ञाविचय और अपायविचय देवों की अपेक्षा कहे गये हैं, क्योंकि नारकियों के तो एक आज्ञाविचय धर्मध्यान ही होता है।

१०. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोग में कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय हो सकते हैं?

उत्तर : वैक्रियिकमिश्रकाययोग में (सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा) कम-से-कम आस्रव के ३३ प्रत्यय हो सकते हैं-

१२ अविरति, २० कषाय तथा १ योग (वैक्रियिक मिश्र)।

५ मिथ्यात्व, ४ अनन्तानुबन्धी स्त्रीवेद तथा १४ योग नहीं होते हैं।

११. प्रश्न : वैक्रियिक मिश्रकाययोगी के दूसरे गुणस्थान में कितनी जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : दूसरे गुणस्थान वाले वैक्रियिकमिश्रकाययोगी के ४ लाख जातियाँ होती हैं क्योंकि सासादन गुणस्थान को लेकर जीव नरक में नहीं जाता है और वैक्रियिक मिश्रकाययोग में सासादनगुणस्थान उत्पन्न नहीं होता है; इसलिए वहाँ नरकगति सम्बन्धी जातियाँ नहीं पाई जाती हैं। इसी प्रकार कुल भी २६ लाखकरोड़ ही जानना चाहिए।

तालिका संख्या १८

आहारकद्विक काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	आहारक में आहारक
५.	वेद	१	पुरुषवेद	
६.	कषाय	११	४ कषाय ७ नोकषाय	स्त्री.नपुंसक वेद नहीं हैं।
७.	ज्ञान	३	मति. श्रुत.अवधि	मन:पर्यय और केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	२	सामा, छेदो.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	३	पीत पद्म शुक्ल	अशुभ लेश्या नहीं है।
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षायि. क्षायो.	उपशम के साथ आहारक ऋद्धि नहीं होती।
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	छठा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६/२	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	आहारक मिश्र काययोग में दो पर्याप्तियाँ होती है।
१८.	प्राण	१०/७	५ इन्द्रिय ३ बल श्वा.आ.	आहारकमिश्र में श्वासो. तथा दो बल नहीं हैं।
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	७	३ आर्त. ४ धर्म.	निदान आर्त्तध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	१२	११ क. १ योग	संज्वलन की चार तथा ७ नोकषाय
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : आहारक काययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : असंयम का परिहार, संदेह को दूर करना आदि के लिए आहारकऋद्धि के धारक छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज के आहारक शरीर नामकर्म के उदय से आहारक शरीर होता है, इसके निमित्त से जो योग होता है वह आहारक काययोग है। **(गो.जी. २३५)**

२. प्रश्न : आहारक मिश्र काययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : जब तक आहारक शरीर पर्याप्त नहीं होता है तब तक उसको आहार मिश्र कहते हैं और उसके द्वारा होने वाले योग को आहारकमिश्र काययोग कहते हैं। **(ध. १/२९७)**

३. प्रश्न : आहारक काययोग में कितने संयम होते हैं ?

उत्तर : आहारक काययोग में दो संयम होते हैं - १. सामायिक २. छेदोपस्थापना।

परिहारविशुद्धि संयम के साथ आहारकऋद्धि नहीं होती तथा शेष संयम छठे गुणस्थान में नहीं हो सकते हैं इसलिए यहाँ दो संयम कहे गये हैं।

४. प्रश्न : आहारकमिश्र काययोग में कौन-कौनसे सम्यक्त्व नहीं हो सकते हैं ?

उत्तर : आहारकमिश्र काययोग में चार सम्यक्त्व नहीं हो सकते हैं- १. मिथ्यात्व २. सासादन ३. मिश्र ४. उपशम सम्यक्त्व। उपशम सम्यक्त्व के साथ आहारकऋद्धि नहीं होती है इसलिए यहाँ उसका ग्रहण नहीं किया है।

५. प्रश्न : आहारकमिश्र काययोग में कितने ध्यान हो सकते हैं ?

उत्तर : आहारकमिश्र काययोग में सात ध्यान पाये जाते हैं- निदान के बिना ३ आर्त्तध्यान तथा चार धर्मध्यान होते हैं।

६. प्रश्न : आहारक शरीर की कौन-कौनसी विशेषताएँ हैं?

उत्तर : आहारक शरीर की विशेषताएँ-

(१) रस आदि सात धातुओं से रहित होता है।

(२) समचतुरस्र संस्थान वाला होता है।

(३) अस्थिबन्धन से रहित अर्थात् संहनन से रहित होता है।

(४) चन्द्रकान्तमणि से निर्मित की तरह अत्यन्त स्वच्छ होता है।

(५) एक हस्त प्रमाण अर्थात् चौबीस व्यवहारांगुल परिमाण वाला होता है।

(६) उत्तमांग मस्तक से उत्पन्न होता है।

(७) पर से अपनी और अपने से पर की बाधा से रहित होता है।

(८) आहारक शरीर छठे गुणस्थान वाले मुनिराज के ही होता है।**(गो.जी.२३७)**

तालिका संख्या १९

कार्मण काययोग

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.देव	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१	स्वकीय	कार्मण काययोग है।
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषाय ९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	२ कुज्ञा. ४ ज्ञान	मन:पर्यय तथा कुअवधि नहीं हैं
८.	संयम	२	असंयम, यथाख्यात	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच. अव. केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	५	क्षा.क्षयो.उ.सा.मि.	मिश्र सम्यक्त्व नहीं है।
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	१	अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	पहला, दूसरा, चौथा, तेरहवाँ	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर के ५ त्रस के	
१७.	पर्याप्ति	०	एक भी पर्याप्ति नहीं है।	
१८.	प्राण	७	५ इन्द्रिय, १ बल, आयु	कायबल होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	६ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	
२२.	आस्रव	४३	५ मि. १२ अ. २५ क. १ यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : कार्मणकाययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर : ज्ञानावरणादिक अष्ट कर्मों के समूह को अथवा कार्मण नामकर्म के उदय से होने वाली काय को कार्मणकाय कहते हैं और उसके द्वारा होने वाले योग कर्मापकर्षण शक्ति युक्त आत्मप्रदेशों के परिस्पन्दन को कार्मण काययोग कहते हैं। **(गो.जी. २४१)**

कार्मण शरीर के निमित्त से जो योग होता है उसे कार्मण काययोग कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि अन्य औदारिकादि शरीर वर्गणाओं के बिना केवल एक कर्म से उत्पन्न हुए वीर्य के निमित्त से आत्मप्रदेश परिस्पन्दन रूप जो प्रयत्न होता है उसे कार्मण काययोग कहते हैं। **(ध. १/२९७)**

२. प्रश्न : क्या कार्मण काययोग मात्र विग्रहगति में ही होता है ?

उत्तर : नहीं, विग्रहगति में तो कार्मणकाययोग ही होता है लेकिन १३ वें गुणस्थान की समुद्घात अवस्था में भी तीन समय तक बिना विग्रहगति के भी कार्मण काययोग होता है।

३. प्रश्न : कार्मण काययोग में कुअवधिज्ञान क्यों नहीं होता?

उत्तर : कुअवधिज्ञान अनुगामी नहीं होता, जिसको साथ ले जाने से कार्मण काययोग में कुअवधिज्ञान बन जावे और कार्मण काययोग के अल्पकाल में कुअवधिज्ञान उत्पन्न भी नहीं हो सकता इसलिए कार्मण काययोग में कुअवधिज्ञान नहीं होता है।

४. प्रश्न : कार्मण काययोग में अवधिज्ञान किस-किस अपेक्षा होता है ?

उत्तर : कार्मण काययोग में अवधिज्ञान की अपेक्षाएँ-

१. अनुगामी अवधिज्ञान को लेकर जाने वाले चारों गति के जीवों के।

२. सर्वार्थसिद्धि से आने वाले जीवों के

३. तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाले देव और नरकगति से आने वाले जीवों के, आदि।

५. प्रश्न : कार्मणकाययोग में चक्षुदर्शन किन-किन जीवों में पाया जाता है ?

उत्तर : कार्मण काययोग में स्थित चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव प्रथम, द्वितीय गुणस्थानवर्ती तथा संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के चतुर्थगुणस्थान में भी चक्षुदर्शन पाया जाता है।

६. प्रश्न : कार्मणकाययोग में कौनसा सम्यग्दर्शन उत्पन्न हो सकता है ?

उत्तर : कार्मणकाययोग में कोई भी सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं हो सकता क्योंकि सम्यग्दर्शन की पूर्व भूमिका में जिस विशुद्धि की आवश्यकता होती है वह विशुद्धि इतने अल्पकाल में नहीं हो पाती है इसलिए वहाँ कोई भी सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं हो सकता है।

नोट - कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि विग्रहगति में सम्यक् प्रकृति का क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि बन सकता है।

७. प्रश्न : कार्मणकाययोग में कम-से-कम कितने प्राण हो सकते हैं ?

उत्तर : कार्मणकाययोग में कम-से-कम दो प्राण हो सकते हैं-

१. कायबल और २. आयुप्राण। ये प्राण केवली समुद्घात में जब कार्मणकाययोग होता है तब होते हैं।

८. प्रश्न : कार्मण काययोग में कौन-कौनसा ध्यान नहीं हो सकता है ?

उत्तर : कार्मणकाययोग में ६ ध्यान नहीं हो सकते हैं-

विपाकविचय तथा संस्थान विचय धर्मध्यान और चारों शुक्ल ध्यान नहीं होते हैं।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : किन-किन योगों में सभी संयम हो सकते हैं ?

उत्तर : ९ योगों में सभी संयम हो सकते हैं-

४ मनोयोग + ४ वचनयोग + १ औदारिक काययोग।

२. प्रश्न : किन-किन योगों में यथाख्यात संयम नहीं हो सकता है ?

उत्तर : चार योगों में यथाख्यात संयम नहीं हो सकता है-

१. आहारककाययोग   २. आहारकमिश्रकाययोग।

३. वैक्रियिककाययोग   ३. वैक्रियिकमिश्रकाययोग।

३. प्रश्न : किस-किस योग में दो-दो संयम होते हैं ?

उत्तर : चार योगों में दो-दो संयम होते हैं-

आहारकद्विक में - सामायिक, छेदोपस्थापना।

औदारिकमिश्र में - असंयम, यथाख्यात।

कार्मणकाययोग में - असंयम, यथाख्यात।

४. प्रश्न : किस-किस योग में शुभ लेश्याएँ ही होती हैं ?

उत्तर : आहारक काययोग एवं आहारकमिश्र काययोग – इन दो योगों में शुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

५. प्रश्न : किन-किन योगों में सैनी जीव ही होते हैं ?

उत्तर : ११ योगों में सैनी जीव ही होते हैं-

४ मनोयोग, ३ वचनयोग (अनुभयवचनयोग बिना) आहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग, वैक्रियिककाययोग तथा वैक्रियिकमिश्र काययोग।

विशेष—दो मनोयोग तथा दो वचन योग सैनी-असैनी से रहित जीवों के भी होते हैं।

६. प्रश्न : ऐसे कौन से योग हैं जो असैनी जीवों के भी होते हैं ?

उत्तर : चार योग असैनी जीवों के भी होते हैं-

१. औदारिककाययोग २. औदारिकमिश्रकाययोग

३. कार्मणकाययोग ४. अनुभयवचनयोग।

७. प्रश्न : किस-किस योग में चार-चार गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : तीन योगों में ४ ही गुणस्थान होते हैं –

औदारिकमिश्र काययोग	-	पहला, दूसरा, चौथा, तेरहवां
कार्मण काययोग	-	पहला, दूसरा, चौथा, तेरहवां
वैक्रियिक काययोग	-	पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा

८. प्रश्न : किस-किस योग में १३ गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : पाँच योगों में १३ गुणस्थान होते हैं-

२ मनोयोग	-	सत्यमनोयोग, अनुभयमनोयोग।
२ वचनयोग	-	सत्यवचनयोग, अनुभयवचनयोग।
१ काययोग	-	औदारिककाययोग।

९. प्रश्न : कितने योगों में सभी जीवसमास होते हैं ?

उत्तर : तीन योगों में सभी जीवसमास होते हैं।

१. औदारिक २. औदारिकमिश्र तथा ३. कार्मणकाययोग।

१०. प्रश्न : ऐसे कौनसे योग हैं जिनमें श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं पाया जाता है ?

उत्तर : चार योगों में श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं पाया जाता है- १. औदारिकमिश्र २. वैक्रियिकमिश्र ३. आहारकमिश्र ४. कार्मणकाययोग।

११. प्रश्न : ऐसे कौन-कौनसे योग हैं जिनमें संज्ञाओं का अभाव भी हो सकता है ?

उत्तर : ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग तथा कार्मण काययोग; इन ११ योगों में संज्ञाओं का अभाव भी हो सकता है।

१२.प्रश्न : किस-किस योग में संज्ञातीत जीव नहीं होते हैं ?

उत्तर : चार योगों में संज्ञातीत जीव नहीं होते हैं –

- वैक्रियिक द्विक – क्योंकि देव-नारकी चतुर्थ गुणस्थान से आगे नहीं जा सकते हैं।
- आहारक द्विक – छठे गुणस्थान में ही होता है।

१३.प्रश्न : कौन-कौनसे योग में आस्रव के ४३ प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : आहारककाययोग तथा आहारकमिश्रकाययोग को छोड़कर शेष १३ योगों में अर्थात् ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, औदारिकद्विक, वैक्रियिकद्विक तथा कार्मण काययोग में आस्रव के ४३ प्रत्यय होते हैं।

१४.प्रश्न : सबसे कम आस्रव के प्रत्यय किस काययोग में होते हैं ?

उत्तर : सबसे कम आस्रव के प्रत्यय आहारकद्विक काययोग में होते हैं- इन में आस्रव के १२ प्रत्यय हैं ४ संज्वलन कषाय, ६ नोकषाय, १ पुरुषवेद तथा १ योग। आहारक काययोग में आहारक तथा आहारकमिश्र में आहारकमिश्रकाययोग होता है। जहाँ केवल औदारिककाययोग ही शेष रहता है ऐसे अरहन्त केवली भगवान के आस्रव का मात्र एक (औदारिककाययोग रूप) प्रत्यय शेष रहता है। इसी प्रकार औदारिक मिश्र तथा कार्मण काययोग में भी केवली भगवान के एक ही स्वकीय योग रूप आस्रव का प्रत्यय होता है।

१५.प्रश्न : अयोगी केवली के २४ स्थानों में से कौन-कौनसे स्थान होते हैं ?

उत्तर : अयोगी केवली के २४ स्थानों में से १७ स्थान होते हैं-

(१) गति	- मनुष्यगति	(१०) गुणस्थान	- चौदहवाँ
(२) इन्द्रिय	- पंचेन्द्रिय	(११) जीवसमास	- पंचेन्द्रिय
(३) काय	- त्रस	(१२) पर्याप्ति	- छह
(४) ज्ञान	- केवलज्ञान	(१३) प्राण	- १ आयु
(५) संयम	- यथाख्यात	(१४) उपयोग	- केवलज्ञान केवलदर्शन
(६) दर्शन	- केवलदर्शन	(१५) ध्यान	- १ व्युपरतक्रियानिवृति
(७) भव्यत्व	- भव्य	(१६) जाति	- १४ लाख
(८) सम्यक्त्व	- क्षायिकसम्यक्त्व	(१७) कुल	- १४ लाख करोड़।
(९) आहारक	- अनाहारक		

१६. प्रश्न : किस-किस योग में किस अपेक्षा से नपुंसक वेद होता है ?

उत्तर : योगों में नपुंसक वेद की अपेक्षाएँ –

१. चार मनोयोगों एवं तीन वचनयोगों में – पर्याप्त नारकी, पर्याप्त तिर्यंच तथा पर्याप्त मनुष्यों में।

२. अनुभय वचन योग में – पर्याप्त द्वीन्द्रिय से लेकर पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पर्याप्त मनुष्य तथा पर्याप्त नारकियों के।

३. औदारिक काययोग – पर्याप्त एकेन्द्रिय से लेकर नवम गुणस्थान के अवेद भाग तक।

४. औदारिक मिश्र काययोग – निर्वृत्यपर्याप्तक तथा लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य-तिर्यंचों में।

५. वैक्रियिक काययोग – पर्याप्त नारकियों के।

६. वैक्रियिक मिश्रकाययोग – निर्वृत्यपर्याप्तक नारकियों के।

७. कार्मण काययोग – अनाहारक नारकी, मनुष्य तथा तिर्यंचों के।

विशेष : १. आहारकद्विक काययोग में नपुंसक वेद नहीं होता है।

२. औदारिक मिश्र काययोग, कार्मण काययोग तथा सत्य अनुभय मन वचन योग में केवली भगवान को ग्रहण नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे वेदातीत होते हैं।

– प्रश्न पत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर (✓) का निशान लगाइये-

(i) **दो इन्द्रिय जीव के कितने काययोग हो सकते हैं?**

(अ) चार (ब) दो
(स) एक (द) कोई नहीं।

(ii) **आहारककाययोग वाले के कितने योग होते हैं ?**

(अ) एक (ब) छह
(स) नौ (द) कोई नहीं।

(iii) **केवल एक ही योग किसके होता है ?**

(अ) एकेन्द्रिय पर्याप्त (ब) एकेन्द्रिय
(स) केवलीभगवान (द) कोई नहीं

(iv) **५१ लाखकरोड़ कुल कौनसे योग में होते हैं ?**

(अ) औदारिक काययोग (ब) वैक्रियिकद्विक
(स) मनोयोग (द) आहारक काययोग।

(v) **ऐसा कौनसा योग है जिसमें सभी ध्यान हो सकते हैं ?**

(अ) औदारिककाययोग (ब) वैक्रियिककाययोग
(स) कार्मणकाययोग (द) कोई नहीं।

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए -

(i) कौनसे योग में केवल असंयम ही होता है ?

(ii) 'हे देवदत्त आओ !' कौनसा योग है ?

(iii) ऐसे कौनसे योग हैं जो न असंयमी के होते हैं न केवलीभगवान के ?

(iv) कार्मण काययोग में कितने गुणस्थान होते हैं ?

(v) सबसे कम गुणस्थान कौनसे योग में होते हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दो-

(i) वैक्रियिकमिश्रकाययोग में ५१ लाख जाति होती है।

(ii) आहारक तथा औदारिककाययोग में १४ लाखकरोड़ कुल होते हैं।

(iii) सत्य मनोयोगी संज्ञा से रहित भी होते हैं।

(iv) द्वीन्द्रिय जीवों के भी वचनयोग नहीं होता है।

(v) संसार में ऐसे जीव भी हैं जिनके योग नहीं होते हैं।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) वैक्रियिकमिश्रकाययोग .... गुणस्थान में .... के नहीं होता है।

(ii) आहारक काययोग में .... प्राण .... गति तथा .... जातियाँ होती हैं।

(iii) कार्मणकाययोग में .... गुणस्थान .... वेद तथा ....कषायें हो सकती हैं।

(iv) खाते समय जीव के .... योग .... संयम तथा ....दर्शन हो सकते हैं।

(v) सत्यमनोयोग में .... ज्ञान[१] .... संज्ञा .... तथा अभव्य भी होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

(i)	आहारक द्विक	-	सूक्ष्म साम्पराय
(ii)	७वाँ गुणस्थान	-	आठ योगों में
(iii)	कार्मण	-	छठा गुणस्थान
(iv)	५१ ला.क.कुल	-	औदारिक काययोग
(v)	९ योग	-	वैक्रियिक काययोग
(vi)	अयोग केवली	-	सम्यग्मिथ्यात्व
(vii)	चौदह ध्यान	-	विग्रह गति
(viii)	दस योग	-	चौदहवाँ गुणस्थान

– उत्तरमाला –

१. (i) द (ii) अ (iii) अ (iv) ब (v) द।

२. (i) वैक्रियिक द्विक (ii) अनुभय वचनयोग (iii) आहारकद्विक (iv) चार (v) आहारकद्विक।

३. (i) ना (ii) ना (iii) हाँ (iv) ना (v) हाँ।

४. (i) दूसरे, नारकियों के (ii) १०,१,१४ लाख (iii) ४,३,२५ (iv) १०,५,३ (v) ८, ४, भव्य।

५. (i) छठा गुणस्थान (ii) औदारिक काययोग (iii) विग्रहगति (iv) वैक्रियिक काययोग
(v) सूक्ष्म साम्पराय (vi) चौदहवाँ गुणस्थान (vii) आठ योगों में (viii) सम्यग्मिथ्यात्व।

---

१. मार्गणा की अपेक्षा

५. वेद मार्गणा

१. प्रश्न : वेद मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : वेद कर्म के उदय से होने वाले भाव को वेद कहते हैं। **(ध. १/१४१)** आत्मा की चैतन्य रूप पर्याय में मैथुनरूप चित्त विक्षेप के उत्पन्न होने को वेद कहते हैं। **(गो.जी. २७२)** वेदों में जीवों की खोज करने को वेदमार्गणा कहते हैं।

२. प्रश्न : वेदमार्गणा कितने प्रकार की है ?

उत्तर : वेद मार्गणा तीन प्रकार की है- १. स्त्रीवेद २. पुरुषवेद ३. नपुंसकवेद। **(वृ.द्र.सं.१३टी.)** वेद मार्गणा के अनुवाद से स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद तथा अपगतवेद वाले जीव होते हैं। **(ध. १/३४०)**

अथवा - वेद दो प्रकार के हैं- १. द्रव्य वेद २. भाव वेद।

३. प्रश्न : स्त्रीवेद किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिसके उदय से जीव पुरुष में अभिलाषा रूप मैथुन संज्ञा से आक्रान्त होता है वह स्त्रीवेद है। जिसके उदय से पुरुष के साथ रमने के भाव हों वह स्त्रीवेद है। **(गो.जी. २७१)**

४. प्रश्न : पुरुषवेद किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिसके उदय से जीव स्त्री में अभिलाषा रूप मैथुन संज्ञा से आक्रान्त होता है वह पुरुषवेद है। जिसके उदय से स्त्री के साथ रमने के भाव हों वह पुरुषवेद है। **(गो.जी. २७१)**

५. प्रश्न : नपुंसकवेद किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिसके उदय से जीव के स्त्री और पुरुष की अभिलाषा रूप तीव्र कामवेदना उत्पन्न होती है वह नपुंसकवेद है। जिसके उदय से स्त्री तथा पुरुष दोनों के साथ रमने के भाव हों वह नपुंसक वेद है। **(गो.जी. २७१)**

६. प्रश्न : द्रव्यवेद किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो योनि, मेहन आदि नामकर्म के उदय से रचा जाता है वह द्रव्यवेद है।**(सर्वा. २/५२)**

७. प्रश्न : भाववेद किसे कहते हैं ?

उत्तर : भाव लिङ्ग आत्मपरिणाम स्वरूप है। वह स्त्री, पुरुष व नपुंसक इन तीनों में एक-दूसरे की अभिलाषा लक्षण वाला है और वह चारित्रमोह के विकल्परूप स्त्री, पुरुष तथा नपुंसक वेद नामके नोकषाय के उदय से होता है। **(रा.वा. २/६)**

८. प्रश्न : वेद मार्गणा में किस वेद को ग्रहण करना चाहिए ?

उत्तर : वेद मार्गणा में भाववेद को ग्रहण करना चाहिए क्योंकि यदि यहाँ द्रव्यवेद से प्रयोजन होता तो मनुष्य स्त्रियों के अपगतवेद स्थान नहीं बन सकता, क्योंकि द्रव्यवेद चौदहवें गुणस्थान के अन्त तक पाया जाता है। परन्तु अपगतवेद भी होता है। इस प्रकार वचन निर्देश नौवें गुणस्थान के अवेद भाग से किया गया है। (जिससे प्रतीत होता है कि यहाँ भाववेद से प्रयोजन है, द्रव्यवेद से नहीं।) **(ध. २/५१३)**

तालिका संख्या २०

स्त्रीवेद

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	३	ति. म. देव.	नरकगति नहीं होती है।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	विकलत्रय के नहीं होता है।
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं होता है।
५.	वेद	१	स्वकीय	स्त्रीवेद
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	पुरुष एवं नपुंसकवेद नहीं हैं।
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान ३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	४	सा.छे.संय, असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	केवलदर्शन अवेदी के होता है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	९	पहले से नौवें तक	नौवें गुणस्थान के सवेद भाग तक होता है।
१६.	जीवसमास	२	सैनी तथा असैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल. श्वा. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	आहार और भय संज्ञा से रहित भी है।
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४ आ. ४ रौ. ४ धर्म. १ शुक्ल	
२२.	आस्रव	५३	५ मि.१२अ.२३ क.१३यो.	
२३.	जाति	२२ ला.	४ ला.तिर्य. १४ला.मनु. ४ला.देव की	नरक सम्बन्धी जाति नहीं है।
२४.	कुल	८३$\frac{१}{२}$ ला.क.	तीन गति सम्बन्धी	नरक सम्बन्धी कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : स्त्रीवेद किसके समान होता है ?

उत्तर : स्त्रीवेद के उदय में जीव पुरुष को देखते ही उसी प्रकार द्रवित हो उठता है जिस प्रकार आग को छूते ही लाख पिघल जाती है। स्त्रीवेद कण्डे की अग्नि के समान माना गया है। **(व.चा. ४/८९)**

२. प्रश्न : स्त्रीवेदी जीव कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं ?

उत्तर : मनुष्यगति, तिर्यञ्चगति में तथा देवों में सोलहवें स्वर्ग तक स्त्रीवेदी जीव पाये जाते हैं। लेकिन सम्मूर्च्छन लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य-तिर्यञ्चों में स्त्रियाँ नहीं होती हैं क्योंकि सम्मूर्च्छन जीव नपुंसक वेद वाले ही होते हैं।

३. प्रश्न : स्त्रीवेदी के आहारकद्विक काययोग क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : अप्रशस्त वेदों के साथ आहारक ऋद्धि उत्पन्न नहीं होती है। **(ध. २/६६७)**

४. प्रश्न : क्या स्त्रीवेदी की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में भी अवधिदर्शन हो सकता है ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव स्त्रीवेदी में उत्पन्न नहीं होता। अवधिदर्शन सम्यग्दृष्टि तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टि के होता है तथा तीसरे गुणस्थान वाले का मरण नहीं होता, इसलिए स्त्रीवेदी के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अवधिदर्शन नहीं हो सकता। इसी प्रकार नपुंसक वेद में जानना चाहिए लेकिन नरक की अपेक्षा नपुंसकवेदी की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में भी अवधिदर्शन होता है।

५. प्रश्न : स्त्रीवेद वाले के कौन-कौन से संयम नहीं हो सकते हैं ?

उत्तर : स्त्रीवेद वाले के ३ संयम नहीं हो सकते हैं- १. परिहारविशुद्धि २. सूक्ष्म साम्पराय ३. यथाख्यात संयम। परिहारविशुद्धि संयम पुरुषवेद वाले के ही होता है। सूक्ष्म साम्पराय तथा यथाख्यात संयम अवेदी जीवों के होते हैं इसलिए स्त्रीवेद में ये तीनों संयम नहीं होते हैं। इसी प्रकार नपुंसक वेद में भी ये संयम नहीं हो सकते हैं।

६. प्रश्न : स्त्रीवेदी के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं ?

उत्तर : स्त्रीवेदी के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में दो सम्यक्त्व हो सकते हैं- १. मिथ्यात्व, २. सासादन। पर्याप्त अवस्था में सभी सम्यक्त्व हो सकते हैं क्योंकि भावस्त्रीवेदी मोक्ष जा सकते हैं।

७. प्रश्न : स्त्रीवेदियों में कौन-कौनसी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है ?

उत्तर : स्त्रीवेदियों में दो संज्ञाओं का अभाव हो सकता है- १. आहार संज्ञा, २. भयसंज्ञा। सातवें गुणस्थान से आहार संज्ञा का तथा आठवें गुणस्थान के आगे भय संज्ञा भी नहीं होती है।

तालिका संख्या २१

पुरुषवेद

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	३	ति. म. देव	नरकगति नहीं होती है।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	१	पुरुषवेद	
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	स्त्री एवं नपुंसकवेद नहीं हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान अपगतवेदी के होता है।
८.	संयम	५	सा. छे. प. संय. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	९	पहले से नौवें तक	
१६.	जीवसमास	२	सैनी तथा असैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	१० प्राण सैनी के ही होते हैं।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४ आ. ४ रौ. ४ धर्म. १ शुक्ल	
२२.	आस्रव	५५	५ मि. १२ अ. २३ क. १५यो.	
२३.	जाति	२२ ला.	४ला.तिर्य.१४ला.मनु.४ला.देव.	नारकियों की जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	८३ $\frac{१}{२}$ ला.क.	४३ $\frac{१}{२}$ ला.क. तिर्य. १४ ला.क. मनु. २६ ला.क. देव	

१. प्रश्न : पुरुषवेद में जीव की स्थिति कैसी होती है ?

उत्तर : पुरुषवेद युक्त प्राणी स्त्री को देखते ही वैसे ही पिघल जाता है जैसे-जमे हुए घी का घड़ा अग्नि के स्पर्श होते ही क्षणभर में पानी-पानी हो जाता है। **(व.चा. ४/ ९०)**

पुरुषवेद तृण की अग्नि के समान कहा गया है।

२. प्रश्न : क्या ऐसे कोई पंचेन्द्रिय जीव हैं जिनके पुरुषवेद नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, ऐसे भी पंचेन्द्रिय जीव हैं जिनके पुरुषवेद नहीं होता है। वे हैं- १. सभी नारकी २. नौवें गुणस्थान के अवेद भाग से आगे विराजमान सभी जीव ३. सम्मूर्च्छन जन्म वाले पंचेन्द्रिय जीव ४. स्त्री तथा नपुंसक वेद वाले जीवों के भी पुरुष वेद नहीं होता है।

३. प्रश्न : ऐसे कौनसे असैनी पंचेन्द्रिय जीव हैं जिनके पुरुषवेद भी होता है ?

उत्तर : जो जीव गर्भ से उत्पन्न होने पर भी मन से रहित हैं उन तोता मैना आदि तिर्यञ्चगति के पंचेन्द्रिय जीवों के पुरुषवेद भी हो सकता है अर्थात् उनके तीनों वेद होते हैं।

४. प्रश्न : पुरुषवेदी के कौन-कौनसे संयम नहीं हो सकते हैं?

उत्तर : पुरुषवेदी के दो संयम नहीं हो सकते हैं- १. सूक्ष्म साम्पराय और २. यथाख्यात। क्योंकि ये दोनों संयम अवेदी जीवों के होते हैं।

५. प्रश्न : पुरुषवेद तो भगवान के भी दिखता है तो उनके चारों शुक्ल ध्यान क्यों नहीं कहे?

उत्तर : यद्यपि द्रव्य पुरुषवेद भगवान के भी दिखता है लेकिन उनके भाववेद नहीं होता है क्योंकि भाववेद का कारण मोहनीय कर्म (वेद कषाय) का उदय कहा है। भगवान के वेद कषाय का उदय नहीं पाया जाता है। यहाँ सभी कथन भाववेद की अपेक्षा किया गया है इसलिए पुरुषवेद वालों के चारों शुक्लध्यान नहीं होते हैं। नवमें गुणस्थान तक वेद है वहाँ एक ही शुक्ल ध्यान होता है।

६. प्रश्न : पुरुषवेद वालों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : पुरुषवेद वालों के कम-से-कम ७ प्राण होते हैं। सैनी या असैनी पंचेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में ५ इन्द्रिय, १ कायबल तथा आयु प्राण। आहारकमिश्र अवस्था में भी ये ही सात प्राण होते हैं।

७. प्रश्न : पुरुषवेदी के कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : पुरुषवेदी के कम-से-कम आस्रव के चौदह प्रत्यय होते हैं-

४ कषाय - (संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ)

९ योग - ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिककाययोग।

१ वेद - पुरुषवेद। ये आस्रव के प्रत्यय ९ वें गुणस्थान में सवेद भाग तक होते हैं।

तालिका संख्या २२

नपुंसकवेद

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	३	न. ति. म.	देवगति नहीं है।
२.	इन्द्रिय	५	ए. द्वी. त्री. चतु. पंचे.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं होता है।
५.	वेद	१	स्वकीय	नपुंसकवेद
६.	कषाय	२३	१६ कषाय ७ नोकषाय	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान.३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	४	सा. छे. संय.असं.	
९.	दर्शन	३	च. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	९	पहले से नौवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर के ५ त्रस के	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल. श्वा. आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४ आ.४रौ.४धर्म.१शु.	पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्लध्यान है।
२२.	आस्रव	५३	५मि.१२अ.२३क.१३यो.	२ योग और २ नोकषाय नहीं है।
२३.	जाति	८० ला.	४ला.ना. ६२ला.तिर्य. १४ला.मनु.	देवसम्बन्धी जाति नहीं है।
२४.	कुल	१७३$\frac{१}{२}$ ला.क.	ना.ति.मनु. सम्बन्धी	देव सम्बन्धी कुल नहीं है।

१. प्रश्न : नपुंसकवेद किसके समान है ?

उत्तर : नपुंसकवेद के उदय से जीव ईंट पकाने के आवे की अग्नि के समान तीव्र कामवेदना से पीड़ित होने से कलुषित चित्तवाला होता है। **(गो.जी. २७५)**

ईंटों के आवे के समान जब किसी प्राणी में काम उपभोग सम्बन्धी भयंकर विकलता होती है तथा अत्यन्त निन्दनीय कुरूपपना होता है वही नपुंसक वेद का परिपाक है। **(व.चा. ४/९१)**

२. प्रश्न : किन-किन जीवों के नपुंसक वेद ही होता है-

उत्तर : वे जीव जिनके नपुंसक वेद ही होता है, वे हैं -

१. सातों पृथिवियों के नारकी २. एकेन्द्रिय तथा विकलत्रय।

३. सम्मूर्च्छन संज्ञी पंचेन्द्रिय ४. सम्मूर्च्छन असंज्ञी पंचेन्द्रिय।

३. प्रश्न : कहाँ-कहाँ पर नपुंसक वेद नहीं होता है ?

उत्तर : वे स्थान जहाँ नपुंसक वेद नहीं होता- १. देवगति में सभी देव-देवांगनाओं के। २. भोग भूमि तथा कुभोग भूमि में। ३. परिहारविशुद्धि संयमी के। ४. आहारक तथा आहारकमिश्र काययोग में। ५. मन: पर्ययज्ञानी जीवों के। ६. किसी भी ऋद्धिधारी मुनिराज के तथा। ७. उसी भव में तीर्थंकर होने वाले जीवों के तथा सभी म्लेच्छों के नपुंसक वेद नहीं होता है। ६३ शलाका पुरुषों के भी नपुंसक वेद नहीं होता है।

भवनवासी, वान-व्यंतर, ज्योतिषी, कल्पवासी देव, तीस भोगभूमियों में उत्पन्न तिर्यञ्च-मनुष्य, भोगभूमि के प्रतिभाग में उत्पन्न असंख्यात वर्ष की आयु वाले (कुभोग भूमिया) तथा सर्व म्लेच्छ खण्डों में उत्पन्न होने वाले मनुष्य-तिर्यञ्च नपुंसकवेद वाले नहीं होते हैं। **(आ.समु. ३४)**

४. प्रश्न : विग्रहगति में शरीर नहीं होता अत: वहाँ स्त्री, पुरुष तथा नपुंसक वेद कैसे हो सकता है ?

उत्तर : यद्यपि अनाहारक अवस्था में शरीर नहीं होता है फिर भी वहाँ उनके भाववेद का अभाव नहीं होता है क्योंकि भाववेद वेदकषाय के उदय से होता है। विग्रहगति में भी वेद का उदय रहता है इसलिए वहाँ भी तीनों वेदों का सद्भाव कहा गया है।

५ . प्रश्न : नपुंसक वेद वाले के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : नपुंसक वेद वाले के कम-से-कम ३ प्राण हो सकते हैं - एकेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में या लब्ध्यपर्याप्तक एकेन्द्रिय जीवों के ३ प्राण होते हैं।

६. प्रश्न : नपुंसक वेद में कितने शुक्लध्यान हो सकते हैं ?

उत्तर : नपुंसक वेद में पहला ''पृथक्त्ववितर्क वीचार'' शुक्लध्यान हो सकता है। यह ध्यान आठवें नवमें गुणस्थान की अपेक्षा कहा गया है। जो आचार्य दसवें गुणस्थान तक धर्मध्यान मानते हैं उनकी अपेक्षा नपुंसकवेद में एक भी शुक्लध्यान नहीं हो सकता है। इसी प्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेद में भी जानना चाहिए।

७. प्रश्न : तीनों वेदों में मनुष्य-तिर्यञ्च आदि की पूरी-पूरी जातियाँ ग्रहण की गई हैं तो क्या सभी तिर्यञ्च, मनुष्य स्त्रीवेद, पुरुषवेद या नपुंसक वेद वाले होते हैं अथवा हो सकते हैं ?

उत्तर : नहीं, सभी मनुष्य-तिर्यञ्च स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेद वाले नहीं होते तथा न हो ही सकते हैं लेकिन प्रत्येक जाति में तीनों वेद वाले जीव उत्पन्न होते हैं, हो सकते हैं। जैसे-पर्याप्त मनुष्य उनतीस अंक प्रमाण होते हैं और मनुष्यों की जातियाँ मात्र चौदह लाख बताई गई हैं। एक-एक जाति में करोड़ों, करोड़ों मनुष्य उत्पन्न हो सकते हैं, उन करोड़ों मनुष्यों में कोई स्त्री वेद वाला, कोई पुरुष वेद वाला तो कोई नपुंसक वेद वाला हो सकता है। सम्भवत: इसीलिए तीनों वेदों में पूरी-पूरी जातियों का ग्रहण किया गया है।

नोट : इसी प्रकार कुलों में भी जानना चाहिए।

तालिका संख्या २३

अपगतवेदी

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	औदारिकद्विक और कार्मण
५.	वेद	०		
६.	कषाय	४	संज्वलन क्रोध, मान, माया,लोभ	कषायातीत भी होते हैं।
७.	ज्ञान	५	मति.श्रु.अव.मन.केवल.	
८.	संयम	४	सा.छे.सू.य.	
९.	दर्शन	४	च.अच.अ.केव.	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	लेश्यातीत भी होते हैं।
११.	भव्यत्व	१	भव्य	भव्याभव्य से रहित भी होते हैं।
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षायिक, उपशम	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	६	नवें से चौदहवें तक	नवें के अवेदभाग से ग्रहण करना चाहिए।
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	समासातीत भी होते हैं।
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	पर्याप्ति से रहित भी होते हैं।
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल, श्वा.आ.	प्राणातीत भी होते हैं।
१९.	संज्ञा	१	परिग्रह	संज्ञातीत भी होते हैं।
२०.	उपयोग	९	५ ज्ञा. ४ दर्शन.	
२१.	ध्यान	४	चारों शुक्लध्यान	ध्यानातीत भी होते हैं।
२२.	आस्रव	१५	४ क. ११ योग	आस्रवरहित भी होते हैं।
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	जाति से रहित भी होते हैं।
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	कुलातीत भी होते हैं।

१. प्रश्न : अपगतवेदी किसे कहते हैं?

उत्तर : जो स्त्री, पुरुष तथा स्त्री-पुरुष दोनों की अभिलाषा रूप परिणामों की तीव्र वेदना से होने वाले संक्लेश से रहित हैं, वे अपगतवेदी हैं। जो कारीष, तृण तथा इष्टपाक की अग्नि के समान परिणामों के वेदन से उन्मुक्त हैं और अपनी आत्मा में उत्पन्न हुए श्रेष्ठ अनन्तसुख के धारक भोक्ता हैं वे अपगतवेदी हैं। **(पं.सं.प्रा. १/१०८)**

जिनके तीनों प्रकार के वेदों से उत्पन्न होने वाला संताप दूर हो गया है वे वेदरहित जीव हैं। **(ध. १/३४२)**

२. प्रश्न : अपगतवेदी जीवों के कितनी कषायें होती हैं?

उत्तर : अपगतवेदी जीवों के ४ कषायें होती हैं संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।

नवमें गुणस्थान में पहले वेद का अभाव होता है। उसके बाद संज्वलन कषायों का नाश होता है। इसलिए नवमें गुणस्थान में संज्वलन क्रोधादि चारों पाये जाते हैं तथा दसवें गुणस्थान में केवल संज्वलन लोभ पाया जाता है। **(ध.२)** ग्यारहवें से चौदहवें गुणस्थान तक तथा सिद्ध भगवान भी अपगतवेदी होते हैं लेकिन उनके कषाय भी नहीं होती है।

३. प्रश्न : अपगतवेद में पाँचों ज्ञान किस अपेक्षा से पाये जाते हैं?

उत्तर : अपगतवेदी के ९ वें, १० वें, ११ वें तथा १२ वें गुणस्थान में मति, श्रुत, अवधि और मन:पर्यय ज्ञान होता है। तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में केवलज्ञान पाया जाता है। **(ध.२)** सिद्ध भगवान के ज्ञान को भी केवलज्ञान कहते हैं।

नोट – इसी प्रकार चार दर्शनों में भी जानना चाहिए।

४. प्रश्न : अपगतवेद में संयम की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : अपगतवेद में - सामायिक-छेदोपस्थापना संयम नवमें गुणस्थान की अवेद अवस्था में होते हैं।

सूक्ष्म साम्पराय संयम - दसवें गुणस्थान में होता है।

यथाख्यात संयम - ११वें, १२वें, १३वें तथा १४वें गुणस्थान में पाया जाता है। **(ध.२)**

५. प्रश्न : अपगतवेद में दो सम्यक्त्व किस अपेक्षा से कहे गये हैं?

उत्तर : अपगतवेदी के उपशम सम्यक्त्व - उपशम श्रेणी में स्थित नवमें (अवेद भाग में) दसवें तथा ग्यारहवें गुणस्थान में पाया जाता है।

क्षायिक सम्यक्त्व - उपशम श्रेणी में स्थित नवमें से ग्यारहवें गुणस्थान तक तथा क्षपक श्रेणी में स्थित नवमें, दसवें, बारहवें गुणस्थान में और तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान तथा सिद्ध भगवान के भी पाया जाता है। **(ध.२)**

६. प्रश्न : अपगतवेदी के वेद का अभाव भाव की अपेक्षा होता है या द्रव्य की अपेक्षा?

उत्तर : (यद्यपि पाँचवें गुणस्थान से आगे भी द्रव्यवेद का सद्भाव पाया जाता है, परन्तु केवल द्रव्य वेद से ही विकार उत्पन्न नहीं होता है।) यहाँ पर तो भाववेद का अधिकार है। इसलिए भाववेद के अभाव से ही उन जीवों को अपगतवेदी जानना चाहिए, द्रव्यवेद के अभाव से नहीं। **(ध. १/३४५)**

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : किन-किन जीवों के तीनों वेद होते हैं ?

उत्तर : तिर्यंच असंज्ञी पंचेन्द्रिय से लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक तीनों वेद से युक्त होते हैं।[१] **(ध.१/सू. १०७-८)** मनुष्य मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तक तीनों वेद वाले होते हैं। आगम में नवें गुणस्थान के सवेद भाग पर्यन्त द्रव्य से एक पुरुषवेद और भाव से तीनों वेद हैं ऐसा कथन किया है। **(गो.जी.जी. २७१)**

२. प्रश्न : कौन सी गति के जीवों में एक, दो, तीन वेद तथा वेद रहित अवस्था भी होती है?

उत्तर : मनुष्यगति के जीवों में एक वेद, दो वेद, तीन वेद तथा वेद रहित अवस्था भी होती है-

एक पुरुष वेद - आहारक ऋद्धि, मन:पर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धि संयम तथा सभी शलाका पुरुषों के आदि....।

एक नपुंसक वेद - सभी सम्मूर्च्छन मनुष्यों के।

दो वेद - भोगभूमि, कुभोगभूमि तथा सर्व म्लेच्छ खण्डों में

तीन वेद - कर्मभूमिया मनुष्य।

अपगतवेदी - नवमें गुणस्थान के अवेद भाग से आगे के मनुष्य।

३. प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से योग हैं जो तीनों वेद वालों के भी होते हैं और अपगतवेदी के भी होते हैं?

उत्तर : ११ योग तीनों वेदों में भी होते हैं तथा अपगतवेदी के भी होते हैं -

४ मनोयोग, ४ वचनयोग तथा ३ (औदारिकद्विक तथा कार्मण) काययोग **(ध.२)**

४. प्रश्न : ऐसा कौन-कौनसा वेद है जिसकी अनाहारक अवस्था में तीन ही गतियाँ होती है?

उत्तर : तीनों ही वेदों की अनाहारक अवस्था में तीन गतियाँ ही होती हैं -

१. यहाँ द्रव्यवेद की अपेक्षा समझना चाहिए।

स्त्रीवेद में	-	तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति।
पुरुषवेद में	-	तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति।
नपुंसक वेद में	-	नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति।

५. प्रश्न : **नरकगति में जाते समय द्रव्य स्त्री और पुरुष वेदी के कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय हो सकते हैं?**

उत्तर : द्रव्य स्त्रीवेदी जो यहाँ से नरकगति में जा रहा है उसके विग्रहगति में कम-से-कम आस्रव के ४१ प्रत्यय हो सकते हैं - ५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २३ कषाय तथा १ योग। **द्रव्य पुरुषवेदी** के नरक में जाते समय कम-से-कम - ३२ आस्रव हैं - १२ अविरति, १९ कषाय तथा १ योग।

नोट : द्रव्य पुरुषवेदी ही सम्यग्दर्शन को लेकर नरकगति में जा सकता है क्योंकि क्षायिक सम्यग्दर्शन तथा कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्व द्रव्य पुरुष-वेदी के ही होते हैं। इसलिए उसके ५ मिथ्यात्व तथा अनन्तानुबन्धी सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय निकल जावेंगे।

६. प्रश्न : **क्या अपगतवेदी आस्रव रहित भी होते हैं ?**

उत्तर : हाँ, चौदहवें गुणस्थानवर्ती अपगतवेदी आस्रवरहित ही होते हैं। सिद्ध भगवान भी आस्रवरहित ही होते हैं।

७. प्रश्न : **किस-किस स्थान के सभी उत्तर भेदों में तीनों वेद पाये जाते हैं?**

उत्तर : ८ स्थानों के सभी उत्तर भेदों में तीनों वेद पाये जाते हैं-(१) लेश्या (२) भव्यत्व (३) सम्यक्त्व (४) संज्ञी (५) आहार (६) पर्याप्ति (७) प्राण (८) संज्ञा।

८. प्रश्न : **कौनसा वेद किस स्थान के सभी उत्तरभेदों में पाया जाता है?**

उत्तर : वे स्थान जिनके सभी उत्तरभेदों में वेद पाया जाता है -

स्थान	**वेद**
काय मार्गणा	नपुंसकवेद
योग मार्गणा	पुरुषवेद
१९ जीवसमास	नपुंसकवेद

– प्रश्नपत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर (✓) का निशान लगावें -

(i) **सबसे ज्यादा आस्रव के प्रत्यय कौनसे वेद वाले के होते हैं?**

(अ) पुरुष वेद　　(ब) नपुंसकवेद

(स) स्त्रीवेद　　(द) कोई नहीं

(ii) **सूक्ष्म साम्पराय संयम किन-किन वेदों में नहीं होता?**

(अ) तीनों में　　(ब) स्त्री-पुरुष वेद में

(स)पुरुष-नपुंसक वेद　　(द) कोई नहीं

(iii) **स्त्रीवेद वाले के कौनसा संयम नहीं होता?**

(अ) सामायिक　　(ब) असंयम

(स) संयमासंयम　　(द) कोई नहीं

(iv) **कौनसे वेद में भव्य-अभव्य दोनों होते हैं?**

(अ) पुरुष वेद में　　(ब) स्त्रीवेद में

(स) नपुंसक वेद में　　(द) तीनों वेदों में

(v) **कौन-कौनसे वेद में बराबर जातियाँ होती हैं?**

(अ) स्त्री-पुरुष　　(ब) तीनों में

(स) पुरुष-नपुंसक　　(द) स्त्री-नपुंसक

२. एक शब्द में उत्तर दीजिये -

(i) कौनसे वेद वाले के सभी आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

(ii) कितने वेद में असैनी जीव भी होते हैं?

(iii) पुरुष वेदी के कितने ध्यान होते हैं?

(iv) अपगतवेदी जीवों के कितने वेदों सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय हो सकते हैं?

(v) सबसे ज्यादा संयम कौन से वेद वाले के होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए -

(i) स्त्री वेदी जीवों के देव सम्बन्धी जातियाँ होती हैं।

(ii) पुरुष वेदी जीवों के चारों संज्ञाओं का अभाव हो सकता हैं।

(iii) स्त्रीवेदी के दसवें गुणस्थान में नौ ही योग होते हैं।

(iv) नपुंसकवेदी जीव के कम-से-कम पाँच कषायें होती हैं।

(v) अपगत वेदी जीव सिद्ध अवस्था वाले भी होते हैं।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करें -

(i) नपुंसक वेद में..........योग..........कषाय तथा..........वेद नहीं होते हैं।

(ii) स्त्री वेद में..........कुज्ञान..........ज्ञान तथा..........दर्शन होते हैं।

(iii) पुरुषवेदी के..........सम्यक्त्व..........संयम तथा..........संज्ञाएँ होती हैं।

(iv) अपगत वेदी के..........कषाय..........संज्ञा तथा..........योग होते हैं।

(v) तीनों वेदों में..........लेश्या..........गुणस्थान तथा..........वेद होता है।

५. सही जोड़ी बनाइए -

(i) नपुंसक वेद - देवगति

(ii) पुरुष वेद - सूक्ष्मसाम्पराय

(iii) स्त्रीवेद-पुरुषवेद - नरकगति

(iv) अपगतवेद - नपुंसक वेद

(v) यथाख्यात - आस्रव के ५२ प्रत्यय

(vi) एकेन्द्रिय - पुरुषवेद

(vii) आहारकद्विक - अपगत वेद

(viii) देवगति - परिहार विशुद्धि

– उत्तरमाला –

१. (i) अ (ii) अ (iii) द (iv) द (v) अ।

२. (i) कोई नहीं (ii) तीनों (iii) तेरह (iv) शून्य (v) पुरुषवेद।

३. (i) हाँ (ii) ना (iii) ना (iv) हाँ (v) हाँ।

४. (i) २,२,२ (ii) ३,३,३ (iii) ६,५,४ (iv) ४,१,११ (v) ६,९,१

५. (i) नरकगति (ii) परिहार विशुद्धि (iii) देवगति (iv) सूक्ष्मसाम्पराय (v) अपगतवेद (vi) नपुंसक वेद (vii) पुरुषवेद (viii) ५२ आस्रव।

६. कषाय मार्गणा

१. प्रश्न : कषाय और कषाय मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर : जो तत्त्वार्थश्रद्धान रूप सम्यक्त्व, अणुव्रत रूप देशचारित्र, महाव्रत रूप सकल चारित्र और यथाख्यात चारित्र रूप आत्मा के विशुद्ध परिणामों को कषती अर्थात् घातती है उसे कषाय कहते हैं। **(गो.जी. २८२-८३)**

जो संसारी जीव के ज्ञानावरण आदि मूल प्रकृति और उत्तर प्रकृति के भेद से भिन्न शुभ-अशुभ कर्म रूप क्षेत्र को कषति अर्थात् जोतती हैं वे कषायें हैं।

क्रोधादि कषायों में अथवा कषाय और अकषाय में जीवों की खोज करने को कषाय मार्गणा कहते हैं।

२. प्रश्न : कषाय मार्गणा कितने प्रकार की होती है?

उत्तर : कषाय मार्गणा चार प्रकार की होती है - (१) क्रोध (२) मान (३) माया (४) लोभ। **(बृ.द्र.सं. १३ टी.)**

अथवा कषायें पच्चीस होती हैं -

४ अनन्तानुबन्धी - क्रोध, मान, माया, लोभ।
४ अप्रत्याख्यानावरण - क्रोध, मान, माया, लोभ।
४ प्रत्याख्यानावरण - क्रोध, मान, माया, लोभ।
४ संज्वलन - क्रोध, मान, माया, लोभ। = कुल १६

नौ नोकषाय - हास्य, रति, अरति, शोक, भय-जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद। १६ + ९ = २५ **(त.सू. ८/९)**

कषाय मार्गणा के अनुवाद से क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी, लोभकषायी तथा कषायरहित जीव होते हैं। **(ध.१/३४८)**

३. प्रश्न : क्या कषायरहित जीव भी होते हैं?

उत्तर : हाँ, कषायरहित जीव भी होते हैं। ११वें, १२वें, १३वें, १४वें गुणस्थान वाले तथा सिद्ध भगवान कषाय से रहित होते हैं।

४. प्रश्न : नोकषाय किसे कहते हैं ?

उत्तर : ईषत् कषाय को नोकषाय कहते हैं। यहाँ ईषत् अर्थात् किंचित् अर्थ में नञ् का प्रयोग होने से किंचित् कषाय को नोकषाय कहा है। **(सर्वा. ८/९)** जिस प्रकार कुत्ता स्वामी का इशारा पाकर बलवन्त हो जाता है और जीवों को मारने के लिए प्रवृत्ति करता है तथा

स्वामी के इशारों से वापिस आ जाता है; उसी प्रकार क्रोधादि कषायों के बलपर ही ईषत् प्रतिषेध होने पर हास्यादि नोकषायों की प्रवृत्ति होती है। क्रोधादि कषायों के अभाव में निर्बल रहती हैं इसलिए हास्यादि को ईषत्-कषाय, अकषाय या नोकषाय कहते हैं। **(रा.वा. ८/९)**

५. प्रश्न : ये चारों चौकड़ी किसका घात करती हैं?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी क्रोधादि कषायें - सम्यक्त्व एवं चारित्र का घात करती हैं।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादि कषायें देशसंयम - अणुव्रतों का घात करती हैं।

प्रत्याख्यानावरण क्रोधादि कषायें सकल संयम - महाव्रतों का घात करती हैं।

संज्वलन क्रोधादि कषायें यथाख्यात संयम का घात करती हैं।

६. प्रश्न : क्रोध कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : युक्तायुक्त विचार से रहित दूसरे के घात की वृत्ति, शरीर में कम्पन, दाह, नेत्रों में लालिमा तथा मुख की विवर्णता लक्षण वाला क्रोध है।

अपने या पर के अपराध से अपना या दूसरों का नाश होना या नाश करना **क्रोध** है। **(य.ति.च. ८/४६७)** जिसके उदय से अपने और पर के घात करने के परिणाम हों तथा पर के उपकार करने के अभाव रूप भाव अर्थात् पर का उपकार करने के भाव न होना वा क्रूर भाव हो सो क्रोध कषाय है।

७. प्रश्न : मान कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : मन में कठोरता, ईर्षा, दया का अभाव, दूसरों के मर्दन का भाव, अपने से बड़ों को नमस्कार नहीं करना, अहंकार, दूसरों की उन्नति को सहन नहीं करना **मान** है।

जाति आदि के मद से दूसरे के तिरस्कार रूप भाव को मान कषाय कहते हैं। युक्ति दिखा देने पर भी दुराग्रह नहीं छोड़ना मान है। **(रा.वा. ८/९)**

रोष से या विद्या आदि के मद से दूसरे के तिरस्कार रूप भाव को मान कषाय कहते हैं। **(ध. १/३४९)**

८. प्रश्न : माया कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : नाना प्रकार के प्रतारण के उपायों द्वारा ठगने के लिए आकुलित मति और विनय, विश्वासाभास से चित्त को हरण करने के लिए बनी आकृति माया है।

दूसरों को ठगने के लिए जो छल-कपट और कुटिल भाव होता है वह माया है। **(रा.वा. ८/९)**

अपने हृदय के विचारों को छिपाने की जो चेष्टा की जाती है उसे माया कहते हैं। **(ध. १२)**

९. प्रश्न : लोभ कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : परिग्रह के ग्रहण में अतीव लालायित मानसिक भावना, परिग्रह के लाभ से अतिप्रसन्नता, ग्रहण किये हुए परिग्रह के रक्षण से उत्पन्न आर्त्तध्यान लोभ है।

चेतन स्त्री-पुत्रादिक में और अचेतन धन-धान्यादिक पदार्थों में ये ''मेरे हैं'' इस प्रकार की चित्त में उत्पन्न हुई विशेष तृष्णा को लोभ कहते हैं। अथवा इन पदार्थों की वृद्धि होने पर जो विशेष संतोष होता है, इनके विनाश होने पर महान् असंतोष होता है वह लोभ है। **(य.ति.च. ८/४६७)**

१०. प्रश्न : कषायों का वासना काल कितना है ?

उत्तर : कषायों का वासना काल –

कषाय		वासना काल
संज्वलन चतुष्क का	:	एक अन्तर्मुहूर्त्त
प्रत्याख्यानावरण चतुष्क का	:	एक पक्ष
अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क का	:	छह माह
अनन्तानुबन्धी चतुष्क का	:	संख्यात भव, असंख्यात भव, अनन्त भव।

(गो.क.जी. ४६-४७)

११. प्रश्न : वासना काल किसे कहते हैं ?

उत्तर : उदय का अभाव होते हुए भी कषाय का संस्कार जितने काल तक रहता है, उसे वासना काल कहते हैं। **(गो.क.जी. ४६-४७)** जैसे - किसी पुरुष ने क्रोध किया। फिर क्रोध छूट कर वह अपने काम में लग गया। वहाँ क्रोध का उदय तो नहीं है परन्तु वासना काल है इसलिए जिस पर क्रोध किया था, उस पर क्षमा रूप भाव उत्पन्न नहीं हुआ है। इसी प्रकार सभी कषायों का वासना काल जानना चाहिए।

१२. प्रश्न : किस गति के प्रथम समय में कौनसी कषाय की प्रधानता है ?

उत्तर : नरक गति में उत्पन्न जीवों के प्रथम समय में क्रोध का उदय, मनुष्यगति में मान का, तिर्यञ्च गति में माया का और देव गति में लोभ के उदय का नियम है। ऐसा आचार्य परम्परागत उपदेश है। **(ध. ४/४४५)**

विशेष : महाकर्मप्रकृति प्राभृत प्रथम सिद्धान्त के कर्त्ता भूतबली आचार्य के अभिप्रायानुसार किसी भी कषाय का उदय हो सकता है।

तालिका संख्या २४

अनन्तानुबन्धी चतुष्क

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पुरु. नपुं.	
६.	कषाय	१०	स्वकीय तथा ९ नोक.	क्रोध में क्रोध
७.	ज्ञान	३	कुमति, कुश्रुत, कुअव.	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु. अचक्षु.	अवधि तथा केवलदर्शन नहीं हैं।
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	मिथ्या. सा.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	पहला, दूसरा	
१६.	जीवसमास	१९	१४ एके. ३विक.२ पंचे.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३बल. श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	५	३ ज्ञानो. २ दर्श.	५ ज्ञान नहीं हैं।
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	४०	५ मि. १२अ. १०क. १३ यो.	१५ कषाय तथा २ योग रूप प्रत्यय नहीं हैं।
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : अनन्त संसार का कारण होने से मिथ्यादर्शन को अनन्त कहते हैं। उस अनन्त को बांधने वाली कषाय अनन्तानुबन्धी कषाय कहलाती है। **(रा.वा. ५)**

जिन कषायों के द्वारा जीव में उत्पन्न हुए संस्कारों का अनन्त भवों में अवस्थान माना गया है वे अनन्तानुबंधी कषायें हैं।

जो क्रोध, मान, माया, लोभ सम्यग्दर्शन व सम्यक् चारित्र का विनाश करते हैं तथा जो अनन्त भव के अनुबन्धन स्वभाव वाले होते हैं वे अनन्तानुबन्धी कहलाते हैं। **(ध.१३/३६९)**

२. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी कषाय कितने प्रकार की होती है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी कषाय चार प्रकार की होती है- (१) क्रोध (२) मान (३) माया (४) लोभ।

३. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी क्रोधादि को किसकी उपमा दी गई है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी क्रोध - पत्थर की रेखा अथवा नगराजि सदृश कहा गया है।

अनन्तानुबन्धी मान - पत्थर के स्तम्भ अथवा शैल स्तम्भ सदृश कहा गया है।

अनन्तानुबन्धी माया - बाँस सदृश अथवा बाँस वृक्ष की गठीली जड़ के सदृश कही गयी है।

अनन्तानुबन्धी लोभ - किरमिच रंग अथवा कृमिराग सदृश कहा गया है। **(ज.ध.१२/१५३-१५५ वं.चा.)**

४. प्रश्न : पत्थर की रेखा सदृश क्रोध किसे कहते हैं ?

उत्तर : इस क्रोध का संस्कार आत्मा पर इतना तीव्र पड़ता है कि उसकी उपमा पत्थर पर खोदी गई रेखा से दी जाती है। यही कारण है कि ये क्रोधादि जन्म-जन्मान्तरों में भी जाकर शांत नहीं होते हैं और निमित्त सामने आते ही भड़क उठते हैं। **(व.चा. ४/६६)**

जिस प्रकार पर्वतशिला किसी कारण से भेद को प्राप्त होकर पुन: किसी उपाय से नहीं जुड़ती, उसी प्रकार जो क्रोध किसी पुरुष विशेष में उत्पन्न होकर किसी दूसरे उपाय से उपशम को प्राप्त नहीं होता है, प्रतिकार रहित होकर उस भव में भी उसी प्रकार बना रहता है वही नगराजि (पत्थर की रेखा) सदृश क्रोध है। **(ज.ध.१२/१५३)**

५. प्रश्न : शैल स्तम्भ के समान मान किसे कहते हैं?

उत्तर : यह मान इतना तीव्र और विवेकहीन होता है कि शास्त्रकारों ने इसे पत्थर के स्तम्भ के समान माना है। इसीलिए अनन्तकाल बीत जाने पर भी उससे आक्रान्त जीव में तनिक भी मृदुता या विनम्रता नहीं आती है। **(व.चा. ४/७०)**

६. प्रश्न : बाँस की जड़ के सदृश माया किसे कहते हैं?

उत्तर : बाँस वृक्ष की जड़ की गाँठ नष्ट होकर तथा शीर्ण होकर भी सरल नहीं की जा सकती है, इसी प्रकार अतितीव्र वक्र भाव से परिणत माया परिणाम भी निरुपक्रम (किसी भी उपाय से हटने योग्य नहीं) होता है। **(ज.ध. १२/१५५)**

मायाचार करने वाले की चित्तवृत्ति बाँस की जड़ों के समान हो जाती है। इसी कारण उसके चाल-चलन और स्वभाव अत्यन्त उलझे तथा कुटिल हो जाते हैं और उनमें कभी भी सीधापन नहीं आता है। **(व. चा. ४/७४)**

७. प्रश्न : कृमिराग सदृश लोभ किसे कहते हैं?

उत्तर : कृमिराग एक कीट विशेष होता है। वह नियम से जिस वर्ण के आहार को ग्रहण करता है उसी वर्ण के अतिचिक्कण डोरे को अपने मल त्यागने के द्वार से निकालता है। क्योंकि उसका वैसा ही स्वभाव है। उस सूत्र (धागे) द्वारा जुलाहे अतिकीमती अनेक वर्ण वाले नाना वस्त्र बनाते हैं। उस के रंग को यद्यपि हजार कलशों की सतत धारा द्वारा प्रक्षालित किया जाता है, नाना प्रकार के सारयुक्त जलों द्वारा धोया जाता है तो भी उस रंग को थोड़ा भी दूर करना शक्य नहीं है क्योंकि वह अतिनिकाचित स्वरूप है, अग्नि में जलाये जाने पर भी भस्मपने को प्राप्त होते हुए उस कृमिराग से रंजित हुए वस्त्र का रंग कभी छूटने योग्य न होने से वैसा ही बना रहता है। इसी प्रकार जीव के हृदय में स्थित अतितीव्र लोभ परिणाम, जिसे कृश नहीं किया जा सकता, वह कृमिराग के रंग के सदृश कहा जाता है। **(ज.ध. १२/१५६)**

८. प्रश्न : जहाँ अनन्तानुबन्धी क्रोध होता है वहाँ चारों क्रोध होते हैं अत: यहाँ पर भी चारों क्रोधों को लेना चाहिए?

उत्तर : जहाँ अनन्तानुबन्धी क्रोध होता है वहाँ अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण तथा संज्वलन क्रोध होता ही है फिर भी यहाँ पर अनन्तानुबन्धी क्रोध की विवक्षा होने से अन्य क्रोधों को गौण करके मात्र अनन्तानुबन्धी क्रोध को ही आस्रव के कारणों में ग्रहण किया है। इसी प्रकार मान आदि में भी जानना चाहिए।

अनन्तानुबन्धी चतुष्क में से भी एक समय में एक का ही उदय आता है अर्थात् क्रोध के साथ मान, माया आदि का उदय नहीं हो सकता।

९. प्रश्न : क्या अनन्तानुबन्धी को कभी भी नष्ट नहीं किया जा सकता है?

उत्तर : यद्यपि अनन्तानुबन्धी कषाय का वासना काल अनन्त काल है, अनन्तानुबन्धी कषाय पत्थर की रेखा के समान है फिर भी पुरुषार्थ के माध्यम से उसे नष्ट किया जा सकता है। जिस प्रकार पत्थर पर बनी हुई लकीर को भी घिसकर साफ किया जा सकता है, उसी प्रकार अनन्तानुबन्धी कषाय को भी करण (अध:करण आदि) रूप परिणामों के द्वारा एक अन्तर्मुहूर्त में नष्ट किया जा सकता है।

१०. प्रश्न : क्या ऐसे कोई जीव हैं जिनके अनन्तानुबन्धी कषाय का कभी नाश नहीं होगा?

उत्तर : हाँ, अभव्य जीवों के अनन्तानुबंधी कषाय का कभी नाश नहीं होगा तथा वे भव्य जीव

जो सती विधवा के समान हैं अर्थात् अभव्य सम भव्य जीवों के भी कभी अनन्तानुबन्धी कषाय का नाश नहीं होगा, क्योंकि इनमें मोक्ष जाने की क्षमता होते हुए भी इन्हें कभी अनन्तानुबन्धी चतुष्क को क्षय, उपशम करने के योग्य निमित्त नहीं मिलेंगे। जिस प्रकार सती विधवा को पुत्रप्राप्ति के योग्य निमित्त नहीं मिलेंगे इसलिए उसमें पुत्रप्राप्ति की क्षमता होने पर भी उसे कभी पुत्र की प्राप्ति नहीं होगी।

११. प्रश्न : क्या ऐसे कोई जीव हैं जिनके अब कभी अनन्तानुबंधी सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होंगे?

उत्तर : हाँ, वे जीव जिन्होंने क्षायिक-सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लिया है तथा जो कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि हैं उनको भी कभी अनन्तानुबन्धी सम्बन्धी आस्रव नहीं होगा। तथा दूसरे-तीसरे नरक में जाने के सम्मुख मिथ्यादृष्टि (तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला) जीव जब तक नरक में पहुँचकर सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर लेते उन जीवों को छोड़कर शेष जिन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध कर लिया है उनके भी कभी अनन्तानुबन्धी कषाय के निमित्त से आस्रव नहीं होगा, क्योंकि ये कभी सम्यक्त्व से च्युत (होकर पहले-दूसरे गुणस्थान को प्राप्त) नहीं होते हैं।[१]

१२. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी का क्षय कौनसी गति में किया जा सकता है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी कषाय का क्षय मात्र मनुष्यगति में ही किया जा सकता है। उसमें भी कम-से-कम आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त्त की आयु वाला कर्मभूमिया मनुष्य ही केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में कर सकता है, अन्य कोई नहीं।

नोट - (१) अनन्तानुबन्धी कषाय का कभी सीधा क्षय नहीं होता है। अनन्तानुबन्धी कषाय का विसंयोजन अर्थात् अन्य कषाय में परिवर्तित करके ही उसका क्षय किया जाता है।

(२) वह दुखमा-सुखमा काल में जन्मा जीव ही होना चाहिए।

१३. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी कषाय वाले के मति आदि ज्ञान क्यों नहीं होते हैं?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी कषाय के साथ मिथ्यात्व का उदय रहता है। उस मिथ्यात्व के कारण प्राणी जीवादि पदार्थों के यथार्थ स्वरूप को नहीं समझ सकता है, उसको इनका यथार्थ श्रद्धान नहीं हो सकता है इसलिए उसके मति, श्रुत तथा अवधिज्ञान विपरीत हो जाते हैं। कहा भी है-''**सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्**'' **(त.सू. १/३२)** उन्मत्त पुरुष के समान मिथ्यादृष्टि जीव भी पदार्थों का सही स्वरूप नहीं समझ सकता है। उसका ज्ञान कड़वी तूम्बी में रखे गये मीठे दूध के समान मिथ्या रूप हो जाता है।

दूसरे गुणस्थान में मिथ्यात्व का उदय नहीं है, फिर भी वहाँ मिथ्याज्ञान ही कहे गये हैं

१. यद्यपि वे तीसरे गुणस्थान को भी प्राप्त नहीं करते हैं लेकिन यहाँ अनन्तानुबन्धी कषाय की विवक्षा होने से उसे यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

क्योंकि अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यक्त्व का घात करने वाली भी कही गई है। दूसरी बात, दूसरे गुणस्थान वाले नियम से मिथ्यात्व में ही प्रवेश करते हैं इसलिए अनन्तानुबन्धी कषाय वाले के मति आदि ज्ञान नहीं होते हैं।

१४. प्रश्न : अनन्तानुबन्धी की शक्ति दो स्वभाव (सम्यक्त्व घातक तथा चारित्र घातक) रूप है, इसमें क्या युक्ति है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी चतुष्क दर्शनमोहनीय स्वरूप नहीं माने जा सकते हैं क्योंकि सम्यक्त्व प्रकृति, मिथ्यात्व तथा सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के द्वारा ही आवरण किये जाने वाले दर्शन मोहनीय के फल का अभाव है। और न इन्हें चारित्रमोहनीय स्वरूप ही माना जा सकता है, क्योंकि अप्रत्याख्यानावरणादि कषायों के द्वारा आवरण किये गये चारित्र के आवरण करने में फल का अभाव है। इसलिए उपर्युक्त अनन्तानुबन्धी कषायों का अभाव सिद्ध होता है। किन्तु उनका अभाव नहीं है, क्योंकि सूत्र में इनका अस्तित्व पाया जाता है। इसलिए इन अनन्तानुबन्धी कषायों के उदय में सासादन भाव की उत्पत्ति अन्यथा हो नहीं सकती है। इसी अन्यथानुपपत्ति से इनके दर्शनमोहनीयता और चारित्रमोहनीयता अर्थात् सम्यक्त्व और चारित्र को घात करने की शक्ति का होना सिद्ध होता है। **(ध. ६/४२)**

१५. प्रश्न : बाँस की जड़ के समान माया में कितने उपयोग हो सकते हैं?

उत्तर : बाँस सदृश माया में कम-से-कम ३ उपयोग हो सकते हैं- (१) कुमतिज्ञानोपयोग (२) कुश्रुत ज्ञानोपयोग (३) अचक्षु दर्शनोपयोग।

ये तीन उपयोग एकेन्द्रियादि त्रीन्द्रिय पर्यन्त जीवों की अपेक्षा कहे गये हैं।

बाँस सदृश माया में अधिक-से-अधिक पाँच उपयोग हो सकते हैं - (१) कुमति (२) कुश्रुतज्ञानोपयोग (३) कुअवधिज्ञानोपयोग (४) चक्षु दर्शनज्ञानोपयोग (५) अचक्षुदर्शन ज्ञानोपयोग ।

जो आचार्य अवधिदर्शन को प्रथम गुणस्थान से स्वीकार करते हैं उनकी अपेक्षा ६ उपयोग हो सकते हैं अर्थात् उपर्युक्त पाँच उपयोगों के साथ अवधिदर्शन भी हो सकता है।

तालिका संख्या २५

अप्रत्याख्यानावरण कषाय

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	१०	१ स्वकीय, ९ नोक.	क्रोध में क्रोध .....
७.	ज्ञान	३	मति, श्रुत, अवधि.	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	च.अच.अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	४	क्षा.क्षायो.उप.मिश्र.	मिथ्या.सासा. नहीं हैं
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	तीसरा, चौथा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ ब. श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्श.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म.	आज्ञाविचय, अपायविचय होते हैं।
२२.	आस्रव	३५	१२ अ. १० क. १३ यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	चारों गति सम्बन्धी	तिर्यञ्चों में पंचेन्द्रिय सम्बन्धी ही लेना चाहिए।
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	तिर्यञ्चों में पंचेन्द्रिय सम्बन्धी ही लेना चाहिए।

१. प्रश्न : अप्रत्याख्यानावरण कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसके उदय से यह प्राणी ईषत् भी देशविरत (संयमासंयम) नामक व्रत को स्वीकार नहीं कर सकता है, स्वल्प मात्र भी व्रत धारण नहीं कर सकता है वह देशविरत प्रत्याख्यान का आवरण करने वाली अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभ कषाय है। **(रा.वा.८/९)** जो देशसंयम को अल्प मात्र भी न होने दे उसे अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादि कषाय कहते हैं। **(गो. क. जी. १३३)**

२. प्रश्न : अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादि को किसकी उपमा दी गई है?

उत्तर : अप्रत्याख्यानावरण क्रोध - पृथ्वी रेखा सदृश।

अप्रत्याख्यानावरण मान - हड्डी के समान, अस्थिस्तम्भ सदृश।

अप्रत्याख्यानावरण माया - बकरी के सींग या मेंढ़े के सींग सदृश।

अप्रत्याख्यानावरण लोभ - नील रंग/अक्षमल या कज्जल सदृश।

(ज.ध.१२/१५३-१५५ वं.चा.)

३. प्रश्न : पृथ्वीरेखा सदृश क्रोध किसे कहते हैं?

उत्तर : यह क्रोध पूर्व क्रोध (नगराजि सदृश क्रोध) से मन्द अनुभाग वाला है, क्योंकि चिरकाल तक अवस्थित होने पर भी इसका पुन: दूसरे उपाय से सन्धान (जुड़ना) हो जाता है। यथा ग्रीष्म काल में पृथिवी का भेद हुआ (गाड़ी गड़ार/दरार बन गई) पुन: वर्षा काल में जल के प्रवाह से वह दरार भरकर उसी समय संधान को प्राप्त हो गई। इसी प्रकार जो क्रोध परिणाम चिरकाल तक अवस्थित रहकर भी पुन: दूसरे कारण से तथा गुरु के उपदेश आदि से उपशम भाव को प्राप्त होता है वह इस प्रकार का तीव्र परिणाम भेद पृथिवी रेखा सदृश है। **(ज.ध. १२/१५३)**

ये संस्कार काफी समय बीतने पर अथवा शास्त्र रूपी जल वृष्टि से चित्त स्नेहार्द्र हो जाने पर उपशम को प्राप्त हो जाता है। **(व.चा. ४/६७)**

४. प्रश्न : अस्थिस्तम्भ सदृश मान किसे कहते है?

उत्तर : पुराण पुरुष कहते हैं कि दूसरे मान का उदय आत्मा में हड्डी के समान कर्कशता ला देता है, परिणाम यह होता है कि जब जीव ज्ञान रूपी आग में काफी तपाया जाता है तो उसमें कुछ-कुछ विनम्रता आ ही जाती है। **(व.चा. ४/७१)**

५. प्रश्न : मेढ़े के सींग सदृश माया किसे कहते हैं?

उत्तर : इस माया का आत्मा पर पड़ने वाला संस्कार मेढ़े के सींग के समान गुड़ीदार होता है

फलत: इस कषाय से आक्रान्त व्यक्ति मन में कुछ सोचता है और जो करता है वह इससे बिल्कुल भिन्न होता है। **(व.चा. ४/७५)**

६. प्रश्न : अक्षमल सदृश लोभ किसे कहते हैं?

उत्तर : अक्ष (रथ का चक्का) का मल अक्षमल है। अक्षांजन के स्नेह से गीला हुआ मषीमल अति चिक्कण होने से उस अक्षमल को सुखपूर्वक दूर करना शक्य नहीं है। उसी प्रकार यह लोभ परिणाम भी निधत्त स्वरूप होने से जीव के हृदय में अवगाढ़ होता है इसलिए उसे दूर करना शक्य नहीं है। **(ज.ध. १२/१५६)**

जैसे ही जीव अपने आपको ज्ञान रूपी जल में धोता है वैसे ही आत्मा तुरन्त शुचि और स्वच्छ हो जाता है। **(व.चा. ४/७९)**

७. प्रश्न : अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कितने उपयोग हो सकते हैं?

उत्तर : अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि के ६ उपयोग हो सकते हैं-

३ ज्ञानोपयोग - मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग।

३ दर्शन - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधिदर्शनोपयोग।

८. प्रश्न : अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले कार्मण काययोगी के कितने आस्रव के प्रत्यय हो सकते हैं ?

उत्तर : कार्मण काययोग में स्थित अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले के २२ आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

९ कषाय ८ नोकषाय (स्त्री वेद बिना), १ स्वकीय अर्थात् क्रोधादि में से एक

१ योग - कार्मण काययोग

१२ अविरति - छहकाय के जीवों.......।

९. प्रश्न : अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले व्यंतर देव के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : अप्रत्याख्यानावरण कषाय वाले व्यंतरदेव के २९ आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

१२ अविरति

८ कषाय – ७ नोकषाय (देव है इसलिए स्त्रीवेद नहीं है) १ स्वकीय कषाय है।

९ योग (४ मनोयोग, ४ वचनयोग, वैक्रियिक काययोग) १२+८+९ = २९

नोट : स्वकीय कषाय के साथ प्रत्याख्यानावरण तथा संज्वलन क्रोधादि को भी ग्रहण करने पर आस्रव के दो प्रत्यय और हो जाते हैं।

तालिका संख्या २६

प्रत्याख्यानावरण चतुष्क

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	२	तिर्यञ्च, मनुष्य	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मन. ४ व. १ का.	औदारिक काययोग
५.	वेद	३	स्त्री.पु.न.	
६.	कषाय	१०	१ स्वकीय ९ नोक	
७.	ज्ञान	३	मति, श्रुत, अवधि	३ कुज्ञान, मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	१	संयमासंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	
१०.	लेश्या	३	पी.प.शु.	अशुभ लेश्याएँ नहीं हैं।
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	पंचम	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचे.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ बल. श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	११	४ आ. ४ रौ. ३ धर्म	संस्थानविचय धर्मध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	३०	११ अ. १० क. ९ यो.	
२३.	जाति	१८ ला.	४ ला. तिर्य. १४ ला. मनुष्यों की	एकेन्द्रिय आदि चतुरिन्द्रिय पर्यन्त जाति नहीं है।
२४.	कुल	५७ $\frac{१}{२}$ ला.क.	४३ $\frac{१}{२}$ ला.क. तिर्यञ्चों के १४ ला.क. मनुष्यों के	

१. प्रश्न : प्रत्याख्यानावरण कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसके उदय से सकल संयम विरति या सकल संयम को धारण नहीं कर सकता, वह समस्त प्रत्याख्यान का आवरण करने वाली प्रत्याख्यानावरण क्रोधादि कषाय है। **(रा.वा.५)** प्रत्याख्यान का अर्थ महाव्रत है। उनका आवरण करने वाला कर्म प्रत्याख्यानावरणीय कषाय है। **(ध. १३/३६०)**

२. प्रश्न : प्रत्याख्यानावरणीय क्रोधादि को किसकी उपमा दी जा सकती है?

उत्तर : प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध - धूलिरेखा सदृश/बालुकाराजि सदृश।

प्रत्याख्यानावरणीय मान - दारुस्तम्भ सदृश।

प्रत्याख्यानावरणीय माया - गोमूत्र सदृश।

प्रत्याख्यानावरणीय लोभ - शरीर के मल के सदृश/पांशु लेप सदृश **(ज.ध.१२/ १५३-१५५ वं.चा.)**

३. प्रश्न : धूलिरेखा सदृश क्रोध कैसा होता है?

उत्तर : यथा नदी के पुलिन आदि में बालुकाराजि के मध्य पुरुष के प्रयोग से या अन्य किसी कारण से उत्पन्न हुई रेखा जिस प्रकार हवा के अभिघात आदि दूसरे कारण द्वारा शीघ्र ही पुन: समान हो जाती है अर्थात् रेखा मिट जाती है। इसी प्रकार यह क्रोध परिणाम भी मन्द रूप से उत्पन्न होकर गुरु के उपदेश रूपी पवन से प्रेरित होता हुआ अति शीघ्र उपशम को प्राप्त हो जाता है। **(ज.ध.१२/१५४)**

४. प्रश्न : दारु स्तम्भ सदृश मान कैसा होता है?

उत्तर : इस मान में इतनी कठोरता आ जाती है जितनी गीली लकड़ी में आती है। फलत: जब ऐसा जीव रूपी काष्ठ ज्ञान रूपी तेल से सराबोर कर दिया जाता है, उसके उपरान्त ही वह सरलता से झुक सकता है। **(व.चा. ४/७२)**

५. प्रश्न : गोमूत्र सदृश माया कैसी होती है?

उत्तर : इस माया की तुलना चलते हुए बैल के मूत्र से बनी टेढ़ी-मेढ़ी रेखा से होती है। परिणाम यह होता है कि उसकी सभी चेष्टाएँ बैल के मूत्र के समान आधी-सीधी और आधी कुटिल एवं कपटपूर्ण होती हैं। **(व.चा.४/७६)**

६. प्रश्न : पांशु लेप सदृश लोभ कैसा होता है?

उत्तर : जिस प्रकार पैर में लगा धूलि का लेप पानी के द्वारा धोने आदि उपायों द्वारा सुखपूर्वक दूर कर दिया जाता है वह चिरकाल तक नहीं ठहरता। उसी के समान उत्तरोत्तर मन्द स्वभाव

वाला वह लोभ का भेद भी चिरकाल तक नहीं ठहरता। यह अप्रत्याख्यानावरण लोभ से अनन्तगुणा हीन सामर्थ्य वाला होता हुआ थोड़े से प्रयत्न द्वारा दूर हो जाता है। **(ज.ध. १२/१५६)**

इस लोभ वाला प्राणी जैसे ही आत्मा को शास्त्राभ्यास रूपी जल से भली-भाँति धोता है तत्काल इस लोभ का नामोनिशान ही नष्ट हो जाता है।**(व.चा.४/७९)**

७. प्रश्न : **क्या प्रत्याख्यानावरण कषाय वाले तिर्यञ्च-मनुष्य दोनों के क्षायिक सम्यक्त्व होता है?**

उत्तर : नहीं, प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय वाले तिर्यञ्चों के क्षायिक सम्यक्त्व नहीं हो सकता है। केवल मनुष्यों में ही क्षायिक सम्यग्दृष्टि पंचम गुणस्थान को प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि तिर्यञ्चों में क्षायिक सम्यक्त्व भोगभूमि में ही होता है अर्थात् कर्मभूमिया तिर्यञ्चों के क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है। भोगभूमि में संयम नहीं है इसलिए प्रत्याख्यानावरण कषाय वाले तिर्यञ्च के क्षायिक सम्यक्त्व नहीं हो सकता है।

८. प्रश्न : **क्या ऐसे कोई प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय वाले तिर्यञ्च हैं जिनके उपशम सम्यक्त्व नहीं हो सकता है?**

उत्तर : हाँ, सम्मूर्च्छन जन्म वाले पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च जो प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय वाले हैं उनके उपशम सम्यक्त्व नहीं हो सकता है (क्योंकि उपशम सम्यक्त्व गर्भजो के ही होता है) **(ध. ६/४२९)**

९. प्रश्न : **प्रत्याख्यानावरण कषाय में कम-से-कम कितने प्राण हैं?**

उत्तर : प्रत्याख्यानावरण कषाय में कम-से-कम भी १० प्राण ही होते हैं क्योंकि इस कषाय का उदय पंचम गुणस्थान में कहा गया है। वह पंचम गुणस्थान पर्याप्त जीवों के ही होता है।

तालिका संख्या २७

संज्वलनत्रिक

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्य	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	औदारिक तथा आहारकद्विक होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६.	कषाय	१०	१ स्वकीय ९ नोकषाय	संज्वलन क्रोध आदि
७.	ज्ञान	४	म.श्रु.अव.मनः.	३ कुज्ञान तथा केवल ज्ञान नहीं है
८.	संयम	३	सा.छे.परि.	
९.	दर्शन	३	च.अच.अव.	
१०.	लेश्या	३	पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप.	क्षायोपशमिक स.६ ठे, ७ वें गुण. की अपेक्षा
१३.	संज्ञी	१	संज्ञी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	४	छठे से ९ वें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ बल. श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	३ आ. ४ धर्म १ शुक्ल	पृथक्त्ववितर्क वीचार शुक्ल ध्यान है।
२२.	आस्रव	२१	१० क. ११ यो.	औदारिक मिश्र, वैक्रियिकद्विक तथा कार्मण काययोग नहीं है।
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : संज्वलन कषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : ''सं'' एकीभाव अर्थ में रहता है। संयम के साथ अवस्थान होने पर एक होकर जो ज्वलित होते हैं अर्थात् चमकते हैं अथवा जिनके सद्भाव में संयम चमकता रहता है उसे संज्वलन कषाय कहते हैं। **(सर्वा. ८/९)**

संज्वलन क्रोधादिक सकल कषाय के अभाव रूप यथाख्यात चारित्र का घात करते हैं।**(गो.जी.जी. २८३)**

जो संयम के साथ-साथ प्रकाशमान रहे एवं जिनके उदय से यथाख्यात चारित्र न हो वे संज्वलन कषायें हैं। **(हरि. पु. ५८/२४१)**

२. प्रश्न : संज्वलन क्रोधादि को किसकी उपमा दी गई है?

उत्तर : संज्वलन क्रोध - उदकराजि सदृश।

संज्वलन मान - लता सदृश वा बेंत के सदृश।

संज्वलन माया - अवलेखनी के सदृश या चामर के सदृश। **(ज.ध.१२/ १५२-५५ वं.चा.)**

३. प्रश्न : उदकराजि सदृश क्रोध कैसा होता है?

उत्तर : यह क्रोध पर्वतशिला भेद से मन्दतर अनुभाग वाला और स्तोकतर काल तक रहने वाला है क्योंकि पानी के भीतर उत्पन्न हुई रेखा का बिना दूसरे उपाय के तत्क्षण विनाश देखा जाता है। **(ज.ध. १२/१५४)**

४. प्रश्न : लता सदृश मान कैसा होता है?

उत्तर : अन्तिम संज्वलन मान के संस्कार की तुलना बालों की घुंघराली लट से की है। आपाततः जैसे ही उसे शास्त्र ज्ञान रूपी हाथ से स्पर्श करते हैं वैसे ही वह क्षणभर में ही सीधा और सरल हो जाता है। **(व.चा. ४/७३)**

५. प्रश्न : अवलेखनी सदृश माया कैसी है?

उत्तर : यह माया आत्मा को चमरी मृग के रोम के समान कर देती है। अतएव जैसे ही आत्मा रूपी रोम को आत्म-ज्ञान यंत्र में रखकर दबाते हैं तो तत्काल वह बिना विलम्ब अपने शुद्ध स्वभाव को प्राप्त कर लेता है **(व.चा.४/७७)**

६. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संज्वलन मानी हैं जिनके वेद नहीं होते हैं?

उत्तर : हाँ, नवमें गुणस्थान के अवेद भाग में जहाँ तक मान कषाय का उदय रहता है वहाँ संज्वलन मान वालों के वेद नहीं होता है।

७. प्रश्न : संज्वलन मान वाले के अवधिदर्शन कितने गुणस्थान में होता है?

उत्तर : संज्वलन मान वाले के अवधिदर्शन ४ गुणस्थानों में होता है-

छठे, सातवें, आठवें तथा नौवें। इसी प्रकार क्रोध एवं माया में जानना चाहिए।

८. प्रश्न : संज्वलन माया वाले के शुक्ललेश्या किस-किस गुणस्थान में होती है?

उत्तर : संज्वलन माया वाले के शुक्ललेश्या ४ गुणस्थानों में होती है -

छठे से ९ वें गुणस्थान तक। इसी प्रकार क्रोध एवं मान में जानना चाहिए।

९. प्रश्न : संज्वलन त्रिक में क्षायिक सम्यक्त्व कहाँ-कहाँ होता है ?

उत्तर : संज्वलन त्रिक में क्षायिक सम्यक्त्व छठे, सातवें, आठवें और नौवें – इन चार गुणस्थानों में होता है।

१०. प्रश्न : संज्वलन माया में कितनी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है?

उत्तर : संज्वलन माया में तीन संज्ञाओं का अभाव हो सकता है-

आहार संज्ञा, भयसंज्ञा तथा मैथुन संज्ञा।

परिग्रह संज्ञा का अभाव नहीं हो सकता है क्योंकि संज्वलन माया का उदय नौवें गुणस्थान तक होता है और चौथी संज्ञा दसवें गुणस्थान तक पायी जाती है। इसी प्रकार क्रोध एवं मान में जानना चाहिए।

११. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संज्वलन क्रोध वाले जीव हैं जिनके धर्मध्यान नहीं होते हैं?

उत्तर : हाँ, आठवें नवमें गुणस्थान में स्थित संज्वलन क्रोध वाले जीवों के धर्म-ध्यान नहीं होते हैं क्योंकि वहाँ पहला शुक्लध्यान होता है।

अथवा - संज्वलन क्रोध में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ धर्म ध्यान नहीं है। क्योंकि कोई आचार्य दसवें गुणस्थान तक धर्म-ध्यान मानते हैं।

१२. प्रश्न : संज्वलन मान में कम-से-कम कितने उपयोग हो सकते हैं?

उत्तर : संज्वलन मान में कम-से-कम चार उपयोग हो सकते हैं-

मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, चक्षुदर्शनोपयोग तथा अचक्षुदर्शनोपयोग।

इसी प्रकार कोध माया एवं लोभ में भी जानना चाहिए।

तालिका संख्या २८

संज्वलन लोभ

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४म. ४व. ३का.	औदारिक तथा आहारकद्विक काययोग है।
५.	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६.	कषाय	१०	स्वकीय एवं ९ नोक.	संज्वलन लोभ
७.	ज्ञान	४	म.श्रु.अ.मन.	
८.	संयम	४	सा.छे.परि.सू.	
९.	दर्शन	३	च.अच.अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	३	पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप.	सा.मिश्र.मि. नहीं है
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	५	छठे से दसवें तक	
१६.	जीवसमास	१	पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५इ. ३ब. श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	३आ. ४ध. १शु.	निदान आर्त्तध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	२१	१० क. ११ यो.	
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : संज्वलन लोभ को किसकी उपमा दी गई है?

उत्तर : संज्वलन लोभ को हारिद्र सदृश कहा गया है अर्थात् हल्दी के रंग की उपमा दी है। **(ज.ध. १२/१५५)**

२. प्रश्न : हारिद्र सदृश लोभ कैसा होता है?

उत्तर : जिस प्रकार हल्दी से रंगे गये वस्त्र का वर्ण/रंग चिरकाल तक नहीं ठहरता, वायु और आतप आदि के निमित्त से ही उड़ जाता है; उसी प्रकार यह लोभ का भेद मन्दतम अनुभाग से परिणत होने के कारण चिरकाल तक आत्मा में नहीं ठहरता है, क्षणमात्र में ही दूर हो जाता है। **(ज.ध. १२/१५७)**

३. प्रश्न : क्या संज्वलन लोभ वालों के हास्यादि कषाय का अभाव भी हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, संज्वलन लोभ वालों के आठवें गुणस्थान के बाद अर्थात् नौवें, दसवें गुणस्थान में हास्यादि कषायों का अभाव हो जाता है।

४. प्रश्न : क्या संज्वलन लोभ वाले के भी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था हो सकती है?

उत्तर : हाँ, संज्वलन लोभ वाला भी जब छठे गुणस्थान में आहारक मिश्र योग वाला होता है तो उसके भी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था बन जाती है।

५. प्रश्न : संज्वलन लोभ में कितने संयम होते हैं?

उत्तर : संज्वलन लोभ में चार संयम होते हैं - (१) सामायिक (२) छेदोपस्थापना (३) परिहार विशुद्धि (४) सूक्ष्मसाम्पराय। क्योंकि संज्वलन लोभ का उदय छठे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक होता है।

६. प्रश्न : संज्वलन लोभ वाले के कौन-कौन से गुणस्थान में कौन-कौनसा सम्यक्त्व होता है?

उत्तर : संज्वलन लोभ वाले के सम्यक्त्व -

छठे - सातवें गुणस्थान में - क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक तथा उपशम।

(उपशमश्रेणी के) आठवें, नवमें, दसवें गुणस्थान में - क्षायिक तथा उपशम।

(क्षपक श्रेणी के) आठवें, नवमें, दसवें गुणस्थान में - क्षायिक सम्यक्त्व।

७. प्रश्न : संज्वलन लोभ वाले के कम-से-कम कितने प्राण हो सकते हैं?

उत्तर : संज्वलन लोभ वाले के कम-से-कम ७ प्राण हो सकते हैं -

५ इन्द्रिय, काय बल तथा आयु।

ये ७ प्राण आहारकमिश्र की अपेक्षा जानने चाहिए क्योंकि संज्वलन लोभ का उदय छठे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

८. प्रश्न : संज्वलन लोभ का उदय तो दसवें गुणस्थान में होता है फिर उसमें चारों संज्ञाएँ कैसे हो सकती हैं?

उत्तर : संज्वलन लोभ का उदय दसवें गुणस्थान में ही नहीं होता है अपितु दसवें गुणस्थान तक होता है। पहले से पंचम गुणस्थान तक संज्वलन कषाय के साथ अनन्तानुबन्धी आदि का उदय भी पाया जाता है। छठे गुणस्थान से नौवें गुणस्थान तक संज्वलन क्रोध, मान, माया तथा लोभ चारों का उदय होता है इसलिए जो संज्वलन लोभ वाले छठे गुणस्थान में स्थित हैं उनके आहारादि चारों संज्ञाएँ पाई जाती हैं। इसी प्रकार शेष संज्ञाएँ भी जानना चाहिए।

९. प्रश्न : संज्वलन लोभ में कौनसी संज्ञा का अभाव नहीं हो सकता है?

उत्तर : संज्वलन लोभ कषाय वालों के परिग्रह संज्ञा का अभाव नहीं हो सकता है क्योंकि कषाय के रहते हुए इच्छा, वांछाओं का अभाव नहीं हो सकता है।

१०. प्रश्न : क्या धर्मध्यान से रहित संज्वलन लोभ वाले भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, धर्मध्यान से रहित संज्वलन लोभ वाले भी होते हैं – जिन छठे गुणस्थान वालों के आर्त्तध्यान होते हैं उनके धर्मध्यान नहीं होते तथा अष्टम गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक मुनिराज धर्मध्यान से रहित होते हैं अर्थात् प्रथम शुक्ल ध्यान वाले होते हैं। **अथवा** सप्तम गुणस्थान से दसवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज धर्मध्यानी ही होते हैं।

११. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संज्वलन लोभ कषायवाले हैं जिनके आर्त्तध्यान नहीं होते हों?

उत्तर : हाँ, सातवें गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक के संज्वलन लोभ कषायवालों के आर्त्तध्यान नहीं होते हैं।

१२. प्रश्न : संज्वलन लोभवालों के कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : संज्वलन लोभ वालों के कम-से-कम दस आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

९ योग तथा १ कषाय।

९ योग - ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिक काययोग।

१ कषाय - संज्वलन लोभ।

तालिका संख्या २९

हास्यादि चार नोकषाय

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१५	४ म.४ व.७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६.	कषाय	२३	१६ क. ३ वेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा	हास्य-रति में अरति-शोक नहीं रहते हैं
७.	ज्ञान	७	४ ज्ञा. ३ अज्ञा.	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	५	सा. छे. परि. संयमा.असं.	
९.	दर्शन	३	च. अच.अव.	कवेलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य-अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहारक	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	८	पहले से आठवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर, ५ त्रस.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५इ.३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४आ. ४रौ. ४ध. १शु.	
२२.	आस्रव	५५	५मि. १२अ. २३क. १५यो.	हास्य-रति में अरति शोक नहीं हैं।
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : हास्य नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिस कर्म के उदय से अनेक प्रकार का परिहास उत्पन्न होता है, वह हास्य कर्म है। **(ध. १३/३६१)** जिसके उदय से हँसी आती है वह हास्य कर्म है **(सर्वा. ८/९)**

२. प्रश्न : हास्य नोकषाय वाले के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : हास्य नोकषाय का उदय होने पर यह जीव प्रसन्नता के अवसर पर साकूत क्रोध में तथा कहीं पर अपमान होने के बाद अकेले ही या अन्य लोगों के सामने भी प्रकट कारण के बिना ही अर्थात् बिना कारण ही हँसता है अथवा अपने आप कुछ बड़बड़ाता जाता है। **(व.चा. ४/८३)**

३. प्रश्न : रति नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिस कर्म-स्कन्ध के उदय से द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावों में राग उत्पन्न होता है उसकी रति संज्ञा है। **(ध. ६/४७)** जिसके उदय से देशादि (क्षेत्रादि) में उत्सुकता होती है वह रति है। **(सर्वा ८/९)** मनोहर वस्तुओं में परम प्रीति को रति कहते हैं। **(नि.सा.ता.६)**

४. प्रश्न : रति नोकषायवाले के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : जब किसी जीव के रति नोकषाय का उदय होता है तो उसे उन दुष्ट लोगों से ही प्रीति होती है जो पाप कर्मों के करने में ही सदा लगे रहते हैं, जिनके कर्मों का परिणाम कुफल प्राप्ति ही होती है तथा निष्कर्ष शुद्ध अहित ही होता है। **(व.चा. ४/८४)**

५. प्रश्न : अरति नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसके उदय से आत्मा की देश आदि में उत्सुकता उत्पन्न नहीं होती है वह अरति कषाय है **(सर्वा. ८/९)** नाती, पुत्र एवं स्त्री आदि में रमण करने का नाम रति है, इसकी प्रतिपक्षभूत अरति कही जाती है। **(ध. १२/१८५)**

६. प्रश्न : अरति नोकषायवाले के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : अरति नोकषाय के फल में जीव ज्ञानार्जन के साधन, व्रतपालन का शुभ अवसर, तप तपने की सुविधाएँ, ज्ञानाभावमार्जन की सामग्री, लौकिक और पारलौकिक सम्पत्ति (द्रव्य) तथा अन्य सुखों के कारणों की प्राप्ति हो जाने पर भी अपने आपको उनमें नहीं लगा सकता है। **(व.चा. ४/८५)**

७. प्रश्न : शोक नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : उपकार करने वाले से सम्बन्ध के टूट जाने पर जो विकलता होती है वह शोक है। **(सर्वा. ८/९)** जिसके उदय से शोक होता है, वह शोक है **(रा.वा. ८/९)**

८. प्रश्न : शोक नोकषाय के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : जब प्राणी हर एक बात से उदासीन हो जाता है, लम्बी-लम्बी साँस छोड़ता है, मन को नियन्त्रित नहीं कर पाता है, फलत: मन सबसे अव्यवस्थित होकर चक्कर काटता है, इन्द्रियाँ इतनी दुर्बल हो जाती हैं कि अपना कार्य भी नहीं कर पाती हैं तथा बुद्धि विचार नहीं कर सकती है तब समझिये कि उसके शोक नोकषाय का उदय है। **(व. चा. ४/८७)**

९. प्रश्न : हास्यादि चार कषायों से किस-किस का ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : हास्यादि चार कषायों से हास्य, रति, अरति तथा शोक को ग्रहण करना चाहिए।

१०. प्रश्न : किस नोकषाय में कौनसी नोकषायें नहीं होती हैं ?

उत्तर : हास्य-रति नोकषाय में अरति-शोक नोकषाय नहीं होती हैं। अरति-शोक नोकषाय में हास्य-रति नोकषाय तथा एक वेद के साथ दूसरा वेद नहीं होता है।

११. प्रश्न : क्या कोई ऐसे हास्य कषायवाले हैं जिनके वचन योग नहीं है?

उत्तर : हाँ, एकेन्द्रिय तथा लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के वचनयोग नहीं होता है।

द्वीन्द्रियादि सभी जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक तथा अनाहारक अवस्था में भी वचन योग नहीं होता है।

१२. प्रश्न : शोक कषायवाले पुरुषवेदी के कितनी गतियाँ होती हैं?

उत्तर : शोक कषायवाले पुरुषवेदी के तीन गतियाँ होती हैं – (१) तिर्यञ्चगति (२) मनुष्यगति (३) देवगति। नरक गति नहीं है क्योंकि वहाँ पुरुषवेद नहीं पाया जाता है।

१३. प्रश्न : नारकियों के हास्य-रति कषाय कैसे हो सकती हैं क्योंकि उनके तो कभी सुख होता ही नहीं है ?

उत्तर : नारकियों के उदय योग्य प्रकृतियों में मोहनीय कर्म की स्त्रीवेद एवं पुरुषवेद को छोड़ कर शेष २६ प्रकृतियाँ बतायी गई हैं। नारकी जीव भी दूसरे के मारने आदि की भावना पूरी होने पर खुश होते ही होंगे। **अथवा** तीसरे नरक तक देवों के द्वारा धर्मोपदेश सुन कर प्रसन्नता की अनुभूति होती है, उसे भी हास्य-रति कहा जा सकता है। जब तीर्थंकर भगवान का जन्म होता है तब नरकों में कुछ समय के लिए सुख होता है तब भी हास्य-रति का उदय होता है क्योंकि सुख के समय अरति-शोक नहीं होते हैं।

१४. प्रश्न : देवों में अरति-शोक सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय कैसे होते हैं क्योंकि उनके तो दु:ख नहीं होता है?

उत्तर : देवों में भी अरति शोक का उदय पाया जाता है इसलिए उनके अरति-शोक सम्बन्धी आस्रव

होता ही है। देव भी जब वाहन आदि बनने का आदेश सुनते हैं, उनकी देवांगना आदि रूठ जाती हैं तब उनके अरति, शोक का उदय होता है।

१५.प्रश्न : हास्य कषायवाले अवधिज्ञानी के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : हास्य कषायवाले अवधिज्ञानी के एक ही जीवसमास होता है - सैनी पंचेन्द्रिय।

१६.प्रश्न : हास्य कषाय के साथ अचक्षुदर्शन कितने गुणस्थानों में पाया जाता है?

उत्तर : हास्य कषाय के साथ अचक्षुदर्शन में आठ गुणस्थान पाये जाते हैं - पहले से आठवें तक।

१७.प्रश्न : हास्य कषाय में अवधिदर्शनी के कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : हास्य कषाय में अवधिदर्शनी के २६ लाख जातियाँ होती हैं-पंचेन्द्रिय सम्बन्धी।

१८.प्रश्न : क्या कोई ऐसे जीव हैं जिनके हास्य कषाय का उदय है लेकिन आहार संज्ञा नहीं होती है?

उत्तर : हाँ, सातवें एवं आठवें गुणस्थान वालों के हास्य कषाय का उदय होने पर भी आहार संज्ञा नहीं होती है, क्योंकि आहारसंज्ञा छठे गुणस्थान से आगे नहीं होती है।

१९.प्रश्न : क्या ऐसे कोई हास्य-रति कषाय वाले जीव हैं जिनके अनाहारक अवस्था नहीं होती है?

उत्तर : हाँ, (१) तीसरे, पाँचवें, छठे, सातवें तथा आठवें गुणस्थान में स्थित हास्य-रति कषाय वाले जीवों के अनाहारक अवस्था नहीं होती है। (२) ऋजुगति से जाने वाले पहले, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान वालों के भी हास्य-रति कषाय के साथ अनाहारक अवस्था नहीं होती है।

२०.प्रश्न : अरति-शोक वालों के अनाहारक अवस्था में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : अरति-शोक वालों के अनाहारक अवस्था में ३ गुणस्थान होते हैं - पहला, दूसरा, चौथा।

नोट - तेरहवें-चौदहवें में अरति-शोक कषाय नहीं है इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

२१.प्रश्न : रति कषायवाले असैनी जीवों के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : रति कषाय वाले असैनी जीवों के १८ जीवसमास होते हैं –

एकेन्द्रिय सम्बन्धी १४, विकलत्रय के ३ तथा असैनी पंचेन्द्रिय का १ = १८

तालिका संख्या ३०

भय-जुगुप्सा

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पंचे.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१५	४म. ४व. ७का.	
५.	वेद	३	स्त्री.पु.न.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९नो.	भय-जुगुप्सा से रहित जीव भी हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	५	सा.छे.प.संय.असं.	सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात नहीं है।
९.	दर्शन	३	च.अच.अ.	केवल दर्शन नहीं है
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शुक्ल	
११.	भव्यत्व	२	भव्य-अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.सम्य.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	८	पहले से आठवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	स्थावरों के १४ त्रसों के ५	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.मन.	
१८.	प्राण	१०	५इन्द्रिय ३ब.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	आहार संज्ञा रहित भी हैं।
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४आ. ४रौ. ४ध. १शु.	
२२.	आस्रव	५७	५मि.१२अवि.२५क.१५यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९$\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : भय नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : परचक्र के आगमनादि का नाम भय है **(ध. १३/३३६)** जिसके उदय से उद्वेग होता है वह भय है। **(सर्वा. ८/९)** जिस कर्म के उदय से जीव के सात प्रकार का भय उत्पन्न होता है वह भयकर्म है। **(ध. १३/३६१)**

२. प्रश्न : भयकषाय वाले के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : श्मसान, राजद्वार, अन्धकार आदि सात भय के स्थानों पर किसी साधारण से साधारण भय के कारण उपस्थित होते ही कोई प्राणी एकदम काँपने लगता है, उसकी बोली बन्द हो जाती है या वह हकला-हकला कर बोलने लगता है, यह सब भय नोकषाय का ही प्रभाव है। **(व.चा.४/८६)**

३. प्रश्न : जुगुप्सा नोकषाय किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसके उदय से अपने दोषों का संवरण (ढकना) और पर के दोषों का आविष्करण होता है वह जुगुप्सा है। **(सर्वा. ८/९)** जिस कर्म के उदय से ग्लानि होती है उसकी जुगुप्सा यह संज्ञा है। **(ध. ६/४८)**

४. प्रश्न : जुगुप्सा नोकषायवाले के क्या चिह्न हैं?

उत्तर : जो पुण्यहीन व्यक्ति पाँचों इन्द्रियों के परम-प्रिय भोगों और उपभोगों को प्राप्त करके भी उनसे घृणा करता है या ग्लानि का अनुभव करता है समझिये उसे जुगुप्सा नोकषाय ने जोरों से दबा रखा है। **(व.चा.४)**

५. प्रश्न : क्या ऐसे कोई भय-जुगुप्सा वाले हैं जिनके सामायिक छेदोपस्थापना संयम न हो?

उत्तर : हाँ, पहले गुणस्थान से पाँचवें गुणस्थान तक के भय-जुगुप्सा वाले जीवों के सामायिक-छेदोपस्थापना संयम नहीं होता है। परिहारविशुद्धि संयमी भय-जुगुप्सा वालों के भी सामायिक-छेदोपस्थापना संयम नहीं होता है। क्योंकि एक समय में एक ही संयम होता है।

६. प्रश्न : भय-नोकषाय के उदय वाले चक्षुदर्शनी जीवों के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : भय-नोकषाय के उदय वाले चक्षुदर्शन वाले जीवों के तीन जीवसमास होते हैं - चतुरिन्द्रिय, असैनी पंचेन्द्रिय और सैनी पंचेन्द्रिय।

७. प्रश्न : जुगुप्सा के उदय वालों के कितनी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है?

उत्तर : जुगुप्सा के उदय वालों के एक संज्ञा का अभाव हो सकता है - आहारसंज्ञा का।

८. प्रश्न : भय-जुगुप्सा वालों के कम-से-कम कितनी संज्ञा हो सकती है?

उत्तर : भय-जुगुप्सा वालों के कम-से-कम तीन संज्ञाएँ हो सकती हैं- भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा और परिग्रह संज्ञा।

ये तीन संज्ञाएँ ७ वें तथा ८ वें गुणस्थान वालों की अपेक्षा जानना चाहिए।

९. प्रश्न : भय-जुगुप्सा के साथ अभव्य जीवों के कौनसे ध्यान नहीं हो सकते हैं?

उत्तर : भय-जुगुप्सा के साथ अभव्य जीवों के ५ ध्यान नहीं हो सकते हैं - ४ धर्मध्यान तथा १ शुक्लध्यान (पृथक्त्ववितर्कविचार) शेष शुक्ल ध्यान कषायातीत जीवों के ही होते हैं।

१०.प्रश्न : भय-जुगुप्सा वाले असैनी जीवों के कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : भय-जुगुप्सा वाले असैनी जीवों के कम-से-कम आस्रव के ३६ प्रत्यय हो सकते हैं - ५ मिथ्यात्व, ७ अविरति, २३ कषाय तथा १ योग। अथवा ७ अविरति, २३ कषाय तथा १ योग = ३१। जो आचार्य एकेन्द्रिय जीवों के दूसरा गुणस्थान मानते है उनकी अपेक्षा आस्रव के ३१ प्रत्यय बन जाते हैं। ये आस्रव के प्रत्यय पर्याप्तक अवस्था में नहीं होंगे क्योंकि पर्याप्त होने के पहले ही दूसरा गुणस्थान छूट जायेगा।

११.प्रश्न : २४ स्थानों में से किन स्थानों के सभी उत्तर भेद भय-जुगुप्सा में पाये जाते हैं?

उत्तर : २४ स्थानों में से १८ स्थानों के सभी उत्तर भेद भय-जुगुप्सा में पाये जाते हैं -

(१) गति (२) इन्द्रिय (३) काय (४) योग (५) वेद (६) कषाय (७) लेश्या (८) भव्य (९) सम्यक्त्व (१०) संज्ञी (११) आहार (१२) जीवसमास (१३) पर्याप्ति (१४) प्राण (१५) संज्ञा (१६) आस्रव के प्रत्यय (१७) जाति (१८) कुल।

१२.प्रश्न : क्या ऐसे कोई जीव हैं जिनके भय-जुगुप्सा सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं ?

उत्तर : हाँ, आठवें गुणस्थान के आगे तो भय-जुगुप्सा सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय ही नहीं है तथा जिन जीवों के भय-जुगुप्सा का उदय नहीं होता है उनके भी भय-जुगुप्सा नोकषाय आस्रव के प्रत्यय नहीं बनते हैं अर्थात् भय-जुगुप्सा सम्बन्धी आस्रव नहीं है।

तालिका संख्या ३१

कषायातीत जीव

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	गति रहित जीव भी होते हैं।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	इन्द्रियातीत जीव भी होते हैं।
३.	काय	१	त्रस	कायातीत जीव भी होते हैं।
४.	योग	११	४म. ४व. ३का.	योगातीत जीव भी होते हैं।
५.	वेद	०	—	
६.	कषाय	०	—	
७.	ज्ञान	५	म.श्रु.अ.म.केव.	कुज्ञान नहीं होते हैं।
८.	संयम	१	यथाख्यात	
९.	दर्शन	४	च.अच.अव.केवल	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	लेश्यातीत जीव भी होते हैं।
११.	भव्य	१	भव्य	भव्याभव्य से रहित भी होते हैं।
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षायि.उप.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी-असैनी से रहित जीव भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक,अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	ग्यारहवें से चौदहवें तक	गुणस्थानातीत जीव भी होते हैं।
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	समास रहित जीव भी होते हैं।
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	पर्याप्ति रहित जीव भी होते हैं।
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ ब. श्वा.आ.	प्राणातीत जीव भी होते हैं।
१९.	संज्ञा	०	—	
२०.	उपयोग	९	५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	४	चारों शुक्लध्यान	ध्यानातीत जीव भी होते हैं।
२२.	आस्रव	११	४म. ४व. ३का.	औदारिकद्विक तथा कार्मण काययोग
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	जाति रहित जीव भी होते हैं।
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	कुल रहित जीव भी होते हैं।

१. प्रश्न : कषायातीत जीव किसे कहते हैं?

उत्तर : जिनके स्वयं को, दूसरों को तथा दोनों को ही बाधा देने और बन्धन करने तथा असंयम करने में निमित्तभूत क्रोधादिक कषाय नहीं हैं तथा जो बाह्य-अभ्यन्तर मल से रहित हैं ऐसे जीवों को अकषाय (कषायातीत) जीव कहते हैं। ग्यारहवें गुणस्थान वाले व इसके आगे सभी जीव अकषायी हैं। **(गो.जी.२८९)**

२. प्रश्न : (ग्यारहवें आदि गुणस्थानवर्ती जीवों को) अकषायी जीवों को अमल किस अपेक्षा कहा गया है?

उत्तर : अकषायी जीव द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म इन तीनों कर्ममलों से रहित हैं, यह सिद्धों की अपेक्षा कथन है। अथवा जो भावकर्म मल से रहित हैं वे अमल हैं, यह कथन ग्यारहवें आदि गुणस्थानों की अपेक्षा है। **(गो.जी. २८९ म.प्र.)**

३. प्रश्न : ग्यारहवें गुणस्थान वाले अकषायी कैसे हो सकते हैं क्योंकि उनके द्रव्यकषाय का सद्भाव पाया जाता है?

उत्तर : ग्यारहवें गुणस्थान वालों को अकषायी कहने का कारण उनके कषाय के उदय का अभाव कहा गया है। सत्ता में तो उनके कषायें रहती ही हैं।

४. प्रश्न : क्या अकषायी जीव पुन: कषायवान बन सकते हैं?

उत्तर : हाँ, उपशम श्रेणी वाले जीव जब ग्यारहवें गुणस्थान में अकषायी हो जाते हैं वे जब वहाँ से गिरकर दसवें आदि गुणस्थानों में आते हैं तब पुन: कषायवान हो जाते हैं।

५. प्रश्न : अकषायी जीवों के उपशम तथा क्षायिक सम्यक्त्व किन गुणस्थानों में पाये जाते हैं?

उत्तर : अकषायी जीवों के उपशम सम्यक्त्व केवल ग्यारहवें गुणस्थान में होता है तथा क्षायिक सम्यक्त्व उपशम श्रेणी की अपेक्षा ग्यारहवें गुणस्थान में तथा क्षपक श्रेणी की अपेक्षा बारहवें में और तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान वालों के होता है। सिद्ध भगवान के भी क्षायिक सम्यक्त्व होता है।

६. प्रश्न : सैनी-असैनी से रहित अकषायी जीव कौन-कौन से हैं?

उत्तर : सैनी-असैनी से रहित अकषायी जीव - तेरहवें, चौदहवें गुणस्थानवर्ती जिनेन्द्र देव तथा सिद्ध भगवान हैं।

७. प्रश्न : कौन-कौन से गुणस्थान वाले अकषायी होते हैं?

उत्तर : उपशान्त कषाय वीतराग छद्मस्थ, क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ, सयोग-केवली और अयोग केवली इन चार गुणस्थानों में कषायरहित जीव होते हैं।

८. प्रश्न : अकषायी जीवों के कितने ज्ञान हो सकते हैं?

उत्तर : अकषायी जीवों के कम-से-कम एक ज्ञान हो सकता है - केवलज्ञान तथा अधिक से अधिक एक जीव के एक साथ चार ज्ञान हो सकते हैं - मति, श्रुत, अवधि तथा मन:पर्ययज्ञान नाना जीवों की अपेक्षा अकषायी जीवों के पाँचों ज्ञान भी हो सकते हैं।

९. प्रश्न : लेश्यातीत अकषायी जीव कौन-कौन से हैं?

उत्तर : लेश्यातीत अकषायी जीव - चौदहवें गुणस्थान वाले तथा सिद्ध भगवान हैं।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : कषायों में योगमार्गणा किस प्रकार लगानी चाहिए ?

उत्तर : कषायों में योगों का विवेचन :

- १० कषायों – अनन्तानुबन्धी चतुष्क, अप्रत्याख्यान चतुष्क, स्त्रीवेद एवं नपुंसक वेद में तेरह योग – ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, औदारिकद्विक, वैक्रियिकद्विक तथा कार्मण।
- प्रत्याख्यानावरण चतुष्क में नौ योग – ४ मनो. ४ वच. तथा १ औदारिक काययोग।
- संज्वलन चतुष्क में ११ योग – ४ मनो. ४ वच. औदारिक काययोग एवं आहारकद्विक काययोग।
- हास्यादि छह तथा पुरुषवेद में १५ योग – ४ मनो. ४ वच. ७ काययोग।

२. प्रश्न : कौनसी कषायों में सभी योग होते हैं?

उत्तर : सात नोकषायों में सभी योग होते हैं - हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा तथा पुरुषवेद।

३. प्रश्न : कषायवान जीवों के कितने ज्ञान हो सकते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के कम-से-कम दो ज्ञान होते हैं -

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान अथवा कुमति, कुश्रुत तथा अधिक-से-अधिक ७ ज्ञान होते हैं- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, कुमति, कुश्रुत, विभंगावधि।

४. प्रश्न : कौनसी कषाय में संयम मार्गणा का एक ही भेद होता है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी चौकड़ी तथा अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क में एक संयम – असंयम; प्रत्याख्यानावरण चौकड़ी में एक संयम – संयमासंयम।

५. प्रश्न : कषायवान जीवों के कितने संयम होते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के कम-से-कम एक संयम होता है -

सूक्ष्मसाम्पराय - दसवें गुणस्थान की अपेक्षा।

अथवा - संयमासंयम - पंचम गुणस्थान की अपेक्षा।

असंयम - प्रथम से चौथे गुणस्थान की अपेक्षा।

कषायवान जीवों के अधिक-से-अधिक ६ संयम हो सकते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय, संयमासंयम तथा असंयम। यथाख्यातसंयम कषायवान जीवों के नहीं होता है।

६. प्रश्न : किस कषाय में सबसे ज्यादा संयम होते हैं?

उत्तर : संज्वलन लोभ में ४ संयम होते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि तथा सूक्ष्मसाम्पराय संयम।

अथवा हास्यादि ६ नोकषायों एवं पुरुषवेद में ५ संयम होते हैं। सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, संयमासंयम और असंयम।

७. प्रश्न : कषायवान जीवों के कितने दर्शन होते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के कम से कम एक दर्शन होता है - अचक्षु दर्शन (एकेन्द्रिय से लेकर त्रीन्द्रिय जीवों तक होता है)।

तथा अधिक-से-अधिक तीन दर्शन हो सकते हैं - चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन।

८. प्रश्न : कषायवान जीवों के कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के कम-से-कम १ सम्यक्त्व होता है- क्षायिक सम्यक्त्व - क्षपक श्रेणी की अपेक्षा। **(आठवें से दसवें गुणस्थान तक)**

अथवा - कषायवान जीवों के दो सम्यक्त्व हो सकते हैं - उपशम और क्षायिक (आठ वें से दसवें गुणस्थान तक की अपेक्षा)

अथवा - अनन्तानुबन्धी कषाय की अपेक्षा दो सम्यक्त्व हैं - मिथ्यात्व और सासादन।

कषायवान जीवों के अधिक-से-अधिक सभी (छह) सम्यक्त्व हैं क्योंकि पहले गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक कषायवान जीव पाये जाते हैं।

९. प्रश्न : कषायवान जीवों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के कम-से-कम तीन प्राण होते हैं - १ इन्द्रिय (स्पर्शन) १ कायबल, १ आयु। ये ३ प्राण एकेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में या लब्ध्यपर्याप्तक की अपेक्षा कहे गये हैं।

१०. प्रश्न : अकषायी जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : अकषायी जीवों के ग्यारहवें व बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा अधिक-से-अधिक दस प्राण

होते हैं तथा चौदहवें गुणस्थान में कम-से-कम एक प्राण-आयु प्राण होता है।

११. प्रश्न : ऐसे कौन-कौनसे ज्ञानोपयोग हैं जो अकषायी अथवा कषायवान जीवों के ही होते है?

उत्तर : दो उपयोग ऐसे हैं जो अकषायी जीवों के ही होते हैं - केवलज्ञानोपयोग तथा केवलदर्शनोपयोग।

तीन उपयोग ऐसे हैं जो केवल कषायवान जीवों के ही होते हैं - कुमतिज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग, विभंगज्ञानोपयोग

१२. प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से उपयोग हैं जो अकषायी और कषायवान दोनों जीवों के होते हैं?

उत्तर : ७ उपयोग अकषायी एवं कषायवान दोनों के होते हैं -

४ ज्ञानोपयोग - मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग तथा मन:पर्यय ज्ञानोपयोग।

३ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधिदर्शनोपयोग।

१३. प्रश्न : कषायवान जीवों के कितने ध्यान पाये जाते हैं?

उत्तर : कषायवान जीवों के तेरह ध्यान पाये जाते हैं -

४ आर्त्तध्यान - इष्टवियोगज, अनिष्टसंयोगज, वेदना और निदान।

४ रौद्रध्यान - हिंसानन्द, मृषानन्द, चौर्यानन्द, परिग्रहानन्द।

४ धर्मध्यान - आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय, संस्थानविचय।

१ शुक्ल - पृथक्त्ववितर्कवीचार।

– प्रश्नपत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर (✓) का निशान लगाओ -

(i) **ऐसी कौनसी कषाय है जिसमें सम्यक्त्व मार्गणा के सबसे कम भेद हैं?**

(अ) संज्वलन चतुष्क (ब) अनन्तानुबन्धी क्रोध
(स) प्रत्याख्यानावरण मान (द) कोई नहीं

(ii) **ऐसी कौनसी कषाय है जिसमें सबसे ज्यादा संयम होते हैं?**

(अ) संज्वलन मान में (ब) अप्रत्याख्यानावरण में
(स) माया कषाय में (द) लोभ कषाय में

(iii) **अप्रत्याख्यानावरण का वासना काल कितना है?**

(अ) अनन्तकाल (ब) ६ माह
(स) १५ दिन (द) एक मुहूर्त्त

(iv) **ऐसी कौनसी कषाय है जिसमें नपुंसक वेद नहीं होता है?**

(अ) हास्य-रति (ब) संज्वलन लोभ
(स) प्रथम चौकड़ी (द) कोई नहीं

(v) **ऐसी कौनसी कषाय है जो एकेन्द्रिय जीवों के नहीं होती है?**

(अ) अरति-शोक (ब) पुरुषवेद
(स) नपुंसक वेद (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए -

(i) संज्वलन लोभ में कितने कुल पाये जाते हैं?

(ii) सबसे अधिक ज्ञानोपयोग कौनसी कषाय में पाये जाते हैं?

(iii) सबसे कम प्राण कषायवान जीवों के होते हैं या अकषायी के?

(iv) अरति कषाय में कम-से-कम कितनी संज्ञाएँ हो सकती हैं?

(v) ऐसा कौनसा सम्यक्त्व है जो अकषायी जीवों के होने पर भी भगवान के नहीं होता?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए -

(i) क्या कोई ऐसी कषाय है जहाँ सैनी-असैनी जीव नहीं होते हैं?

(ii) संज्वलन माया में ग्यारह योग होते हैं।

(iii) हास्य कषाय में नरक सम्बन्धी जातियाँ नहीं होती हैं।

(iv) अनन्तानुबन्धी कषाय में दो सम्यक्त्व होते हैं।

(v) यथाख्यात संयम संज्वलन कषाय में भी हो सकता है।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिए -

(i) हास्य कषाय में.................ध्यान.................वेद तथा.................दर्शन होते हैं।

(ii) अप्रत्याख्यानावरण कषाय में.................गति..............इन्द्रिय तथा.................योग होते हैं।

(iii) संज्वलन क्रोध में.................संयम..................ज्ञान नहीं होते हैं।

(iv) अनन्तानुबन्धी कषाय में कम-से-कम.............प्राण तथा..............संज्ञाएँ होती हैं।

(v) प्रत्याख्यानावरण कषाय में..............धर्म ध्यान तथा...............शुक्ल ध्यान नहीं होते हैं।

५. जोड़ी बनाइये -

	अ		ब
(i)	संज्वलन लोभ	-	पहला गुणस्थान
(ii)	अकषाय	-	दसवाँ गुणस्थान
(iii)	अनन्तानुबंधी	-	संयमासंयम
(iv)	प्रत्याख्यानावरण	-	आस्रव के ९ प्रत्यय
(v)	संज्वलन त्रिक	-	पहले से नवमें तक
(vi)	अप्रत्याख्यानावरण कषाय	-	यथाख्यात संयम
(vii)	क्रोध	-	चतुर्थ गुणस्थान
(viii)	क्षीणकषाय (१२ वाँ गुण.)	-	छठे से नवमें तक

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) द (iii) ब (iv) द (v) ब।

२. (i) १४ लाख करोड़ (ii) हास्यादि सात नोकषाय (iii) अकषायी (iv) तीन (v) उपशम-सम्यक्त्व।

३. (i) ना (ii) हाँ (iii) ना (iv) हाँ (v) ना।

४. (i) १३,३,३ (ii) ४, १३ (iii) ४,४ (iv) ३,४ (v) १, ४।

५. (i) दसवाँ गुणस्थान (ii) यथाख्यात (iii) पहला गुणस्थान (iv) संयमासंयम। (v) छठे से नवमें तक (vi) चतुर्थ गुणस्थान (vii) पहले से नवमें तक (viii) आस्रव के ९प्रत्यय ।

७. ज्ञान मार्गणा

१. प्रश्न : ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो जानता है वह ज्ञान है। जिसके द्वारा जाना जाता है वह ज्ञान है, जानना मात्र ज्ञान है। जिसके द्वारा जीव त्रिकाल विषयक भूत-भविष्यत्, वर्तमान काल सम्बन्धी समस्त द्रव्य और उनके गुण तथा उनकी अनेक प्रकार की पर्यायों को जाने उसको ज्ञान कहते हैं। **(गो.जी. २९९)**

२. प्रश्न : ज्ञान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : ज्ञान दो प्रकार का होता है -

(१) सम्यग्ज्ञान (२) मिथ्याज्ञान

(१) ज्ञान (२) अज्ञान

(१) ज्ञान (२) कुज्ञान

(१) प्रत्यक्षज्ञान (२) परोक्ष ज्ञान

३. प्रश्न : सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिस-जिस प्रकार से जीवादि पदार्थ अवस्थित हैं उस-उस प्रकार से उनको जानना सम्यग्ज्ञान है। **(सर्वा.)** नय और प्रमाण के विकल्प पूर्वक जीवादि पदार्थों का यथार्थ ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। **(रा.वा.)** जो ज्ञान वस्तु के स्वरूप को न्यूनता रहित तथा अधिकता रहित, विपरीतता रहित, जैसा का तैसा, सन्देह रहित जानता है उसको आगम के ज्ञाता पुरुष सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात्।
निःसंदेहं वेदयदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः (र.क.श्रा. ४२)॥

४. प्रश्न : मिथ्याज्ञान/कुज्ञान/अज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो वस्तु के स्वभाव को नहीं पहचानता है अथवा उल्टा पहिचानता है या निरपेक्ष पहिचानता है वह मिथ्याज्ञान है। **(न.च.वृ. २३८)**

५. प्रश्न : प्रत्यक्षज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : इन्द्रिय आदि की सहायता के बिना सिर्फ आत्मा से होने वाले ज्ञान को प्रत्यक्षज्ञान कहते हैं ''विशदं प्रत्यक्षं'' विशदज्ञान को प्रत्यक्ष कहते हैं **(प.मु.२/३)**

६. प्रश्न : कौन-कौन से ज्ञान प्रत्यक्ष हैं?

उत्तर : प्रत्यक्ष ज्ञान दो प्रकार के हैं - (१) देशप्रत्यक्ष - अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तथा विभंगावधि (२) सकलप्रत्यक्ष - केवलज्ञान **(बृ.द्र.सं.५)**

७. प्रश्न : परोक्षज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : पर की प्रधानता से होने वाला ज्ञान परोक्ष है। उपात्त-इन्द्रियाँ और मन, अनुपात्त - प्रकाश, उपदेश आदि पर हैं **(रा.वा. १/११)** जो अविशद ज्ञान है वह परोक्ष है। **(प.मु.)**

८. प्रश्न : कौन-कौन से ज्ञान परोक्ष हैं?

उत्तर : चार ज्ञान परोक्ष हैं - कुमति, कुश्रुत, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान। **(बृ.द्र.सं. ४५)**

९. प्रश्न : ज्ञान मार्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर : जो ज्ञान मिथ्यात्व एवं अनन्तानुबन्धी के सम्बन्ध से मिथ्यापने को प्राप्त होता है और इनके अभाव में सम्यक्पने को प्राप्त होता है, उन ज्ञानों में जीवों की खोज करना ज्ञान मार्गणा है।

१०.प्रश्न : ज्ञान मार्गणा कितने प्रकार की होती है?

उत्तर : ज्ञान मार्गणा आठ प्रकार की होती है -

(१) मत्यज्ञानी (२) श्रुत-अज्ञानी (३) विभंगज्ञानी (४) आभिनिबोधिकज्ञानी (५) श्रुतज्ञानी (६) अवधिज्ञानी (७) मन:पर्ययज्ञानी (८) केवलज्ञानी। **(ध.१/३५५)**

(१) कुमतिज्ञान (२) कुश्रुतज्ञान (३) कुअवधिज्ञान (४) मतिज्ञान (५) श्रुतज्ञान (६) अवधिज्ञान (७) मन:पर्ययज्ञान (८) केवलज्ञान।

११.प्रश्न : ज्ञान मार्गणा में अज्ञान (कुज्ञान) का ग्रहण कैसे हो सकता है?

उत्तर : नहीं, क्योंकि मिथ्यात्व सहित ज्ञान को ही ज्ञान का कार्य नहीं करने से अज्ञान कहा है। जैसे-पुत्रोचित कार्य को नहीं करने वाले पुत्र को ही अपुत्र कहा जाता है। अथवा जिस प्रकार आम्रवन के भीतर रहने वाले नीम के वृक्षों को आम्रवन यह संज्ञा प्राप्त हो जाती है, उसी प्रकार मिथ्यात्व आदि को सम्यक्त्व यह संज्ञा देना उचित ही है। **(ध.१/३५५,९७)**

तालिका संख्या ३२

कुमति कुश्रुत ज्ञान

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१३	४म. ४व. ५का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ कषा. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	१	स्वकीय	कुमति ज्ञान में कुमतिज्ञान
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु.अच.	अवधि तथा केवलदर्शन नहीं है
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	सासादन, मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	प्रथम, द्वितीय	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर ५ त्रस	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५इ. ३ब. श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	३	१ ज्ञानो. २ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४आ. ४रौ.	धर्म तथा शुक्ल ध्यान नहीं होते हैं।
२२.	आस्रव	५५	५मि.१२अवि.२५क.१३यो.	
२३.	जाति	८४ लाख	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९$\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : मति अज्ञान (कुमति ज्ञान) किसे कहते हैं?

उत्तर : परोपदेश के बिना जो विष, यंत्र,कूट, पंजर तथा बन्ध आदि के विषय में बुद्धि प्रवृत्त होती है उसको ज्ञानी जीव मत्यज्ञान कहते हैं। **(गो.जी. ३०३)**

विष - जिसको खाने से जीव मर जाये, उस द्रव्य को विष कहते हैं।

यंत्र - भीतर पैर रखते ही जिसके किवाड़ बन्द हो जायें और जिसके भीतर बकरी आदि को बाँध कर पकड़ा जाता है उसको यंत्र कहते हैं।

कूट - जिससे चूहे आदि पकड़े जाते हैं उसे कूट कहते हैं।

पंजर - रस्सी में गाँठ लगाकर जो जाल बनाया जाता है, उसे पंजर कहते हैं।

बन्ध - हाथी आदि को पकड़ने के लिए जो गड्ढे आदि बनाये जाते हैं, उनको बन्ध कहते हैं। **(गो.जी. ३०३)**

२. प्रश्न : **कुश्रुत ज्ञान किसे कहते हैं?**

उत्तर : चौर शास्त्र तथा हिंसा शास्त्र आदि के परमार्थ शून्य अतएव अनादरणीय उपदेशों को कुश्रुतज्ञान कहते हैं। आदि शब्द से हिंसादि पाप कर्मों के विधायक तथा असमीचीन तत्त्व के प्रतिपादक ग्रन्थों को कुश्रुत और उनके ज्ञान को कुश्रुतज्ञान समझना चाहिए। **(गो.जी. ३०४)**

३. प्रश्न : **कुमति आदि ज्ञानों को अज्ञान क्यों कहा है?**

उत्तर : मति, श्रुत और अवधिज्ञान, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी का उदय होने पर अज्ञान हो जाते हैं। **(गो.जी. ३०१)**

तत्त्वार्थ में रुचि, निश्चय, श्रद्धा और चारित्र का धारण करना ज्ञान का कार्य है, यह कार्य मिथ्यादृष्टि जीव में नहीं पाया जाता है, इसलिए उसके ज्ञान को अज्ञान कहा है।

रुचि - इच्छा प्रकट करना।

निश्चय - स्वरूप का निर्णय करना।

श्रद्धा - निर्णय से चलायमान न होना।

४. प्रश्न : **क्या कोई ऐसा कुश्रुतज्ञानी है जिसके चक्षुदर्शन नहीं होता है?**

उत्तर : हाँ, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय जीवों के कुश्रुतज्ञान होता है लेकिन चक्षुदर्शन नहीं होता है। यद्यपि तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान में भी चक्षुदर्शन नहीं होता है परन्तु उनके कुश्रुतज्ञान नहीं होता है।

५. प्रश्न : **कुश्रुतज्ञानी त्रस जीवों के कितने प्राण होते हैं?**

उत्तर : कुश्रुतज्ञानी त्रस जीवों के कम से कम चार प्राण होते हैं।

२ इन्द्रिय, १ बल, १ आयु

ये चार प्राण द्वीन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अथवा लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था में होते

हैं। तथा अधिक-से-अधिक १० प्राण होते हैं–

५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वासो, आयु

ये दस प्राण सैनी पंचेन्द्रिय जीवों के होते हैं।

६. प्रश्न : कुमतिज्ञानी पुरुषवेदी के कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?

उत्तर : कुमतिज्ञानी पुरुषवेदी के कम-से-कम ५ पर्याप्तियाँ होती हैं –

आ., श., इ., श्वासो. तथा भाषा।

ये पाँच पर्याप्तियाँ असैनी पंचेन्द्रिय (गर्भज) के होती हैं तथा अधिक से अधिक ६ पर्याप्तियाँ होती हैं। ६ पर्याप्तियाँ सैनी पंचेन्द्रिय जीवों के होती हैं।

७. प्रश्न : क्या कुमतिज्ञानी मुनि के भी अविरति सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : हाँ, कुमतिज्ञानी मुनि के भी अविरति सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय होते ही हैं क्योंकि बाह्य में अहिंसा आदि का पालन करने से अविरति सम्बन्धी आस्रव नहीं रुकता है। अविरति सम्बन्धी आस्रव को रोकने के लिए तीन चौकड़ी कषाय के उदय का अभाव होना आवश्यक है। त्रस सम्बन्धी अविरति से बचने के लिए भी दो चौकड़ी कषाय का उदयाभाव होना ही चाहिए। कुमतिज्ञानी मुनि के दोनों ही अविरतियों का अभाव नहीं होता इसलिए अविरति सम्बन्धी आस्रवों का भी अभाव नहीं हो सकता है।

८. प्रश्न : कुमतिज्ञानी जीव के २४ स्थानों में से किस-किस स्थान के सभी भेद हो सकते हैं?

उत्तर : कुमतिज्ञानी जीवों के २४ स्थानों में से १५ स्थानों के सभी भेद हो सकते हैं -

(१) गति (२) इन्द्रिय (३) काय (४) वेद (५) कषाय (६) लेश्या (७) भव्य (८) संज्ञी (९) आहारक (१०) जीवसमास (११) पर्याप्ति (१२) प्राण (१३) संज्ञा (१४) जाति (१५) कुल।

तालिका संख्या ३३

कुअवधि ज्ञान

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१०	४म. ४व. २ का.	औदारिक व वैक्रियिक काय योग होता है।
५.	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क.९ नोकषाय	
७.	ज्ञान	१	स्वकीय	कुअवधिज्ञान
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु.अचक्षु.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	सासादन, मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	असैनी जीव नहीं है
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५इन्द्रिय ३ब.श्वा.आयु.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०.	उपयोग	३	१ज्ञानो.२दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४आ. ४रौ.	
२२.	आस्रव	५२	५मि. १२अवि. २५क. १०यो.	
२३.	जाति	२६ला.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : कुअवधिज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि जीव के अवधि ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न हुआ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा को लिये हुए रूपी द्रव्य को विषय करने वाला किन्तु देव-शास्त्र और

पदार्थों में विपरीत रूप से ग्रहण करने वाला अवधिज्ञान केवलज्ञानियों के द्वारा प्रतिपादित आगम में विभंग कहा जाता है। 'वि' अर्थात् विशिष्ट अवधिज्ञान का भंग अर्थात् विपर्यय विभंग है, यह निरुक्ति सिद्ध अर्थ भी है। **(गो.जी.जी. ३०५)** अवधिज्ञानावरण तथा वीर्यान्तराय कर्मों के क्षयोपशम से द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादायुक्त मिथ्यादृष्टि जीवों के ज्ञान को विभंगावधि ज्ञान कहते हैं। यही कुअवधिज्ञान है।

२. प्रश्न : अवधिज्ञान उल्टा क्यों होता है ?

उत्तर : अवधिज्ञान विभंग या उल्टा इसलिए होता है कि इसके द्वारा जाना गया रूपी पदार्थों का स्वरूप सच्चे देव, गुरु और आगम के विपरीत होता है। तीव्र कायक्लेश के निमित्त से उत्पन्न होने से तिर्यञ्च और मनुष्यों में गुणप्रत्यय व देवनारकियों में भवप्रत्यय होता है।

३. प्रश्न : जीव को पहले विभंगावधि ज्ञान होता है या अवधिज्ञान ?

उत्तर : यदि सम्यग्दृष्टि को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है तो पहले अवधिज्ञान होता है और यदि उसके मिथ्यात्व का उदय आ जावे तो वही अवधिज्ञान विभंगावधि में परिवर्तित हो जाता है। यदि मिथ्यादृष्टि को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है तो विभंगावधि ज्ञान उत्पन्न होता है, उसको यदि सम्यग्दर्शन प्राप्त हो जावे तो वही विभंगावधि अवधिज्ञान में बदल जाता है।

विभंगज्ञानियों के सम्यक्त्व आदि के फलस्वरूप अवधिज्ञान के उत्पन्न होने पर गिरगिट आदि अशुभ आकार मिट कर नाभि के ऊपर शंख आदि शुभ आकार हो जाते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार अवधिज्ञान से लौट कर प्राप्त हुए विभंगज्ञानियों के भी शुभ संस्थान मिट कर अशुभ संस्थान हो जाते हैं, ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। **(ध. १३/२९८)**

४. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि के दोनों (कुमति-कुश्रुत) भले ही अज्ञान होवें, क्योंकि वहाँ मिथ्यात्व का उदय पाया जाता है लेकिन सासादन गुणस्थान में मिथ्यात्व का उदय नहीं है इसलिए वहाँ ये अज्ञान नहीं होने चाहिए?

उत्तर : नहीं, क्योंकि विपरीताभिनिवेश को मिथ्यात्व कहते हैं और वह मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी इन दोनों के निमित्त से उत्पन्न होता है। सासादन गुणस्थान में वह पाया ही जाता है इसलिए सासादन गुणस्थान में भी वे दोनों अज्ञान सम्भव हैं। (इसी प्रकार विभंगावधि को भी जानना चाहिए) मिथ्यात्व का उदय नहीं होने पर भी अनन्तानुबन्धी कषाय का उदय होने से तीनों ज्ञान अज्ञान रूप ही होते हैं। **(रा.वा. ९/१)**

५. प्रश्न : विपरीताभिनिवेश (विपर्यय) किसे कहते हैं?

उत्तर : विपर्यय शब्द का अर्थ मिथ्या है। वह विपर्यय तीन प्रकार का है -

(१) संशय (२) विपर्यय (३) अनध्यवसाय।

संशय - विपरीत अनेक पक्षों के अवगाहन करने वाले ज्ञान को संशय कहते हैं, जैसे- स्थाणु है या पुरुष।

विपर्यय - विपरीत एक पक्ष का निश्चय करने वाला ज्ञान विपर्यय है जैसे-सीप में यह चाँदी है। इस प्रकार का ज्ञान होना।

अनध्यवसाय - ''यह क्या है'' इस प्रकार जो आलोचन मात्र होता है उसको अनध्यवसाय कहते हैं। **(न्या.दी.१/९)**

६. प्रश्न : कुअवधिज्ञान में कौन-कौन से योग नहीं होते हैं ?

उत्तर : कुअवधिज्ञान में ५ योग नहीं होते हैं–

औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, आहारकद्विक तथा कार्मण काययोग।

७. प्रश्न : अनाहारक अवस्था में कुअवधिज्ञान क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : कुअवधिज्ञान पर्याप्तकों के ही होता है, अपर्याप्तकों के नहीं होता है। **(ध. १/३६३)** असंज्ञी और अपर्याप्तकों के यह सामर्थ्य नहीं है। **(सर्वा. १/२२)** इसलिए अनाहारक अवस्था में कुअवधिज्ञान नहीं होता है।

८. प्रश्न : क्या विभंगावधि ज्ञान में भी छहों लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : हाँ, विभंगावधि ज्ञानी के भी छहों लेश्याएँ होती हैं –

- नारकियों की अपेक्षा – तीन अशुभ लेश्याएँ।
- देवों की अपेक्षा – तीन शुभ लेश्याएँ।
- भोगभूमिया जीवों की अपेक्षा – तीन शुभ लेश्याएँ।
- कर्मभूमिया मनुष्य तिर्यंच की अपेक्षा – छहों लेश्याएँ।

९. प्रश्न : कुअवधिज्ञानी जीव के २४ स्थानों में से किस-किस स्थान के सभी भेद नहीं हो सकते हैं ?

उत्तर : कुअवधिज्ञानी जीव के २४ स्थानों में से १६ स्थान के सभी भेद नहीं पाये जाते हैं -

(१) इन्द्रिय (२) काय (३) योग (४) ज्ञान (५) संयम (६) दर्शन (७) सम्यक्त्व (८) संज्ञी (९) आहारक (१०) गुणस्थान (११) जीवसमास (१२) उपयोग (१३) ध्यान (१४) आस्रव के प्रत्यय (१५) जाति (१६) कुल।

तालिका संख्या ३४

मति श्रुत अवधिज्ञान

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	४	न.ति.म.दे.	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	एकेन्द्रिय आदि चार इन्द्रिय नहीं हैं।
३	काय	१	त्रस	
४	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५	वेद	३	स्त्री.पु.नपु.	
६	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	
७	ज्ञान	१	स्वकीय	मतिज्ञान में मतिज्ञान········
८	संयम	७	सा.छे.प.सू.य.संय.असं.	
९	दर्शन	३	च.अच.अव.	केवलदर्शन नहीं है
१०	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११	भव्यत्व	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षयो.उप.	मिथ्यात्व, सासादन और सम्यग्मिथ्यात्व नहीं हैं।
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५	गुणस्थान	९	चौथे से बारहवें तक	
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल. श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ.भ.मै.प.	
२०	उपयोग	४	१ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	१४	४आ. ४रौ. ४ध. २शुक्ल	सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती तथा व्युपरतक्रिया निवृत्ति ध्यान नहीं हैं।
२२	आस्रव	४८	१२अ. २१क. १५यो.	
२३	जाति	२६ लाख	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : मतिज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : इन्द्रिय और मन के निमित्त से शब्द, रस, स्पर्श, रूप और गन्ध आदि विषयों में अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा रूप ज्ञान होता है वह मतिज्ञान है। **(ज.ध. १/४२)**

मतिज्ञानावरण एवं वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से तथा बहिरंग पाँच इन्द्रिय और मन की सहायता से मूर्त्त-अमूर्त्त वस्तुओं का जो एकदेश से, विकल्पाकार परोक्ष रूप से अथवा सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष ज्ञान होता है वह मतिज्ञान है। **(वृ.द्र.सं.टी. ५)**

२. प्रश्न : मतिज्ञान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : मतिज्ञान ४ प्रकार का होता है - अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा। **अथवा**

मतिज्ञान ३३६ प्रकार का होता है -

अवग्रह के १२० (७२ अर्थावग्रह + ४८ व्यञ्जनावग्रह)

ईहा ७२, अवाय ७२, धारणा ७२ यानी

१२० + ७२ + ७२ + ७२ = ३३६।

अवग्रह - पाँच इन्द्रिय तथा मन की सहायता से दर्शन के पश्चात् जो सामान्य अवलोकन होता है, वह अवग्रह है।

ईहा - अवग्रह से जाने हुए पदार्थ में विशेष जानने की इच्छा को ईहा कहते हैं।

अवाय - पदार्थों का निर्णय करना अवाय है।

धारणा - निर्णीत पदार्थ को भविष्य में नहीं भूलना धारणा है। **(त.सू.१/१५-१९)**

नोट - विशेष तत्त्वार्थसूत्र की टीकाओं में देखें।

३. प्रश्न : श्रुतज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो परोक्ष रूप से सम्पूर्ण वस्तुओं को अनेकान्त रूप दर्शाता है, संशय, विपर्यय आदि से रहित है, उस ज्ञान को **श्रुतज्ञान** कहते हैं। **(का.अ. २६२)**

श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से नोइन्द्रिय के अवलम्बन से तथा प्रकाश, उपाध्याय आदि बहिरंग सहकारी कारण से जो मूर्त्तिक-अमूर्त्तिक वस्तु को, लोक तथा अलोक को व्याप्ति ज्ञान रूप से अस्पष्ट जानता है, उसको **श्रुतज्ञान** कहते हैं। **(वृ.द्र.सं.टी. ५)**

४. प्रश्न : श्रुतज्ञान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : श्रुतज्ञान दो प्रकार का होता है- १. अंगबाह्य २. अंगप्रविष्ट। अंगबाह्य श्रुतज्ञान अनेक प्रकार का है तथा अंगप्रविष्ट आचारांग आदि के भेद से १२ प्रकार का होता है। **(त.सू.१/२०)**

५. प्रश्न : अवधिज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से जो मूर्त्त पदार्थों को एकदेशप्रत्यक्ष जानता है वह अवधिज्ञान है। **(वृ.द्र.सं.टी. ५)**

जो प्रत्यक्ष ज्ञान अन्तिम स्कन्ध पर्यन्त परमाणु आदि मूर्त्त द्रव्यों को जानता है उसको अवधिज्ञान जानना चाहिए। **(ति.प. ४/९८१)** द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके विकल्प से अनेक प्रकार के पुद्‌गल द्रव्य को जो प्रत्यक्ष जानता है, उसे अवधिज्ञान कहते हैं। **(ध.१/९३)**

६. प्रश्न : अवधिज्ञान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : अवधिज्ञान दो प्रकार का है - (१) भवप्रत्यय अवधिज्ञान (२) गुणप्रत्यय / क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान।

अथवा अवधिज्ञान के तीन भेद हैं - (१) देशावधि (२) परमावधि (३) सर्वावधि

भवप्रत्यय अवधिज्ञान देव-नारकियों के होता है। गुणप्रत्यय अवधिज्ञान मनुष्य - तिर्यञ्चों के होता है।

गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के छह भेद हैं -

(१) अनुगामी (२) अननुगामी (३) वर्धमान (४) हीयमान (५) अवस्थित (६) अनवस्थित। **(त.सू. १/२१-२२)**

७. प्रश्न : मतिश्रुत ज्ञान में योगमार्गणा किस प्रकार लगानी चाहिए ?

उत्तर : मतिश्रुत ज्ञान में योगमार्गणा : मति श्रुत ज्ञानियों के सामान्य से पन्द्रह योग होते हैं। चतुर्थ गुणस्थानवर्ती मतिश्रुतज्ञानी के १३ योग होते हैं। पंचम गुणस्थानवर्ती मतिश्रुतज्ञानी के ९ योग होते हैं। छठे गुणस्थानवर्ती मतिश्रुतज्ञानी के ११ योग होते हैं और सातवें गुणस्थान से बारहवें गुणस्थानवर्ती मतिश्रुतज्ञानी के ९ योग होते हैं।

८. प्रश्न : क्या सभी त्रस जीवों के मति आदि ज्ञान होते हैं?

उत्तर : नहीं, केवल संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्यग्दृष्टि त्रस जीवों के ही मति श्रुतादि ज्ञान होते हैं अन्य द्वीन्द्रिय आदि त्रस जीवों के नहीं, क्योंकि उनको सम्यग्दर्शन नहीं हो सकता है। विशिष्ट सम्यक्त्व ही अवधिज्ञान की उत्पत्ति का कारण है। इसलिए सभी सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च और मनुष्यों में अवधिज्ञान नहीं होता है। **(ध.सत् प्र. १२० सू.)**

९. प्रश्न : मति-श्रुत ज्ञानी जीवों के सामायिक संयम कहाँ-कहाँ नहीं पाया जाता है?

उत्तर : मति-श्रुत ज्ञानी जीवों के ५ गुणस्थानों में सामायिक संयम नहीं पाया जाता है - चौथा, पाँचवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ, बारहवाँ।

१०.प्रश्न : क्या ऐसे कोई मति-श्रुत ज्ञानी हैं जिनके कापोत लेश्या ही पाई जाती है?

उत्तर : हाँ, ऐसे मति-श्रुत ज्ञानी जीव भी हैं जिनके कापोत लेश्या ही पाई जाती है -

(१) प्रथम एवं दूसरे नरक के मति-श्रुतज्ञानी नारकियों के तथा तीसरे नरक में जहाँ तक कापोत लेश्या पाई जाती है।

(२) तीसरे नरक में स्थित तीर्थंकर प्रकृति वाले मति-श्रुत ज्ञानी जीवों के।

(३) मतिश्रुत ज्ञानी (कृतकृत्यवेदक तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टि) मनुष्य जब भोगभूमि में जाते हैं तब उनकी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

११.प्रश्न : क्या ऐसे कोई अवधिज्ञानी जीव हैं जिनके कृष्ण लेश्या भी पाई जाती है?

उत्तर : हाँ, ऐसे अवधिज्ञानी जीव भी हैं जिनके कृष्ण लेश्या भी पाई जाती है -

(१) पाँचवें नरक के अवधिज्ञानी जीव।

(२) कर्म-भूमिया तिर्यञ्च-मनुष्य।

(३) जो आचार्य छठे गुणस्थान तक छहों लेश्याएँ मानते हैं उनकी अपेक्षा चौथे, पाँचवें गुणस्थानवर्ती अवधिज्ञानी तिर्यञ्च-मनुष्य तथा छठे गुणस्थानवर्ती अवधिज्ञानी मनुष्यों के भी कृष्ण लेश्या हो सकती है।

१२.प्रश्न : अवधिज्ञानी जीवों के कौन-कौन सा सम्यक्त्व कहाँ-कहाँ पाया जाता है?

उत्तर : अवधिज्ञानी जीवों के - १. क्षायिक सम्यक्त्व - चौथे से बारहवें तक

२. क्षायोपशमिक सम्यक्त्व - चौथे से सातवें तक

३. उपशम सम्यक्त्व - चौथे गुणस्थान से ११ वें तक।

सम्यक्त्व - मार्गणा के शेष मिथ्यात्वादि भेद अवधिज्ञानी जीवों के नहीं होते हैं।

१३.प्रश्न : क्या कोई ऐसे अवधिज्ञानी जीव हैं जिनके अनाहारक अवस्था नहीं होती?

उत्तर : हाँ, ऐसे अवधिज्ञानी जीव भी हैं जिनके अनाहारक अवस्था नहीं होती है -

(१) तद्भव मोक्षगामी जीवों के।

(२) सर्वावधि ज्ञानी एवं परमावधि ज्ञानी मुनिराज के।

(३) क्षपक श्रेणी में स्थित अवधिज्ञानी जीवों के।

(४) प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाले अवधिज्ञानी जीवों के।

नोट - यद्यपि तद्भव मोक्षगामी जीवों के अनाहारक अवस्था होती है लेकिन अवधिज्ञान के साथ नहीं होती, केवलज्ञान के साथ होती है।

१४.प्रश्न : क्या मति-श्रुत ज्ञानी जीवों के परिग्रह संज्ञा का भी अभाव हो सकता है?

उत्तर : हाँ, मति-श्रुत ज्ञानी जीव भी जब दसवें गुणस्थान को पार करके ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान में पहुँच जाता है, तब उसके परिग्रह संज्ञा का भी अभाव हो जाता है।

१५.प्रश्न : मति-श्रुत ज्ञानी जीव के कौन-कौन सी जातियाँ नहीं होती हैं -

उत्तर : मति श्रुतज्ञानी जीव के अट्ठावन लाख जातियाँ नहीं होती हैं -

नित्य निगोद की ७ लाख	वायुकायिक की ७ लाख
इतर निगोद की ७ लाख	वनस्पतिकायिक की १० लाख
पृथ्वीकायिक की ७ लाख	द्वीन्द्रिय की २ लाख
जलकायिक की ७ लाख	त्रीन्द्रिय की २ लाख
अग्निकायिक की ७ लाख	चतुरिन्द्रिय की २ लाख = ५८ लाख

१६.प्रश्न : विभंगावधि ज्ञान के समान निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अवधिज्ञान का निषेध क्यों नहीं किया है?

उत्तर : नहीं, क्योंकि उत्पत्ति की अपेक्षा तो अपर्याप्तावस्था में अवधिज्ञान का भी विभंगज्ञान के समान ही निषेध देखा जाता है। सम्यग्दृष्टियों के उत्पन्न होते ही प्रथम समय से ही अवधिज्ञान होता है, ऐसा नहीं है; क्योंकि ऐसा मानने पर विभंगज्ञान के भी उसी प्रकार की उत्पत्ति का प्रसंग आता है; पर इसका अर्थ यह भी नहीं है कि देव और नारकियों के अपर्याप्तावस्था में अवधिज्ञान का अत्यन्त अभाव है; क्योंकि तिर्यञ्चों और मनुष्यों में सम्यक्त्व गुण के निमित्त से उत्पन्न हुआ अवधिज्ञान देवों और नारकियों के अपर्याप्त अवस्था में भी पाया जाता है। विभंगज्ञान में भी यह क्रम लागू हो जायेगा, यह कहना ठीक नहीं है; क्योंकि अवधिज्ञान के कारणभूत अनुकम्पा आदि का अभाव होने से अपर्याप्त अवस्था में वहाँ उसका अवस्थान नहीं रहता है। **(ध. १३/२९१)**

तालिका संख्या ३५

मन:पर्यय ज्ञान

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	१	मनुष्यगति	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३	काय	१	त्रस	
४	योग	९	४म. ४व. १का.	औदारिक काययोग है।
५	वेद	१	पुरुष वेद	
६	कषाय	११	४ कषाय ७ नोक.	
७	ज्ञान	१	स्वकीय	मन: पर्ययज्ञान
८	संयम	४	सा.छे.सू.य.	परिहारविशुद्धि संयमा. तथा असंयम नहीं हैं।
९	दर्शन	३	च.अच.अव.	
१०	लेश्या	३	पी.प.शु.	
११	भव्य	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	२	क्षा.क्षायो.	उपशम तथा मिथ्यात्वादि तीन सम्यक्त्व नहीं हैं।
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहार	१	आहारक	अनाहारक नहीं है
१५	गुणस्थान	७	छठे से बारहवें तक	
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल.श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०	उपयोग	४	१ ज्ञानो. ३ दर्श.	मन:पर्ययज्ञानोपयोग है।
२१	ध्यान	९	३ आ. ४ ध. २ शुक्ल.	निदान आर्त्तध्यान नहीं है।
२२	आस्रव	२०	११ क. ९योग	
२३	जाति	१४ ला.	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : मन:पर्ययज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से दूसरों के मनोगत पदार्थ को एकदेश प्रत्यक्ष जानता है वह मन:पर्यय ज्ञान है। **(रा.वा. ४)**

चिन्ता, अचिन्ता और अर्धचिन्ता के विषयभूत अनेक भेदरूप पदार्थ को जो ज्ञान नरलोक के भीतर जानता है, वह मन:पर्यय ज्ञान है। **(ति.प. ४/९७३)**

२. प्रश्न : **मन:पर्यय ज्ञान कितने प्रकार का होता है?**

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञान दो प्रकार का होता है -

(१) ऋजुमति मन:पर्यय ज्ञान (२) विपुलमति मन:पर्यय ज्ञान

ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान : ऋजु का अर्थ निर्वर्तित (निष्पन्न) और प्रगुण (सीधा) है। दूसरे के मन को प्राप्त वचन, काय और मनकृत अर्थ के विज्ञान से निर्वर्तित या ऋजु जिसकी मति है वह ऋजुमति कहलाता है। **(सर्वा. १/२३)**

विपुलमति मन:पर्ययज्ञान : अपने और पर के व्यक्त मन से या अव्यक्त मनसे चिन्तित या अचिन्तित (या अर्धचिन्तित) सभी प्रकार के चिन्ता, जीवन-मरण, सुख-दु:ख, लाभ-अलाभ आदि को जानता है, वह विपुलमति मन:पर्ययज्ञान कहलाता है। **(रा.वा. १/२३)**

३. प्रश्न : **ऋजुमति एवं विपुलमति मन:पर्यय ज्ञान में क्या विशेषता है ?**

उत्तर : ऋजुमति एवं विपुलमति मन:पर्ययज्ञान में विशुद्धि एवं अप्रतिपात की अपेक्षा विशेषता है–

विशुद्धि : ऋजुमति से विपुलमति मन:पर्ययज्ञान द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा विशुद्धतर है।

अप्रतिपात : अप्रतिपात की अपेक्षा भी विपुलमति मन:पर्ययज्ञान विशिष्ट है, क्योंकि इसके स्वामियों के प्रवर्धमान चारित्र पाया जाता है परन्तु ऋजुमति प्रतिपाती है, क्योंकि इसके स्वामियों के कषाय के उदय से घटता हुआ चारित्र पाया जाता है। **(त.सू. १/२४)**

४. प्रश्न : **मन:पर्ययज्ञान किसको होता है?**

उत्तर : मन:पर्ययज्ञान मनुष्यों में ही होता है देव, नारक व तिर्यञ्च योनि में नहीं। मनुष्यों में भी गर्भजों में ही होता है, सम्मूर्च्छिमों में नहीं। गर्भजों में भी कर्मभूमिजों के ही होता है, अकर्मभूमिजों में नहीं। कर्मभूमिजों में भी पर्याप्तकों के ही होता है अपर्याप्तकों के नहीं। उनमें भी सम्यग्दृष्टियों के होता है मिथ्यात्व-सासादन व सम्यग्मिथ्यादृष्टियों में नहीं। उनमें भी संयतों के ही होता है असंयतों तथा संयतासंयतों के नहीं। संयतों में भी प्रमत्त से लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तक ही होता है उससे ऊपर नहीं। उनमें भी प्रवर्द्धमान चारित्रवालों को ही होता है हीयमान चारित्रवालों को नहीं। उनमें भी सात ऋद्धियों में से अन्यतम ऋद्धि को प्राप्त होने वाले के ही होता है अन्य के नहीं। ऋद्धिप्राप्तों में भी किन्हीं के ही होता है, सबको नहीं। **(रा.वा. १/२३)**

मन:पर्ययज्ञान प्रमाद से रहित अप्रमत्त मुनि के ही उत्पन्न होता है। यहाँ अप्रमत्तपने का नियम उत्पत्ति काल में ही है, पीछे प्रमत्त अवस्था में भी सम्भव है।**(पं.का.ता.४ ३-४)**

५. प्रश्न : **मन:पर्ययज्ञानी के अवेद अवस्था में कितने संयम होते हैं?**

उत्तर : मन:पर्ययज्ञानी की अवेद अवस्था में भी चार संयम होते हैं -

नवम गुणस्थान की अपेक्षा - सामायिक-छेदोपस्थापना।

दशम गुणस्थान की अपेक्षा - सूक्ष्म साम्पराय।

ग्यारहवें-बारहवें की अपेक्षा - यथाख्यात।

६. प्रश्न : **मन:पर्ययज्ञानी के अरति-शोक कषाय के साथ कितने गुणस्थान होते हैं?**

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञानी के अरति-शोक कषाय के साथ तीन गुणस्थान होते हैं -

छठा, सातवाँ, आठवाँ।

७. प्रश्न : **मन:पर्यय ज्ञान में कषायों की विवेचना कैसे करनी चाहिए ?**

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञान में कषायों की विवेचना –

- ११ कषाय रूप ५,४,३,२,१ तथा ० कषायरूप स्थान होते हैं।
- ११ कषाय–छठे से आठवें गुणस्थान तक–संज्वलन चतुष्क तथा स्त्रीवेद-नपुंसक वेद बिना सात नोकषाय।
- ५ कषाय – नौवें गुणस्थान में – संज्वलन चतुष्क एवं पुरुषवेद।
- ४ कषाय – नौवें गुणस्थान में – संज्वलन चतुष्क।
- ३ कषाय – नौवें गुणस्थान में – संज्वलन मान, माया, लोभ।
- २ कषाय – नौवें गुणस्थान में – संज्लवन माया और लोभ।
- १ कषाय – नौवें तथा दसवें गुणस्थान में – संज्वलन लोभ, नौवें में जब केवल बादर लोभ शेष रहता है।
- ० कषाय – ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान में।

८. प्रश्न : **मन:पर्ययज्ञानी के कौन से सम्यक्त्व में सबसे कम गुणस्थान होते हैं?**

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञानी के क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में केवल दो गुणस्थान होते हैं -

छठा, सातवाँ।

९. प्रश्न : **मन:पर्ययज्ञानी के छठा गुणस्थान है तो उसके कम-से-कम ७ प्राण क्यों नहीं हो सकते?**

उत्तर : मन:पर्यय ज्ञानी को छठा गुणस्थान होने पर भी आहारकऋद्धि प्राप्त नहीं हो सकती है क्योंकि मन:पर्यय ज्ञान के साथ आहारक योग का निषेध है इसलिए उनके कम-से-कम ७ प्राण नहीं हो सकते हैं। छठे गुणस्थान में ७ प्राण मात्र आहारकमिश्र काययोग की अपेक्षा ही होते हैं।

१०. प्रश्न : ऋजुमति मन:पर्ययज्ञानी के कितनी संज्ञा का अभाव हो सकता है?

उत्तर : ऋजुमति मन:पर्ययज्ञानी जीवों के चारों संज्ञाओं का अभाव हो सकता है।

७ वें गुणस्थान से आहार संज्ञा का।

९ वें गुणस्थान से भय संज्ञा का।

९ वें गुणस्थान के अवेद भाग से मैथुन संज्ञा का तथा

ग्यारहवें - बारहवें गुणस्थान में परिग्रह संज्ञा का भी अभाव हो सकता है।

११. प्रश्न : क्या विपुलमति मन:पर्ययज्ञानी के भी आर्त्तध्यान हो सकते हैं?

उत्तर : हाँ, विपुलमति मन:पर्ययज्ञानी जीवों के भी आर्त्तध्यान हो सकते हैं क्योंकि छठे गुणस्थान में भी विपुलमतिमन:पर्ययज्ञान पाया जाता है। जैसे - भगवान महावीर स्वामी के मोक्ष जाने पर गौतमस्वामी को इष्ट वियोगज आर्त्तध्यान होना सम्भव है। लेकिन मन:पर्ययज्ञानी के निदान नाम का आर्त्तध्यान नहीं हो सकता है।

नोट - मुनिराज के आर्त्तध्यान कदाचित् ही होते हैं और क्षण मात्र के लिए ही हो सकते हैं।

१२. प्रश्न : मन:पर्ययज्ञानी जीव के सामायिक संयम के साथ कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : मन:पर्ययज्ञानी सामायिक संयम वाले के कम-से-कम दस आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

१ कषाय (संज्वलन लोभ) ९ योग (४ म. ४ व-१ औदारिक काययोग)

नवमें गुणस्थान में जब संज्वलन क्रोध, मान, माया का उपशम या क्षय हो जाता है उस समय सामायिक संयम के साथ आस्रव के दस प्रत्यय होते हैं।

तालिका संख्या ३६

केवलज्ञान

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	१	मनुष्य गति	गति से रहित जीव भी होते हैं।
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	इन्द्रिय से रहित जीव भी होते हैं।
३	काय	१	त्रस	कायातीत जीव भी होते हैं।
४	योग	७	२म. २व. ३का.	औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग
५	वेद	०	—	
६	कषाय	०	—	
७	ज्ञान	१	केवलज्ञान	
८	संयम	१	यथाख्यात	संयम से रहित जीव भी होते हैं।
९	दर्शन	१	केवलदर्शन	
१०	लेश्या	१	शुक्ल लेश्या	लेश्यातीत जीव भी होते हैं।
११	भव्यत्व	१	भव्य	भव्याभव्य से रहित भी होते हैं।
१२	सम्यक्त्व	१	क्षायिक सम्यक्त्व	
१३	संज्ञी	०	—	सैनी-असैनी से रहित ही होते हैं।
१४	आहारक	२	आहारक, अनाहारक	
१५	गुणस्थान	२	तेरहवाँ, चौदहवाँ	गुणस्थानातीत भी होते हैं।
१६	जीवसमास	१	पंचेन्द्रिय	समासातीत जीव भी होते हैं।
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	पर्याप्ति से रहित भी होते हैं।
१८	प्राण	४	वचन बल, कायबल, श्वा.आ.	प्राणातीत जीव भी होते हैं।
१९	संज्ञा	०	—	संज्ञातीत जीव ही होते हैं।
२०	उपयोग	२	केवलज्ञानो; केवलदर्शनो.	
२१	ध्यान	२	शुक्ल ध्यान	सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती, व्युपरतक्रियानिवृति।
२२	आस्रव	७	योग	२म. २व. ३का.।
२३	जाति	१४ ला.	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : केवलज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर : ज्ञानावरणीय कर्म के अत्यन्त क्षय होने से जो तीन लोक, तीन काल की सम्पूर्ण द्रव्य-गुण पर्यायों को एक साथ प्रत्यक्ष रूप से जानता है उसे केवलज्ञान कहते हैं।

केवल असहाय को कहते हैं। जो ज्ञान असहाय है, इन्द्रिय और आलोक की अपेक्षा रहित है, त्रिकाल गोचर अनन्त पर्याय समवाय सम्बन्ध को प्राप्त अनन्त वस्तुओं को जानने वाला है, असंकुटित (सर्व व्यापक) है और असपत्न (प्रतिपक्ष रहित) है उसे केवलज्ञान कहते हैं। **(ध. ६/२९)**

केवलज्ञान आत्मा और अर्थ से अतिरिक्त इन्द्रियादिक सहायक की अपेक्षा रहित है इसलिए भी वह केवल असहाय है। इस प्रकार केवल, असहाय जो ज्ञान है उसे केवलज्ञान कहते हैं। **(ज.ध. १/२३)**

१. प्रश्न : भावेन्द्रिय के अभाव में केवलज्ञानी पंचेन्द्रिय कैसे हो सकते हैं?

उत्तर : आगम में सयोगी और अयोगी केवली के पंचेन्द्रियत्व कहा है वहाँ द्रव्येन्द्रियों की विवक्षा है, ज्ञानावरण के क्षयोपशम रूप भावेन्द्रिय की नहीं। यदि भावेन्द्रिय की विवक्षा होती तो ज्ञानावरण का सद्भाव होने से सर्वज्ञता ही नहीं हो सकती है। **(रा.वा. १/३०)**

केवलियों के यद्यपि भावेन्द्रिय समूल नष्ट हो गयी है और बाह्य इन्द्रियों का व्यापार भी बन्द हो गया है तो भी भावेन्द्रिय के निमित्त से उत्पन्न हुई द्रव्येन्द्रियों के सद्भाव की अपेक्षा उन्हें पंचेन्द्रिय कहा गया है। **(ध. १/२६५)**

केवली को भूतपूर्व का ज्ञान कराने वाले न्याय के आश्रय से पंचेन्द्रिय कहा है। **(ध. १/२६६)**

आवरण के क्षीण हो जाने से पंचेन्द्रियों के क्षयोपशम के नष्ट हो जाने पर भी क्षयोपशम से उत्पन्न और उपचार से क्षायोपशमिक संज्ञा को प्राप्त पाँचों बाह्येन्द्रिय का अस्तित्व पाये जाने से सयोगी और अयोगी जिनों के पंचेन्द्रियत्व सिद्ध कर लेना चाहिए। **(ध. ७/६८)**

नोट - केवली भगवान के क्षायोपशमिक ज्ञान रूप भावेन्द्रिय का अभाव हुआ है न कि पंचेन्द्रिय जाति नाम कर्म के उदय का। अत: औदयिक भाव रूप पंचेन्द्रियत्व का सद्भाव होने में कोई बाधा नहीं है।

३. प्रश्न : केवली भगवान पंचेन्द्रिय हैं तो उनके चार प्राण ही क्यों कहे हैं, दस क्यों नहीं?

उत्तर : यदि प्राणों में द्रव्येन्द्रियों का ही ग्रहण किया जावे तो संज्ञी जीवों के अपर्याप्त काल में सात प्राणों के स्थान पर कुल दो प्राण ही कहे जावेंगे, क्योंकि उनके द्रव्येन्द्रियों का अभाव होता है। अत: यह सिद्ध हुआ कि सयोगी जिन के भावेन्द्रिय नहीं होने से चार अथवा दो ही प्राण होते हैं। **(ध. २/४४४)**

४. प्रश्न : केवलज्ञान के साथ शुक्ल लेश्या कितने गुणस्थान में होती है?

उत्तर : केवलज्ञान के साथ शुक्ल लेश्या केवल एक गुणस्थान में होती है- तेरहवें में।

५. प्रश्न : केवलज्ञान में अनाहारक अवस्था में कम-से-कम कितने प्राण हो सकते हैं?

उत्तर : केवलज्ञान में अनाहारक अवस्था में कम-से-कम एक प्राण होता है - आयु प्राण। यह एक प्राण चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा कहा गया है।

६. प्रश्न : केवलज्ञान के साथ औदारिक मिश्र अवस्था में कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : केवलज्ञान के साथ औदारिकमिश्र अवस्था में आस्रव का केवल एक ही प्रत्यय होता है - औदारिक मिश्र योग सम्बन्धी। क्योंकि उस समय नाना जीवों की अपेक्षा भी शेष योग नहीं हो सकते हैं।

७. प्रश्न : चौबीस स्थानों में से कौन से स्थान हैं जिनके सभी उत्तर भेद केवलज्ञान में पाये जाते हैं?

उत्तर : चौबीस स्थानों में से केवल दो स्थान ऐसे हैं जिनके सभी उत्तर भेद केवलज्ञान में पाये जाते हैं- (१) आहार (२) पर्याप्ति।

८. प्रश्न : ऐसे कौन से स्थान हैं जिनका एक भी भेद केवलज्ञान में नहीं पाया जाता है?

उत्तर : चार स्थान ऐसे हैं जिनका एक भी भेद केवलज्ञान में नहीं पाया जाता है -

(१) वेद (२) कषाय (३) संज्ञी (४) संज्ञा

सिद्ध भगवान की अपेक्षा (क्योंकि वे भी केवलज्ञानी हैं) १९ स्थान ऐसे हैं जिनका एक भी भेद उनके नहीं पाया जाता है -

(१) गति (२) इन्द्रिय (३) काय (४) योग (५) वेद (६) कषाय (७) संयम (८) लेश्या (९) भव्य (१०) संज्ञी (११) गुणस्थान (१२) जीवसमास (१३) पर्याप्ति (१४) प्राण (१५) संज्ञा (१६) ध्यान (१७) आस्रव के प्रत्यय (१८) जाति (१९)कुल।

यथार्थ में तो सिद्ध भगवान के चौबीस स्थानों में से एक भी भेद नहीं पाया जाता है क्योंकि वे कर्मों के बन्ध, उदय एवं सत्त्व से रहित हैं, उनके सभी गुण शुद्ध ही होते हैं। अर्थात् उनके ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, आदि गुण पाये जाते हैं केवलज्ञान, केवलदर्शन आदि नहीं, फिर भी उन्हें केवलज्ञानी कहा जाता है क्योंकि वह ज्ञान गुण की शुद्ध पर्याय है।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में त्रस जीव ही पाये जाते हैं?

उत्तर : छह ज्ञानों में मात्र त्रस जीव ही पाये जाते हैं – (१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मन:पर्ययज्ञान (५) केवलज्ञान (६) कुअवधिज्ञान।

२. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में केवल असंयम ही पाया जाता है?

उत्तर : तीन ज्ञानों में असंयम ही पाया जाता है – (१) कुमति ज्ञान (२) कुश्रुत ज्ञान (३) कुअवधिज्ञान। ये तीनों ज्ञान प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थानों में ही पाये जाते हैं।

३. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में केवल एक ही संयम हो सकता है?

उत्तर : चार ज्ञानों में केवल एक ही संयम होता है -

कुमति, कुश्रुत, कुअवधि में - असंयम।

केवलज्ञान में - यथाख्यात संयम।

४. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में सम्यक्त्व मार्गणा का केवल एक ही भेद पाया जाता है?

उत्तर : चार ज्ञानों में सम्यक्त्व मार्गणा का केवल एक भेद ही पाया जाता है।

केवलज्ञान में - क्षायिकसम्यक्त्व।

तीन मिश्रज्ञानों में - सम्यग्मिथ्यात्व।

मति श्रुत अवधिज्ञान सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से न मिथ्यात्व रूप रहते हैं और न सम्यक् रूप ही होते हैं इसलिए इन्हें मिश्र रूप कहा है।

५. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में दस प्राण ही होते हैं?

उत्तर : दो ज्ञानों में दस प्राण ही होते हैं - (१) कुअवधिज्ञान (२) मन:पर्ययज्ञान।

६. प्रश्न : किस ज्ञान में सबसे कम ध्यान होते हैं?

उत्तर : केवलज्ञान में केवल दो ही ध्यान होते हैं -

(१) सूक्ष्म क्रियाप्रतिपाती (२) व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

७. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में छब्बीस लाख जातियाँ होती हैं?

उत्तर : चार ज्ञानों में छब्बीस लाख जातियाँ होती हैं -

(१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) कुअवधिज्ञान।

क्योंकि ये चारों ज्ञान चारों गतियों के (पंचेन्द्रिय) जीवों के पाये जाते हैं।

८. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में कौन-कौन से आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं?

उत्तर :

ज्ञान		**जिनमें आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं**
कुमति-कुश्रुत ज्ञान में	-	आहारकद्विक
कुअवधिज्ञान	-	औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकद्विक तथा कार्मण काययोग।
मति श्रुत तथा अवधिज्ञान	-	५ मिथ्यात्व ४ अनन्तानुबन्धी।
मन:पर्यय ज्ञान	-	५ मिथ्यात्व, ३ चौकड़ी (संज्वलन बिना) २ वेद (पुरुषवेद बिना) १२ अविरति तथा ६ योग (आहारकद्विक, वैक्रियिकद्विक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण)
केवलज्ञान	-	५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय तथा ८ योग (२म. २ व. आहारकद्विक, वैक्रियिक द्विक)

९. प्रश्न : ज्ञान मार्गणा में अविरति सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय का कथन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : ज्ञान मार्गणा में अविरति सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय :

- कुमति - कुश्रुत - कुअवधिज्ञान में सभी अविरतियाँ हैं।
- मति-श्रुत-अवधिज्ञानी १२, ११ तथा अविरति से रहित भी होते हैं।
- चौथे गुणस्थान में १२ अविरति।
- पाँचवें गुणस्थान में ११ अविरति (त्रस की अविरति नहीं है)।
- छठे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक मुनिराज अविरति सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय से रहित होते हैं।
- मन:पर्यय एवं केवलज्ञान में अविरति सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं।

– प्रश्नपत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर (✓) का निशान लगाइये -

(i) **मन:पर्ययज्ञानी जीव के कितने संयम नहीं होते हैं?**

(अ) २ (ब) ३

(स) ५ (द) कोई नहीं

(ii) **श्रुतज्ञानी जीव के कितने उपयोग होते हैं?**

(अ) ४ (ब) ७

(स) ६ (द) कोई नहीं

(iii) **सबसे कम उपयोग किस ज्ञान में होते हैं?**

(अ) कुमतिज्ञान (ब) मन:पर्यय ज्ञान

(स) केवलज्ञान (द) कोई नहीं

(iv) **कितने ज्ञानों में संयमासंयम नहीं होता है?**

(अ) ३ (ब) ४

(स) ५ (द) १

(v) **किस ज्ञान में सबसे ज्यादा जातियाँ होती हैं?**

(अ) कुमति (ब) मन:पर्यय

(स) अवधिज्ञान (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए -

(i) अवधिज्ञानी जीव के कितनी लेश्याएँ हो सकती हैं?

(ii) कुमतिज्ञानी जीव के कितनी लेश्याएँ हो सकती हैं?

(iii) सबसे कम लेश्या कौनसे ज्ञान में पाई जाती है?

(iv) कुश्रुतज्ञानी जीवों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं?

(v) मन:पर्यय ज्ञानी जीव के कितने सम्यक्त्व होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए –

(i) कुअवधिज्ञानी जीव के २६ लाख जातियाँ होती हैं।

(ii) मात्र एक ज्ञान है जिसमें असत्य वचन योग नहीं है।

(iii) मतिज्ञानी के कम-से-कम नौ आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

(iv) श्रुतज्ञानी के कम-से-कम एक कषाय नहीं है।

(v) कुमति ज्ञानी के केवल एक संयम होता है।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो –

(i) कुअवधिज्ञानी के..................उपयोग................योग..............कषायें होती हैं।

(ii) कुमतिज्ञानी के..................जीवसमास..................जाति..................कुल होते हैं।

(iii) ....ज्ञान..................ज्ञान तथा..................ज्ञान में भव्य और अभव्य दोनों जीव होते हैं।

(iv) मन:पर्ययज्ञानी जीव के यथाख्यात संयम में..............गुणस्थान..................जाति तथा..................आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

(v) अवधिज्ञानी[1] जीव के कम-से-कम...............संज्ञा...............कषाय..................प्राण होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये -

(i)	मन:पर्ययज्ञान	-	सयोग केवली
(ii)	केवलज्ञान	-	सात संयम
(iii)	अवधिज्ञान	-	७ गुणस्थान
(iv)	तीन मिश्र ज्ञान	-	कुमतिज्ञान
(v)	९ गुणस्थान	-	मिथ्यादृष्टि
(vi)	कुअवधिज्ञान	-	तीसरा गुणस्थान
(vii)	अयोग केवली	-	अवधिज्ञान
(viii)	पहला-दूसरा गुण.	-	केवलज्ञान

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) अ (iii) स (iv) स (v) अ।

२. (i) छह (ii) छह (iii) केवलज्ञान (iv) तीन (v) तीन।

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) ना (v) हाँ।

४. (i) ३,१०,२५ (ii) १९, ८४ लाख, १९९ $\frac{१}{२}$ लाख क. (iii) कुमति, कुश्रुत, कुअवधि (iv) २, १४ लाख, ९ (v) १, १, ७

५. (i) सात गुणस्थान (ii) सयोग केवली (iii) सात संयम (iv) तीसरा गुणस्थान (v) अवधिज्ञान (vi) मिथ्यादृष्टि (vii) केवलज्ञान (viii) कुमतिज्ञान।

---

१. ० संज्ञा ० कषाय भी कह सकते हैं।

८. संयम मार्गणा

१. प्रश्न : संयम किसे कहते हैं?

उत्तर : सम्यक् प्रकार के यम को संयम कहते हैं। **(ध. ७/७)**

व्रतों का धारण, समिति का पालन, कषायों का निग्रह, दण्डों का त्याग तथा पंचेन्द्रिय पर जय प्राप्त करना संयम है। **(गो.जी. ४६५)**

२. प्रश्न : संयम कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : संयम दो प्रकार का होता है - (१) देशसंयम (२) सकलसंयम।

(१) अपहत संयम (२) उपेक्षा संयम।

(१) इन्द्रिय संयम (२) प्राणी संयम।

अथवा - संयम (चारित्र) पाँच प्रकार का होता है -

(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापना (३) परिहारविशुद्धि (४) सूक्ष्मसाम्पराय (५) यथाख्यात संयम। **(त. सू. ९/१८)**

३. प्रश्न : देशसंयम आदि के क्या लक्षण हैं?

उत्तर : **(अ) देशसंयम :** गृहस्थों का चारित्र उपासकाध्ययन आदि ग्रन्थों में कथित मार्ग से पंचम गुणस्थान के योग्य दान, शील, पूजा, उपवास आदि रूप होता है अथवा दार्शनिक आदि ग्यारह स्थानों रूप होता है। **(पं.का.ता. १६०)**

(ब) सकलसंयम : समस्त प्रकार के परिग्रह से रहित मुनियों का सकल चारित्र है। **(र.क.श्रा.५०)** मुनियों का चारित्र आचारांग आदि चारित्र विषयक ग्रन्थों में कथित मार्ग से प्रमत्त और अप्रमत्त इन दो गुणस्थानों के योग्य पंच महाव्रत, पंचसमिति, त्रिगुप्ति, छह आवश्यक आदि रूप होता है। यही सकल संयम है। **(पं.का.ता. १६०)**

(स) उपेक्षासंयम : देश और काल के विधान को समझने वाले स्वाभाविक रूप से शरीर से विरक्त और तीन गुप्तियों के धारक व्यक्ति के राग और द्वेष रूप चित्तवृत्ति का न होना उपेक्षा संयम है।

(द) अपहृतसंयम : उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य के भेद से यह तीन प्रकार का है।

● **उत्कृष्ट :** प्रासुक वसति और आहारमात्र हैं बाह्य साधन जिनके तथा स्वाधीन हैं ज्ञान और चारित्ररूप करण जिनके ऐसे साधु का बाह्य जन्तुओं के आने पर उनसे अपने को बचा कर संयम पालना उत्कृष्ट अपहृतसंयम है।

● मृदु उपकरण से जन्तुओं का परिहार करना **मध्यम** तथा अन्य उपकरणों की इच्छा रखने वाले के जघन्य अपहृतसंयम होता है। **(रा.वा. ९/६)**

(य) इन्द्रिय संयम : शब्दादि जो इन्द्रियों के विषय हैं उनमें राग का अभाव सो इन्द्रिय संयम है।

(र) प्राणिसंयम : एकेन्द्रियादि प्राणियों की पीड़ा का परिहार प्राणिसंयम है। **(रा.वा. ९/६)**

४. प्रश्न : **संयम मार्गणा किसे कहते हैं?**

उत्तर : संयम में जीवों की खोज करना संयम मार्गणा है।

५. प्रश्न : **संयम मार्गणा कितने प्रकार की होती है?**

उत्तर : संयम मार्गणा सात प्रकार की होती है -

(१) सामायिक संयम (२) छेदोपस्थापना (३) परिहारविशुद्धि (४) सूक्ष्मसाम्पराय (५) यथाख्यात संयम (६) संयमासंयम (७) असंयम। **(ध.१/३६८)**

६. प्रश्न : **संयम मार्गणा में संयम-संयमासंयम और असंयम तीनों का ग्रहण है इसलिए इस मार्गणा का नाम संयम मार्गणा देना युक्त नहीं है?**

उत्तर : नहीं, क्योंकि 'आम्रवन' वा 'निम्बवन' इन नामों के समान प्राधान्य पद का आश्रय लेकर 'संयमानुवाद से' अर्थात् संयम मार्गणा यह व्यपदेश करना युक्तियुक्त हो जाता है। **(ध. ४/२८७)**

७. प्रश्न : **सामायिक संयम किसे कहते हैं?**

उत्तर : अभेद रूप से पाँच पाप की बुद्धि न होना सामायिक संयम है। **(आ.सा. ५/५)**

हिंसा, झूठ, चोरी आदि सभी सावद्य योगों का अभेद रूप से सार्वकालिक या नियमित समय तक त्याग करना सामायिक संयम है। **(रा.वा. २)**

व्रतधारण आदि संयम में संग्रह नय की अपेक्षा से एकयम-भेद रहित होकर अर्थात् अभेद रूप से ''मैं सर्व सावद्य त्यागी हूँ'' इस तरह से जो सम्पूर्ण सावद्य का त्याग करना इसको सामायिक संयम कहते हैं। **(गो.जी. ४७०)**

८. प्रश्न : **छेदोपस्थापना संयम किसे कहते हैं?**

उत्तर : किसी देश काल के कारण वा किसी की रुकावट के कारण वा प्रमाद से अथवा और किसी कारण से यदि स्वीकार किये हुए व्रतों में अतिचार लग जावे तो अपनी निन्दा-गर्हा आदि के द्वारा प्रायश्चित्त धारण कर उस अतिचार का शोधन करना, दोषों को शुद्ध करना छेदोपस्थापना संयम है। **(मू. प्र. २९७३-७४)**

९. प्रश्न : **परिहारविशुद्धि संयम किसे कहते हैं?**

उत्तर : प्राणिवध की निवृत्ति को परिहार कहते हैं। इससे युक्त शुद्धि जिस चारित्र में होती है वह परिहारविशुद्धि चारित्र है। **(सर्वा. ९/१८)**

जिस संयम में दोषों के परिहार-निराकरण से शुद्धि होती है, वह परिहार विशुद्धि संयम है। **(आ.सा. ५/१४२)**

१०.प्रश्न : सूक्ष्मसाम्पराय संयम किसे कहते हैं?

उत्तर : (१) जिस चारित्र में कषाय अतिसूक्ष्म हो वह सूक्ष्म साम्पराय चारित्र है। **(सर्वा. ९/१८)**

(२) सूक्ष्म अतीन्द्रिय निज शुद्धात्मा के बल से सूक्ष्म लोभ नामक साम्पराय-कषाय का पूर्ण रूप से उपशमन वा क्षपण सो सूक्ष्म साम्पराय चारित्र है। **(बृ.द्र.सं. ३५)**

(३) मोह कर्म का उपशमन या क्षपण करते हुए सूक्ष्म लोभ का वेदन करना सूक्ष्म साम्पराय संयम है। **(ध.१/३७५)**

११.प्रश्न : यथाख्यात संयम किसे कहते हैं?

उत्तर : समस्त मोहनीय कर्म के उपशमन या क्षय से जैसा आत्मा का स्वभाव है उस अवस्था रूप जो चारित्र है वह यथाख्यात चारित्र है। जिस प्रकार आत्मा का स्वभाव अवस्थित है उसी प्रकार यह कहा गया है, इसे यथाख्यात कहते हैं। **(सर्वा. ९/१८)**

अशुभ रूप मोहनीय कर्म के उपशान्त अथवा क्षीण हो जाने पर जो वीतराग संयम होता है, उसे यथाख्यात संयम कहते हैं। **(पं.सं.प्रा. १३३)**

१२.प्रश्न : संयमासंयम संयम किसे कहते हैं?

उत्तर : चार संज्वलन और नव नोकषायों के क्षयोपशम संज्ञा वाले देशघाती स्पर्धकों के उदय से संयमासंयम की उत्पत्ति होती है। **(ध. ७/९४)**

अनन्तानुबन्धी और अप्रत्याख्यानावरण रूप आठ कषायों के स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय तथा आगामी काल में उदय आने वाले सर्वघातिस्पर्धकों का सदवस्था रूप उपशम, प्रत्याख्यान कषाय का उदय, संज्वलन कषाय के देशघाती स्पर्धकों का उदय और यथासम्भव नोकषाय का उदय होने पर विरत अविरत (संयमासंयम) परिणाम उत्पन्न करने वालों के क्षायोपशमिक संयमासंयम होता है। **(रा.वा. २/५)**

१३.प्रश्न : असंयम किसे कहते हैं?

उत्तर : जीव चौदह भेद रूप हैं और इन्द्रियों के विषय अट्ठाईस हैं। जीवघात से और इन्द्रियविषयों से विरत नहीं होने को असंयम कहते हैं। **(गो.जी. ४७८)**

चारित्रमोह के उदय से होने वाली हिंसादि (पापों) में और इन्द्रिय विषयों में प्रवृत्ति असंयम है। **(रा.वा. २/६)**

तालिका संख्या ३७

सामायिक - छेदोपस्थापना

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	१	मनुष्यगति	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३	काय	१	त्रस	
४	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	औदारिक तथा आहारकद्विक होते हैं।
५	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६	कषाय	१३	४ कषाय ९ नोकषाय	
७	ज्ञान	४	म. श्रु. अ. मनः.	
८	संयम	१	स्वकीय	सामायिक में सामायिक.......
९	दर्शन	३	च. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०	लेश्या	३	पी. प. शु.	
११	भव्य	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	३	क्षा. क्षयो. उप.	
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहारक	१	आहारक	
१५	गुणस्थान	४	छठे से नौवें तक	
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल.श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	८	३ आ. ४ ध. १ शु.	निदान आर्तध्यान नहीं है।
२२	आस्रव	२४	१३ क. ११ योग	
२३	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : क्या सामायिक संयम वालों के भी वेद का अभाव हो सकता है?

उत्तर : हाँ, सामायिक संयम वाले के भी नवम गुणस्थान के अवेद भाग में वेद का अभाव हो जाता है।

२. प्रश्न : छेदोपस्थापना संयम में कितनी कषायें होती हैं?

उत्तर : छेदोपस्थापना संयम में अधिक से अधिक १३ कषायें होती हैं – चार संज्वलन की तथा नौ नोकषाय की।

३. प्रश्न : सामायिक संयमी मतिज्ञानी के कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : सामायिक संयमी मतिज्ञानी के छठे से नौवें गुणस्थान तक चार गुणस्थान होते हैं।

४. प्रश्न : सामायिक संयम में शुक्ल लेश्या कहाँ-कहाँ पाई जाती है?

उत्तर : सामायिक संयम में शुक्ल लेश्या छठे गुणस्थान से नवमें गुणस्थान तक पाई जाती है। आठवें-नवमें गुणस्थान में मात्र शुक्ल लेश्या ही पाई जाती है।

५. प्रश्न : सामायिक छेदोपस्थापना संयमी को उपशम सम्यक्त्व कैसे हो सकता है क्योंकि उपशम सम्यक्त्व तो मिथ्यादृष्टि को ही होता है?

उत्तर : यह सत्य है कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व मिथ्यादृष्टि को ही होता है लेकिन यदि कोई सादि या अनादि मिथ्यादृष्टि (द्रव्य से) मुनिलिङ्ग धारण करने के बाद प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ ही साथ तीन चौकड़ी कषायों का अभाव भी कर लेता है तो उसके प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ सामायिक छेदोपस्थापना संयम हो जाता है। **(सर्वा. के आधार से)**

क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि मुनि यदि उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसके द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के साथ सामायिक-छेदोपस्थापना संयम बन जाता है।

६. प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से स्थान हैं जहाँ सामायिक संयम के साथ सात प्राण नहीं हो सकते हैं?

उत्तर : पाँच स्थानों में सामायिक संयम के साथ सात प्राण नहीं होते हैं -

(१) सातवें गुणस्थान से नौवें गुणस्थान तक के सामायिक संयमी के।

(२) चार मनोयोगी, चार वचनयोगी, औदारिक तथा आहारक काययोगी के।

(३) मन:पर्ययज्ञान वाले सामायिक संयमी के।

(४) स्त्रीवेदी तथा नपुंसक वेदी सामायिक संयमी के।

(५) उपशम सम्यक्त्व वाले सामायिक संयमी के।

इन स्थानों में आहारक मिश्र काययोग नहीं बनता है इसलिए इनके सात प्राण नहीं हो सकते हैं।

७. प्रश्न : क्या ऐसे कोई सामायिक-छेदोपस्थापना संयमी हैं जिनके केवल दो संज्ञाएँ पाई जाती हैं?

उत्तर : हाँ, नवमें गुणस्थान वाले सामायिक-छेदोपस्थापना संयमी के मात्र मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञाएँ ही पाई जाती हैं। यहाँ सवेद भाग तक ही दो संज्ञाएँ समझना चाहिए।

८. प्रश्न : क्या ऐसे कोई सामायिक-छेदोपस्थापना संयम वाले हैं जिनके न आर्त्तध्यान होते हैं न शुक्ल ध्यान होते हैं?

उत्तर : हाँ, सप्तम गुणस्थानवर्ती सामायिक-छेदोपस्थापना संयम वालों के न आर्त्तध्यान होते हैं और न शुक्ल ध्यान, क्योंकि आर्त्तध्यान छठे गुणस्थान तक ही होते हैं और शुक्ल ध्यान आठवें गुणस्थान से प्रारम्भ होता है। सातवें गुणस्थान में मात्र धर्मध्यान ही होते हैं।

९. प्रश्न : क्या सामायिक संयम में एक संज्ञा भी हो सकती है?

उत्तर : हाँ, सामायिक संयम वालों के नवमें गुणस्थान की अवेद अवस्था में मात्र एक परिग्रह संज्ञा ही होती है।

१०. प्रश्न : सामायिक-छेदोपस्थापना संयम में कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : सामायिक छेदोपस्थापना संयम में कम-से-कम आस्रव के दस प्रत्यय होते हैं -

जब नवमें गुणस्थान में तीनों वेद एवं संज्वलन क्रोध, मान, माया कषाय की व्युच्छित्ति हो जाती है तब चार मनोयोग, चार वचन योग, औदारिक काययोग तथा एक संज्वलन लोभ, ये आस्रव के दस कारण बचते हैं।

११. प्रश्न : सामायिक संयम में किन-किन स्थानों का मात्र एक-एक भेद पाया जाता है?

उत्तर : सामायिक संयम में दस स्थानों का मात्र एक-एक भेद पाया जाता है?

(१) **गति**	-	मनुष्यगति	(६) **संज्ञी**	-	सैनी
(२) **इन्द्रिय**	-	पंचेन्द्रिय	(७) **आहार**	-	आहारक
(३) **काय**	-	त्रस काय	(८) **जीवसमास**	-	सैनी पंचेन्द्रिय
(४) **संयम**	-	सामायिक	(९) **जाति**	-	१४ लाख मनुष्य सम्बन्धी (एक गति सम्बन्धी)
(५) **भव्यत्व**	-	भव्य	(१०) **कुल**	-	१४ लाख करोड़ (एक गति सम्बन्धी)

तालिका संख्या ३८

परिहारविशुद्धि संयम

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	१	मनुष्यगति	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३	काय	१	त्रस	
४	योग	९	४ म. ४ व. १ काय.	औदारिककाययोग होता है।
५	वेद	१	पुरुषवेद	स्त्री एवं नपुंसक वेद नहीं हैं।
६	कषाय	११	४ संज्वलन ७ नोक.	
७	ज्ञान	३	म. श्रु. अव.	
८	संयम	१	स्वकीय	परिहारविशुद्धि
९	दर्शन	३	च. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०	लेश्या	३	पी. प. शु.	
११	भव्यत्व	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	२	क्षा. क्षायो.	
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहार	१	आहारक	
१५	गुणस्थान	२	छठा, सातवाँ	
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल.श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	७	३ आ. ४ धर्म.	निदान आर्त्तध्यान नहीं है।
२२	आस्रव	२०	११ क. ९ योग	
२३	जाति	१४ ला.	मनुष्य सम्बन्धी	
२४	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : क्या सभी छठे-सातवें गुणस्थान वालों के परिहारविशुद्धि संयम होता है?

उत्तर : नहीं, सभी छठे-सातवें गुणस्थान वालों के परिहार-विशुद्धि संयम नहीं होता है क्योंकि परिहारविशुद्धि संयम प्राप्त करने के लिए कुछ विशेषताएँ प्राप्त करना आवश्यक हैं -

विशेषताएँ :

(१) जिसने तीस वर्ष तक घर में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत किया हो,

(२) (उसके बाद) दीक्षा लेकर वर्ष पृथक्त्व (३ से ८ वर्ष की अवधि) तक तीर्थंकर के पादमूल में प्रत्याख्यान नामक पूर्व का अध्ययन किया हो,

(३) जिसको जन्तुओं की उत्पत्ति, विनाश, स्थान, काल, परिमाण, जन्म, योनि तथा द्रव्य के स्वभाव का ज्ञान हो।

(४) जो अप्रमादी, महाशक्तिशाली, परम निर्जरा करने वाला हो।

(५) दुष्कर चर्या अनुष्ठान करने में तत्पर हो और

(६) तीनों संध्या कालों को छोड़कर प्रतिदिन दो कोस गमन करते हों उन साधुओं के परिहारविशुद्धि संयम होता है। **(रा.वा. ९/१८)**

नोट - परिहारविशुद्धि संयम का काल ३८ वर्ष कम एक पूर्व कोटि वर्ष कहा है। इससे लगता है कि वर्ष पृथक्त्व से आठ वर्ष लेना चाहिए।

२. प्रश्न : परिहारविशुद्धि संयम के साथ क्या-क्या विशेषताएँ नहीं होती हैं?

उत्तर : परिहारविशुद्धि संयम के साथ मन:पर्ययज्ञान, प्रथमोपशम सम्यक्त्व तथा आहारकद्विक काययोग, ये तीनों विशेषताएँ नहीं होती हैं। अर्थात् इन चारों में से किसी एक के होने पर शेष तीन मार्गणाएँ नहीं होती हैं। **(पं.सं.प्रा. १/१९४)**

परिहारविशुद्धि के साथ तैजस समुद्घात, आहारक समुद्घात तथा विक्रिया ऋद्धि भी नहीं होती है। **(ध. ४/ १२३)**

परिहारविशुद्धि संयम को छोड़े बिना उपशम श्रेणी पर चढ़ने के लिए दर्शन मोह का उपशम भी संभव नहीं है। अर्थात् परिहारविशुद्धि संयम के साथ उपशम सम्यक्त्व एवं उपशम श्रेणी होना संभव नहीं है। **(ध. ५ / ३२७)**

३. प्रश्न : क्या परिहारविशुद्धि संयम को छोड़े बिना क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणी चढ़ सकता है?

उत्तर : आठवें आदि श्रेणीगत गुणस्थानों में परिहारविशुद्धि संयम नहीं होता है, क्योंकि परिहार विशुद्धि संयम प्रमत्त एवं अप्रमत्त मुनिराज के ही होता है। **(ध. १/३७५)** दूसरी बात परिहार- विशुद्धि संयम के साथ उपशम सम्यक्त्व का निषेध किया है उपशम चारित्र का नहीं। इसलिए परिहारविशुद्धि की क्षमता वाला अर्थात् परिहारविशुद्धि संयम वाला क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणी चढ़कर नीचे आकर पुन: परिहारविशुद्धि संयम को प्राप्त कर ले तो कोई बाधा नहीं है।

४. प्रश्न : **क्या सामायिक छेदोपस्थापना संयम वाले से परिहारविशुद्धि संयम वाले साधु में कुछ अन्तर आ जाता है?**

उत्तर : हाँ, परिहारविशुद्धि चारित्रधारी मुनि छह काय के जीव समूह वाले स्थान में विहार करने पर भी पाप (हिंसा) से लिप्त नहीं होते हैं। जैसे-कमलपत्र जल में रहकर भी जल से लिप्त नहीं होता है। **(गो.जी. ४७३)** लेकिन सामायिक-छेदोपस्थापना संयम वालों में ऐसी सामर्थ्य नहीं होती है।

५. प्रश्न : **परिहारविशुद्धि संयम की उत्पत्ति कैसे होती है?**

उत्तर : जो संयम के विरोधी नहीं हैं ऐसे बादर संज्वलन कषाय के देशघाती स्पर्धकों के उदय से सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि संयम उत्पन्न होते हैं। **(गो.जी. ४६७)**

६. प्रश्न : **परिहारविशुद्धि संयमी किसे कहते हैं?**

उत्तर : सर्व सावद्य योग का सर्वथा परित्याग करने वाला जो जीव पाँच समिति और तीन गुप्ति को धारण कर उनसे युक्त रहकर सदा सावद्य का त्याग करता है उस पुरुष को परिहार-विशुद्धि संयमी कहते हैं अर्थात् ऐसे जीवों के परिहारविशुद्धि संयम उत्पन्न होता है। **(गो.जी. ४७३)**

७. प्रश्न : **आठवें आदि गुणस्थानों में परिहारविशुद्धि संयम क्यों नहीं होता है?**

उत्तर : (१) जिनकी आत्माएँ ध्यान रूपी सागर में निमग्न हैं, जो वचनयम (मौन) का पालन करते हैं और जिन्होंने आने-जाने रूप सम्पूर्ण शारीरिक व्यापार संकुचित कर लिया है, ऐसे जीवों के शुभाशुभ क्रियाओं का परिहार बन ही नहीं सकता है, क्योंकि गमनागमन रूप क्रियाओं में प्रवृत्ति करने वाला ही परिहार कर सकता है, प्रवृत्ति नहीं करने वाला नहीं। इसलिए ऊपर के आठवें आदि गुणस्थानों में परिहारविशुद्धि संयम नहीं बन सकता है। **(ध. १/३७७)**

(२) यद्यपि आठवें आदि गुणस्थानों में परिहारविशुद्धि पाई जाती है, परन्तु वहाँ पर परिहार करने रूप कार्य नहीं पाया जाता है इसलिए आठवें आदि गुणस्थानों में इस संयम का अभाव है। **(ध. १/३७८)**

८. प्रश्न : **परिहारविशुद्धि संयमी की क्या विशेषताएँ होती हैं?**

उत्तर : परिहारविशुद्धि संयमी की विशेषताएँ -

(१) इसका काल अड़तीस वर्ष कम पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण कहा गया है। कोई आचार्य सोलह वर्षों से और कोई बाईस वर्षों से कम पूर्व कोटि प्रमाण कहते हैं। **(ध. ७ / १६७)**

(२) तीस वर्ष के बिना परिहारविशुद्धि का होना सम्भव नहीं है। **(ध. ५/३३७)**

(३) यह संयम छठे-सातवें इन दो गुणस्थानों में ही होता है। **(ध. १/३७५)**

(४) ये साधु वसतिका, आहार, संस्तर, पीछी व कमण्डलु के अतिरिक्त अन्य कुछ भी ग्रहण नहीं करते।

(५) धैर्य पूर्वक उपसर्ग सहन करते हैं तथा वेदना का प्रतिकार भी नहीं करते हैं।

(६) पीछी से शरीर को पोंछने की क्रिया नहीं करते हैं।

(७) अपने साधर्मियों के अतिरिक्त अन्य सबके साथ आदान, प्रदान, वन्दन और अनुभाषण आदि समस्त व्यवहारों का त्याग करते हैं।

(८) धर्मकार्य में आचार्य से अनुज्ञा लेना, विहार में मार्ग पूछना, वसतिका के स्वामी से आज्ञा लेना, योग्य-अयोग्य उपकरणों के लिए निर्णय करना तथा किसी का सन्देह दूर करने के लिए उत्तर देना, इन कार्यों के अतिरिक्त वे मौन रहते हैं।

(९) चार-पाँच साधु संघ में इस संयम को धारण करते हैं। उनमें से एक आचार्य होते हैं।

(१०) जहाँ छह भिक्षाएँ अपुनरुक्त मिल सकें, ऐसे स्थान में रहना ही योग्य समझते हैं। **(भ.आ.वि. १५५)**

९. प्रश्न : परिहारविशुद्धि संयम में उपशम सम्यक्त्व क्यों नहीं होता है?

उत्तर : परिहारविशुद्धि संयत के उपशम सम्यक्त्व नहीं होता है क्योंकि, तीस वर्ष के बिना परिहारविशुद्धि संयम का होना सम्भव नहीं है। और न उतने काल तक उपशम सम्यक्त्व का अवस्थान रहता है, जिससे कि परिहारविशुद्धि संयम के साथ उपशम सम्यक्त्व की उपलब्धि हो सके। दूसरी बात यह है कि परिहारविशुद्धि संयम को नहीं छोड़ने वाले जीव के उपशमश्रेणी पर चढ़ने के लिए दर्शन मोहनीय कर्म का उपशम होना भी सम्भव नहीं है, जिससे कि उपशम श्रेणी में उपशम सम्यक्त्व और परिहारविशुद्धि संयम इन दोनों का संयोग बन सके। **(ध. ५/३२७)**

१०. प्रश्न : परिहारविशुद्धि संयम में ७ प्राण क्यों नहीं होते हैं?

उत्तर : परिहारविशुद्धि संयम में यद्यपि छठा गुणस्थान भी होता है लेकिन परिहारविशुद्धि संयम में आहारक ऋद्धि नहीं होती है और आहारकमिश्र योग में ही सात प्राण होते हैं। अत: परिहारविशुद्धि संयम में सात प्राण नहीं होते हैं।

तालिका संख्या ३९

सूक्ष्म साम्पराय संयम

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	१	मनुष्य गति	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३	काय	१	त्रस	
४	योग	९	४ म. ४ व. १ का.	औदारिक काययोग होता है।
५	वेद	०	—	
६	कषाय	१	संज्वलन लोभ	
७	ज्ञान	४	म.श्रु.अ.मन:.	केवलज्ञान तथा ३ कुज्ञान नहीं हैं।
८	संयम	१	स्वकीय	सूक्ष्म साम्पराय
९	दर्शन	३	च.अच.अव.	
१०	लेश्या	१	शुक्ल लेश्या	
११	भव्यत्व	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	२	क्षायिक, उपशम	
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहार	१	आहारक	
१५	गुणस्थान	१	दसवाँ	
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ ब.श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	१	परिग्रह	
२०	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	१	प्रथम शुक्ल ध्यान	
२२	आस्रव	१०	१ कषाय ९ योग	संज्वलन लोभ है।
२३	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : सूक्ष्म साम्पराय संयमी किसे कहते हैं?

उत्तर : जिन उपशम श्रेणी वाले अथवा क्षपक श्रेणी वाले जीवों के सूक्ष्म कृष्टि को प्राप्त लोभ कषाय (अणुमात्र लोभ) के उदय का अनुभव होता है उनको सूक्ष्मसाम्परायसंयमी कहते हैं। इनके परिणाम यथाख्यात चारित्र वाले जीव के परिणामों से कुछ ही कम होते हैं। **(गो.जी. ४७४)**

२. प्रश्न : इस संयम में कषाय कैसी होती है?

उत्तर : इस संयम में अत्यन्त सूक्ष्म कषाय यानी दसम गुणस्थानवर्ती महामुनि ने कषाय के विषांकुरों को खोंट दिया है, सूक्ष्म मोहनीय कर्म के बीज को भी नाश के मुख में ढकेल दिया है, ऐसा परम सूक्ष्म लोभ कषाय युक्त यह साधु है। यहाँ कषाय लोभाणुमात्र है। **(सर्वा. ९/१८)**

३. प्रश्न : क्या सभी मनुष्यों के सूक्ष्म साम्पराय संयम हो सकता है?

उत्तर : नहीं, सूक्ष्म साम्पराय संयम प्राप्त करने के लिए कुछ विशेषताएँ होना आवश्यक हैं -

(१) अवसर्पिणी के चौथे काल में जन्म लिया हो।

(२) उत्सर्पिणी के तीसरे काल में जन्म लिया हो।

(३) तीन उत्तम संहनन वाला हो,

(४) निकटभव्य कर्मभूमिज मनुष्य हो,

(५) आठ वर्ष से अधिक उम्र वाला हो,

(६) २४ कषायों का उपशम या क्षय कर चुका हो (संज्वलन लोभ को छोड़कर)

नोट - १. हुण्डावसर्पिणी काल के प्रभाव से भगवान आदिनाथ स्वामी आदि अनेक मनुष्यों ने तृतीय काल में जन्म लेकर तीसरे ही काल में सूक्ष्मसाम्पराय संयम को प्राप्त कर लिया था। २. यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव उपशम श्रेणी चढ़ता है तो उसके अनन्तानुबन्धी का क्षय हो चुका है। अत: वह इक्कीस कषायों का ही उपशम करता है।

४. प्रश्न : क्या संसार में ऐसे कोई जीव हैं जिनके मन:पर्यय ज्ञान हो लेकिन सूक्ष्मसाम्पराय संयम न हो?

उत्तर : हाँ, छह गुणस्थानवर्ती जीवों के मन:पर्यय ज्ञान पाया जाता है लेकिन सूक्ष्म साम्पराय संयम नहीं पाया जाता है – छठा, सातवाँ, आठवाँ, नवमाँ, ग्यारहवाँ तथा बारहवाँ।

५. प्रश्न : सूक्ष्मसाम्पराय संयम में कम-से-कम कितने ज्ञानोपयोग हो सकते हैं?

उत्तर : सूक्ष्मसाम्पराय संयम में कम-से-कम दो ज्ञानोपयोग हो सकते हैं - मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग। क्योंकि अवधिज्ञानोपयोग तथा मन:पर्ययज्ञानोपयोग को प्राप्त किये बिना भी सूक्ष्मसाम्पराय संयम हो सकता है।

६. प्रश्न : सूक्ष्मसाम्पराय संयम में कौन-कौन से आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं?

उत्तर : सूक्ष्मसाम्पराय संयम में आस्रव के सैंतालिस प्रत्यय नहीं होते हैं -

५ मिथ्यात्व १२ अविरति २४ कषाय ६ योग (आहारकद्विक, वैक्रियिकद्विक औदारिकमिश्र तथा कार्मण)

७. प्रश्न : सूक्ष्म साम्पराय संयम में किन-किन स्थानों के सभी भेद पाये जाते हैं?

उत्तर : सूक्ष्म साम्पराय संयम में दो स्थानों के सभी उत्तर भेद पाये जाते हैं -

(१) पर्याप्ति (२) प्राण

तालिका संख्या ४०

यथाख्यात संयम

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	औदारिकद्विक तथा कार्मण काय योग है।
५.	वेद	०	—	
६.	कषाय	०	—	
७.	ज्ञान	५	म.श्रु.अ.मनः, केवल	तीन मिथ्याज्ञान नहीं है।
८.	संयम	१	स्वकीय	यथाख्यात
९.	दर्शन	४	च.अच.अव.केव.	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल लेश्या	
११.	भव्यत्व	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षायिक, उपशम	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी-असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	ग्यारहवें से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इ. ३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	०	—	
२०.	उपयोग	९	५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	४	शुक्ल ध्यान	
२२.	आस्रव	११	योग सम्बन्धी	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यथाख्यात संयम किसके होता है?

उत्तर : अशुभ रूप मोहनीय कर्म के सर्वथा उपशम हो जाने से ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जीवों के और सर्वथा क्षीण हो जाने से बारहवें गुणस्थानवर्ती जीवों के तथा तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान वाले जीवों के यथाख्यात संयम होता है। **(गो.जी. ४७५)**

२. प्रश्न : यथाख्यात संयमी किन-किन नामों से कहे जा सकते हैं?

उत्तर : यथाख्यात संयमी कई नामों से कहे जा सकते हैं, जैसे –

(१) यथाख्यात विहार शुद्धि संयत (२) यथाख्यात विहार (३) यथाख्यात शुद्धि संयत।

यथाख्यात विहार शुद्धि संयत - जो यथाख्यात विहार वाले होते हुए शुद्धि प्राप्त संयत हैं वे यथाख्यात विहारशुद्धि संयत कहलाते हैं।

यथाख्यात विहार - परमागम में विहार अर्थात् कषायों के अभाव रूप अनुष्ठान का जैसा प्रतिपादन किया है तदनुकूल विहार जिनके पाया जाता है उन्हें यथाख्यात विहार कहते हैं।

यथाख्यात शुद्धि संयत - अशुभ मोहनीय कर्म के उपशान्त अथवा क्षय हो जाने पर ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थानवर्ती छद्मस्थ और तेरहवें चौदहवें गुणस्थानवर्ती जिन यथाख्यात शुद्धि संयत होते हैं। **(ध. १/३७३-७५)**

३. प्रश्न : ग्यारहवें तथा बारहवें गुणस्थान वाले के यथाख्यात संयम में क्या अन्तर है?

उत्तर : सामान्य रूप से दोनों के यथाख्यात संयम में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि यह संयम अवस्थित विशुद्धि वाला होता है। कषाय का अभाव हो जाने से उसकी वृद्धि हानि के कारण का अभाव हो गया है।

(१) ग्यारहवें गुणस्थान वालों का यथाख्यात संयम निश्चित रूप से नष्ट हो जाता है लेकिन बारहवें गुणस्थान वालों का यथाख्यात संयम निश्चित रूप से केवलज्ञान प्राप्त कराने वाला होता है।

(२) ग्यारहवें गुणस्थान वाले के यथाख्यात संयम के साथ उपशम तथा क्षायिक दोनों सम्यक्त्व होते हैं लेकिन बारहवें गुणस्थान में केवल एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है।

(३) ग्यारहवें गुणस्थान वाले का यथाख्यात संयम कषायों के उपशम से प्रकट होता है लेकिन बारहवें गुणस्थान वाले का यथाख्यात संयम कषायों के सर्वथा क्षय से प्रकट होता है।

४. प्रश्न : यथाख्यात संयम में कम-से-कम कितने योग हो सकते हैं?

उत्तर : यथाख्यात संयम में कम-से-कम एक योग हो सकता है - औदारिक काययोग।

जब अरहंत भगवान सूक्ष्म काययोग में स्थित होते हैं उनकी अपेक्षा एक योग जानना चाहिए। अथवा यथाख्यात चारित्र वाले अयोगी भी होते हैं - चौदहवें गुणस्थानवर्ती भगवान।

५. प्रश्न : यथाख्यात संयमी श्रुतज्ञानी के दर्शन ज्यादा होते हैं या यथाख्यात संयमी केवल ज्ञानी के?

उत्तर : यथाख्यात संयमी केवलज्ञानी की अपेक्षा यथाख्यात संयमी श्रुतज्ञानी के दर्शन ज्यादा होते हैं क्योंकि यथाख्यात संयमी के ग्यारहवें तथा बारहवें गुणस्थान में श्रुतज्ञान पाया जाता है, वहाँ उनके तीन दर्शन होते हैं - चक्षु दर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन।

तथा केवलज्ञानी के तो मात्र एक ही दर्शन होता है - केवलदर्शन।

६. प्रश्न : यथाख्यात संयम में सम्यक्त्व की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : यथाख्यात संयम में सम्यक्त्व की विवेचना –

(१) ग्यारहवें गुणस्थान में उपशम तथा क्षायिक दोनों सम्यक्त्व होते हैं।

(२) बारहवें गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक केवल एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है।

७. प्रश्न : यथाख्यात संयम वाले के अनाहारक अवस्था कितने गुणस्थानों में होती है?

उत्तर : यथाख्यात संयम में अनाहारक अवस्था दो गुणस्थानों में होती है -

१३ वें गुणस्थान में - समुद्घात के समय कार्मण योग में तथा चौदहवें गुणस्थान में।

८. प्रश्न : यथाख्यात संयम में किस-किस स्थान के उत्तर भेदों के साथ केवल एक-एक गुणस्थान पाया जाता है?

उत्तर : यथाख्यात संयम में पाँच स्थानों के उत्तर भेदों के साथ केवल एक-एक गुणस्थान पाया जाता है -

(१) **योग** - अयोगी जीवों में केवल चौदहवाँ गुणस्थान। औदारिक मिश्र तथा कार्मण काय योग में केवल तेरहवाँ गुणस्थान।

(२) **लेश्या** - अलेश्य जीवों के एक चौदहवाँ गुणस्थान।

(३) **सम्यक्त्व** - उपशम सम्यक्त्व में ग्यारहवाँ गुणस्थान।

(४) **प्राण** - चार तथा दो प्राण-तेरहवाँ गुणस्थान। एक प्राण-चौदहवाँ गुणस्थान।

(५) **ध्यान** - तीसरा शुक्ल ध्यान - तेरहवाँ गुणस्थान।
चौथा शुक्ल ध्यान - चौदहवाँ गुणस्थान।

नोट - दूसरा शुक्ल ध्यान ग्यारहवें गुणस्थान में भी कोई आचार्य मानते हैं, अन्यथा दूसरे शुक्ल ध्यान में भी एक ही बारहवाँ गुणस्थान होता है।

९. प्रश्न : **जिन यथाख्यात संयमी के केवल आयु प्राण होता है उनके कितने शुक्ल ध्यान होते हैं?**

उत्तर : जिनके केवल आयु प्राण होता है उनके केवल एक शुक्ल ध्यान होता है -
व्युपरत क्रिया निवृत्ति - चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा। **(त.सू. ९/४०)**

१०.प्रश्न : **बुद्धि पूर्वक सावद्य योग के त्याग को संयम कहना तो ठीक है। यदि ऐसा न माना जाये तो काष्ठ आदि में भी संयम का प्रसंग आ जायेगा। किन्तु केवली में बुद्धिपूर्वक सावद्ययोगकी निवृत्ति तो पायी नहीं जाती है इसलिए उनमें यथाख्यात संयम का होना दुर्घट है।**

उत्तर : यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि चार अघातिया कर्मों के विनाश करने की अपेक्षा और समय-समय में असंख्यात गुण श्रेणीरूप से कर्मनिर्जरा करने की अपेक्षा सम्पूर्ण पापक्रिया के निरोध स्वरूप पारिणामिक गुण प्रगट हो जाता है। इस अपेक्षा से वहाँ संयम का उपचार किया जाता है। अत: वहाँ संयम का होना दुर्घट (कठिन) नहीं है। अथवा प्रवृत्ति के अभाव की अपेक्षा वहाँ पर मुख्य संयम है। इस प्रकार जिनेन्द्र में प्रवृत्ति-अभाव से मुख्य संयम की सिद्धि करने पर काष्ठ से व्यभिचार दोष भी नहीं आता है, क्योंकि, काष्ठ में प्रवृत्ति नहीं पाई जाती है, तब उसकी निवृत्ति भी नहीं बन सकती है। **(ध. १/३७४)**

तालिका संख्या ४१

संयमासंयम

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	२	तिर्य. मनु.	
२	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३	काय	१	त्रस	
४	योग	९	४ म. ४ व. १ का.	औदारिक काययोग है।
५	वेद	३	स्त्री. पु. नपु.	
६	कषाय	१७	८ क. ९ नोक.	अनन्तानुबन्धी और अप्रत्याख्यानावरण नहीं हैं।
७	ज्ञान	३	म. श्रु. अव.	
८	संयम	१	स्वकीय	संयमासंयम
९	दर्शन	३	च. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है
१०	लेश्या	३	पी. प. शु.	
११	भव्य	१	भव्य	
१२	सम्यक्त्व	३	क्षा. क्षयो. उप.	क्षायिक सम्यक्त्व मनुष्य में ही है।
१३	संज्ञी	१	सैनी	
१४	आहार	१	आहारक	
१५	गुणस्थान	१	पंचम गुणस्थान	संयमासंयम गुणस्थान
१६	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७	पर्याप्ति	६	आ. श. इ. श्वा. भा. म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय. ३ बल.श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	११	४ आ. ४ रौ. ३ धर्म.	संस्थान विचय धर्मध्यान नहीं है।
२२	आस्रव	३७	११ अ. १७ क. ९ योग	
२३	जाति	१८ लाख	मनुष्य एवं तिर्यञ्च पंचे. सम्बन्धी	
२४	कुल	५७ $\frac{१}{२}$ ला.क.	४३ $\frac{१}{२}$ ला.क.तिर्यञ्च.पंचे. १४ ला.क.मनु.	

१. प्रश्न : संयमासंयम को किन-किन नामों से कहा जाता है?

उत्तर : संयमासंयम को अनेक नामों से कहा जाता है -

(१) संयतासंयत (२) देशसंयत (३) अणुव्रत (४) देशव्रत (५) विरताविरत (६) संयमासंयम।

२. प्रश्न : देशसंयत किसे कहते हैं?

उत्तर : जो पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों से संयुक्त हुए असंख्यात गुणश्रेणी कर्म निर्जरा करते हैं ऐसे सम्यग्दृष्टि जीव देशविरत कहे जाते हैं। **(ध. १/३०५)**

३. प्रश्न : इसको विरताविरत क्यों कहते हैं?

उत्तर : जो जीव जिनेन्द्र देव में अद्वितीय श्रद्धा रखता हुआ भी एक ही समय में त्रस जीवों की हिंसा से विरत है और स्थावर जीवों की हिंसा से अविरत है, वह विरताविरत है। **(गो.जी. ३०/३१)**

४. प्रश्न : संयमासंयम की उत्पत्ति का कारण क्या है?

उत्तर : संयमासंयम में संयम भाव की उत्पत्ति का कारण त्रस हिंसा से विरति भाव है और असंयम की उत्पत्ति का कारण स्थावर हिंसा से अविरत भाव है। इसलिए संयतासंयत नाम का पाँचवाँ गुणस्थान माना जाता है। **(ध. १/१७३)**

५. प्रश्न : सम्यग्दृष्टि जीव तिर्यञ्चों में उत्पन्न नहीं होता है तो वहाँ संयमासंयम कैसे हो सकता है?

उत्तर : यद्यपि सम्यग्दृष्टि जीव (कर्मभूमिया) तिर्यञ्चों में उत्पन्न नहीं होते हैं लेकिन तिर्यञ्चों में उत्पन्न होने के बाद सम्यग्दर्शन प्राप्त करके संयमासंयम को भी उत्पन्न कर सकते हैं। इसमें कोई बाधा नहीं है।

कहा भी है - लब्ध्यपर्याप्तकों को छोड़कर शेष चार प्रकार के तिर्यञ्चों के पाँचों ही गुणस्थान होते हैं। **(ध. १/२०८)**

६. प्रश्न : क्या कोई ऐसे पंचेन्द्रिय जीव हैं जिनके संयमासंयम नहीं हो सकता है?

उत्तर : संयमासंयम प्राप्त नहीं करने योग्य पंचेन्द्रिय जीव -

(१) देव-नारकी (२) लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य-तिर्यञ्च (३) संयमासंयम प्राप्त करने के योग्य वय से कम आयु वाले मनुष्य-तिर्यञ्च (४) भोग भूमिया मनुष्य-तिर्यञ्च (५) असैनी पंचेन्द्रिय जीव (६) क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च (७) देव आयु को छोड़कर जिन्होंने शेष आयु का बन्ध कर लिया है ऐसे मनुष्य-तिर्यञ्च (८) सातवें नरक से निकलकर आये हुए जीव..... आदि।

नोट - (१) संयमासंयम प्राप्त करने के लिए मनुष्य तथा तिर्यञ्चों की अलग-अलग आयु कही गई है। (२) म्लेच्छ खण्ड के तिर्यञ्च-मनुष्य आर्यखण्ड में आकर संयमासंयम प्राप्त कर सकते हैं।

७. प्रश्न : क्या ऐसे कोई मनुष्य हैं जिनको केवलज्ञान नहीं हो सकता है लेकिन संयमासंयम हो सकता है?

उत्तर : हाँ, ऐसे भी मनुष्य हैं जिनको केवलज्ञान नहीं हो सकता है लेकिन संयमासंयम हो सकता है -

(१) पाँचवें नरक से निकलकर आये हुए मनुष्य (२) विद्या सहित विद्याधर (३) द्रव्य से स्त्री तथा नपुंसक वेद वाला (४) पाँचवें काल का मनुष्य[१] (५) वज्रवृषभनाराच संहनन को छोड़कर शेष पाँच संहनन वाले मनुष्य (६) म्लेच्छ खण्ड से आये हुए मनुष्य आदि।

८. प्रश्न : क्या सभी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के संयमासंयम हो सकता है?

उत्तर : हाँ, सभी पर्याप्तक संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के संयमासंयम हो सकता है, जैसे -

जलचरों में - मछली, मत्स्य, मेंढ़क आदि।

थलचरों में - शेर, साँप, गाय, हाथी, सियार आदि।

नभचरों में - गिद्ध (जटायु को हुआ था,) तोता, कबूतर आदि।

९. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संयमासंयम वाले जीव हैं जिनको अवधिज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता है?

उत्तर : हाँ, संज्ञी सम्मूर्च्छन पर्याप्तक संयमासंयमी जीवों के अवधिज्ञान नहीं पाया जाता है। संज्ञी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकों में संयमासंयम के समान अवधिज्ञान और उपशम सम्यक्त्व की संभवता का अभाव है अर्थात् उनके संयमासंयम के समान अवधिज्ञान और उपशम सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है। इसका भी कारण यह है कि अवधिज्ञान को उत्पन्न करा के अन्तर के प्ररूपण करने वाले आचार्यों का अभाव है अर्थात् किसी भी आचार्य ने इस प्रकार अन्तर की प्ररूपणा नहीं की है। **(ध. ५/११८)**

१०. प्रश्न : संयमासंयमी जीवों के कितने सम्यक्त्व होते हैं?

उत्तर : संयमासंयमी जीवों के कम-से-कम १ सम्यक्त्व होता है- क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।

यह एक सम्यक्त्व सम्मूर्च्छन जन्म वाले संयमासंयमी तिर्यंचों के होता है। उपशम सम्यक्त्व गर्भज जीवों के ही होता है तथा क्षायिकसम्यक्त्व भोगभूमिया तिर्यञ्चों के ही होता है। इसलिए इन जीवों के ये दोनों सम्यक्त्व नहीं होते हैं तथा अधिक-से-अधिक ३ सम्यक्त्व होते हैं -

क्षायिक, क्षायोपशमिक तथा औपशमिक।

---

१. वर्तमान समय का जानना चाहिए।

क्षायिक सम्यक्त्व मनुष्यों की अपेक्षा होता है।

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों तथा मनुष्यों की अपेक्षा होता है तथा औपशमिक सम्यक्त्व गर्भज संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्यों की अपेक्षा होता है।

११.प्रश्न : संयमासंयम में कितने उपयोग होते हैं?

उत्तर : संयमासंयम में कम-से-कम ४ उपयोग होते हैं -

मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग।

ये चार उपयोग सम्मूर्च्छन जन्म वाले संयमासंयमी तिर्यञ्चों के होते हैं।

तथा अधिक-से-अधिक ६ उपयोग होते हैं -

मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग, चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग तथा अवधिदर्शनोपयोग।

ये छह उपयोग गर्भज संयमासंयमी तिर्यञ्च तथा मनुष्यों के होते हैं।

१२.प्रश्न : संयमासंयम में कम-से-कम कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : संयमासंयम में कम-से-कम ३५ आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

११ अविरति (त्रस अविरति के बिना)

१५ कषाय (८ कषाय ७ नोकषाय)

९ योग (४ म. ४ व. १ औदारिक काययोग)

सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के एक ही वेद होता है इसलिए दो (स्त्री तथा पुरुष) वेद कम किये गये हैं।

१३.प्रश्न : जो अतिथि संविभाग व्रत का पालन करता है उसके कितने जाति एवं कुल हो सकते हैं?

उत्तर : जो अतिथि संविभाग व्रत का पालन करता है उसके १८ लाख जातियाँ एवं ५७$\frac{१}{२}$लाख करोड़ कुल होते हैं -

जातियाँ - ४ लाख तिर्यञ्च तथा १४ लाख मनुष्यों की।

कुल - ४३$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ तिर्यञ्चों के तथा १४ लाख करोड़ मनुष्यों के।

तालिका संख्या ४२

असंयम

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१	गति	४	न.ति.म.दे.	
२	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पं.	
३	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५	वेद	३	स्त्री.पु.नपुं.	
६	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७	ज्ञान	६	३ ज्ञा. ३ कुज्ञान	
८	संयम	१	स्वकीय	असंयम
९	दर्शन	३	च.अच.अव.	केवल दर्शन नहीं है।
१०	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११	भव्यत्व	२	भव्य, अभव्य	
१२	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५	गुणस्थान	४	पहले से चौथे तक	
१६	जीवसमास	१९	१४ स्थावरों के, ५ त्रसों के	
१७	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८	प्राण	१०	५ इन्द्रिय ३ बल श्वा.आ.	
१९	संज्ञा	४	आ.भ.मै.परि.	
२०	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ ध.	आज्ञाविचय तथा अपायविचय धर्मध्यान हैं।
२२	आस्रव	५५	५ मि. १२ अ. २५ क. १३ यो.	
२३	जाति	८४ लाख	चारों गति सम्बन्धी	
२४	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से ज्ञान हैं जो केवल असंयम में ही पाये जाते हैं?

उत्तर : तीन ज्ञान केवल असंयम में ही पाये जाते हैं -

कुमति, कुश्रुत, कुअवधिज्ञान।

२. प्रश्न : संयमासंयम एवं असंयम में मन:पर्ययज्ञान क्यों नहीं होता है?

उत्तर : नहीं, क्योंकि संयमासंयम और असंयम के साथ मन:पर्ययज्ञान की उत्पत्ति मानने में विरोध आता है।

इसी प्रकार सभी संयमियों के भी मन:पर्ययज्ञान नहीं होता है, क्योंकि मन:पर्ययज्ञान की उत्पत्ति में केवल संयम ही कारण नहीं है, किन्तु संयम के अतिरिक्त विशेष जाति के द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि भी कारण हैं। (वे सभी संयमियों के नहीं पाये जाते हैं इसलिए सभी संयमियों को भी मन:पर्ययज्ञान नहीं होता है।) **(ध. १/३६६)**

३. प्रश्न : असंयमी जीवों के कितने सम्यक्त्व में एक ही गुणस्थान पाया जाता है?

उत्तर : असंयमी जीवों के सभी सम्यक्त्वों में एक-एक ही गुणस्थान पाया जाता है -

क्षायिक, क्षायोपशमिक तथा उपशम सम्यक्त्व में - चौथा गुणस्थान।

सासादन सम्यक्त्व में - दूसरा गुणस्थान।

सम्यग्मिथ्यात्व में - तीसरा गुणस्थान।

मिथ्यात्व में - पहला गुणस्थान।

४. प्रश्न : असंयम में कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ होती है?

उत्तर : असंयम में कम-से-कम चार पर्याप्तियाँ होती हैं - (१) आहार पर्याप्ति (२) शरीर पर्याप्ति (३) इन्द्रिय पर्याप्ति (४) श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति। ये चार पर्याप्तियाँ एकेन्द्रिय की अपेक्षा कही गयी है।

५. प्रश्न : असंयमी जीव के कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : असंयमी जीवों के ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९ तथा दस प्राण भी हो सकते हैं।

३ प्राण - एकेन्द्रिय अपर्याप्तक के।

४ प्राण - एकेन्द्रिय पर्याप्तक तथा द्वीन्द्रिय अपर्याप्तक के।

५ प्राण - त्रीन्द्रिय अपर्याप्तक के।

६ प्राण - द्वीन्द्रिय पर्याप्तक तथा चतुरिन्द्रिय अपर्याप्तक के।

७ प्राण - संज्ञी असंज्ञी अपर्याप्तक तथा त्रीन्द्रिय पर्याप्तक के।

८ प्राण - चतुरिन्द्रिय पर्याप्तक के।

९ प्राण - असंज्ञी पर्याप्तक के।

१० प्राण - संज्ञी पर्याप्तक के।

६. प्रश्न : वचन योग वाले असंयमी जीवों के कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : वचन योग वाले असंयमी जीवों के कम-से-कम ६ प्राण होते हैं -

२ इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना)

२ बल (वचन तथा काय)

१ श्वासोच्छ्वास

१ आयु (तिर्यञ्च)

यद्यपि द्वीन्द्रिय जीवों के कम-से-कम चार प्राण होते हैं लेकिन वचन योग की प्राप्ति होने पर छह प्राण हो जाते हैं। तथा अधिक-से-अधिक दस प्राण होते हैं। (संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों के)

७. प्रश्न : असंयमी जीवों के कितने उपयोग होते हैं?

उत्तर : असंयमी जीवों के अधिक-से-अधिक ९ उपयोग होते हैं-

६ ज्ञानोपयोग - ३ कुज्ञानोपयोगएवं ३ ज्ञानोपयोग

३ कुज्ञान - मिथ्यादृष्टि एवं सासादन सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा।

३ ज्ञान - चतुर्थगुणस्थानवर्ती सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा।

३ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षु दर्शनोपयोग तथा अवधिदर्शनोपयोग

चक्षुदर्शनोपयोग - चतुरिन्द्रिय से असंयत सम्यग्दृष्टि तक

अचक्षुदर्शनोपयोग - एकेन्द्रिय से असंयत सम्यग्दृष्टि पर्यन्त

अवधिदर्शनोपयोग - तृतीय-चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीवों के।

असंयमी जीवों के कम-से-कम ३ उपयोग होते हैं -

२ ज्ञानोपयोग - कुमतिज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग।

१ दर्शनोपयोग - अचक्षुदर्शनोपयोग।

८. प्रश्न : चक्षु-दर्शन वाले असंयमी जीवों के कितने आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : चक्षु-दर्शन वाले असंयमी जीवों के कम से कम ३४ आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

१२ अविरति, २१ कषाय (अनन्तानुबन्धी कषाय बिना)

१ योग (अनाहारक अवस्था में अथवा निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में)

तथा अधिक-से-अधिक ५५ आस्रव के प्रत्यय होते हैं। इसमें आहारकद्विक सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : सिद्ध भगवान के कौनसा संयम ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : सिद्ध भगवान न संयतासंयत हैं न असंयत हैं और न संयत हैं क्योंकि -

संयतासंयत भाव पंचम गुणस्थानवर्ती के ही पाया जाता है अन्यत्र नहीं। असंयतभाव संसारी चतुर्थगुणस्थान पर्यन्त स्थित जीवों को छोड़ अन्यत्र संभव नहीं है। **(ध. २/४५१)** उन्हें संयत नहीं कह सकते; क्योंकि आत्मा प्रमत्त या अप्रमत्त संयत भी नहीं है। **(स.सा.६ ता.)** अत: वे संयत आदि विकल्पों से अतीत हैं।

उनके बुद्धिपूर्वक निवृत्ति का अभाव होने से जिसलिए (जिस कारण) वे संयत नहीं हैं, इसलिए संयतासंयत भी नहीं हैं और असंयत भी नहीं हैं, क्योंकि, उनके सम्पूर्ण पापरूप क्रियाएँ नष्ट हो चुकी हैं **(ध. १/३८०)** हाँ, उन्हें अमल चारित्री कहा जा सकता है।

२. प्रश्न : ऐसे कौन-कौनसे संयम हैं जिनमें आहारकद्विक नहीं होते लेकिन औदारिक मिश्र हो जाता है?

उत्तर : दो संयमों में आहारकद्विक नहीं होते लेकिन औदारिक मिश्र हो जाता है - असंयम तथा यथाख्यात संयम। सामायिक छेदोपस्थापना में आहरकद्विक हैं लेकिन औदारिकमिश्र नहीं है। परिहारविशुद्धि तथा सूक्ष्मसाम्पराय संयम में आहारकद्विक तथा औदारिकमिश्र दोनों नहीं हैं।

३. प्रश्न : कौन-कौनसे योग सभी संयमों में होते हैं?

उत्तर : नौ योग सभी संयमों में होते हैं – ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिक काययोग।

- ४ मनोयोग ४ वचनयोग – चारों गति की अपेक्षा।
- नौ योग - मनुष्य की अपेक्षा सभी संयम में।
- नौ योग - तिर्यंचों की अपेक्षा असंयम तथा संयमासंयम में।
- यथाख्यात संयम में ग्यारहवें बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा।
- सत्य तथा अनुभय मनोयोग, सत्य तथा अनुभय वचनयोग और औदारिक काययोग तेरहवें गुणस्थान वालों के भी होते हैं।

४. प्रश्न : यथाख्यात चारित्र और सामायिक चारित्र के योग में क्या अन्तर है?

उत्तर : दोनो संयमों के योगों की संख्या में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनों में ग्यारह-ग्यारह योग पाये जाते हैं लेकिन उनके नामों में अन्तर है -

यथाख्यात संयम में - ४ मनोयोग, ४ वचन योग, औदारिकद्विक और कार्मण काययोग।

सामायिक चारित्र में - ४ मनोयोग, ४ वचन योग, औदारिक काययोग तथा आहारकद्विक ये ११ योग होते हैं।

५. प्रश्न : किस-किस संयम में कौन-कौन सी कषाय रह सकती है?

उत्तर :

संयम		**कषायें**
सामायिक-छेदोपस्थापना	-	बादर संज्वलन के उदय रहते हुए होते हैं।
परिहारविशुद्धि	-	बादर संज्वलन के उदय रहते हुए होते हैं लेकिन छठे-सातवें गुणस्थान में ही होता है।
सूक्ष्मसाम्पराय संयम	-	सूक्ष्म संज्वलन लोभ के उदय रहते होता है।
यथाख्यात संयम	-	चारित्र मोह अर्थात् २१ कषायों के उपशम या क्षय से होता है।
संयमासंयम	-	प्रत्याख्यान तथा संज्वलन के उदय रहते हुए होता है।
असंयम	-	२५ अथवा २१ कषायों के उदय रहते हुए होता है।

६. प्रश्न : सूक्ष्मसाम्पराय तथा यथाख्यात संयम की लेश्या में क्या अन्तर है?

उत्तर : सूक्ष्म साम्पराय संयम में कषायों से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति रूप लेश्या है जबकि यथाख्यात संयम में ''लिम्पति इति लेश्या'' होती है। यथाख्यात संयम में कषाय का अभाव होने से उपचार से लेश्या कही गई है। **(ध. १ के आधार से)**

७. प्रश्न : कौन-कौन से संयम में आहारक-अनाहारक दोनों होते हैं?

उत्तर : असंयम तथा यथाख्यात संयम में आहारक-अनाहारक दोनों होते हैं -

असंयम में - पहले, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान की विग्रहगति में कार्मण काययोग के समय अनाहारक होते हैं। तथा पहले, दूसरे, चौथे गुणस्थान में विग्रहगति को छोड़कर शेष समय में तथा तीसरे गुणस्थान में आहारक होते हैं।

यथाख्यात संयम में - जब तेरहवें गुणस्थान में समुद्घात के समय भगवान कार्मण काय-योग में स्थित होते हैं तब तथा चौदहवें गुणस्थान वाले जीव अनाहारक होते हैं और ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान वाले तथा कार्मण काययोग को छोड़ कर शेष समय में तेरहवेंगुणस्थान वाले भी आहारक ही होते हैं।

८. प्रश्न : किस-किस संयम में कितने-कितने प्राण होते हैं?

उत्तर :

संयम		**प्राण**
(१) सामायिक-छेदोपस्थापना में	-	७/१० प्राण। आहारक मिश्र की अपेक्षा ७ प्राण छठे गुणस्थान में तथा छठे से नवमें गुणस्थान तक दस प्राण।
(२) परिहारविशुद्धि में	-	१० प्राण - छठे - सातवें गुणस्थान में।
(३) सूक्ष्मसाम्पराय में	-	१० प्राण - दसवें गुणस्थान में।
(४) यथाख्यात संयम में	-	१, २, ४, १० प्राण। १ प्राण-अयोगकेवली भगवान के। २ प्राण-सयोगकेवली के समुद्घात अवस्था में। ४ प्राण-सयोगकेवली के।

१० प्राण-११ वें, १२ वें गुणस्थान में।

(५) संयमासंयम में - १० प्राण-पंचमगुणस्थानवर्ती मनुष्य-तिर्यञ्चों के।

असंयम में प्राण - देखें/असंयम प्रश्न ५।

९. प्रश्न : ऐसे कौनसे संयम हैं जिनमें संज्ञा नहीं पाई जाती है?

उत्तर : यथाख्यात संयम में कोई संज्ञा नहीं पाई जाती है क्योंकि संज्ञाओं का सद्भाव मोह के उदय में ही होता है।

१०.प्रश्न : यथाख्यात संयम में उपयोग ज्यादा है या सूक्ष्मसाम्पराय संयम में?

उत्तर : यथाख्यात संयम में सूक्ष्मसाम्पराय संयम की अपेक्षा दो उपयोग ज्यादा हैं -
यथाख्यात संयम में - ५ ज्ञान ४ दर्शन, सूक्ष्मसाम्पराय संयम में - ४ ज्ञान ३ दर्शन
यथाख्यात संयम में केवलज्ञान - केवलदर्शन रूप उपयोग भी होते हैं।

११.प्रश्न : ऐसे कौनसे ज्ञानोपयोग हैं जो यथाख्यात संयमी के तो होते हैं लेकिन परिहारविशुद्धि वालों के नहीं होते हैं?

उत्तर : दो ज्ञानोपयोग ऐसे हैं जो यथाख्यात संयमी के तो होते हैं लेकिन परिहारविशुद्धि वालों के नहीं होते - (१) मन:पर्यय ज्ञानो. (२) केवल ज्ञानोपयोग।

१२.प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से आस्रव के कारण हैं जो केवल असंयमी के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के इकतीस कारण ऐसे हैं जो केवल असंयमी के होते हैं -
५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, १२ कषाय तथा २ योग (वैक्रियिकद्विक काययोग)
इनमें से पाँच प्रत्यय असंयमी के साथ-साथ संयमासंयम में भी होते हैं -
त्रस सम्बन्धी अविरति तथा प्रत्याख्यान चौकड़ी।
संयमासंयमी को सकल संयम में नहीं लिया गया है।

१३.प्रश्न : आस्रव के ऐसे कौन से प्रत्यय हैं जो संयमी और असंयमी दोनों के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के २४ प्रत्यय संयमी और असंयमी दोनों के होते हैं -
१३ कषाय - ४ संज्वलन तथा ९ नोकषाय
११ योग - ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, औदारिकद्विक तथा कार्मण काययोग। आहारकद्विक संयमी के ही होता है।

१४.प्रश्न : क्या सूक्ष्मसाम्पराय संयम के बराबर आस्रव के प्रत्यय सामायिक-छेदोपस्थापना में भी हो सकते हैं?

उत्तर : हाँ, जब नवमें गुणस्थान में संज्वलन क्रोध, मान, माया का क्षय हो जाता है; संज्वलन बादर लोभ का उदय रहता है उस समय सामायिक-छेदोपस्थापना संयम के साथ भी सूक्ष्मसाम्पराय संयम के समान नौ योग एवं एक कषाय रूप आस्रव के १० प्रत्यय होते हैं।

– प्रश्नपत्र –

१. उपयुक्त विकल्प पर (✓) का निशान लगाइये -

(i) **किस-किस संयम में एक ही संज्ञा होती है ?**

(अ) सामायिक छेदोपस्थापना (ब) सामा.छेदो.सूक्ष्म.

(स) सूक्ष्म साम्पराय (द) कोई नहीं

(ii) **सबसे कम ध्यान कौनसे संयम में होते हैं?**

(अ) सूक्ष्मसाम्पराय (ब) यथाख्यात

(स) परिहारविशुद्धि (द) संयमासंयम

(iii) **कौनसे संयम में पुरुष वेद ही होता है?**

(अ) यथाख्यात (ब) परिहारविशुद्धि

(स) असंयम (द) कोई नहीं

(iv) **कितने संयम में असंयम नहीं होता है?**

(अ) १ (ब) ४

(स) ६ (द) कोई नहीं

(v) **किस संयम में आहारकद्विक है लेकिन औदारिक मिश्र नहीं है ?**

(अ) यथाख्यात (ब) परिहारविशुद्धि

(स) सूक्ष्म साम्पराय (द) सामायिक

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए –

(i) कितने संयमों में मति-श्रुत-अवधिज्ञान पाये जाते हैं?

(ii) परिहारविशुद्धि संयम में कितने वेद नहीं होते हैं?

(iii) ऐसा कौनसा संयम है जहाँ देवगति नहीं होती लेकिन तिर्यञ्चगति होती है?

(iv) किस संयम में एक गुणस्थान तथा एक गति होती है?

(v) संसार में कौनसा संयम भोगभूमि में भी पाया जाता है?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए –

(i) यथाख्यात संयम में उपशम सम्यक्त्व नहीं होता है।

(ii) सामायिक संयम में अवेद अवस्था भी होती है।

(iii) संयमासंयम में आठ कषायें नहीं होती हैं।

(iv) असंयमी जीवों के अनन्तानुबन्धी कषाय भी होती है।

(v) संसार में संयम मार्गणा से रहित जीव भी पाये जाते हैं।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिए –

(i) सूक्ष्म साम्पराय संयम में.............लेश्या.............कषाय तथा.............योग नहीं होते हैं।

(ii) असंयम में.............ज्ञान.............वेद तथा.............संज्ञा होती हैं।

(iii) परिहार विशुद्धि संयम में.............संयम.............योग तथा.............उपयोग होते हैं।

(iv) यथाख्यात संयम में.............सम्यक्त्व.............पर्याप्ति तथा.............ध्यान होते हैं।

(v) संयमासंयम में.............दर्शन.............गुणस्थान तथा.............जाति होती है।

५. सही जोड़ी बनाइये –

(i)	असंयम	-	सूक्ष्म लोभ
(ii)	सयोग केवली	-	पाँचवाँ गुणस्थान
(iii)	सूक्ष्म साम्पराय	-	यथाख्यात
(iv)	संयमासंयम	-	छठा, सातवाँ गुणस्थान
(v)	परिहार विशुद्धि	-	अयोग केवली
(vi)	आहारकद्विक	-	असंयम
(vii)	आस्रव के ५५ प्रत्यय	-	प्रथम गुणस्थान
(viii)	यथाख्यात	-	सामायिक संयम

– उत्तरमाला –

१. (i) स (ii) अ (iii) ब (iv) स (v) द।

२. (i) सात (ii) दो (iii) संयमासंयम (iv) सूक्ष्मसाम्पराय (v) असंयम।

३. (i) ना (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना।

४. (i) ५,२४,६ (ii) ६,३,४ (iii) १,९,६ (iv) २,६,४ (v) ३, १, १८ लाख।

५. (i) प्रथम गुणस्थान (ii) यथाख्यात (iii) सूक्ष्म लोभ (iv) पाँचवाँ गुणस्थान (v) छठा, सातवाँ गुणस्थान (vi) सामायिक संयम (vii) असंयम (viii) अयोग केवली।

पारिभाषिक शब्दावली

भेदात्मक शब्द

♦♦♦

卐 प्रशस्ति 卐

भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर भगवान गौतम स्वामी, उन्हीं की परम्परा में आचार्य धरसेन स्वामी...... समन्तभद्र स्वामी, आचार्य कुन्दकुन्द भगवंतों की परम्परा अक्षुण्ण रूप से चली आ रही है। उसी परम्परा में श्रमण संस्कृति के उन्नायक चारित्र-चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज, उनके पट्ट शिष्य आचार्य वीरसागर जी महाराज, उनके पट्ट शिष्य आचार्य शिवसागर जी महाराज के प्रथम शिष्य आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज, उनके प्रथम शिष्य आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागर जी महाराज तथा उनके द्वितीय शिष्य **आचार्य-कल्प श्री विवेकसागर जी महाराज की पंचम शिष्या आर्यिका विज्ञानमती के द्वारा......** जहाँ उपसर्गविजेता भगवान पार्श्वनाथ स्वामी का अतिशयकारी रमणीक मंदिर है; जिसकी उत्तर दिशा में गोलाकोट नाम का अतिशय क्षेत्र है, जहाँ आदिनाथ भगवान का मनोहारी पुरातन जिनबिम्ब मुख्य आकर्षण रूप विराजमान है। पूर्व दिशा में सीरोंज जी अतिशय क्षेत्र है, जहाँ शांतिप्रदाता १००८ शांतिनाथ भगवान का विशाल जिनबिम्ब सहज ही दर्शकों के मन को मोह लेता है। दक्षिण दिशा में चंदेरी नगर में भारत का प्रथम विशाल चौबीसी जिनालय यात्रियों की यात्रा का प्रमुख आकर्षण केन्द्र है, यहाँ से लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर खंधारगिरि क्षेत्र भी है जहाँ पर विराजित जिनबिम्बों की छटा अपने आप में अनोखी है.... ऐसे **बामौर कलाँ (शिवपुरी) (म.प्र.) के वीर निर्वाण संवत् 2535 (सन् 2009) के पावन वर्षायोग** में कार्तिक कृष्णा अष्टमी रविवार को इस **चउवीस-ठाणा** ग्रन्थ में गतिमार्गणा से संयम मार्गणा तक के प्रश्नोत्तर पूर्ण हुए। जब तक पानी, पवन, पृथ्वी, पावक, पतंग (सूर्य) रहे, तब तक माँ जिनवाणी जयवन्त रहे। हम सब जिनवाणी के अंश रूप चउबीस ठाणा ग्रन्थ को पढ़ें, सुनें, श्रद्धा करें तथा चारित्र धारण करके मोक्षमार्ग में बढ़ें, मोक्ष को प्राप्त करें। मेरी भगवान से यही प्रार्थना है।

वर्धताम् जिनशासनम्। शुभं भूयात्॥

चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा

(द्वितीय खण्ड)

प्रस्तुति

आर्यिका श्री १०५ विज्ञानमति माता जी

प्रकाशक

श्रावक संस्कार साहित्य केन्द्र

भोपाल (मध्यप्रदेश)

www.aaryikavigyanmatiji.in

चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा (द्वितीय खण्ड)

प्रस्तुति : आर्यिका श्री १०५ विज्ञानमति माताजी

संयोजन : आर्यिका श्री १०५ आदित्यमति माताजी

सम्पादन : डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी, जोधपुर

संस्करण : चतुर्थ, जनवरी, २०२३

आवृत्ति : ११००

प्राप्तिस्थान : श्रावक संस्कार साहित्य केन्द्र
तीर्थधाम श्री नन्दीश्वर द्वीप जिनालय
जैन नगर, लालघाटी, भोपाल-४६२०३२
९४२५३-७४८९७

संकल्पना : निधि कम्प्यूटर्स, जोधपुर

मुद्रक : विकास ऑफसेट प्रिंटर्स एण्ड पब्लिसर्स
भोपाल (मध्यप्रदेश)

卐 सम्पादकीय 卐

जैन मत में उपदेश चार अनुयोगों के माध्यम से दिया गया है। पूजा के अन्त में बोले जाने वाले शान्तिपाठ में चारों अनुयोगों का क्रम इस तरह बताया है - **प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः,** यह क्रमपद परम्परा से चल रहा है और यह क्रम स्वाध्याय के लिए अनुकरणीय भी है। परन्तु आज के जैन परिदृश्य पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि सबसे कम प्रतिशत करणानुयोग के स्वाध्यायियों का है। **त्रिलोकसार टीका** में ''**केवलज्ञानसमानं करणानुयोगनामानं परमागमं**.....'' इन शब्दों द्वारा करणानुयोग को केवलज्ञान समान कहा है, परमागम कहा है।

करणानुयोग में सूक्ष्मतम कर्मसिद्धान्त तथा लोकरचना, कालप्ररूपण, तीर्थंकरों का अन्तराल आदि प्ररूपित होते हैं। इस अनुयोग के स्वाध्याय से बुद्धि अतिशय सूक्ष्मज्ञ हो जाती है तथा तत्त्वज्ञान निर्मल होजाता है। **मोक्षमार्ग प्रकाशक** में **पं. टोडरमल जी** लिखते हैं –

''बहुरि करणानुयोगविषै जीवनि की वा कर्मनि का विशेष वा त्रिलोकादिक की रचना निरूपण करि जीवनि को धर्मविषै लगाईए है।......बहुरि ऐसे विचारविषै उपयोग रमि जाय, तब पाप प्रवृत्ति छूटि स्वयमेव तत्काल धर्म उपजै है। तिस अभ्यासकरि तत्त्वज्ञान की प्राप्ति शीघ्र हो है। बहुरि ऐसा सूक्ष्म यथार्थ कथन जिनमत विषै ही है, अन्यत्र नाहीं, ऐसे महिमा जानि जिनमत का श्रद्धानी हो है।..... इस अभ्यास तैं तत्त्वज्ञान निर्मल हो है।..... तत्त्वज्ञान निर्मल भए आप ही विशेष धर्मात्मा हो है। बहुरि अन्य ठिकाने उपयोग को लगाईए तो रागादिक की वृद्धि होय अर छद्मस्थ का एकाग्र निरन्तर उपयोग रहे नाहीं। तातैं ज्ञानी इस करणानुयोग का अभ्यास विषै उपयोग को लगावै है।''

करणानुयोग में गणित वर्णन की मुख्यता है। ग्रन्थ भी प्राकृत, संस्कृत के हैं, इस प्रकार विषय और भाषा-दोनों की दुर्बोधता के कारण इसके अध्ययन में सहज प्रवृत्ति नहीं होती परन्तु आज प्राय: समस्त ग्रन्थों का हिन्दी भाषा में अनुवाद हो चुका है और युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप इन मूल ग्रन्थों के आधार से अनेक लघु ग्रन्थ भी लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। नियमित सामूहिक स्वाध्याय के अभाव की पूर्ति, आज लघु अवधि के शिक्षणशिविरों के आयोजनों के माध्यम से करने का प्रयास किया जा रहा है अत: तदनुरूप 'प्रश्नोत्तरी' विधा में नवीन साहित्य का निर्माण भी हो रहा है और सार स्वरूप करण, भाव, गुणस्थान, मार्गणा, चौबीस ठाणा आदि करणानुयोगी विषयों पर लघु रचनाएँ भी प्रकाश में आरही हैं।

बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से ज्ञानप्राप्ति की एक दीर्घ परम्परा रही है जो आज भी जीवन्त है। **षट्खण्डागम** के **प्रथम खण्ड जीवस्थान** में गुणस्थान, मार्गणा, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण आदि बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से जीवराशि का विस्तृत अध्ययन है। **धवला टीका** में भी **आचार्य वीरसेन** ने प्रत्येक भेद में बीस प्ररूपणाओं को घटित करते हुए आलाप बताये हैं। आलापों के माध्यम से वैविध्य

का व्यापक ज्ञान होता है। प्रारम्भ में बीस प्ररूपणाओं के माध्यम से ही चर्चा की जाती रही है। **गोम्मटसार जीवकाण्ड** की **कर्णाट वृत्ति** और **जीवतत्त्व प्रदीपिका** नामक टीका में भी इन बीस प्ररूपणाओं को घटित किया गया है।

विक्रम की १६वीं शताब्दी में हुए **तारणस्वामी** ने चौदह ग्रंथों की रचना की। उनमें से एक ग्रन्थ है - **'चौबीस ठाणा'**। इसमें उन्होंने ध्यान, आस्रव, जाति और कुल इन चार स्थानों को जोड़ा और बीस प्ररूपणाएँ, 'चौबीस ठाणा' जानी जाने लगीं। तब से ये इसी रूप में अध्ययन की जाती रही हैं। विगत सदी में सन् १९७९ में **पण्डित रतनचन्द जी जैन मुख्तार** ने आचार्यकल्प १०८ श्री श्रुतसागर जी महाराज की प्रेरणा से **'गुणस्थान - मार्गणा चर्चा'** नामक लघु पुस्तक धवल, जयधवल आदि ग्रन्थों के आधार से लिखी। इसमें उन्होंने बीस प्ररूपणाओं (स्थानों) में सात स्थान-बंधप्रत्यय, ध्यान, जघन्यकाल, उत्कृष्टकाल, जघन्य अंतर, उत्कृष्ट अंतर और भाव-जोड़कर २७ स्थान सम्बन्धी आलाप घटित किये। यह पुस्तक शांतिवीरनगर श्रीमहावीरजी से प्रकाशित हुई है।

अब तक 'चौबीस ठाणा' प्रकरण केवल तालिकाओं के रूप में प्रकाशित होते रहे हैं। अब प्रश्नोत्तरों सहित उनका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है। सितम्बर २००९ में (स्व.) आर्यिका वर्धितमती माताजी की छठी पुण्यतिथि के अवसर पर **पूज्य आर्यिका प्रशान्तमती माताजी** द्वारा प्रस्तुत **'गुणस्थान मार्गणा में जीव-विवेचन'** (चौबीस ठाणा प्रश्नोत्तरी) पुस्तक श्रुतोदय ट-स्ट, धरियावद से प्रकाशित हुई है। इसमें प्रारम्भ में चौबीस स्थानों के भेदों के लक्षण हैं। अनन्तर प्रत्येक प्रकरण में तत्सम्बन्धी तालिका एवं प्रश्नोत्तर भी हैं। तालिकाओं की संख्या ७४ और प्रश्नोत्तरों की संख्या लगभग ६५० है।

पूज्य **आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी** द्वारा प्रस्तुत **चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा** का **प्रथम खण्ड** जनवरी २०१० में प्रकाशित हुआ था। इस खण्ड में गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान और संयम मार्गणा के प्रकरण संकलित हैं। प्रारम्भ में चौबीस स्थानों के नाम व भेद हैं। अनन्तर प्रत्येक भेद के सामान्य प्रश्नोत्तर, फिर तालिका, फिर विशेष प्रश्नोत्तर, फिर समुच्चय प्रश्नोत्तर दिये गये हैं। अन्त में, पाठकों की बुद्धि की परीक्षा हेतु प्रकरण से सम्बन्धित पाँच प्रकार के कुल २८ प्रश्न दिये हैं और इनके उत्तर भी लिखे गये हैं। अध्येताओं को इससे विशेष लाभ होगा। ठीक इसी शैली में प्रकाशित **चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा** का यह **दूसरा खण्ड** आपके कर-कमलों में प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड में ८ स्थानों के प्रकरण संकलित हुए थे। शेष १६ स्थानों की सामग्री से इस खण्ड का कलेवर सुशोभित है। इसमें कुल ४४ तालिकाएँ और ९६९ प्रश्नोत्तर संकलित हैं।

आठ मार्गणाओं से सम्बन्धित प्रथम खण्ड में कुल ४२ तालिकाएँ और ६३८ प्रश्नोत्तर संकलित हैं। इनका सम्यक् अध्ययन पाठकों के उपयोग को एकाग्र करेगा, ऐसा विश्वास है। पूज्य माताजी ने **'स्वकथ्य'** और **'नेपथ्य में'** कृति की उद्‌भावना पर प्रकाश डालते हुए अपने अनुभव को ऐसी ही अभिव्यक्ति दी है। निश्चय ही, पूज्य माताजी की यह नवीन कृति पूर्वरचित कृतियों के समान ही स्वाध्यायी

बन्धुओं की सराहना का विषय बनेगी। असाधारण आत्मबल की धनी पूज्य माताजी अपनी अभीक्ष्ण ज्ञानाराधना के फलस्वरूप अपने पल-पल को शुभोपयोग में ही व्यतीत करती हैं। इन प्रश्नोत्तरों के लेखन के लिए भी पूज्य माताजी ने अनेक ग्रन्थों का गहन अध्ययन-पारायण किया है। प्रश्न का उत्तर लिखते हुए ग्रन्थ का सन्दर्भ दिया है। मैं विदुषी **आर्यिकाश्री विज्ञानमती माताजी** के श्रीचरणों में सविनय वन्दामि निवेदन करता हूँ।

पू.माताजी की संघस्थ शिष्या **आर्यिकाश्री आदित्यमती माताजी** ने 'नेपथ्य में' लेख के माध्यम से पूज्य माताजी के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डाला है और **'चौबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा'** को प्रकाश में लाने की पृष्ठभूमि स्पष्ट की है। मैं आपका आभारी हूँ।

प्रस्तुत कृति के सम्पादन-प्रकाशन का भार मुझ अल्पज्ञ पर डालकर आर्यिकासंघ ने मुझ पर जो अनुग्रह किया है और फलस्वरूप जिनवाणी की सेवा का जो अवसर मुझे प्रदान किया है, एतदर्थ मैं पूज्य आर्यिका विज्ञानमती माताजी व उनके संघस्थ सभी आर्यिकाओं का चिर कृतज्ञ हूँ। मैं पूज्य माताजी व संघस्थ आर्यिकावृन्द के श्रीचरणों में सविनय वन्दामि निवेदन करता हूँ।

संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों ने अपेक्षित सूचनाएँ व निर्देश भेज कर मेरे कार्य को आसान किया है, एतदर्थ मैं उनका आभारी हूँ।

तालिकाओं सहित इस ग्रन्थ के सुन्दर, सुसंयोजित कम्प्यूटरीकरण एवं सुरुचिपूर्ण मुद्रण के लिए मैं **निधि कम्प्यूटर्स, जोधपुर** के **डॉ. क्षेमंकर** को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

ग्रन्थ के इस संस्करण के प्रकाशन में सहयोगी **किशनगढ़** निवासी **श्रीमान् ज्ञानचन्द, धर्मचन्द, विशेषकुमारजी दगड़ा** के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ और अपने प्रमाद व अज्ञान से ग्रन्थ के सम्पादन-प्रकाशन में रही खामियों के लिए सविनय क्षमायाचना करता हूँ।

विनीत

डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी
'अविरल', ५४-५५, इन्द्रा विहार
सेक्शन ७, न्यू पावर हाउस रोड, जोधपुर

दशलक्षण पर्व
सन् २०१५

♦♦♦

卐 स्वकथ्य 卐

लगभग ४०-५० वर्ष पहले 'चउबीस ठाणा' का एक गुटका निकला था। आज भी घरों में वृद्ध लोगों के पास वह गुटका मिलता है। 'चउबीस ठाणा' पढ़ने की कई लोगों की बहुत रुचि भी रहती है, पढ़ते भी हैं लेकिन सामान्य रूप से यदि चउबीस ठाणा का एक पाठ पढ़ते हैं तो पाँच सात मिनट में एक पाठ पूरा हो जाता है, क्योंकि चौबीस स्थानों में से जिसको हम पढ़ रहे हैं उस स्थान में कौन-कौन से स्थान के कितने-कितने उत्तर भेद पाये जाते हैं, इतना ही कथन करना होता है। इसलिए एक पाठ को हम एक-डेढ़ घंटे तक नहीं पढ़ सकते हैं। वास्तव में, चउबीस ठाणा को यदि गहराई से पढ़ा जावे तो एक-एक पाठ को पढ़ने में घंटों लग सकते हैं।

'चउबीस ठाणा' एक गहन वन है जिसमें चौदह मार्गणा रूप फलों से लदे लाखों वृक्ष हैं, गुणस्थानादि की प्ररूपणा रूप खुशबू वाले हजारों बेल-बूटे हैं, एक मार्गणा से दूसरी मार्गणा तथा इनमें भी निर्वृत्यपर्याप्तक, पर्याप्तक, विग्रहगति आदि रूप सैकड़ों पगडण्डियाँ हैं जिनके माध्यम से एक-एक वृक्ष, लता तथा फुलवारियों में पहुँचकर उनमें घूमने का आनन्द लिया जा सकता है। ऋषि-मुनि तथा प्राज्ञजन इसी वन में अपने मन मर्कट को रमाते रहते हैं, विद्वान् रूपी पक्षी कलरव करते हुए चित्त प्रसन्न करते हैं।

हम भी इसका आस्वादन ले सकते हैं। ध्यान के समय अथवा बीमारी, उपसर्ग, परिषहादि के समय इनमें डूबकर सहज रूप से साधक समता भाव को धारण कर सकता है। सच में जब ज्येष्ठ-वैशाख का महीना आता है, लम्बे-लम्बे दिन होते हैं, शरीर से पसीने की धाराएँ बहती रहती हैं, ऊपर से गरम-गरम लू, लपटें चलती रहती हैं उस समय यदि हम लोग 'चउबीस ठाणा' पढ़ने बैठ जाते हैं तो दोपहरी के दो-तीन घंटे तो कैसे और कब निकल जाते हैं, पता ही नहीं लग पाता है।

कभी किसी का स्वास्थ्य खराब होने लगता है, जी मचलाता है, कैसा-ही-कैसा लगता है तो 'चउबीस ठाणा' की क्लास लगा लेते हैं तो उपयोग ऐसा बदल जाता है कि क्या और कैसी वेदना हो रही थी कुछ भी समझ में नहीं आता है। हम लोगों ने लगभग ५ वर्ष तक 'चउबीस ठाणा' को सामूहिक क्लास लगाकर पढ़ा। क्लास के समय यदि कोई आता है और वह चउबीस ठाणा से परिचित है तो उसे इस प्रकार से चउबीस ठाणा पढ़ने का उत्साह और रुचि अवश्य ही उत्पन्न हो जाती है और यदि वह चउबीस ठाणा से परिचित नहीं है लेकिन स्वाध्याय के प्रति उसकी रुचि है तो भले ही क्लास में कुछ भी समझ में नहीं आवे, उसे आनन्द अवश्य आता है। कोई तो पूछ ही बैठता है कि क्या हम रोज आपकी क्लास में आ सकते हैं ? इन सबसे लगता है कि चउबीस ठाणा को पढ़ने की यदि विधि आ जावे और एक बार भी चउबीस ठाणा पढ़ ले तो उसे जैन तत्त्वों का काफी ज्ञान हो सकता है। उसे लगभग सभी ग्रन्थ थोड़े-थोड़े तो समझ में आने ही लगते हैं। **यह 'चउबीस ठाणा' प्रकरण भी तत्त्वार्थसूत्र के समान जैनागम, जैनधर्म को समझने की कुंजी है।**

'चउबीस ठाणा' की क्लास में उपस्थित होने वाले कई गृहस्थों, ब्रह्मचारियों तथा संघस्थ आर्यिकाओं की भी भावना थी कि इन प्रश्नों का संकलन करके यदि एक ग्रन्थ बन जावे तो कई लोगों को 'चउबीस ठाणा' पढ़ने की विधि आ सकती है, वे भी इस गम्भीर विषय का आनन्द ले सकते हैं। सबकी भावना को देखते हुए मेरा भी भाव हो गया कि 'चउबीस ठाणा' के प्रश्नोत्तरों का संकलन कर ही देना चाहिए ताकि सबको लाभ मिल सके और हमारी संस्कृति जीवन्त बनी रहे।

इस ग्रन्थ में चौबीस स्थानों के उत्तर भेदों के लक्षण आचार्यप्रणीत ग्रन्थों से लिखे गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर भी आचार्य महाराज के शब्दों में ही दिये गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर आगम को आधार बनाकर अपनी भाषा में लिखे गये हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तर मैंने अपने तथा विद्वानों के विचारों से लिखे हैं। विद्वानों के विचार तो अनुमोदनीय हैं लेकिन मेरी अल्पज्ञता से जो लिखे गये हैं, उनमें यदि कोई त्रुटि हो, आगम के विरुद्ध कथन हो तो विद्वद्जन सूचित अवश्य करें ताकि आगे सुधार किया जा सके।

'चउबीस ठाणा' कैसे पढ़ें-पढ़ावें

चउबीस-ठाणा पढ़ने के लिए सबसे पहले चौबीस स्थानों के उत्तर भेद तथा उनके नाम अच्छी तरह स्मरण कर लें। उसके बाद चौबीस स्थानों के किस उत्तर भेद में कौन-कौन सा गुणस्थान पाया जाता है, अथवा कितने गुणस्थान होते हैं, इसे अपने दिमाग में अच्छे से बिठालें। तत्पश्चात् चउबीस-ठाणा पढ़ना प्रारंभ करें। सबसे पहले गति-मार्गणा को पढ़ते समय गति एवं उसके उत्तर भेदों, लक्षणों को ध्यान से पढ़ लें। उसके बाद आप नरक-गति का विवरण पढ रहे हैं तो नरक में एकेन्द्रिय...... आदि जाति क्यों नहीं होती है ? कौन-कौन से योग होते हैं। कौन-कौनसे योग नहीं होते हैं, आहारकद्विक काय योग क्यों नहीं होता है ? नारकी के कार्मण-काययोग किस-किस गुणस्थान में होता है ? क्या सभी नारकियों की व्यवस्थाएँ एक जैसी होती हैं ? नारकियों में कम-से-कम कितनी कषायें होती हैं ? किस नरक में कौन सी लेश्या होती है ? कौन से सम्यक्त्व को लेकर जीव नरक में जा सकता है ? सम्यक्त्व को लेकर कौन से नरक में नहीं जा सकते हैं ? नारकी असंज्ञी क्यों नहीं होते हैं ? नारकी के दूसरे गुणस्थान में अनाहारक-अवस्था क्यों नहीं होती है ? नारकियों के कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ और प्राण होते हैं ?.... आदि अनेक प्रकार के प्रश्न उठाकर पढ़ें-पढ़ावें तो एक पाठ अर्थात् मात्र नरकगति के पाठ को पढ़ने में एक घण्टा सहज रूप से लग सकता है।

उदाहरण के तौर पर इसी प्रकार योग-मार्गणा पढ़ते समय **प्रश्न** उठायें कि औदारिक काययोग किसके होता है ? **उत्तर** - मनुष्य तिर्यञ्चों के।

प्रश्न - क्या भगवान के भी औदारिक काययोग होता है ? **उत्तर** हाँ।

प्रश्न - क्या सभी भगवन्तों के भी औदारिक काययोग होता है **? उत्तर** - नहीं, चौदहवें गुणस्थान वाले अरहंत भगवान तथा सिद्ध भगवान के कोई भी योग नहीं होता है क्योंकि वे अयोगी होते हैं।

प्रश्न – मनुष्य-तिर्यंचों के वैक्रियिक काययोग क्यों नहीं होता है ?

उत्तर – क्योंकि वैक्रियिक काय-योग देव-नारकियों के ही होता है।

प्रश्न – ऐसा कौनसा काय-योग है, जो तीन समय से ज्यादा नहीं होता है ?

उत्तर – कार्मण-काययोग।

प्रश्न – क्या संसार में ऐसे कोई जीव हैं, जिनके काययोग नहीं है ?

उत्तर – ना, क्योंकि काययोग एकेन्द्रिय से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक होता है। अथवा अयोगी भगवान के कोई भी योग नहीं होता है, तो भी वे संसारी ही हैं, क्योंकि उनके त्रस नाम कर्म का उदय पाया जाता है।

प्रश्न – क्या मनोयोग के बिना भी जीव जीवित रह सकता है ?

उत्तर – हाँ, एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों तक के मनोयोग नहीं पाया जाता है।

प्रश्न – क्या कोई ऐसा वचन योग है जो चींटी के भी हो और भगवान के भी हो ?

उत्तर – हाँ, अनुभय वचनयोग चींटी के भी होता है और भगवान के भी होता है।

इस प्रकार अनेकानेक प्रश्न उठाकर तालिका पढ़ें। उसके बाद इस ग्रंथ में दिये गये प्रश्नोत्तर पढ़ें-पढ़ावें। यदि इस ढंग से कोई पूरा **चउबीस ठाणा** पढ़ ले तो मुझे विश्वास है कि वह करणानुयोग में प्रवेश कर सकता है।

इस ग्रन्थ में, वास्तव में, मेरा कुछ भी नहीं है। यह गुरुओं से प्राप्त ज्ञान का ही प्रसाद है कि मुझ अल्पज्ञा में 'चउबीस ठाणा' जैसे कठिन विषय में भी प्रवेश करने का साहस आ पाया। मेरे विचार से तो गुरुओं के आशीर्वचन एवं प्रसाद के बिना मोक्ष-मार्ग में एक कदम भी नहीं बढ़ा जा सकता है। अपने मोक्षमार्ग की पूर्णता हेतु दीक्षागुरु परम पूज्य स्वर्गीय **आचार्यकल्प श्री विवेकसागर जी महाराज** एवं **आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागर जी महाराज** के चरणों में कोटि-कोटिश:वन्दन निवेदित करती हूँ।

'आचारसार' आदि ग्रन्थों के रचयिता एवं टीकाकार आचार्यवर्यों, मुनिवृन्दों के चरणों में भी मेरा बार-बार नमोऽस्तु।

परम पूज्य **मुनिश्री प्रभातसागरजी महाराज** ने भी एक बार पाण्डुलिपि का अवलोकन करके मुझे आवश्यक निर्देशन दिये, मैं उनको भी नहीं भूल सकती, उनको मेरा बारम्बार नमोस्तु...।

और भी इस ग्रन्थ के लेखन में प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से सहयोग करने वाले सभी के लिए मेरा यथायोग्य विनय, स्नेह, वात्सल्य। सबके कर्मों का क्षय हो, दु:खों का क्षय हो, बोधि की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधिमरण हो, यही भावना।

– आर्यिका विज्ञानमती

♦♦♦

卐 नेपथ्य में...... 卐

परम पूज्या **आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी** का जन्म कुँवार शुक्ला पंचमी सन् १९६३ को भीण्डर नगर (जिला उदयपुर राजस्थान) में श्रेष्ठी बालूलाल जी की धर्मपरायणा पत्नी श्रीमती कमला देवी की कुक्षि से हुआ। आप बचपन से ही धार्मिक संस्कारों की फुलवारी में ही खेली और पली-पुषी हैं। उसकी सुरभि से ही आपका जीवन सुरभित रहा है। ८ वर्ष की उम्र में ही आपको आचार्य शिवसागर जी महाराज के चरणों में बैठकर धार्मिक अध्ययन करने का सौभाग्य मिला। उसी समय से जैनागम का अध्ययन करने की आपकी ललक बनी रही और जब कभी साधु-संतों का सान्निध्य मिलता, आप उनके पास जाकर जिन-सिद्धान्तों का अध्ययन अवश्य करतीं एवं स्वाध्याय करके अपने परिणामों में निर्मलता बनाये रखतीं। घर में रहकर भी अपने आपको पापों से बचाने का प्रयास करतीं और आत्मकल्याण की भावना भाते-भाते यही सोचती कि काश! मैं भी आर्यिका बन जाऊँ। आत्मिक पुरुषार्थ करने पर भी पूर्वोपार्जित चारित्रमोहनीय कर्म के उदय के कारण, न चाहते हुए भी माता-पिता ने आपका विवाह कर दिया, फिर भी आपकी भावना भोगों में नहीं रही। गृहस्थी रूपी कीचड़ में जाने के बाद भी आप कमल की भाँति निर्लिप्त रहीं, आपके भाग्य से ही १९८२ में **आचार्यकल्प श्री विवेकसागर जी म.** का पावन वर्षायोग भीण्डर में हो गया। संघस्थ **ब्र. कुसुम दीदी** से सीमित व निश्चित समय में आपने तत्त्वार्थ सूत्र का अध्ययन किया और उसका अभ्यास गृहस्थी के व्यस्त कार्यकलापों के बीच में भी विधिपूर्वक करती रहीं तथा उसे अपने अंदर आत्मसात् कर लिया। दीदी का सान्निध्य पाकर आपने अपनी भावना को प्रोत्साहन देना शुरू कर दिया, क्योंकि अब गुरु का सहारा मिल गया था। दीदी के माध्यम से स्वाध्याय के साथ-साथ वैराग्य को भी गति मिल गयी और ऐसी गति मिली कि विवाह के १८ माह पूरे होते-होते तो आप घर छोड़कर गुरु के चरणों में आ गयीं और १५ माह बाद ही गुरु कृपा से आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर ली। तभी से **आर्यिका श्री विशालमती माताजी** (ब्र. कुसुम दीदी) के साथ निरन्तर मौनपूर्वक स्वाध्याय और साधना में निरत रही और लगभग ७-८ वर्ष में ही अपने अथक परिश्रम और एकाग्र बुद्धि से पूज्या आर्यिका श्री विशालमती माताजी का प्रबल निमित्त पाकर आपने जैनागमों का अध्ययन कर लिया। पू. आर्यिकाश्री सदैव सभी को स्वाध्याय करने की प्रेरणा देती रहती हैं। इन्हीं प्रबल पुरुषार्थी के श्रम से निःसृत **तत्त्वार्थ मञ्जूषा** के **दो खण्ड** प्राज्ञजनों को स्वतः ही स्वाध्याय करने की प्रेरणा देते हैं और अब स्वाध्यायार्थ प्रस्तुत है माताजी की नवीन कृति **चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा।**

क्या बना प्रबल निमित्त : हुआ यों कि सन २००२ में वर्षायोग स्थापना के पूर्व आरौन नगर में पूज्य आर्यिका श्री गुणमती माताजी के संघ से हमारा मिलन हुआ। तब हमारी दीक्षागुरु पू. आर्यिकाश्री ने उनसे स्वाध्याय संबंधी चर्चा के दौरान कहा कि ''माताजी ! आपका सिद्धान्तज्ञान अच्छा है अतः आप हमें भी कुछ पढ़ाइये।'' तब उन्होंने अपनी लघुता प्रगट करते हुए कहा- ''माताजी ! आपसे तो मैं पद मैं भी छोटी हूँ और ज्ञान में भी छोटी हूँ, मैं आपको क्या पढ़ा सकती हूँ।'' यह सुनकर पू. आर्यिकाश्री

ने कहा ''नहीं माताजी। अपन सब बराबर हैं, कौन छोटा कौन बड़ा। फिर आप इन लोगों को पढ़ा दो, ये तो आपसे बहुत छोटी हैं।'' हम लोगों ने कहा- ''जी, माताजी! आप हम लोगों को पढ़ाइये, हमें कुछ भी नहीं आता है।'' उस समय उन्होंने हम लोगों से दो चार प्रश्न **चउबीस ठाणा** और **सम्यग्दर्शन** से संबंधित पूछे। हम लोगों को एक का भी उत्तर नहीं आया। इससे हमें बहुत ही शर्मिन्दगी महसूस हुई। कितनी लज्जा की बात है कि हमारी गुरु माँ इतनी विदुषी और हम उनकी शिष्या होकर भी सामान्य से प्रश्नों का भी उत्तर नहीं दे पाये.....।

आ गई पूर्व बातें याद : जब एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं बना तब मुझे बीती बातें याद आ गईं। जब मैंने मोक्षमार्ग पर कदम रखा ही था तब पूज्या आर्यिकाश्री मुझे सदैव स्वाध्याय करने को कहतीं.... कि स्वाध्याय कर लो, पढ़ो-लिखो, अभी अवस्था है, दिमाग भी अच्छा है, स्वास्थ्य भी ठीक है सो अच्छा स्वाध्याय कर लो, क्योंकि स्वाध्याय करने से ही चारित्र में निर्मलता आती है, व्रतों में दृढ़ता बनती है। अपने आचार्यों के प्रति श्रद्धा बढ़ने से, उनके प्रति बहुमान आने से अपनी चर्या में सुधार आता है। इसलिए अच्छी पढ़ाई कर लो, लेकिन हमने उस समय उनकी बातों पर ध्यान न देकर अपना समय यूँ ही गँवा दिया। कई बार पूज्य मुनिश्री अभयसागर जी ने भी कहा कि मात्र इस थाली से उस थाली में ही नहीं करो अर्थात् आहार में ही नहीं लगे रहो वरन् शास्त्र-स्वाध्याय किया करो। इतना बड़ा असिधारा व्रत लिया तो उसका पालन कैसे करें ? उसमें निर्मलता कैसे लायें ? इसके लिए ही स्वाध्याय करना चाहिए। परन्तु हमें उस समय कुछ भी समझ में नहीं आया....। लोक में कहा जाता है कि ठोकर लगने के बाद ही अक्ल ठिकाने आती है और जब हम पू. गुणमती माताजी के सामने लज्जित हो गये तब ऐसी अनुभूति हुई कि आज हमारे कारण गुरु माँ को भी अपना मुँह नीचे करना पड़ा। नहीं, हम ऐसा कभी नहीं होने देंगे और पूज्या आर्यिकाश्री से प्रार्थना की कि अब आप हम लोगों को पढ़ाइये।

शुरू हुआ स्वाध्याय : हमारी प्रार्थना पर ध्यान देते हुए पू. आर्यिकाश्री ने आरौन वर्षायोग में ही **चउबीस ठाणा, तत्त्वार्थ सूत्र** का अध्ययन करवाया तथा सर्दी में विहारकाल में भी आस्रव-त्रिभंगी, भाव-त्रिभंगी आदि विषयों को पढ़ाती रहीं। जब मालथौन वर्षायोग के बाद दक्षिण-यात्रा के लिए विहार किया तब पूरे पाँच वर्ष तक विहार अवधि में चउबीस ठाणा का ही अध्ययन करवाया जहाँ पर विश्राम किया वहाँ और वर्षायोगों में कर्मकाण्ड, जीवकाण्ड, सर्वार्थसिद्धि, लोकविभाग, श्रावकाचार आदि बड़े ग्रन्थों का अध्ययन करवाया। लेकिन हम लोगों का विहार के समय या शारीरिक पीड़ा के समय जब मन नहीं लगता तब पू. माताजी कहतीं, चलो, अपन चउबीस ठाणा पढ़ते हैं। और जब हम सभी आर्यिकाएँ व बहिनें चउबीस ठाणा पढ़ने लगते तो पता ही नहीं चलता कि विहार की थकान हो रही थी या कोई वेदना भी हो रही थी। न पौष मास की सर्दी परेशान करती, न जेठमास की गर्मी सताती। कब दोपहर से शाम हो जाती, पता ही नहीं लगता। उस अनुभूति को मैं शब्दों से नहीं लिख सकती हूँ। हाँ, इतना अवश्य कहूंगी कि यह अध्ययन कर लेने पर हम विद्वानों की सभा में बैठते तो भले ही हम उनकी शंकाओं का समाधान न कर पाते परंतु उनकी चर्चा अवश्य समझ में आने लगी।

विनम्र निवेदन : उपर्युक्त विधि से अध्ययन करते-करते श्रीरामपुर वर्षायोग में हम सभी ने तथा अन्य भी अनेकानेक त्यागी-व्रती, गृहस्थ विद्वान जिन्होंने 'चउबीस ठाणा' की हमारी कक्षा का लाभ लिया था उन सभी ने भी पू. आर्यिकाश्री से निवेदन किया कि ''आपकी यह चउबीस ठाणा पढ़ाने की शैली बहुत अच्छी लगी, आप इसी शैली में इन प्रश्नोत्तरों को ग्रन्थ रूप में परिणत कर दें तो हम जैसे सभी लोगों को 'चउबीस ठाणा' पढ़ने-पढ़ाने का तरीका मिल जायेगा। जैन समाज में तत्त्वार्थसूत्र की तरह चउबीस ठाणा पड़ने की भी बहुत रुचि है। हम सामान्य से तालिकाओं के आधार से पढ़ाते तो हैं, परंतु आप जो सभी मार्गणाओं में, उनके उत्तरभेदों में सभी स्थानों के भेद-प्रभेद लगाकर और यहाँ-वहाँ के प्रकरणों में लगाकर पढ़ाते हैं तो बड़ा रोचक लग रहा है। जटिल विषय वस्तु भी सरल लग रही है.....।'' तब सभी की प्रार्थना पर पू. आर्यिकाश्री ने उन प्रश्नोत्तरों का लेखनकार्य प्रारंभ किया।.... ८ मार्गणाओं पर ही ६३८ प्रश्नोत्तर प्रथम खण्ड में संकलित हैं। इस द्वितीय खण्ड में कुल .... प्रश्नोत्तर सम्मिलित हैं।

अनोखी भावना : अपने निश्छल, सरल, शांत, साधनामय जीवन में रत्नत्रय की आराधना करते-करते भी गुरु का उपकार चुकाने की भावना से ही पूज्या आर्यिकाश्री ने हम सभी पर यह महत् उपकार किया है। पू. आर्यिकाश्री का ग्रन्थरचना का मात्र यही उद्देश्य है कि शुभोपयोग के ये कार्य करते समय हमारा एक भी क्षण इधर-उधर के विकल्पों में नहीं जाता है। मात्र अपने विषय पर ही मन केन्द्रित रहता है, जिससे हमें अपना लक्ष्य याद रहता है और उसे प्राप्त करने का ही पुरुषार्थ करते हैं। आर्त्त-रौद्र रूप संक्लेश परिणामों से बचने के लिए ही पू. आर्यिकाश्री ने यह विशिष्ट कार्य किया है। जो सुधी श्रावक, विद्वान, त्यागी-व्रती अहिंसा धर्म की पूर्णता को प्राप्त करना चाहता है तो उसे जीवों के बारे में जानना अति आवश्यक है, वह इन 'चउबीस ठाणा' प्रश्नोत्तरों के माध्यम से जान सकता है कि कहाँ-कहाँ, कैसे-कैसे जीव होते हैं, इन सब स्थानों को पार करके इतना उत्तम स्थान मनुष्य पर्याय प्राप्त कर लिया है तो अब आत्म-कल्याण कर ही लेना चाहिए। संसार रूपी सघन जंगल से निकलने के लिए पगडंडी मिल गयी है, तो मोक्ष मंजिल को अवश्य प्राप्त कर लेना चाहिए। इसी भावना से प्रस्तुत ग्रंथ सुधी पाठकों के कर-कमलों में समर्पित है।

अंत में, मेरी यही भावना है कि मैं अपने आचार्य भगवन्तों की वाणी को आत्मसात् करके, मोक्षमार्ग के अंतिम सोपान बोधि-समाधि को प्राप्त करके सिद्धावस्था को प्राप्त होऊँ। इसी भावनासे पंचपरमेष्ठी को नमन करती हूँ और पूज्या गुरु माँ के चरणारविन्द में वन्दामि निवेदन करती हूँ।

डॉ. चेतनप्रकाश जी पाटनी ने सम्पादन कार्य करके जिनागम की प्रभावना में अमूल्य सहयोग दिया है, उन्हें पू. आर्यिकाश्री का शुभाशिष है कि वे शीघ्र ही मुनि बनकर जिनागम का सार पाकर आत्मकल्याण करें।

ग्रन्थ-प्रकाशन हेतु उदार भावना से **श्रीमान् ज्ञानचन्द, धर्मचन्द, विशेषकुमारजी दगड़ा, किशनगढ़ (राज.)** ने गृहस्थ धर्म के कर्त्तव्य को पूरा किया है सो वे सभी परम्परा से आत्मोपलब्धि को प्राप्त होवें।

– आर्यिका आदित्यमती

♦♦♦

卐 अपनी बात 卐

(पामर बना पावन)

बात २०११ के वात्सल्य पर्व (रक्षाबंधन पर्व) के समय की है। रक्षाबंधन पर्व के दो दिन पूर्व मेरे घर पर पारिवारिकजन नवधाभक्ति हेतु तत्पर थे। नगर में पूज्य विज्ञानमती माताजी संघ का मंगलमय वर्षायोग चल रहा था। मैं पहले कभी किसी साधु के नजदीक नहीं गया था। अभी भी मैं बाहर से ही आहार देखता था। मेरे घर पर पूज्य आर्यिका पवित्रमती माताजी का आहार हुआ। आहारोपरान्त उन्होंने मुझसे कहा – ''भैया! आप बाहर ही क्यों खड़े रहते हो, आप भी तो आहार दे सकते हो।'' मैं चुपचाप सुनता रहा। उसी पल से मेरा मन बन गया कि मैं भी आहार दूंगा। किसी को कुछ कहा नहीं और माताजी के साथ जैनभवन तक उन्हें छोड़ने गया। वहाँ पहुँचते ही उन्होंने पूज्य आर्यिकाश्री को कहा कि पूज्य माताजी! ये भैया आहार नहीं देते हैं, बाहर खड़े रहते हैं। उनका कहना हुआ और पूज्य आर्यिकाश्री के तपोमयी त्यागपूर्ण आभामण्डल के सामने मैं कुछ भी सफाई पेश नहीं कर पाया। मात्र हाथ जोड़ कर सिर झुकाये खड़ा रहा।

दूसरे दिन मैं पड़गाहन हेतु खड़ा हुआ। पूज्य आर्यिका आदित्यमती जी हमारे घर तक आयीं। परन्तु पास में आकर भी लौट गयीं। जैसे ही वे लौटीं मुझे तो कुछ करण्ट सा लग गया। ऐसा लगा कि मैं पहली बार तो पड़गाहन हेतु खड़ा हुआ और माताजी पास आकर भी क्यों चली गयीं? मैं आहार के बाद पूज्य आर्यिकाश्री के पास पहुँचा। मन बहुत विचलित था। विचारों में उथल-पुथल मची हुई थी। समझ में ही नहीं आ रहा था, कि क्या करूँ ? मेरी सारी उलझन, पू. आर्यिकाश्री ने बिना कहे ही समझ ली। मुझसे बोली– ''आहार दिया'', तो मैंने कहा, ''नहीं माताजी ! आज माताजी मेरे घर तक आकर भी लौट आयीं।'' तब पूज्य माताजी बोलीं, ''साधु हैं, विधि नहीं मिली सो आ गयीं। दूसरी जगह आहार तो हो गया। तुम विकल्प नहीं करो। कल और प्रयास करना।'' मैं घर आ गया। पर आज पहली बार कुछ भी खाने का मन नहीं हो रहा था, सो मैंने मन-ही-मन संकल्प कर लिया कि ''जब तक माताजी का आहार नहीं होगा, मैं अन्नाहार नहीं करूँगा।'' सच कहूँ, माताजी उस दिन मेरे घर से क्या लौटीं मुझे भी पतन के गर्त से, संसार के जंजाल से लौटने की राह दिखा गयीं। मैं उसी दिन से पूज्य आर्यिकाश्री से, संघ से जुड़ गया। अब तो मुझे अहर्निश आर्यिका संघ ही दिखता। रक्षाबंधन के दिन पूज्य आदित्यमती माताजी का आहार हुआ और मुझे धर्मरूपी रक्षा सूत्र बँध गया।

४-५ दिन बाद पूज्य आर्यिकाश्री ने मुझसे कहा कि क्यों, तुम गुटखा खाते हो ? तब मैं कुछ नहीं बोल पाया, मेरे हितैषी साथियों ने कहा – गुटखा ही नहीं, यह क्या-क्या नहीं खाता है। तब पूज्य माताजी ने मुझसे कहा- ''वृद्धावस्था के पहले ही मरना है क्या ? तुम इसके लिए कमाते हो क्या ? अरे ! तुम थोड़ा सोचो कि तुम क्या खा रहे हो ?'' उस समय तो बात आयी गयी हो गयी। मैं त्याग करने का साहस नहीं कर पाया। अंदर से आत्मा आवाज लगा रही थी, त्याग कर दे जिंदगी सँवर जायेगी। माता-पिता, पत्नी, बच्चे भी कई बार इसका प्रयास कर चुके थे। आज भी आत्मा की नहीं सुन पाया.....।

दशलक्षण पर्व के बाद मैं आ. आदित्यमती जी के साथ आहारोपरांत पुनः जैन भवन पहुँचा। तब पू. आर्यिकाश्री ने देखते ही कहा- ''तुम इन माताजी के भक्त हो क्या ?'' मैं मौन रह गया। पुनः बोली, ''तुमने त्याग कर दिया, अरे तुम हमारे बहुत नजदीक वाले हो। तुम जिस परिवार के जँवाई हो उसी घर के हमारे दीक्षागुरु आचार्यकल्प विवेकसागर जी महाराज थे।'' साथ ही बोलीं, ''मैं आदित्यमतीजी को मीठे का त्याग करवा देती हूँ जब तक तुम गुटखा पाउच नहीं छोड़ोगे।'' दोनों बातें सुनते ही मैंने तत्काल संकल्प कर लिया। मैं अब कभी किसी भी प्रकार की नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करूँगा। सभी साथीगण के साथ पारिवारिकजन भी अतीव प्रसन्न हुए, उनकी मन की मुराद पूरी हो गयी थी। वो दिन है कि आज का दिन है मैं नशामुक्त हूँ।

यद्यपि मैं जिनागम की ए-बी-सी-डी नहीं जानता हूँ, पर इतना समझ में आ गया कि हमारा कल्याण जब भी होगा सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की चरण शरण में ही होगा- चत्तारि सरणं पव्वज्जामि। पूज्य आर्यिकाश्री के संदर्भ में क्या कहूँ – चिंतामणि रत्न या कल्पतरु माँ कहूँ या गुरु। मेरे लिए तो आप भगवान स्वरूप हैं। मैं जब भी पूज्य माताजी के पास जाता तो माताजी मेरा नियम जरूर पूछतीं। २०११ के पहले तो मैं सदैव अपना समय और धन इधर-उधर घूमने में, मनोरंजन में, भोगों में ही व्यतीत करता था। जबसे पूज्य आर्यिकाश्री की वात्सल्यमयी शरण मिली तबसे मेरे समय व धन का सदुपयोग होने लगा। अभी वर्षायोग की स्थापना पर मैंने कलश लेने की भावना रखी तो आर्यिका आदित्यमती जी बोलीं– 'दो वर्ष से लगातार कलश ले रहे हो, इस बार तो सिद्धान्त ग्रन्थ का प्रकाशन करो, मेरी तो यह भावना है।'' माताजी की भावना को ही अपनी भावना समझ मैंने कहा, ''पूज्य आर्यिकाश्री का जैसा शुभाशिष।''

आज जब यह ग्रन्थ प्रकाशित करने का मन बना तब मुझे पूज्य माताजी की बात याद आयी। पूज्य आर्यिकाश्री हमेशा पुरुष वर्ग की कक्षा लगाते समय कहती हैं कि यदि आपका बेटा संस्कारित हो गया, वह गुटखा पाउच को छोड़ दे तो भी लाखों बचा सकता है। उसका उपयोग सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की सेवा में, परोपकार में कर सकता है। आज वही बात सार्थक हो रही है। अर्थोपार्जन तो बहुत किया, कर रहा हूँ, पर अब तक उसका व्यय मात्र भोग रूप ही था। पूज्य आर्यिकाश्री के निर्देशन से अब उसका सदुपयोग करना सीख गया। पापों से बच गया। सच है, संसार में माँ ही सर्वहितकारिणी होती है। फिर वह जगज्जननी आर्यिका के रूप में हो तो बात ही अलौकिक है। मैं आज, जितना भी सन्मार्ग पर चल पा रहा हूँ वह सब गुरु माँ की ही देन है।

अंत में, उन्हीं के चरणों में उन्हीं से प्रार्थना है कि मेरा जीवन आपसे ही सदाचार से अलंकृत हुआ है, वह सदैव धर्म की आभा से दीप्त रहे।

इसी भावना से गुरुवर्या के चरणों में कोटि-कोटिशः वंदामि.......

— विनयावनत

विशेषकुमार दगड़ा (बंटी)

किशनगढ़ (राजस्थान)

♦♦♦

卐 ग्रन्थ संकेत सूची 卐

क्र.	संकेत	ग्रंथ का नाम	ग्रंथकर्त्ता
१.	आ.सा.	आचार सार अध्याय संख्या/गाथा संख्या	आचार्य श्री वीरनंदी सिद्धान्तचक्रवर्ती
२.	आ.समु	आराधना समुच्चय गाथा संख्या	आचार्य श्री रविचंद्र स्वामी
३.	क. पा.	कषायपाहुड़	आचार्य श्री गुणभद्र स्वामी
४.	क. वि.	कर्मविपाक	आचार्य श्री सकलकीर्ति
५.	का. अ.	कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा संख्या	आचार्य श्री कार्तिकेय स्वामी
६.	क्ष. सा.	क्षपणासार	आचार्य श्री नेमिचन्द्र स्वामी
७.	गो.क.	गोम्मटसार कर्मकाण्ड गाथा संख्या	आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती
८.	गो.जी.	गोम्मटसार जीवकाण्ड गाथा संख्या	आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती
९.	गो.जी.जी.	गोम्मटसार जीवप्रबोधिनी टीका	केशववर्णी
१०.	गो.जी.मं.	गोम्मटसार जीवकाण्ड मंद प्रबोधिनी टीका	श्री अभयचन्द्र सूरि
११.	चा.च.	चारित्र चक्रवर्ती/पृष्ठ संख्या	पं. सुमेरुचन्द्र दिवाकर
१२.	चा.सा.	चारित्रसार	मुनि चामुण्डराय
१३.	ज.ध.	जय धवला पुस्तक संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य वीरसेन स्वामी
१४.	ज्ञा.	ज्ञानार्णव	आचार्य शुभचन्द्र
१५.	त.अ.	तत्त्वानुशासन	आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी
१६.	त.वृ.	तत्त्वार्थवृत्ति	
१७.	त.सू.	तत्त्वार्थसूत्र अध्याय संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य उमास्वामी
१८.	त.सा.	तत्त्वसार/गाथा संख्या	आचार्य देवसेन स्वामी
१९.	ति.प.	तिलोय पण्णत्ति अधिकार संख्या/गाथा सं.	आचार्य यतिवृषभ
२०.	द्र.सं.	द्रव्य संग्रह	आचार्य नेमिचन्द्र स्वामी
२१.	ध.पु.	धवला पुस्तक संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य वीरसेन स्वामी
२२.	न.च.	नय-चक्र गाथा संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य माइल्लधवल
२३.	नि.सा.	नियमसार गाथा संख्या	आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी
२४.	पं.सं.प्रा.	पंचसंग्रह प्राकृत अधिकार/गाथा संख्या	अज्ञात
२५.	पं.का.	पंचास्तिकाय तात्पर्यवृत्ति/गाथा संख्या	आचार्य कुन्दकुन्द/आचार्य जयसेन स्वामी
२६.	प.मु.	परीक्षामुख अधिकार संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य माणिक्यनंदी

२७.	प्र.सा.	प्रवचनसार	आचार्य कुन्दकुन्द
२८.	प्र.श्रा.	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार	भट्टारक सकलकीर्ति
२९.	भ.आ.वि.	भगवती आराधना विजयोदय टीका/ गाथा संख्या	अपराजित सूरि
३०.	म.क.	मरणकण्डिका	आचार्य अमितगति स्वामी
३१.	महा.पु.	महापुराण/सर्ग संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य जिनसेन स्वामी
३२.	महाबंध	महाबंध	
३३.	मू.आ.	मूलाचार आचार वृत्ति/गाथा संख्या	आचार्य सिद्धांतचक्रवर्ती वसुनंदी
३४.	मू.प्र.	मूलाचार प्रदीप गाथा संख्या	आचार्य सकलकीर्ति स्वामी
३५.	य.ति.च.	यशस्तिलक चम्पू काव्य आश्वास गा.सं.	सोमदेव सूरि
३६.	र.क.श्रा.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा सं.	आचार्य समंतभद्र स्वामी
३७.	रा.वा.	राजवार्तिक अध्याय/सूत्र संख्या	आचार्य अकलंक स्वामी
३८.	ल.सा.	लब्धिसार	आचार्य नेमिचन्द्र स्वामी
३९.	वृ.द्र.सं.टी.	वृहद् द्रव्य संग्रह टीका/गाथा संख्या	आचार्य ब्रह्मदेव सूरि
४०.	व.च.	वरांग-चरित्र सर्ग संख्या/पृष्ठ संख्या	आचार्य जटासिंह नन्दी
४१.	शा. पु.	शान्ति पुराण	आचार्य सकलकीर्ति
४२.	श्लो.	श्लोकवार्तिक पुस्तक संख्या/पृ. संख्या	आचार्य विद्यानंद
४३.	स.सा.ता.	समयसार तात्पर्यवृत्ति गाथा संख्या	आचार्य जयसेन स्वामी
४४.	स.सा.क.	समयसार कलश	आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी
४५.	सि.सा.	सिद्धान्तसार	आचार्य नरेन्द्रसेन
४६.	सि.सा.दी.	सिद्धान्तसार दीपक अधिकार/गाथा संख्या	आचार्य सकलकीर्ति
४७.	सु.र.सं.	सुभाषित रत्न संदोह	आचार्य अमितगति
४८.	सु.बो.	सुखबोधा टीका तत्त्वार्थ वृत्ति पृ. संख्या	मुनि भास्कर नंदी
४९.	सर्वा.सि.	सर्वार्थसिद्धि अध्याय संख्या/सूत्र संख्या	आचार्य पूज्यपाद स्वामी
५०.	हरि.पु.	हरिवंश पुराण सर्ग संख्या/गाथा संख्या	आचार्य जिनसेन स्वामी

♦♦♦

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

卐 शास्त्रस्वाध्याय का प्रारम्भिक मंगलाचरण 卐

ॐ नमः सिद्धेभ्यः! ॐ नमः सिद्धेभ्यः! ॐ नमः सिद्धेभ्यः!

ओकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमोनमः॥

अविरलशब्दघनौघ-प्रक्षालितसकल-भूतलकलङ्का।
मुनिभिरुपासिततीर्था, सरस्वती हरतु नो दुरितम्॥

अज्ञानतिमिरान्धानां, ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

❋

श्रीपरमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरुभ्यो नमः। सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनःप्रतिबोधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं **'चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा'** नामधेयं अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थ-कर्तारः श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसारतामासाद्य पूज्य **आर्यिका-श्रीविज्ञानमती संकलितं** विरचितं इदं शास्त्रं। श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु।

❋

मङ्गलं भगवान् **वीरो,** मङ्गलं **गौतमो** गणी।
मङ्गलं **कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु** मङ्गलम्॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं, सर्वकल्याणकारणम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम्॥

ॐ

।। श्रीवीतरागाय नमः ।।

卐 चउबीस ठाणा 卐

प्रश्नोत्तर मञ्जूषा

卐 मङ्गलाचरण 卐

(छन्द-ज्ञानोदय)

क्षमावन्त सिरि पंच परम गुरु, पूज्य रहे त्रय लोकों में।
इनके चरण कमल की पूजा, पार करे त्रय लोकों से।।
नमस्कार कर इनको ठाणा, चार-बीस बतलाऊँ मैं।
फल में भाव शुभाशुभ तज कर, शुद्ध भाव को पाऊँ मैं।।

दोहा : ज्ञान बढ़े विद्या मिले, विवेक हो भरपूर।
विशालता की खान गुरु, नमूँ करो मद चूर।।

१. प्रश्न : चउबीस ठाणा किसे कहते हैं?

उत्तर : जहाँ गति मार्गणा आदि चौबीस स्थानों में जीव का विशेष वर्णन किया गया है, उन्हें चउबीस ठाणा कहते हैं।

२. प्रश्न : चउबीस ठाणा का अध्ययन क्यों करना चाहिए?

उत्तर : बोधिदुर्लभ भावना का चिन्तन करने के लिए चउबीस ठाणा का अध्ययन करना चाहिए। अपने उपयोग को चौबीस स्थानों के उत्तर भेदों में लगाना चाहिए और विचार करना चाहिए कि किस-किस स्थान पर रत्नत्रय प्राप्त किया जा सकता है। हम कितने-कितने नगण्य स्थानों को छोड़कर यहाँ आ गये हैं। सब कुछ अनुकूलता मिल जाने पर भी यदि हम रत्नत्रय धारण नहीं कर पाये तो सबकुछ व्यर्थ है। लोक भावना भाने के लिए भी 'चउबीस ठाणा' समझना चाहिए।

पापों, आर्त्त-रौद्र ध्यान और विषय-कषायों से बचने के लिए, आपत्ति के समय उपयोग को लगाने के लिए तथा पूर्वोपार्जित पापों का क्षय करने के लिए चउबीस ठाणा का अध्ययन करना चाहिए।

३. प्रश्न : **चौबीस स्थान कौन-कौनसे हैं ?**

उत्तर : **गइ इन्दिये च काये, जोये वेये कषाय णाणे य।**
संजम दंसण लेस्सा, भविया समत्त सण्णि आहारे ।।गो.सा. जीव. गाथा १४२
गुण जीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणाओ ।
उवओगो विय कमसो, बीसं तु परूवणा भणिया।। गो.सा. जीव. गाथा २

झाणा वि य पच्चा वि य, जाइ य कुल कोडि संजुया सव्वे,
गह्णाति येण भणिया, कमेण चउबीस ठाणाणि।।

अर्थ - गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, गुणस्थान, जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, उपयोग, ध्यान, आस्रव के प्रत्यय, जाति और कुल इस प्रकार चौबीस स्थान हैं। इन्हीं को हिन्दी में इस प्रकार पढ़ सकते हैं-

卐 ज्ञानोदय छन्द 卐

गति इन्द्रिय में काय योग में, वेद कषायों ज्ञानों में,
संयम दर्शन लेश्या भविजन, समकित सैनि अहारों में।
गुणथानों में जीव समासों, पर्याप्ती में प्राणों में,
संज्ञा मार्गण उपयोगों में, बीस परूपण जानो ये।।१।।

ध्यान कहे हैं प्रत्यय जाती, कुल कोटी को और कहे,
चार-बीस हैं थान इन्हीं में, जीव कथा को खास कहे।
क्रम से इनको चौबिस ठाणा, में कहते हैं जिनवर जी,
नमन उन्हें हो नमन करूँ मैं, पाने को नित शिवमग जी।।२।।

४. प्रश्न : **चौबीस स्थानों के उत्तर भेद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर : चौबीस स्थानों के उत्तर भेद –

(१) **गति-चार** : नरकगति, तिर्यञ्च गति, मनुष्य गति और देवगति।

(२) **इन्द्रिय-पाँच** : एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय।

(३) **काय - छह** : पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पति कायिक तथा त्रस कायिक।

(४) **योग - पन्द्रह** : ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, ७ काययोग

४ मनोयोग - सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग, अनुभयमनोयोग।

४ वचनयोग - सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, अनुभयवचनयोग।

७ काययोग - औदारिक-औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिक-वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारक-आहारकमिश्रकाययोग तथा कार्मण काययोग।

(५) **वेद तीन** : स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(६) **कषाय पच्चीस** : ४ अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ।

४ संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ।

९ नोकषाय - हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(७) **ज्ञान-आठ** : ३ कुज्ञान-कुमति, कुश्रुत, कुअवधि।

५ ज्ञान-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान।

(८) **संयम-सात** : सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय, यथाख्यात, संयमासंयम तथा असंयम।

(९) **दर्शन-चार** : चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन तथा केवलदर्शन।

(१०) **लेश्या-छह** : कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या।

(११) **भव्यत्व-दो** : भव्य, अभव्य।

(१२) **सम्यक्त्व-छह** : क्षायिक सम्यक्त्व, क्षयोपशम, उपशम, सासादन, मिश्र और मिथ्यात्व।

(१३) **संज्ञी-दो** : संज्ञी, असंज्ञी।

(१४) **आहार-दो** : आहारक, अनाहारक।

(१५) **गुणस्थान-चौदह** : मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत-सम्यग्दृष्टि, संयमासंयम,

प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, उपशान्तकषाय-छद्मस्थ, क्षीणकषायछद्मस्थ, सयोगकेवलीजिन तथा अयोगकेवलीजिन।

(१६) जीवसमास-उन्नीस : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, नित्यनिगोद और इतरनिगोद ये छहों सूक्ष्म भी होते हैं और बादर भी होते हैं अत: १२+सप्रतिष्ठित प्रत्येक+ अप्रतिष्ठितप्रत्येक=१४+ द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञीपंचेन्द्रिय, असंज्ञीपंचेन्द्रिय=१९

(१७) पर्याप्ति-छह : आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा तथा मन:पर्याप्ति।

(१८) प्राण-दस : ५ इन्द्रिय (स्पर्शनादि), ३ बल (मन, वचन, काय), श्वासोच्छ्वास और आयु।

(१९) संज्ञा-चार : आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा और परिग्रह संज्ञा।

(२०) उपयोग-बारह : ८ ज्ञानोपयोग-कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय तथा केवल ज्ञानोपयोग।

४ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन तथा केवलदर्शनोपयोग।

(२१) ध्यान-सोलह : ४ आर्त्तध्यान - इष्ट वियोगज, अनिष्ट संयोगज, वेदना और निदान।

४ रौद्रध्यान - हिंसानन्दी, मृषानन्दी, चौर्यानन्दी और परिग्रहानन्दी।

४ धर्मध्यान - आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थान विचय।

४ शुक्लध्यान - पृथक्त्ववितर्क वीचार, एकत्ववितर्क अवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

(२२) आस्रव प्रत्यय-५७ : ५ मिथ्यात्व-विपरीत, एकान्त, विनय, संशय और अज्ञान।

१२ अविरति - ५ इन्द्रिय तथा मन को वश में करने तथा षट्काय के जीवों की रक्षा करने का संकल्प नहीं लेना।

२५ कषाय - अनन्तानुबन्धी आदि।

१५ योग - सत्य-मनोयोगादि।

(२३) जाति-८४ लाख :

(१)	नित्य निगोद	- ७ लाख	(८)	द्वीन्द्रिय	- २ लाख
(२)	इतर निगोद	- ७ लाख	(९)	त्रीन्द्रिय	- २ लाख
(३)	पृथ्वीकायिक	- ७ लाख	(१०)	चतुरिन्द्रिय	- २ लाख
(४)	जलकायिक	- ७ लाख	(११)	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च	- ४ लाख
(५)	अग्निकायिक	- ७ लाख	(१२)	नारकियों की	- ४ लाख
(६)	वायुकायिक	- ७ लाख	(१३)	देवों की	- ४ लाख
(७)	वनस्पतिकायिक	- १० लाख	(१४)	मनुष्यों की	- १४ लाख।

(२४) कुल - १९९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ :

(१)	पृथ्वीकायिक	- २२ लाखकरोड़	(८)	चतुरिन्द्रिय	- ९ लाखकरोड़
(२)	जलकायिक	- ७ लाखकरोड़	(९)	जलचर	- १२ $\frac{१}{२}$ लाखकरोड़
(३)	अग्निकायिक	- ३ लाखकरोड़	(१०)	थलचर	- १९ लाखकरोड़
(४)	वायुकायिक	- ७ लाखकरोड़	(११)	नभचर	- १२ लाखकरोड़
(५)	वनस्पतिकायिक	- २८ लाखकरोड़	(१२)	नारकी	- २५ लाखकरोड़
(६)	द्वीन्द्रिय	- ७ लाखकरोड़	(१३)	देव	- २६ लाखकरोड़
(७)	त्रीन्द्रिय	- ८ लाखकरोड़	(१४)	मनुष्य	- १४ लाखकरोड़[१]

१. मनुष्यों के १२ लाख करोड़ कुल होते हैं। (गो.जी. ११६)

चौबीस स्थानों में गुणस्थान

१. गति-मार्गणा

	गति	गुणस्थान	विवरण
१.	नरक गति	चार	पहले से चौथे तक
२.	देव गति	चार	पहले से चौथे तक
३.	तिर्यञ्च गति	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	मनुष्यगति	चौदह	पहले से चौदहवें तक

२. इन्द्रिय-मार्गणा

	इन्द्रिय	गुणस्थान	विवरण
१.	एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक	दो	पहला, दूसरा
२.	पंचेन्द्रिय	चौदह	पहले से चौदहवें तक

३. काय-मार्गणा

	काय	गुणस्थान	विवरण
१.	पृथ्वी, जल, वनस्पति-कायिक	दो	पहला-दूसरा गुणस्थान
२.	अग्नि-वायुकायिक	एक	पहला गुणस्थान
३.	त्रसकायिक	चौदह	पहले से चौदहवें तक

४. योग-मार्गणा

	योग	गुणस्थान	विवरण
१.	सत्य-अनुभय मनोयोग	१३	पहले से तेरहवें तक
२.	सत्य अनुभय वचनयोग	१३	पहले से तेरहवें तक
३.	औदारिक काययोग	१३	पहले से तेरहवें तक
४.	असत्य उभय मनोयोग	१२	पहले से बारहवें तक
५.	असत्य उभय वचनयोग	१२	पहले से बारहवें तक
६.	औदारिक मिश्र काययोग	४	पहला, दूसरा, चौथा और तेरहवाँ
७.	कार्मण काययोग	४	पहला, दूसरा, चौथा और तेरहवाँ
८.	वैक्रियिक काययोग	४	पहले से चौथे तक
९.	वैक्रियिक मिश्र काययोग	३	पहला, दूसरा, चौथा
१०.	आहारक द्विक	१	छठा

५. वेद-मार्गणा

	वेद	गुणस्थान	विवरण
१.	तीनों वेद	नौ	पहले से नौवें तक

६. कषाय-मार्गणा

	कषाय	गुणस्थान	विवरण
१.	अनंतानुबंधी चतुष्क	दो	पहला-दूसरा
२.	अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क	चार	पहले से चौथे तक
३.	प्रत्याख्यानावरण चतुष्क	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	संज्वलनत्रिक	नौ	पहले से नवम तक
५.	संज्वलन लोभ	दस	पहले से दसवें तक
६.	हास्यादि षट्कषाय	आठ	पहले से आठवें तक
७.	तीन वेद	नौ	पहले से नवम तक

७. ज्ञान-मार्गणा

	ज्ञान	गुणस्थान	विवरण
१.	कुमति, कुश्रुत, कुअवधि	दो	पहला, दूसरा
२.	मति-श्रुत-अवधि	नौ	चौथे से बारहवें तक
३.	मन:पर्ययज्ञान	सात	छठे से बारहवें तक
४.	केवलज्ञान	दो	तेरहवाँ-चौदहवाँ

८. संयम-मार्गणा

	संयम	गुणस्थान	विवरण
१.	असंयम	चार	पहले से चौथे तक
२.	संयमासंयम	एक	पाँचवाँ
३.	सामायिक-छेदोपस्थापना	चार	छठे से नवम तक
४.	परिहारविशुद्धि	दो	छठा-सातवाँ
५.	सूक्ष्मसाम्पराय	एक	दसवाँ
६.	यथाख्यात	चार	ग्यारहवें से चौदहवें तक

९. दर्शन-मार्गणा

	दर्शन	गुणस्थान	विवरण
१.	चक्षु-अचक्षु दर्शन	बारह	पहले से बारहवें तक
२.	अवधि दर्शन	दस	तीसरे से बारहवें तक
३.	केवल दर्शन	दो	तेरहवाँ चौदहवाँ

१०. लेश्या-मार्गणा

	लेश्या	गुणस्थान	विवरण
१.	कृष्ण-नील-कापोत	चार	पहले से चौथे तक
२.	पीत-पद्म	सात	पहले से सातवें तक
३.	शुक्ल	तेरह	पहले से तेरहवें तक

११. भव्य-मार्गणा

	भव्य	गुणस्थान	विवरण
१.	भव्य	१४	पहले से चौदहवें तक
२.	अभव्य	१	पहला

१२. सम्यक्त्व-मार्गणा

	सम्यक्त्व	गुणस्थान	विवरण
१.	औपशमिक	आठ	चौथे से ग्यारहवें तक
२.	क्षायिक	ग्यारह	चौथे से चौदहवें तक
३.	क्षायोपशमिक	चार	चौथे से सातवें तक
४.	मिथ्यात्व	एक	पहला
५.	सासादन सम्यक्त्व	एक	दूसरा
६.	सम्यग्मिथ्यात्व	एक	तीसरा

१३. संज्ञी मार्गणा

	संज्ञी	गुणस्थान	विवरण
१.	संज्ञी	बारह	पहले से बारहवें तक
२.	असंज्ञी	दो	पहला-दूसरा

१४. आहारक-मार्गणा

	आहारक	गुणस्थान	विवरण
१.	आहारक	तेरह	पहले से तेरहवें तक
२.	अनाहारक	पाँच	पहला, दूसरा, चौथा, तेरहवाँ, चौदहवाँ

१५. गुणस्थान

नोट : गुणस्थानों का कथन स्वकीय रूप होगा। अर्थात् जिस गुणस्थान का कथन है वही गुणस्थान होगा।

१६. जीवसमास

अ.	जीवसमास	गुणस्थान	विवरण
१.	नित्य निगोद सूक्ष्म	एक	पहला
२.	नित्य निगोद बादर	एक	पहला
३.	इतर निगोद सूक्ष्म	एक	पहला
४.	इतर निगोद बादर	एक	पहला
५.	पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
६.	जलकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
७.	अग्निकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
८.	अग्निकायिक बादर	एक	पहला
९.	वायुकायिक सूक्ष्म	एक	पहला
१०.	वायुकायिक बादर	एक	पहला

ब.	जीवसमास	गुणस्थान	विवरण
१.	पृथ्वीकायिक बादर	दो	पहला-दूसरा
२.	जलकायिक बादर	दो	पहला-दूसरा
३.	सप्रतिष्ठित वनस्पति	दो	पहला-दूसरा
४.	अप्रतिष्ठित वनस्पति	दो	पहला-दूसरा
५.	द्वीन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
६.	त्रीन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
७.	चतुरिन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा
८.	असंज्ञी पंचेन्द्रिय	दो	पहला-दूसरा

स.	जीवसमास	गुणस्थान	विवरण
१.	संज्ञी पंचेन्द्रिय	१२	पहले से बारहवें तक

१७. पर्याप्ति

	पर्याप्ति	गुणस्थान	विवरण
	(चार तथा पाँच)		
१.	आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा	एक	पहला
२.	आहार, शरीर, इन्द्रिय श्वासोच्छ्वास, भाषा, मन	चौदह	पहले से चौदहवें तक

१८. प्राण[1]

	प्राण	गुणस्थान	विवरण
१.	१	एक	चौदहवाँ
२.	२	एक	तेरहवाँ
३.	४	तीन	पहला, दूसरा, तेरहवाँ
४.	३,५,६	दो	पहला-दूसरा
५.	८,९	एक	पहला
६.	७	चार	पहला, दूसरा, चौथा, छठा
७.	१०	बारह	पहले से बारहवें तक

१९. संज्ञा

	संज्ञा	गुणस्थान	विवरण
१.	आहार	छह	पहले से छठा
२.	भय	आठ	पहले से आठवाँ
३.	मैथुन	नौ	पहले से नौवाँ
४.	परिग्रह	दस	पहले से दसवाँ

१. विशेष वर्णन प्राण प्ररूपणा में देखें।

२०. उपयोग

	उपयोग	गुणस्थान	विवरण
१.	मति-श्रुत-अवधि ज्ञानोपयोग	नौ	चौथे से बारहवें तक
२.	मन:पर्यय ज्ञानोपयोग	सात	छठे से बारहवें तक
३.	केवलज्ञानोपयोग	दो	तेरहवाँ - चौदहवाँ
४.	चक्षु-अचक्षु-दर्शनोपयोग	बारह	पहले से बारहवें तक
५.	अवधि दर्शनोपयोग	दस	तीसरे से बारहवें तक
६.	केवलदर्शनोपयोग	दो	तेरहवाँ - चौदहवाँ
७.	कुमति कुश्रुत कुअवधिज्ञानोपयोग	दो	पहला-दूसरा

२१. ध्यान

	ध्यान	गुणस्थान	विवरण
१.	निदान रहित तीन आर्त्त ध्यान	छह	पहले से छठे तक
२.	निदान आर्त्तध्यान एवं चार रौद्र ध्यान	पाँच	पहले से पाँचवें तक
३.	पहला धर्मध्यान	पाँच	तीसरे से सातवें तक
४.	दूसरा धर्मध्यान	चार	चौथे से सातवें तक
५.	तीसरा धर्मध्यान	तीन	पाँचवें से सातवें तक
६.	चौथा धर्मध्यान	दो	छठा-सातवाँ
७.	पहला शुक्ल ध्यान	पाँच	आठवें से बारहवें तक
८.	दूसरा शुक्ल ध्यान	एक	बारहवाँ
९.	तीसरा शुक्ल ध्यान	एक	तेरहवाँ
१०.	चौथा शुक्ल ध्यान	एक	चौदहवाँ

२२. आस्रव के प्रत्यय

	आस्रव	गुणस्थान	विवरण
१.	पाँच मिथ्यात्व	एक	पहला
२.	बारह अविरति	चार	पहले से चौथे तक
३.	ग्यारह अविरति (त्रस बिना)	पाँच	पहले से पाँचवें तक

विशेष : कषाय तथा योग संबंधी आस्रवों के गुणस्थान देखें - कषाय और योग मार्गणा में।

२३. जाति

	जाति	गुणस्थान	विवरण
१.	२८ लाख (इतर निगोद, नित्यनिगोद, अग्निकायिक वायुकायिक)	एक	पहला
२.	३० लाख (पृथ्वी, जल, वनस्पतिकायिक, विकलत्रय)	दो	पहला, दूसरा
३.	४ लाख (पंचे. तिर्यंच)	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	८ लाख (देव-नारकी)	चार	पहले से चौथे तक
५.	१४ लाख (मनुष्य)	चौदह	पहले से चौदहवें तक

२४. कुल

	कुल	गुणस्थान	विवरण
१.	१० लाख करोड़ (अग्निकायिक, वायुकायिक)	एक	पहला
२.	८१ लाख करोड़ (पृथ्वी. जल. वनस्पतिकायिक विकलत्रय)	दो	पहला, दूसरा
३.	४३$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ (तिर्यंच पंचे.)	पाँच	पहले से पाँचवें तक
४.	५१ लाख करोड़ (देव नारकी)	चार	पहले से चौथे तक
५.	१४ लाख करोड़ (मनुष्य)	चौदह	पहले से चौदहवें तक

चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा

द्वितीय खण्ड

मध्यम मंगलाचरण

बारह अंगग्गिज्झा, वियलिय मल-मूढ दंसणुत्तिलया।
विविह-वर-चरण भूसा, पसियउ, सुय-देवया सुइरम्।।
(ध. १/६)

अंगंगबज्झणिम्मी, अणाइमज्झंतणिम्मलंगाए।
सुयदेवय अंबाए, णमो सया चक्खुमइमाए।।२।।
(ज.ध. १/३)

९. दर्शन मार्गणा

१. प्रश्न : दर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर : ज्ञान को उत्पन्न करने वाले प्रयत्न से संबद्ध स्वसंवेदन अर्थात् आत्मविषयक उपयोग को दर्शन कहते हैं। **(ध. ६/३२-३३)**

- उत्तरज्ञान की उत्पत्ति के निमित्तभूत प्रयत्न विशिष्ट स्वसंवेदन को दर्शन माना है। **(ध. ३/४५७)**
- अन्तर्मुख चित्प्रकाश को दर्शन कहते हैं। **(ध. १/१४६)**

२. प्रश्न : दर्शनमार्गणा किसे कहते हैं।

उत्तर : चक्षु आदि दर्शनों में जीवों की खोज करना दर्शन मार्गणा है।

३. प्रश्न : दर्शन मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : दर्शन मार्गणा चार प्रकार की होती है।

(१) चक्षुदर्शन (२) अचक्षुदर्शन (३) अवधिदर्शन (४) केवलदर्शन।

४. प्रश्न : चक्षुदर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर : चक्षु इन्द्रिय द्वारा होने वाले ज्ञान के पहले जो सामान्य अवलोकन होता है उसे चक्षुदर्शन कहते हैं। **(ध. १/३८१)**

- चक्षु इन्द्रिय के द्वारा जो पदार्थ का सामान्य अंश प्रकाशित होता है अथवा दिखाई देता है उसे चक्षुदर्शन कहते हैं। **(ध. १/३८४)**

- अपने आवरण के क्षयोपशम से और चक्षुइन्द्रिय के आलम्बन से मूर्त्त द्रव्य को विकल रूप से जो सामान्यत: अवबोध करता है वह चक्षुदर्शन है। **(पं. का. ता. ४२)**

५. प्रश्न : **अचक्षुदर्शन किसे कहते हैं ?**

उत्तर : चक्षुइन्द्रिय को छोड़कर शेष इन्द्रिय तथा मन के द्वारा होने वाले ज्ञान के पहले जो सामान्य अवलोकन होता है उसे अचक्षुदर्शन कहते हैं। **(ध. १/३८१)**

चक्षुइन्द्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रियों से और मन से जो सामान्य प्रतिभास होता है उसे अचक्षुदर्शन कहते हैं। **(ध. १/३८४)**

अपने आवरण अर्थात् अचक्षुदर्शनावरण के क्षयोपशम से और चक्षुदर्शन के बिना शेष इन्द्रियों के आलम्बन से मूर्त्त-अमूर्त्त द्रव्यों को विकल रूप से जो सामान्यत: अवबोध करता है वह अचक्षुदर्शन है। **(पं.का.ता. ४२)**

६. प्रश्न : **अवधिदर्शन किसे कहते हैं ?**

उत्तर : सर्व लघु परमाणु से आदि लेकर सर्व महान् अन्तिम स्कन्ध तक जितने मूर्त्त द्रव्य हैं उन्हें जो प्रत्यक्ष देखता है उसे अवधिदर्शन कहते हैं। **(ध. १/३८४)**

अवधिदर्शनावरण कर्म के क्षयोपशम से (बिना किसी इन्द्रिय के अवलम्बन से) मूर्त्त द्रव्य को विकल रूप से जो सामान्यत: अवबोधन करता है वह अवधिदर्शन है। **(पं.का.ता.४२)**

७. प्रश्न : **केवलदर्शन किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जो लोकालोक को भी तिमिर रहित कर देता है वह उद्योत ही केवलदर्शन कहा जाता है। **(ध. १/३८४)** बहुत जाति के और बहुत प्रकार के सूर्य-चन्द्र आदि के उद्योत तो परिमित क्षेत्र में पाये जाते हैं, अर्थात् वे थोड़े ही पदार्थों को आप परिमाण प्रकाशित करते हैं, किन्तु जो केवलदर्शन है वह लोक और अलोक को भी प्रकाशित करता है।

समस्त आवरण के अत्यन्त क्षय से केवल (आत्मा) ही मूर्त्त-अमूर्त्त द्रव्य को सकल रूप से जो सामान्यत: अवबोध करता है वह स्वाभाविक केवलदर्शन है। **(पं.का.ता.४२)**

तालिका संख्या ४३

चक्षु दर्शन

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे	
२.	इन्द्रिय	२	चतु. पंचे.	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदरहित जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कु. ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	७	सा. छे. परि. सू. य. संयमा. असं.	
९.	दर्शन	१	स्वकीय	चक्षुदर्शन
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सासा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	चतुरिन्द्रिय एवं असैनी पंचे. की अपेक्षा असैनी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१२	पहले से बारहवें तक	
१६.	जीवसमास	३	चतु. असैनी-पंचे. सैनी-पंचे.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मनः.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	८	७ ज्ञानो. १ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शुक्ल	अन्त के दो शुक्लध्यान नहीं हैं।
२२.	आस्रव	५७	५ मि. १२ अवि. २५ क. १५यो.	
२३.	जाति	२८ ला.	चतु. तथा पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	११७$\frac{१}{२}$ ला.क.	चतु. तथा पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : चक्षुदर्शनी जीवों के संयम-मार्गणा में से किस संयम में सबसे ज्यादा योग होते हैं ?

उत्तर : चक्षुदर्शनी जीवों के असंयम में सबसे ज्यादा योग होते हैं-

इनके १३ योग होते हैं- ४. म. ४ व. ५ काययोग (आहारकद्विक बिना)

२. प्रश्न : क्या ऐसे कोई चक्षुदर्शनी जीव हैं जिनके प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, छठे गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान वाले चक्षुदर्शनी जीवों के प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय नहीं होता है।

नोट : १. पहले गुणस्थान से चतुर्थ गुणस्थान तक भी प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय नहीं है लेकिन वहाँ अनन्तानुबन्धी आदि कषाय के उदय की मुख्यता है इसलिए यहाँ उनका ग्रहण नहीं किया है।

२. तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में भी प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय नहीं है लेकिन वहाँ चक्षुदर्शन नहीं पाया जाता है।

३. प्रश्न : चक्षुदर्शनी असंयमी जीव के अधिक से अधिक कितने ज्ञान हो सकते हैं ?

उत्तर : चक्षुदर्शनी असंयमी जीवों के अधिक-से-अधिक छह ज्ञान हो सकते हैं-

तीन कुज्ञान - कुमति, कुश्रुत, कुअवधि।

तीन ज्ञान - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान।

तीन मिश्र ज्ञान भी होते हैं।

४. प्रश्न : चक्षुदर्शनी के किस संज्ञा में सबसे ज्यादा संयम होते हैं ?

उत्तर : चक्षुदर्शनी के परिग्रह संज्ञा में सबसे ज्यादा संयम होते हैं।

इनके छह संयम होते हैं।

१. सामायिक संयम, २. छेदोपस्थापना संयम, ३. परिहार विशुद्धि संयम

४. सूक्ष्म साम्पराय संयम, ५. संयमासंयम, ६. असंयम।

५. प्रश्न : क्या अपर्याप्तक अवस्था में भी चक्षुदर्शन होता है ?

उत्तर : यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के चक्षुदर्शन होता है। इसका कारण यह है कि उत्तरकाल में अर्थात् अपर्याप्तकाल समाप्त होने के पश्चात् निश्चय से चक्षुदर्शनोपयोग की समुत्पत्ति के अविनाभावी चक्षुदर्शन का क्षयोपशम देखा जाता है। हाँ, चतुरिन्द्रिय-पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के चक्षुदर्शन नहीं होता है, क्योंकि उनमें चक्षुदर्शनोपयोग की समुत्पत्ति के अविनाभावी चक्षुदर्शनावरण कर्म के क्षयोपशम का अभाव

है। **(ध.४/१२६)** औदारिक मिश्र काययोग तथा कार्मण काययोग में मन:पर्ययज्ञानोपयोग विभंगावधिज्ञानोपयोग और चक्षुदर्शनोपयोग इन तीन से रहित ९ उपयोग होते हैं।

वैक्रियिकमिश्र काययोग में केवलद्विक, मन:पर्ययज्ञानोपयोग, विभंगावधिज्ञानोपयोग और चक्षुदर्शनोपयोग इन पाँच को छोड़कर शेष सात उपयोग होते हैं।

आहारकमिश्र काययोग में केवलद्विक (केवलज्ञान-केवलदर्शन), मन:पर्ययज्ञानोपयोग और अज्ञानत्रिक इन छह को छोड़कर शेष छह उपयोग होते हैं। **(पं.सं.प्रा. ४/२७-२९)**

६. प्रश्न : **क्या ऐसे कोई चक्षुदर्शनी जीव हैं जो सम्यग्दृष्टि ही हों ?**

उत्तर : हाँ, चतुर्थ गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान वाले चक्षुदर्शनी जीव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं। तेरहवें चौदहवें गुणस्थान वाले भी सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, लेकिन उनके चक्षुदर्शन नहीं होता है इसलिए उनको यहाँ ग्रहण नहीं किया गया है।

७. प्रश्न : **चक्षुदर्शनवालों के कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?**

उत्तर : चक्षुदर्शनवालों के कम-से-कम पाँच पर्याप्तियाँ होती हैं-

आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति। ये पाँच पर्याप्तियाँ चतुरिन्द्रिय तथा असैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के जानना चाहिए।

८. प्रश्न : **चक्षुदर्शनी भय कषाय वालों के कितनी संज्ञाएँ होती हैं ?**

उत्तर : चक्षुदर्शनी भय कषाय वाले जीवों के कम-से-कम तीन संज्ञाएँ होती हैं-

भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा और परिग्रह संज्ञा।

ये तीन संज्ञाएँ ७वें, ८वें गुणस्थान की अपेक्षा होती हैं। तथा इनके अधिक-से-अधिक चारों संज्ञाएँ होती हैं- ये चतुरिन्द्रिय से लेकर छठे गुणस्थानवर्ती जीवों के जानना चाहिए।

९. प्रश्न : **चक्षुदर्शनी सम्यग्दृष्टि के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?**

उत्तर : चक्षुदर्शनी सम्यग्दृष्टि जीवों के आस्रव के कम-से-कम ९ प्रत्यय होते हैं-

४ मनोयोग, ४ वचनयोग तथा १ काययोग। (औदारिक काययोग)।

ये प्रत्यय ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा कहे गये हैं। तथा अधिक से अधिक ४६ प्रत्यय होते हैं-

१२ अविरति २१ कषाय तथा १३ योग (आहारकद्विक बिना)

ये प्रत्यय चतुर्थ गुणस्थान की अपेक्षा कहे गये हैं।

सामान्य से सम्यग्दृष्टि की विवक्षा करने पर आहारकद्विक भी मिला देने से आस्रव के ४८ प्रत्यय हो जाते हैं।

तालिका संख्या ४४

अचक्षुदर्शन

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पंच.	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि, १ त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदरहित जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं होता है।
८.	संयम	७	सा.छे.प.सू.य.संय. असं.	
९.	दर्शन	१	अचक्षु.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	एकेन्द्रिय से असैनी पंचे. तक असैनी हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१२	पहले से बारहवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ ए. ५ त्रस	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	८	७ ज्ञानो. १ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शु.	
२२.	आस्रव	५७	५ मि. १२ अवि. २५ क. १५ यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : अचक्षुदर्शन में किस-किस इन्द्रिय सम्बन्धी दर्शन ग्रहण करना चाहिए ?

उत्तर : अचक्षुदर्शन में चक्षु इन्द्रिय को छोड़कर शेष चार इन्द्रियों और मन सम्बन्धी दर्शन को ग्रहण करना चाहिए अर्थात् अचक्षुदर्शन पाँच प्रकार का होता है-

(१) स्पर्शन इन्द्रिय सम्बन्धी (२) रसना इन्द्रिय सम्बन्धी (३) घ्राण इन्द्रिय सम्बन्धी (४) कर्ण इन्द्रिय सम्बन्धी (५) नोइन्द्रिय (मन) सम्बन्धी।

२. प्रश्न : पाँच दर्शनों के लिए एक अचक्षुदर्शन नाम क्यों दिया है ?

उत्तर : इन पाँच दर्शनों की परस्पर में प्रत्यासत्ति (निकटता) है, इस बात को जतलाने के लिए पाँचों दर्शनों के लिए अचक्षुदर्शन एक नाम दिया है। उस प्रत्यासत्ति को कहते हैं- विषयी से पृथग्भूत अतएव स्व और पर को प्रत्यक्ष होने वाले ऐसे चक्षुदर्शन के विषय के समान उन पाँचों दर्शनों के विषय का दूसरों के लिए ज्ञान कराने का कोई उपाय नहीं है। इनकी समानता पाँचों ही दर्शनों में है। यही उनमें प्रत्यासत्ति है। **(ध. १५/१०)**

३. प्रश्न : क्या ऐसे कोई अचक्षुदर्शनी जीव हैं जिनको कभी मन:पर्ययज्ञान नहीं होगा ?

उत्तर : हाँ, अभव्य तथा अभव्यसम भव्य अचक्षुदर्शनी जीवों को कभी मन:पर्यय ज्ञान नहीं होगा। तथा मन:पर्ययज्ञान से रहित क्षपक श्रेणी चढ़ने वाले (आठवें गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक) अचक्षुदर्शनी जीवों को भी कभी मन:पर्ययज्ञान उत्पन्न नहीं होगा।

अरहंत-सिद्ध परमेष्ठी भगवन्तों को भी कभी मन:पर्यय ज्ञान नहीं होगा। फिर भी उनका यहाँ ग्रहण नहीं होता है क्योंकि उनके अचक्षुदर्शन नहीं होता है।

नोट : एकेन्द्रियादि भव्य जीवों को अगले भवों में मन:पर्यय ज्ञान हो सकता है।

४. प्रश्न : अचक्षुदर्शनी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीवों के संयम-मार्गणा में से कितने संयम हो सकते हैं ?

उत्तर : अचक्षुदर्शनी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीवों के पाँच संयम हो सकते हैं, क्योंकि क्षयोपशम सम्यग्दर्शन के साथ अचक्षुदर्शन चौथे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान तक ही पाया जाता है। इसलिए उनके दसवें गुणस्थान में होने वाला सूक्ष्मसाम्पराय संयम तथा ग्यारहवें बारहवें गुणस्थान में होने वाला यथाख्यात संयम नहीं पाया जाता है अर्थात् इनके पाँच संयम होते हैं।

(१) असंयम (२) संयमासंयम (३) सामायिक संयम (४) छेदोपस्थापना संयम (५) परिहारविशुद्धिसंयम।

५. प्रश्न : अचक्षुदर्शनी जीवों के आर्त्तध्यान के साथ कितने धर्मध्यान पाये जाते हैं ?

उत्तर : अचक्षुदर्शनी आर्त्तध्यानी के धर्मध्यान की विवेचना-

गुणस्थान	आर्त्तध्यान	धर्मध्यान
तीसरा	४	१
चौथा	४	२
पाँचवाँ	४	३
छठा	३ (निदानबिना)	४

नोट : यद्यपि एक समय में एक ही ध्यान होता है इसलिए आर्त्तध्यान वालों के एक भी धर्मध्यान नहीं हो सकता है। यहाँ गुणस्थान वालों को स्वामी बनाकर कथन करने से कोई विरोध नहीं है।

६. प्रश्न : **अचक्षुदर्शन वाले त्रस जीवों के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?**

उत्तर : अचक्षुदर्शन वाले त्रस जीवों के आस्रव के कम-से-कम ९ प्रत्यय होते हैं-

४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ काययोग

ये आस्रव के प्रत्यय ग्यारहवें बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा कहे गये हैं। तथा अधिक से अधिक आस्रव के ५५ (आहारकद्विक बिना) प्रत्यय होते हैं-

५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय तथा १३ योग।

ये प्रत्यय प्रथम गुणस्थानवर्ती संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव की अपेक्षा जानने चाहिए।

सामान्य से त्रस जीवों के आस्रव के ५७ प्रत्यय होते हैं।

७. प्रश्न : **अचक्षुदर्शनी सम्यग्दृष्टि के कितनी जातियाँ होती हैं ?**

उत्तर : अचक्षुदर्शनी सम्यग्दृष्टि के कुल २६ लाख जातियाँ होती हैं-

- नारकियों की ४ लाख
- पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की ४ लाख
- देवों की ४ लाख
- मनुष्यों की १४ लाख

नोट : अवधिदर्शन एवं केवलदर्शन का वर्णन अवधिज्ञान तथा केवलज्ञान के समान जानना चाहिए।

विशेष

८. प्रश्न : **विभंग दर्शन का उपदेश क्यों नहीं दिया है ?**

उत्तर : नहीं, विभंगदर्शन का अवधिदर्शन में अन्तर्भाव हो जाता है। ऐसा ही **सिद्धिविनिश्चय** में कहा है- कि अवधिज्ञान व विभंगज्ञान के पहले अवधिदर्शन ही होता है। **(ध. १३/३५६)**

९. प्रश्न : अवधिदर्शन किस-किस गुणस्थान में होता है ?

उत्तर : अवधिदर्शन के विषय में तीन मान्यताएँ हैं-

कोई प्रथम गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक अवधिदर्शन मानते हैं।

कोई तीसरे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक अवधिदर्शन मानते हैं।

कोई चौथे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक अवधिदर्शन मानते हैं।

नोट : यहाँ तीसरे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक अवधिदर्शन होता है, इस मत की मुख्यता से कथन किया गया है।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : छद्मस्थ जीवों के दर्शन-पूर्वक ही ज्ञान होता है फिर यहाँ अचक्षुदर्शन आदि दर्शनों के साथ ज्ञान कैसे कहे गये हैं ?

उत्तर : यह सत्य है कि छद्मस्थ जीवों के दर्शन पूर्वक ही ज्ञान होता है लेकिन यहाँ उपयोगात्मक दृष्टि से दर्शन और ज्ञान को एक साथ नहीं कहा गया है अर्थात् जहाँ दर्शनोपयोग होता है वहाँ ज्ञानोपयोग नहीं होता, क्योंकि छद्मस्थ जीवों के एक समय में एक ही उपयोग होता है। यहाँ उपयोगात्मक दृष्टि को गौण करके लब्धि रूप से अर्थात् क्षयोपशम की अपेक्षा ज्ञान कहे गये हैं इसलिए चक्षुदर्शनी के नाना जीवों की अपेक्षा सात ज्ञानों का क्षयोपशम पाया जा सकता है। **(वृ. द्र. सं. ४४ टी.के आधार से)**

२. प्रश्न : किन-किन जीवों के एक ही दर्शन होता है ?

उत्तर : समस्त एकेन्द्रियादि त्रीन्द्रिय पर्यन्त सभी जीवों के एक ही दर्शन होता है- अचक्षुदर्शन। अरहंत अर्थात् तेरहवें-चौदहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान तथा सिद्ध भगवन्तों के भी एक ही दर्शन होता है- केवलदर्शन।

३. प्रश्न : कितने दर्शन सैनी-असैनी दोनों के होते हैं ?

उत्तर : दो दर्शन सैनी-असैनी दोनों के होते हैं-

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन।

चक्षुदर्शन-चतुरिन्द्रिय तथा असैनी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा असैनी के तथा सैनी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि से बारहवें गुणस्थान तक के सैनी जीवों के होता है।

अचक्षुदर्शन-एकेन्द्रिय से लेकर असैनी पंचेन्द्रिय तक की अपेक्षा असैनी जीवों के तथा सैनी पंचेन्द्रिय......... तक के सैनी जीवों के होता है।

४. प्रश्न : अवधिदर्शनी के किस गुणस्थान में अनाहारक अवस्था भी होती है ?

उत्तर : अवधिदर्शनी के केवल एक चौथे गुणस्थान में अनाहारक अवस्था भी पाई जाती है।

५. **प्रश्न : किस-किस दर्शन में दो शुक्लध्यान होते हैं ?**

उत्तर : चारों ही दर्शनों में दो-दो शुक्लध्यान होते हैं-
चक्षुआदि तीन दर्शनों में प्रथम तथा द्वितीय शुक्लध्यान होता है तथा केवलदर्शन में तृतीय तथा चतुर्थ शुक्लध्यान होता है।

६. **प्रश्न : क्या ऐसा कोई दर्शन है जिसमें ज्ञानोपयोग एवं दर्शनोपयोग एक साथ हो सकते हैं ?**

उत्तर : हाँ, केवलदर्शनोपयोग के साथ केवलज्ञानोपयोग एक साथ एक समय में अर्थात् उपयोगात्मक रूप से पाया जाता है। **आचार्य नेमिचन्द्र स्वामी** ने **द्रव्य संग्रह** की ४४वीं गाथा में कहा है कि छद्मस्थ जीवों के दर्शनपूर्वक ज्ञान होता है, इनके दोनों उपयोग एक साथ नहीं होते हैं लेकिन केवली भगवान के दर्शनोपयोग ज्ञानोपयोग एक साथ होते हैं।

७. **प्रश्न : चौबीस स्थानों के ऐसे कौन-कौन से उत्तर भेद हैं जो चक्षुदर्शन में होते हैं लेकिन अवधिदर्शन में नहीं होते हैं ?**

उत्तर : चौबीस स्थानों के वे उत्तर भेद जो चक्षुदर्शन में होते हैं लेकिन अवधिदर्शन में नहीं होते हैं-

मार्गणा	**भेद**
(१) इन्द्रिय	चतुरिन्द्रिय
(२) कषाय	अनन्तानुबन्धी चतुष्क
(३) ज्ञान	कुमति. कुश्रुत. विभंग.
(४) दर्शन	चक्षुदर्शन
(५) भव्य	अभव्य
(६) सम्यक्त्व	मिथ्यात्व एवं सासादन सम्यक्त्व
(७) संज्ञी	असैनी
(८) गुणस्थान	पहला, दूसरा
(९) जीवसमास	चतुरिन्द्रिय और असैनी पंचे. सम्बन्धी
(१०) उपयोग	कुमति-कुश्रुत-विभंग ज्ञानो.-चक्षु दर्शनोपयोग
(११) आस्रव के प्रत्यय	५ मिथ्यात्व एवं अनन्तानुबन्धी चतुष्क
(१२) जाति	चतुरिन्द्रिय सम्बन्धी २ लाख
(१३) कुल	चतुरिन्द्रिय सम्बन्धी ९ लाख करोड़

नोट : जो जाति एवं कुल सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के हैं वे ही असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के भी होते हैं, इसलिए उनको यहाँ नहीं निकाला गया है।

प्रश्न पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **कौन-से दर्शन में छब्बीस लाख जातियाँ होती हैं ?**

(अ) अवधिदर्शन (ब) विभंग दर्शन

(स) केवलदर्शन (द) कोई नहीं।

(ii) **कौन से दर्शन में एक ही संयम पाया जाता है ?**

(अ) अवधिदर्शन (ब) केवलदर्शन

(स) अचक्षुदर्शन (द) चारों दर्शन

(iii) **चक्षुदर्शन में संयम ज्यादा है या अचक्षुदर्शन में ?**

(अ) चक्षुदर्शन (ब) अचक्षुदर्शन

(स) कोई नहीं (द) दोनों में बराबर नहीं

(iv) **कौन से दर्शन में सबसे कम ज्ञान होते हैं ?**

(अ) अचक्षुदर्शन (ब) अवधिदर्शन

(स) केवलदर्शन (द) चक्षुदर्शन

(v) **कौनसे दर्शन में आहारकद्विक योग नहीं हो सकते हैं ?**

(अ) केवलदर्शन (ब) अवधिदर्शन

(स) अचक्षुदर्शन (द) कोई नहीं।

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) कौन से दर्शन में क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है ?

(ii) कितने दर्शनों में सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेद होते हैं ?

(iii) कितने दर्शनों में चारों गतियाँ पाई जाती हैं ?

(iv) कौनसा दर्शन पुरुष वेदी के भी नहीं होता है ?

(v) तीन दर्शनों में संयम मार्गणा के कितने भेद पाये जाते हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) अवधिदर्शन में वैक्रियिक काययोग भी होता है ?

(ii) अचक्षुदर्शन में अनाहारक अवस्था भी होती है ?

(iii) चक्षुदर्शन में षट्काय के जीव पाये जाते हैं ?

(iv) संसार के सभी जीव अचक्षुदर्शन वाले नहीं होते हैं ?

(v) केवलदर्शन में सम्यक्त्व मार्गणा के सभी भेद नहीं पाये जाते हैं ?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) केवलदर्शन में............उपयोग............ज्ञान तथा............ इन्द्रिय जीव पाये जाते हैं।

(ii) अवधिदर्शन में............ध्यान..........कुल तथा.......... गुणस्थान होते हैं।

(iii) चक्षुदर्शन चतुरिन्द्रिय जीव के तथा.............गुणस्थान से.............गुणस्थान तक होता है।

(iv) ....दर्शन एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय............. तथा............ के भी होता है।

(v) चक्षुदर्शनी जीवों के......... ज्ञान .... संज्ञा तथा........ गुणस्थान होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	१४ लाख जाति	-	चक्षुदर्शन
(ii)	अवधिदर्शन	-	६७ लाख करोड़ कुल
(iii)	केवलदर्शन	-	मात्र सैनी पंचेन्द्रिय
(iv)	१० गुणस्थान	-	७ योग
(v)	अचक्षुदर्शन	-	अवधिदर्शन
(vi)	चक्षुदर्शन	-	षट्काय जीव
(vii)	चतुरिन्द्रिय	-	केवलदर्शन
(viii)	एकेन्द्रिय अचक्षुदर्शनी	-	२८ लाख जाति

– उत्तरमाला –

१. (i) अ (ii) ब (iii) स (iv) स (v) अ

२. (i) केवलदर्शन (ii) २ (iii) ३ (iv) केवलदर्शन (v) ७

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) ना (iv) हाँ (v) हाँ

४. (i) दो, एक, पंचेन्द्रिय (ii) १४, १०८$\frac{१}{२}$ लाख करोड़, दस (iii) मिथ्यात्व, बारहवें (iv) अचक्षु, असैनी, सैनी (v) ७, ४, १२

५. (i) केवलदर्शन (ii) मात्र सैनी पंचेन्द्रिय (iii) सात योग (iv) अवधिदर्शन (v) षट्काय (vi) २८ लाख जाति (vii) चक्षुदर्शन (viii) ६७ लाख करोड़

१०. लेश्या मार्गणा

१. प्रश्न : लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : कषायों से अनुरक्त योग प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं। **(ध. १/१५०)**

जो आत्मा को कर्म से लीपती है उसे लेश्या कहते हैं। **(ध. १/१५०)**

जो आत्मा और कर्म का सम्बन्ध करती है उसको लेश्या कहते हैं। **(ध. १/१५०)**

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग लेश्या हैं। **(ध. ८/३५६)**

स्फटिकादि पदार्थों में जैसे जपा पुष्पादि पदार्थों के सान्निध्य से जो स्वभाव प्रकट होता है वैसे ही जीव में कर्मयोग से लेश्या होती है। ''कषायानुरंजितयोगप्रवृत्तिः लेश्या'' कषाय के उदय से जो मन-वचन-काय की प्रवृत्ति होती है, जिससे आत्मा के प्रदेशों में कंपन उत्पन्न होता है वह लेश्या है। जिसके द्वारा जीव अपने आपको पुण्य-पाप से लिप्त करे, वह लेश्या है। **(सि.सा.दी.)**

२. प्रश्न : कषायों से अनुरंजित योग प्रवृत्ति को लेश्या क्यों कहा है ?

उत्तर : कषायों से स्थिति और अनुभाग बन्ध होता है तथा योग से प्रकृति और प्रदेश बन्ध होता है अर्थात् जिनके माध्यम से चारों प्रकार का बन्ध होता है वही लेश्या है। अतः कषाय और योग दोनों को लेश्या कहा गया है। **(गो.जी. ४९०)**

३. प्रश्न : कषाय से अनुरंजित योगप्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं अतः ग्यारहवें आदि गुणस्थानों में लेश्या कैसे हो सकती है ?

उत्तर : कषाय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति को लेश्या नहीं कहा है। **आचार्य वीरसेनस्वामी** ने **लिम्पतीति लेश्या** कहा है अर्थात् जो आत्मा को कर्म से लीपती है, वह लेश्या है। ग्यारहवें आदि गुणस्थानों में भी एक सातावेदनीय का बन्ध होता है अतः उनके भी लेश्या सिद्ध होती है।

उनके कषाय से अनुरंजित योगप्रवृत्ति नहीं है तथापि वहाँ भूतप्रज्ञापन नय की अपेक्षा 'शुक्ला' उपचार से कही गई है। जो योग प्रवृत्ति पहले कषाय से अनुरंजित थी वही यह है इस प्रकार एकत्व का उपचार होता है इसलिए उनके लेश्या कही गई है। **(रा.वा. २/६)**

क्षीणकषाय जीवों के लेश्या के अभाव का प्रसंग आता, यदि केवल कषायोदय से ही लेश्या की उत्पत्ति मानी जाती। किन्तु शरीर नामकर्म के उदय से उत्पन्न योग भी तो लेश्या माना गया है, क्योंकि वह भी कर्मबन्ध में निमित्त है। **(ध. ७/१०४-५)**

अकषाय जीवों के जो लेश्या बताई गई है वह भूत प्रज्ञापन नय की अपेक्षा से बताई है

अथवा जिस योग की प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं इस अपेक्षा से वहाँ पर भी मुख्य रूप से भी लेश्या मानी गयी है, क्योंकि वह भी कर्मबन्ध में निमित्त है। **(ध. ७/१०४-०५)**

अकषायी जीवों के जो लेश्या बताई गई है वह भूत प्रज्ञापन न्याय की अपेक्षा से बताई है। अथवा जिस योग की प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं, इस अपेक्षा से वहाँ पर भी मुख्य रूप से लेश्या है, क्योंकि वहाँ पर योग का सद्‌भाव है। **(गो.जी. ५३३)**

४. प्रश्न : **लेश्याएँ कितनी होती हैं ?**

उत्तर : लेश्याएँ छह होती हैं-

(१) कृष्ण (२) नील (३) कापोत (४) पीत (५) पद्‌म (६) शुक्ल।

मिथ्यात्व आदि के जो तीव्र संस्कार हैं उसे कापोत लेश्या, उससे जो तीव्रतर संस्कार हैं उसे नील लेश्या और जो तीव्रतम संस्कार हैं उसे कृष्ण लेश्या कहा जाता है। जो मंद संस्कार हैं उसे तेजो लेश्या, जो मंदतर संस्कार हैं उसे पद्‌मलेश्या तथा जो मंदतम संस्कार हैं उसे शुक्ल लेश्या कहते हैं। **(ध.१/३९०)** नैगम नय से लेश्या छह हैं और पर्यायार्थिक नयसे असंख्यात लोक प्रमाण हैं। **(गो.जी.जी. ४९३)**

५. प्रश्न : **लेश्या मार्गणा किसे कहते हैं ?**

उत्तर : उपर्युक्त छह प्रकार की लेश्याओं में जीवों की खोज करने को लेश्या मार्गणा कहते हैं।

६. प्रश्न : **लेश्या मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?**

उत्तर : लेश्या मार्गणा के अनुवाद से कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या,तेजो लेश्या, पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या और अलेश्या वाले जीव हैं। **(ध. १/३८८)**

७. प्रश्न : **लेश्या कितने प्रकार की होती है ?**

उत्तर : लेश्या दो प्रकार की होती है-

(१) द्रव्य लेश्या (२) भाव लेश्या **(ध. २/७८८)**

(१) अशुभ (२) शुभ

अशुभ लेश्या - कृष्ण, नील, कापोत

शुभ लेश्या - पीत, पद्म, शुक्ल **(गो.जी. ७०४)**

८. प्रश्न : **द्रव्य लेश्या किसे कहते हैं ?**

उत्तर : वर्ण नामकर्म के उदय से जो शरीर का वर्ण होता है उसको द्रव्य लेश्या कहते हैं। जैसे- पार्श्वनाथ भगवान का वर्ण काला, आदिनाथ भगवान का पीला।

नोकर्म वर्गणाओं से मिश्रित कर्मवर्गणाओं को द्रव्य लेश्या कहते हैं। **(ध. २/७८८)**

शरीर के रंग का नाम द्रव्य लेश्या है।

९. प्रश्न : द्रव्य लेश्या किस-किस वर्ण की होती है ?

उत्तर : द्रव्य लेश्या का वर्ण-

लेश्या	वर्ण
कृष्ण लेश्या	भौंरे के समान अत्यन्त काले वर्ण की।
नील लेश्या	नील की गोली के समान नील वर्ण की।
कापोत लेश्या	कबूतर के समान।
तेजो (पीत) लेश्या	सोने के समान पीत वर्ण की।
पद्म लेश्या	कमल (पद्म) के समान लाल।
शुक्ल लेश्या	शंख के समान सफेद। **(गो.जी. ४९५)**

१०. प्रश्न : भाव लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : मोहनीय कर्म के उदय या क्षयोपशम या क्षय से जो जीव के परिणामों में और प्रदेशों में चंचलता होती है उसको भाव लेश्या कहते हैं। **(गो.जी. ५३६)**

जीव का कषाय और योग के निमित्त से होने वाला जो आत्मिक परिणाम है, वह भाव लेश्या है। **(ध. २/७८८)**

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग से उत्पन्न हुए जीव के संस्कारों को भावलेश्या कहते हैं। **(ध. १/३९०)**

भावलेश्या कषाय के उदय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति रूप है। **(सर्वा.सि. २/६)**

११. प्रश्न : छहों लेश्याओं के कौन-कौन से दृष्टान्त हैं ?

उत्तर : छहों लेश्याओं के दृष्टान्त :-

लेश्या		दृष्टान्त
१. कृष्ण लेश्या	-	जड़ मूल से वृक्ष को काटो।
२. नील लेश्या	-	वृक्ष के स्कन्ध को काटो।
३. कापोत लेश्या	-	वृक्ष की शाखाओं को काटो।
४. पीत लेश्या	-	वृक्ष की उपशाखाओं (टहनियों) को काटो।

५. **पद्म लेश्या**	-	वृक्ष के फलों को तोड़कर खाओ।
६. **शुक्ल लेश्या**	-	पेड़ से पतित (गिरे) फलों को खाओ।

(गो.जी. ५०७-८)

१२. प्रश्न : यहाँ कौनसी लेश्या ग्रहण करनी चाहिए ?

उत्तर : यहाँ भाव लेश्या को ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि आस्रव के कारण रूप आत्म-प्रदेशों में परिस्पन्दन की कारणभूत भावलेश्या ही कही गई है।

१३. प्रश्न : किस गुणस्थान में किस अपेक्षा लेश्या होती है ?

उत्तर : गुणस्थानों में लेश्या की अपेक्षा-

गुणस्थान		**अपेक्षा**
आदि के चार गुणस्थानों में	-	मोहनीय कर्म का उदय।
पाँचवें, छठे, सातवें में	-	मोहनीय कर्म का क्षय, उपशम तथा क्षयोपशम।
उपशम श्रेणी में	-	मोहनीयकर्म का उपशम।
क्षपक श्रेणी में	-	मोहनीय कर्म का क्षय। **(गो.जी. ५३६)**
सयोग केवली भगवान के	-	योगनिमित्तक

(गो.जी.जी. ५३३ के आधार से)

१४. प्रश्न : क्या लेश्या से रहित जीव भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, लेश्या से रहित जीव भी होते हैं-
चौदहवें गुणस्थान में स्थित जीव तथा सिद्ध भगवान।

१५. प्रश्न : अलेश्य जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो कृष्णादि छहों लेश्याओं से रहित हैं, पंच परिवर्तन रूप संसार से विनिर्गत हैं, अनन्त सुखी हैं, आत्मोपलब्धि रूप सिद्धिपुरी को सम्प्राप्त हैं ऐसे अयोगिकेवली और सिद्ध जीवों को अलेश्य जानना चाहिए। **(पं. सं. प्रा. १५३)**

नोट : इन्हीं को लेश्यातीत जीव भी कहते हैं।

तालिका संख्या ४५

कृष्णादि तीन लेश्या

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान ३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु अचक्षु अवधि	
१०.	लेश्या	१	स्वकीय	कृष्ण में कृष्ण, नील......।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.उप.क्षायो.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	पहले से चौथा	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	केवलदर्शनोपयोग नहीं है।
२१.	ध्यान	९	४ आ. ४ रौ. १ धर्म	आज्ञाविचय धर्मध्यान है।
२२.	आस्रव	५५	५मि. १२अ. २५क. १३यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : **कृष्ण लेश्या किसे कहते हैं ?**

उत्तर : दुराग्रह, उपदेश-अवमानना, तीव्र वैर, अतिक्रोध, दुर्मुख, निर्दयता, क्लेश, ताप, हिंसा तथा असंतोष आदि परम तामस भाव कृष्ण लेश्या के लक्षण हैं। **(रा.वा. ४/२२)**

कृष्ण लेश्या से युक्त दुष्ट पुरुष अपने ही गोत्रीय तथा एक मात्र स्वकलत्र को भी मारने की इच्छा करता है। दया धर्म से रहित, वैर को न छोड़ने वाला, प्रचण्ड कलह करने वाला तथा क्रोधी होता है। **(ति.प. २/२९६-७)**

२. प्रश्न : **नील लेश्या किसे कहते हैं ?**

उत्तर : विषयासक्त, मतिहीन, मानी, विवेकबुद्धि से रहित, मन्द, आलसी, कायर, प्रचुर माया कर्म में संलग्न, निद्राशील, दूसरों को ठगने में तत्पर, लोभ से अन्ध, धन-धान्यादि जनित सुख का इच्छुक और बहुसंज्ञायुक्त नील लेश्या वाला होता है। **(ति.प. २/२९८-९९)** मूर्खता, कार्य की अनिष्ठा, भीरुता, अतिविषयाभिलाषा, अतिगृद्धि, माया, तृष्णा, अतिमान, वंचना, अनृतभाषण, चपलता, अतिलोभ आदि भाव नील लेश्या के लक्षण हैं। **(रा.वा. ४/२२)**

३. प्रश्न : **कापोत लेश्या किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जो दूसरों के ऊपर रोष करता हो, निन्दा करता हो, दूषण, शोक, भय बहुल हो, दूसरों से ईर्षा करता हो, पर का पराभव करता हो, नाना प्रकार से अपनी प्रशंसा करता हो, पर का विश्वास नहीं करता हो, अपने समान दूसरों को नहीं मानता हो, स्तुति करने पर अति संतुष्ट होता हो, अपनी हानि-वृद्धि को नहीं जानता हो, रण में मरण का इच्छुक हो, स्तुति या प्रशंसा किये जाने पर बहुत धान्यादि देवे, ये सब कापोत लेश्या के लक्षण हैं। **(पं.सं. १४७-४८)**

४. प्रश्न : **किन-किन जीवों के नील लेश्या नहीं पायी जाती है ?**

उत्तर : वे जीव जिनके नील लेश्या नहीं पाई जाती है-

(१) पहले, दूसरे, छठे, सातवें नरकों में

(२) सभी वैमानिक देव-देवियों में,

(३) भवनत्रिक देवों (देवियों) की पर्याप्त अवस्था में,

(४) भोगभूमि तथा कुभोगभूमि की पर्याप्त अवस्था में,

(५) भोगभूमि में जाने वाले सम्यग्दृष्टि जीवों के,

(६) पंचम गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान में,

(७) तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाले तीसरे नरक के नारकियों के।

५. प्रश्न : **कृष्णादि अशुभ लेश्याओं के साथ प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहाँ पर पाया जाता है?**

उत्तर : कृष्णादि अशुभ लेश्याओं के साथ प्रथमोपशम सम्यक्त्व मात्र नरकों में ही पाया जाता है। कर्मभूमिया मनुष्य-तिर्यञ्चों में प्रथमोपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति के समय शुभ लेश्याएँ ही पाई जाती हैं। उसके बाद अशुभ लेश्या भी संभव है। **(गो. जी. ६५२)**

भोगभूमि तथा देवों के प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ अशुभ लेश्याएँ नहीं होती हैं, क्योंकि उनकी पर्याप्त अवस्था में शुभ लेश्याएँ ही पायी जाती हैं।

६. प्रश्न : कापोत लेश्या के साथ कितनी गतियों में रौद्र ध्यान हो सकता है ?

उत्तर : कापोत लेश्या के साथ रौद्र-ध्यान चारों गतियों में पाया जाता है-

(१) नरक गति में - पहले से तीसरे नरक तक।

(२) तिर्यञ्चगति में - कर्मभूमि में पहले से चौथे गुणस्थान तक।

(३) मनुष्यगति में - कर्मभूमि में पहले से चौथे गुणस्थान तक।

(४) भोगभूमिया - मनुष्य-तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

(५) देवगति में - भवनत्रिक देवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

७. प्रश्न : नील लेश्या के साथ सम्यग्ज्ञान कहाँ नहीं पाये जाते हैं ?

उत्तर : वे स्थान जहाँ नील लेश्या के साथ सम्यग्ज्ञान नहीं होते हैं-

(१) देवगति में नील लेश्या के समय सम्यग्ज्ञान नहीं होते हैं। वहाँ पीतादि शुभ लेश्याओं में ही सम्यग्ज्ञान होते हैं।

(२) भोगभूमि तथा कुभोगभूमि में नील लेश्या में सम्यग्ज्ञान नहीं होते हैं वहाँ कापोतादि चार लेश्याओं में ही सम्यग्ज्ञान होते हैं।

(३) नरक में तीसरे, चौथे, पाँचवें नरक में जाते समय भी नील लेश्या होती है, लेकिन सम्यग्ज्ञान नहीं होते हैं, क्योंकि सम्यग्दर्शन को लेकर जीव पहले नरक से आगे नहीं जाता है।

८. प्रश्न : कापोत लेश्या के साथ क्षायिक सम्यक्त्व किन-किन जीवों के पाया जा सकता है ?

उत्तर : कापोत लेश्या के साथ क्षायिक सम्यक्त्व के स्थान-

(१) भोगभूमिया मनुष्य-तिर्यञ्चों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

(२) प्रथम नरक की पर्याप्तक तथा निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

(३) कर्मभूमिया मनुष्यों की पर्याप्तक तथा निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

यहाँ निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में नरक से आने वालों की अपेक्षा समझना चाहिए।

९. प्रश्न : क्या कृष्ण लेश्या वालों के भी क्षायिक सम्यक्त्व हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, कर्मभूमिया मनुष्यों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कृष्ण लेश्या भी हो सकती है, लेकिन क्षायिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति के काल में तो शुभ लेश्याएँ ही होती है। **(गो.जी. ६५२)**

तालिका संख्या ४६

पीत एवं पद्म लेश्या

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	३	ति. म. दे.	नरकगति में शुभ लेश्या नहीं है।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	५	सा. छे. परि. संय. असंयम	
९.	दर्शन	३	च. अच. अव.	
१०.	लेश्या	१	स्वकीय	पीत में पीत.......।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	पीत लेश्या असंज्ञी जीवों के भी होती है।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	७	पहले से सातवें तक	आगे के गुणस्थानों में शुक्ल लेश्या ही होती है।
१६.	जीवसमास	२	सैनी तथा असैनी पंचे.	पद्म लेश्या में मात्र सैनी पंचे. जीवसमास ही होते हैं
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१२	४ आ. ४ रौ. ४ धर्म	
२२.	आस्रव	५७	५मि. १२अ. २५क. १५यो.	
२३.	जाति	२२ ला.	देव, मनुष्य, पंचे. तिर्यञ्च की	नरक सम्बन्धी जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	८३ $\frac{१}{२}$ ला.क.	देव, मनुष्य, पंचे. तिर्यञ्च की	नरक सम्बन्धी कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : पीत लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : दृढ़ता, मित्रता, दयालुता, सत्यवादिता, दानशीलत्व, स्वकार्य पटुता, स्वधर्म समदर्शित्व आदि पीत लेश्या के लक्षण हैं। **(रा.वा. ४/१२)**

जो अपने कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य और सेव्य-असेव्य को जानता हो, सबमें समदर्शी हो, दान में रत हो, मृदु स्वभावी और ज्ञानी हो ये सब तेजो लेश्या के लक्षण हैं। **(पं.सं. १/१५०)**

२. प्रश्न : पद्‌म लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो त्यागी हो, भद्र हो, चोखा हो, उत्तम काम करने वाला हो, बहुत भी अपराध या हानि होने पर भी क्षमा कर देने वाला हो, साधुजनों के गुण-पूजन में निरत हो। ये सब पद्म लेश्या के लक्षण हैं। **(पं.सं.प्रा.१५१)** ये सत्यवाक्, क्षमा, सात्विकदान, पाण्डित्य, गुरु-देवता पूजन में रुचि आदि पद्‌म लेश्या के लक्षण हैं। **(रा.वा. ४/२२)**

३. प्रश्न : क्या कोई ऐसे पीत लेश्या वाले जीव हैं जिनके पाँच मिथ्यात्व नहीं होते हैं ?

उत्तर : हाँ, दूसरे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान तक के पीत लेश्या वाले जीवों के पाँच मिथ्यात्व रूप आस्रव के प्रत्यय नहीं होते हैं।

आगे के गुणस्थानों में भी मिथ्यात्व सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं है, लेकिन उनके पीत लेश्या नहीं होती है।

४. प्रश्न : क्या ऐसे कोई पद्‌म लेश्या वाले जीव हैं जिनके आठ कषायें नहीं होती हैं ?

उत्तर : हाँ, पाँचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में स्थित पद्‌म लेश्या वाले जीवों के अनन्तानुबन्धी चतुष्क तथा अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क के निमित्त से आस्रव नहीं होता है। आगे के गुणस्थानों में भी इन कषायों के निमित्त से आस्रव नहीं होता है लेकिन वहाँ पद्‌म लेश्या नहीं पाई जाती है।

नोट : छठे-सातवें गुणस्थान में प्रत्याख्यानावरण चतुष्क भी नहीं होती हैं।

५. प्रश्न : पीत पद्‌म लेश्या वालों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितने वेद हो सकते हैं?

उत्तर : पीत लेश्या वालों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में दो वेद होते हैं-

स्त्रीवेद - देवों के प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थान वालों की अपेक्षा।

पुरुषवेद - देवों के पहले, दूसरे, चौथे गुणस्थान की अपेक्षा तथा मनुष्यों में चौथे और छठे गुणस्थान की अपेक्षा।

पद्‌म लेश्या वालों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में एक पुरुष वेद ही होता है।

देवों के पहले, दूसरे, चौथे गुणस्थान की अपेक्षा तथा मनुष्यों में चौथे और छठे गुणस्थान की अपेक्षा जानना चाहिए। **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

नोट : देवांगनाओं में पद्मादि लेश्याएँ नहीं होती हैं।

६. प्रश्न : पद्म लेश्या वालों के स्त्रीवेद कहाँ-कहाँ पाया जाता है ?

उत्तर : पद्म लेश्या वालों के स्त्रीवेद वाले जीव-

१. मनुष्यों में प्रथम गुणस्थान से सातवें गुणस्थान तक

२. पंचेन्द्रिय संज्ञी तिर्यंच के प्रथम गुणस्थान से पाँचवें गुणस्थान तक। आगे के गुणस्थान इनके नहीं होते हैं।

इनके कार्मण काययोग एवं निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में पद्म लेश्या नहीं होती है।

७. प्रश्न : पीत-पद्म लेश्या में कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : पीत एवं पद्म लेश्या वालों के कम-से-कम सात प्राण होते हैं-

५ इन्द्रियाँ, काय बल, आयु।

ये प्राण निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था की अपेक्षा कहे गये हैं।

८. प्रश्न : पीत-पद्म लेश्या के साथ सात प्राण किस-किस योग में होते हैं ?

उत्तर : पीत-पद्म लेश्या के साथ सात प्राण चार योगों में होते हैं।

वैक्रियिक मिश्र काययोग - देवों के प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ गुणस्थान की अपेक्षा।

औदारिक मिश्र काययोग - मनुष्यों में चौथे गुणस्थान की अपेक्षा।

कार्मण काययोग - देवों में तथा मनुष्यों में चौथे गुणस्थान की अपेक्षा।

आहारक मिश्र काययोग - मनुष्यों के छठे गुणस्थान में।

९. प्रश्न : पीत लेश्या वालों के कौन सी संज्ञा का अभाव हो सकता है ?

उत्तर : पीत लेश्या वालों के एक आहार संज्ञा का अभाव हो सकता है-

सप्तम - गुणस्थानवर्ती मुनिराज के।

१०. प्रश्न : पीत-पद्म लेश्या में आस्रव के कम-से-कम कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : पीत-पद्म लेश्या में आस्रव के कम-से-कम बीस प्रत्यय होते हैं-

४ संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।

७ नोकषाय - (स्त्री एवं नपुंसक वेद बिना)।

९ योग - (४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ काय)।

तालिका संख्या ४७

शुक्ल लेश्या

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	३	ति.म.दे.	नरकगति नहीं है।
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत भी होते हैं।
७.	ज्ञान	८	५ ज्ञा. ३ कुज्ञान	
८.	संयम	७	सा.छे.परि. सू.,य.,संय. असं.	
९.	दर्शन	४	च. अच. अव. के.	
१०.	लेश्या	१	स्वकीय	शुक्ल लेश्या
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	संज्ञी-असंज्ञी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१३	पहले से तेरहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१५	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ३ शु.	चौथा शुक्ल ध्यान लेश्यातीत जीवों के होता है।
२२.	आस्रव	५७	५ मि. १२ अवि.२५ क. १५ यो.	
२३.	जाति	२२ ला.	दे. ४ला. म.१४ ला. तिर्य-४ला.	नारकियों की जातियाँ नहीं हैं।
२४.	कुल	८३ $\frac{१}{२}$ ला.क.	दे-२६ला.क.,म.-१४ला.क.तिर्य. ४३ $\frac{१}{२}$ ला.क.	नरक सम्बन्धी कुल नहीं है।

१. प्रश्न : शुक्ल लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो पक्षपात नहीं करता हो और न निदान करता हो, सबमें समान व्यवहार करता हो, जिसे पर में रागद्वेष वा स्नेह न हो ये सब शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं। **(पं.सं. प्रा. १/१५२)** निर्वैरता, वीतरागता, शत्रु के भी दोषों पर दृष्टि न देना, निन्दा न करना, पाप कर्मों से उदासीनता, श्रेयोमार्ग में रुचि-आदि शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं। **(रा.वा. ४/२२)**

२. प्रश्न : शुक्ललेश्या वालों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितने योग होते हैं ?

उत्तर : शुक्ललेश्या वालों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में तीन योग होते हैं-

औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और आहारकमिश्र

औदारिकमिश्र - शुक्ल लेश्या वाले सम्यग्दृष्टि देव जब मनुष्य गति में आते हैं तब तथा तेरहवें गुणस्थान में समुद्घात की अपेक्षा।

वैक्रियिकमिश्र - मनुष्य-तिर्यञ्च जब शुक्ललेश्या वाले देवों में उत्पन्न होते हैं।

आहारकमिश्र - मुनिराज के आहारक शरीर के उत्पन्न होने के समय।

३. प्रश्न : शुक्ल लेश्या में कार्मण काययोग किस-किस गुणस्थान में पाया जाता है ?

उत्तर : शुक्ल लेश्या में कार्मण काययोग के गुणस्थान -

(१) पहले, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान में शुक्ल लेश्या वाले जीव विग्रहगति में देवों में उत्पन्न होते समय।

(२) सम्यग्दृष्टि देव विग्रह गति से मनुष्य पर्याय में उत्पन्न होते समय।

(३) तेरहवें गुणस्थान की केवली समुद्घात अवस्था की प्रतर व लोकपूरण अवस्था में।

४. प्रश्न : क्या ऐसे कोई शुक्ल लेश्या वाले जीव हैं जिनके चक्षुदर्शन नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, तेरहवें गुणस्थानवर्ती शुक्ल लेश्या वाले भगवन्तों के चक्षुदर्शन नहीं होता है। एकेन्द्रियादि त्रीन्द्रियपर्यन्त जीवों के भी चक्षुदर्शन नहीं होता है, लेकिन वहाँ अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं तथा चौदहवें गुणस्थानवर्ती और सिद्ध भगवान के भी चक्षुदर्शन नहीं है किन्तु उनके लेश्या ही नहीं होती है। इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

५. प्रश्न : शुक्ल लेश्या वालों के निर्वृत्यपर्याप्तावस्था किस-किस गुणस्थान में होती है ?

उत्तर : शुक्ल लेश्या वालों के निर्वृत्यपर्याप्तावस्था पाँच गुणस्थानों में हो सकती है-

पहला, दूसरा, चौथा, छठा और तेरहवाँ।

६. प्रश्न : शुक्ल लेश्या वालों के कितनी संज्ञाएँ होती हैं ?

उत्तर : शुक्ल लेश्या वालों के चार स्थान रूप संज्ञाएँ होती हैं-

४, ३, २, १।

ये संज्ञातीत भी होते हैं।

४ संज्ञाएँ - पहले से छठे गुणस्थान तक।

३ संज्ञाएँ - सातवें-आठवें गुणस्थान में।

२ संज्ञाएँ - नवमें गुणस्थान में।

१ संज्ञा - नवें के अवेद भाग से दसवें गुणस्थान तक।

संज्ञातीत - ग्यारहवें से तेरहवें गुणस्थान तक।

७. प्रश्न : शुक्ललेश्या वाले संज्ञातीत जीवों के कितने उपयोग हो सकते हैं ?

उत्तर : शुक्ल लेश्या वाले संज्ञातीत जीवों के कम-से-कम दो उपयोग होते हैं-

केवलज्ञानोपयोग, केवलदर्शनोपयोग (सयोग केवली भगवान के)

तथा अधिक-से-अधिक नौ उपयोग हो सकते हैं-

मति आदि पाँच ज्ञानोपयोग तथा चक्षुदर्शनादि चार दर्शनोपयोग।

८. प्रश्न : शुक्ल लेश्या वाले जीवों के कौन-कौन सी अविरतियाँ होती हैं ?

उत्तर : शुक्ल लेश्या वालों में अविरतियाँ-

(१) छठे गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान पर्यन्त अविरतियाँ नहीं होती हैं।

(२) पहले से चौथे गुणस्थान तक सभी अविरतियाँ।

(३) पाँचवें गुणस्थान में ११ अविरतियाँ।

चौदहवें गुणस्थानवर्ती और सिद्ध भगवान के भी अविरतियाँ नहीं हैं, लेकिन वहाँ लेश्या नहीं पाई जाती है।

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : क्या साधु के भी कृष्णादि लेश्याएँ हो सकती हैं ?

उत्तर : बकुश व प्रतिसेवना कुशील साधु के उपकरणों के प्रति आसक्ति की संभावना होने से कदाचित् आर्तध्यान संभव है और आर्त्तध्यान से कृष्णादि तीन अशुभ लेश्याओं का होना संभव है। **(सर्वा. ३६५ टिप्पण)** भावेण तेउपम्मशुक्ललेस्साओ-प्रमत्त-संयतों के भाव से तीन शुभ लेश्याएँ ही होती हैं। **(ध. २/४३६)** अतः साधु के अशुभ लेश्याएँ भजनीय हैं।

२. प्रश्न : किन-किन जीवों के पर्याप्त होने के बाद शुभ लेश्याएँ ही होती हैं ?

उत्तर : भवनत्रिक, भोगभूमि तथा कुभोगभूमिया जीवों के पर्याप्तक अवस्था में शुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

नोट : वैमानिक देवों की पर्याप्तक अवस्था में भी शुभ लेश्याएँ ही होती हैं, लेकिन उनके निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में भी शुभ लेश्याएँ ही हैं इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

३. प्रश्न : किन जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं ?

उत्तर : वे जीव जिनकी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं-

(१) भवनत्रिक तथा भोगभूमिया जीव

(२) प्रथम-द्वितीय गुणस्थानवर्ती मनुष्य-तिर्यञ्च।

(३) प्रथम द्वितीय गुणस्थानवर्ती वैमानिक देव भी मरण के समय अपनी शुभ लेश्याओं से गिर जाते हैं इसलिए वे भी जब मनुष्य-तिर्यञ्च में जन्म लेते हैं तो अशुभ लेश्या वाले ही होते हैं। **(ध. २/६५६)**

(४) नरकों में से आये हुए मनुष्य-तिर्यञ्चों के भी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अशुभ लेश्या ही होती है, क्योंकि नरक से आये जीवों के अन्तर्मुहूर्त तक अशुभ लेश्या ही रहती है।

नोट : नारकियों के भी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं लेकिन उनके पर्याप्त अवस्था में भी अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

४. प्रश्न : किस-किस लेश्या में मति आदि चार ज्ञान भी होते हैं और तीन मिथ्याज्ञान भी होते हैं?

उत्तर : केवल दो पीत और पद्म लेश्या में मति आदि चार ज्ञान भी होते हैं और तीन मिथ्या ज्ञान भी होते हैं। क्योंकि ये दोनों लेश्याएँ पहले से सातवें गुणस्थान तक होती हैं। यद्यपि शुक्ल लेश्या में भी ये ज्ञान होते हैं, लेकिन उसमें केवलज्ञान भी होता है। इसलिए उसका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

५. प्रश्न : कौनसी लेश्याओं में नौ उपयोग होते हैं ?

उत्तर : तीन अशुभ लेश्याओं में नौ उपयोग होते हैं-

६ ज्ञानोपयोग - ३ कुमति आदि तथा ३ मति आदि

३ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधि दर्शनोपयोग।

६. प्रश्न : पीत-पद्म लेश्या वालों से शुक्ल लेश्या वालों में क्या-क्या विशेषता होती है ?

उत्तर : पीत-पद्म लेश्या वालों से शुक्ल लेश्या वालों में विशेषता-

मार्गणा		**शुक्ल लेश्या वालों में विशेषता**
(१) वेद	-	वेद रहित भी होते हैं।
(२) कषाय	-	कषायातीत भी होते हैं।
(३) ज्ञान	-	केवलज्ञान भी होता है।
(४) संयम	-	सूक्ष्मसाम्पराय तथा यथाख्यात संयम भी होते हैं।
(५) दर्शन	-	केवलदर्शन भी होता है।
(६) संज्ञी	-	संज्ञी-असंज्ञी से रहित भी होते हैं।
(७) गुणस्थान	-	८ वें से १३वें तक गुणस्थान भी होते हैं।
(८) उपयोग	-	केवलज्ञानोपयोग तथा केवलदर्शनोपयोग भी होते हैं।
(९) संज्ञा	-	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
(१०)ध्यान	-	आदि के तीन शुक्ल ध्यान भी होते हैं।
(११)प्राण	-	चार प्राण वाले जीव भी होते हैं।

७. प्रश्न : चौबीस स्थानों के कितने उत्तर भेद हैं जो शुक्ल लेश्या में भी होते हैं और कृष्ण लेश्या में भी होते हैं ?

उत्तर : वे उत्तर भेद जो कृष्ण एवं शुक्ल दोनों लेश्याओं में होते हैं-

स्थान		**उत्तरभेद**
(१) गति	-	तिर्यञ्च, मनुष्य तथा देव
(२) इन्द्रिय	-	पंचेन्द्रिय
(३) काय	-	त्रस
(४) योग	-	१३ (आहारकद्विक बिना)
(५) वेद	-	तीनों
(६) कषाय	-	२५
(७) ज्ञान	-	६ (मन:पर्यय एवं केवलज्ञान बिना)
(८) संयम	-	१ (असंयम)

(९) दर्शन	-	३ (केवलदर्शन बिना)
(१०)भव्य	-	२
(११) सम्यक्त्व	-	छहों
(१२) संज्ञी	-	सैनी
(१३) आहारक	-	दोनों
(१४)गुणस्थान	-	पहले से चतुर्थ तक
(१५)जीवसमास	-	सैनी पंचेन्द्रिय
(१६)पर्याप्ति	-	छहों
(१७)प्राण	-	दस
(१८)संज्ञा	-	चार
(१९)उपयोग	-	९ (६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.)
(२०)ध्यान	-	९ (४ आर्त ४ रौद्र १ धर्म.)
(२१)आस्रव के प्रत्यय	-	५५ (आहारकद्विक बिना)
(२२)जाति	-	२२ लाख जाति (दे.म. तथा पंचे. तिर्यञ्च की)
(२३)कुल	-	८३ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़

८. प्रश्न : लेश्यातीत जीवों के चौबीस स्थानों में से कितने उत्तर भेद पाये जाते हैं ?

उत्तर : लेश्यातीत जीवों के चौबीस स्थानों में से उत्तर भेद-

स्थान		**उत्तर भेद**
(१) गति	-	मनुष्यगति
(२) इन्द्रिय	-	पंचेन्द्रिय
(३) काय	-	त्रस
(४) ज्ञान	-	केवलज्ञान
(५) संयम	-	यथाख्यात
(६) दर्शन	-	केवलदर्शन
(७) भव्य	-	भव्य

(८) सम्यक्त्व - क्षायिक सम्यक्त्व
(९) आहारक - अनाहारक
(१०)गुणस्थान - चौदहवाँ
(११)जीवसमास - पंचेन्द्रिय
(१२)पर्याप्ति - छह
(१३)प्राण - एक (आयु)
(१४)उपयोग - २ (केवलज्ञानो. केवलदर्शनो.)
(१५)ध्यान - एक (चतुर्थ शुक्ल ध्यान)
(१६)जाति - १४ लाख
(१७)कुल - १४ लाख करोड़

नोट : ये स्थान चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा जानने चाहिए।

९. प्रश्न : किस लेश्या वाले के किस-किस गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था हो सकती है?

उत्तर : कृष्ण-नील-कापोत लेश्या के साथ तीन गुणस्थानों में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था हो सकती है-

(१) प्रथम (२) द्वितीय (३)चतुर्थ

पीत-पद्म लेश्या के साथ चार गुणस्थान में-

(१) प्रथम (२) द्वितीय (३) चतुर्थ (४) षष्ठ

शुक्ल लेश्या के साथ पाँच गुणस्थानों में-

(१) प्रथम (२) द्वितीय (३) चतुर्थ (४) षष्ठ तथा (५) तेरहवाँ

प्रश्न-पत्र

१. प्रश्न : उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **कौनसी लेश्या में १६ ध्यान होते हैं ?**

(अ) शुक्ल लेश्या (ब) कृष्णादि तीन लेश्या
(स) पीत लेश्या (द) कोई नहीं।

(ii) **किन शुक्ल लेश्या वालों के तीन अज्ञान ही होते हैं ?**

(अ) मिथ्यादृष्टि (ब) सम्यग्दृष्टि
(स) संयमी (द) कोई नहीं।

(iii) **पीत लेश्या कितनी गतियों में होती है ?**
(अ) तीन (ब) एक
(स) दो (द) चार

(iv) **कृष्ण लेश्या कितने काय के जीवों में होती है ?**
(अ) त्रस (ब) स्थावर
(स) षट्काय (द) कोई नहीं।

(v) **लेश्यातीत जीव कौन से संयम में हो सकते हैं ?**
(अ) यथाख्यात (ब) सूक्ष्मसाम्पराय
(स) असंयम (द) संयमासंयम

२. प्रश्न : एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) कितनी लेश्या वाले भोजन कर सकते हैं ?

(ii) कितनी लेश्या वालों के संयमासंयम हो सकता है ?

(iii) कौनसी लेश्या वालों के सातों संयम होते हैं ?

(iv) कितनी लेश्या वालों में अभव्य जीव भी होते हैं ?

(v) ऐसी कौनसी लेश्या है जो सैनी-असैनी से रहित जीवों के भी होती हैं ?

३. प्रश्न : हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) 'स्कन्ध को काटो' यह नील लेश्या के परिणाम हैं?

(ii) शुक्ल लेश्या में आस्रव के कम-से-कम प्रत्यय हैं ?

(iii) कृष्णादि तीन लेश्याएँ सैनी-असैनी दोनों के होती हैं ?

(iv) संसार में लेश्या से रहित जीव भी होते हैं ?

(v) शुक्ल लेश्या वालों के सासादन सम्यक्त्व नहीं होता है ?

४. प्रश्न : रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) पद्मलेश्या वालों के............संयम............वेद............ ध्यान होते हैं।

(ii) कापोत लेश्या वालों के...........गति ....काय .... प्राण होते हैं।

(iii) शुक्ल लेश्या............गुणस्थान से............गुणस्थान तक पायी जाती है।

(iv) कृष्ण लेश्या में सम्यक्त्व मार्गणा में से............सम्यक्त्व............काय............ योग होते हैं।

(v) पीत लेश्या में........ गति .... काय तथा......गुणस्थान नहीं होते हैं।

५. प्रश्न : सही जोड़ी बनाइये-

(i) परिहार विशुद्धि - लेश्यातीत

(ii) अयोग केवली - चार गुणस्थान

(iii) छह लेश्या - तीन शुभ लेश्या

(iv) तीन शुभ लेश्या - शुक्ल लेश्या

(v) तीसरा शुक्ल ध्यान - छह लेश्या

(vi) तिर्यञ्चगति - आहारकद्विक

(vii) तीन अशुभ लेश्या - प्रथम शुक्ल ध्यान

(viii) शुक्ल लेश्या - नरकगति

– उत्तरमाला –

१. (i) द (ii) अ (iii) अ (iv) स (v) अ

२. (i) छह (ii) तीन (iii) शुक्ल (iv) छह (v) शुक्ल लेश्या

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना

४. (i) पाँच, तीन, बारह (ii) चार, छह, दस (iii) प्रथम, तेरहवें (iv) छह, छह, तेरह (v) एक, पाँच, सात।

५. (i) ३ शुभ लेश्या (ii) लेश्यातीत (iii) चार गुणस्थान (iv) आहारकद्विक (v) शुक्ल लेश्या (vi) छह लेश्या (vii) नरक गति (viii) पहला शुक्ल ध्यान।

११. भव्य मार्गणा

१. प्रश्न : भव्य मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिसके सम्यग्दर्शन आदि भाव प्रगट होने की योग्यता है, वह भव्य कहलाता है। अभव्य इसका उल्टा है। **(सर्वा.सि. २/७)**

इन भव्य तथा अभव्य भावों में जीवों की खोज करना भव्य मार्गणा है।

२. प्रश्न : भव्य मार्गणा कितने प्रकार की है ?

उत्तर : भव्य मार्गणा दो प्रकार की है-

(१) भव्य (२) अभव्य

भव्यसिद्धिक जीव हैं, अभव्यसिद्धिक जीव हैं और भव्यसिद्धिक तथा अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पों से रहित भी स्थान होता है। **(ध. २/८०३)**

३. प्रश्न : भव्य जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो नियम से संख्यात, असंख्यात व अनन्तकाल के द्वारा मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं, वे भव्य जीव हैं। **(पं.सं. प्रा. १५५)**

जिन्हें आगे नियम से सिद्धगति प्राप्त होगी वे भव्य सिद्ध हैं। **(ध.१/१५१)**

निज शुद्ध आत्मा के सम्यक् श्रद्धान, ज्ञान तथा आचरण रूप से जो होगा उसे भव्य कहते हैं। जिस प्रकार कनक पाषाण शुद्ध करने से सुवर्ण हो जाता है, उसी प्रकार जो आगामी काल में सिद्ध हो सके उसे भव्य कहते हैं। जिनके घाति कर्म नष्ट हो गये हैं उनका सुख (सर्व सुखों में) उत्कृष्ट है। यह सुनकर जो उन पर श्रद्धान करते हैं, वे भव्य हैं। **(प्र.सा. ६३)**

४. प्रश्न : अभव्य जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिन्होंने निर्वाण को पुरस्कृत नहीं किया है वे अभव्य हैं। **(ध. १/१५२)**

जो संसार से छूटकर कभी मोक्ष प्राप्त नहीं करते हैं वे अभव्य जीव हैं। **(पं.सं.प्रा.१५५)**

भविष्य काल में स्वभाव अनन्त चतुष्टयात्मक सहज ज्ञानादि गुणों रूप से भवन (परिणमन) के योग्य नहीं है वे अभव्य हैं। **(नि.सा.ता. १५६)**

जिस प्रकार अंध पाषाण शुद्ध करने पर भी कभी शुद्ध नहीं होता है, उसी प्रकार जो कभी सिद्ध न हो सके उसे अभव्य कहते हैं।

५. प्रश्न : अतीत भव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो न भव्य है और न अभव्य है, किन्तु जिन्होंने मुक्ति को प्राप्त कर लिया है और अतीत संसार हैं उन जीवों को न भव्य न अभव्य जानना चाहिए अर्थात् वे अतीत भव्य हैं। **(गो.जी. ५५९)** सयोगी और अयोगी न भव्य है, न अभव्य। **(गो.जी.जी. ७०४)**

६. प्रश्न : सिद्ध भगवन्तों को भव्य और अभव्यपने से रहित क्यों कहा है ?

उत्तर : जो अनन्त-चतुष्टय को प्राप्त करेंगे उनको भव्य कहते हैं जबकि सिद्ध तो अनन्त-चतुष्टय को प्राप्त कर चुके हैं, अब उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं करना है। अत: उनको भव्य नहीं कह सकते तथा जिसको अनन्त-चतुष्टय कभी प्राप्त होंगे ही नहीं वे अभव्य हैं और सिद्धों के तो अनन्त-चतुष्टय मौजूद हैं उनको अभव्य कैसे कहें ? अर्थात् अभव्य नहीं कह सकते। इस प्रकार सिद्धों में भव्य-अभव्य रूप भाव नहीं है। **(गो.जी. ५५९)**

७. प्रश्न : भव्याभव्य भाव शक्ति की अपेक्षा कहा गया है या व्यक्ति की अपेक्षा ?

उत्तर : जीव में भव्याभव्य भाव शक्ति के प्रगट होने की योग्यता और अयोग्यता की अपेक्षा कहा गया है। जैसे- जिसमें सुवर्ण पर्याय प्रगट करने की योग्यता है उसे कनक पाषाण कहा जाता है और अन्य को अंध-पाषाण। उसी तरह सम्यग्दर्शनादि पर्यायों की अभिव्यक्ति की योग्यता वाला भव्य तथा अन्य अभव्य है। **(रा.वा. ८/६)**

जो मूँग (पकने) सीजने के योग्य होता है उसे मूंग तथा जो सीजने (पकने) के योग्य नहीं होता है उसे ठर्रा मूँग कहते हैं।

८. प्रश्न : जिस प्रकार मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि तथा सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि बन जाता है, क्या उसी प्रकार कभी अभव्य भव्य तथा भव्य अभव्य नहीं बन सकता है ?

उत्तर : जिस प्रकार दर्शन-मोहनीय कर्म के उपशम, क्षय, क्षयोपशम से मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि बन जाता है और इसी कर्म के उदय से सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि बन जाता है, उसी प्रकार अभव्य भव्य तथा भव्य अभव्य नहीं बन सकता है, क्योंकि ये भव्याभव्य भाव किसी कर्म के उदय, क्षय, क्षयोपशम या उपशम की अपेक्षा नहीं होते हैं। ये पारिणामिक (स्वाभाविक) भाव हैं।

<u>तालिका संख्या ४८</u>

भव्य

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वि.त्री.चतु.पंचे.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	योगातीत भी होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत भी होते हैं।
७.	ज्ञान	८	३ कु. ५ ज्ञा.	
८.	संयम	७	सा. छे. परि. सू.य.संय. असं.	
९.	दर्शन	४	च. अच. अव. केवल	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु	लेश्यातीत भी होते हैं।
११.	भव्य	१	स्वकीय	भव्य
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी असैनी	संज्ञी-असंज्ञी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१४	पहले से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्था. ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१६	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ४ शु.	
२२.	आस्रव	५७	५मि. १२अ. २५क. १५यो.	आस्रव के प्रत्यय से रहित जीव भी होते हैं।
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : भव्य जीव कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : भव्य जीव दो प्रकार के होते हैं।

(१) वे भव्य जो सिद्धि को प्राप्त करेंगे (२) वे भव्य जिनमें सिद्धि प्राप्त करने की योग्यता है। **(गो.जी.जी. ५५७)**

अथवा - भव्य जीव तीन प्रकार के होते हैं-

(१) आसन्न भव्य (२) दूर भव्य (३) अभव्य सम भव्य **(गो.जी.जी. ७०४)।**

२. प्रश्न : आसन्नादि भव्यों के क्या लक्षण हैं ?

उत्तर : **आसन्न भव्य –** जो केवली भगवान का सुख, सुखों में उत्कृष्ट है इस वचन को इसी समय स्वीकार करते हैं वे शिवश्री के भाजन आसन्न भव्य हैं।

दूर भव्य – जो उपर्युक्त वचन को आगे जाकर स्वीकार करेंगे वे दूरभव्य हैं। **(प्र.सा.ता.६२)**

अभव्यसम भव्य – जो अभव्यों के समान नित्य निगोद को प्राप्त हुए हैं, भव्य हैं, वे अभव्यसम भव्य हैं, **(क.पा. २/१९५)** जो अनन्तकाल में भी सिद्ध नहीं होंगे, केवल मुक्त होने की योग्यता को ही धारण करते हैं वे अभव्यसमभव्य जीव हैं। **(गो.जी.भाषा ७०४)**

३. प्रश्न : अभव्यसमभव्य में सिद्धि प्राप्त करने की योग्यता है तो उसे सिद्धि की प्राप्ति क्यों नहीं होगी ?

उत्तर : अभव्यसमभव्य जीव भव्यत्व के अर्थात् सम्यग्दर्शन आदि सामग्री को प्राप्त करके अनन्त-चतुष्टय स्वरूप परिणमन के योग्य हैं अर्थात् केवल योग्यता रखते हैं, वे भवसिद्ध संसारी ही होते हैं क्योंकि जैसे कुछ स्वर्ण पाषाण ऐसे होते हैं, जिनका मल दूर करना शक्य नहीं होता, उस प्रकार की सामग्री नहीं मिलती, उसी तरह उनके भी मल को विनाश करने वाली सामग्री नियम से नहीं मिलती है। **(गो.जी.जी. ५५८)**

जैसे - सती विधवा में यद्यपि संतानप्राप्ति की क्षमता है लेकिन विधवा होने के कारण उसे कभी अपने पति का संयोग नहीं मिलेगा, क्योंकि वह विधवा है और सती होने के कारण वह पर पुरुष का सेवन नहीं कर सकती। इसी प्रकार.....

अथवा सुमेरु पर्वत के नीचे की मिट्टी में घड़ा बनने की योग्यता होने पर भी वह कभी घड़ा नहीं बनेगी।

४. प्रश्न : जो भव्य अनन्त काल में भी सिद्ध नहीं होगा, वह तो अभव्य के तुल्य ही है ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि मुक्ति जाने की योग्यता की अपेक्षा उनके भव्य संज्ञा बन जाती है, जितने भी जीव मुक्ति जाने के योग्य होते हैं वे सभी नियम से कलंक रहित होते हैं ऐसा कोई

नियम नहीं है, क्योंकि सर्वथा ऐसा मान लेने पर स्वर्ण-पाषाण में व्यभिचार आ जायेगा। **(ध. १/३९३)**

नहीं, वह अभव्य नहीं है, क्योंकि उसमें भव्यत्व शक्ति है। जैसे कनकपाषाण जो कभी सोना नहीं बनेगा फिर भी उसे अन्धपाषाण नहीं कह सकते। अथवा उस आगामी काल को जो अनन्तकाल में भी नहीं आयेगा, अनागामी नहीं कह सकते। उसी प्रकार सिद्धि न होने पर भी भव्यत्व शक्ति होने के कारण उसे अभव्य नहीं कह सकते। वह भव्य राशि में ही शामिल है। **(रा.वा. २/७)**

५. प्रश्न : भव्य जीव की अनाहारक अवस्था में कितने ज्ञान हो सकते हैं ?

उत्तर : भव्य जीव की अनाहारक अवस्था में छह ज्ञान हो सकते हैं-

(१) कुमतिज्ञान (२) कुश्रुतज्ञान (३) मतिज्ञान (४) श्रुतज्ञान

(५) अवधिज्ञान (६) केवलज्ञान।

कुमति कुश्रुत ज्ञान - पहले-दूसरे गुणस्थान की अपेक्षा

मति, श्रुत अवधिज्ञान - चौथे गुणस्थान की अपेक्षा

केवलज्ञान - तेरहवें चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा

(गो.जी. ७२८ आ.अ.)

६. प्रश्न : भव्य जीव की अनाहारक अवस्था में कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : भव्य जीव की अनाहारक अवस्था में अधिक-से-अधिक सात प्राण होते हैं-

५ इन्द्रिय, कायबल, आयु,

ये सात प्राण पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा कहे गये हैं।

तथा कम-से-कम एक प्राण होता है आयु प्राण (चौदहवें गुणस्थान में) **(गो.जी.आ.अ.१)**

७. प्रश्न : भव्य जीवों के कितनी संज्ञाएँ होती हैं ?

उत्तर : भव्य जीवों के सभी संज्ञाएँ होती हैं।

अथवा भव्य जीव संज्ञातीत भी होते हैं।

८. प्रश्न : भव्य जीवों के नपुंसक वेद में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : भव्य जीवों के नपुंसक वेद में आस्रव के कम-से-कम चौदह प्रत्यय होते हैं-

९ योग - (४ मनो. ४ वच. १ औदारिक काययोग)

५ कषाय - (४ संज्वलन चतुष्क, नपुंसक वेद) नवें गुण. की अपेक्षा

तथा अधिक-से-अधिक आस्रव के ५३ प्रत्यय होते हैं,

आहारकद्विक तथा दो वेद नहीं हैं।

तालिका संख्या ४९

अभव्य

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	एके.द्वी.त्री.चतु.पंचे.	
३.	काय	६	५ स्था. १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	३	कुमति कुश्रुत कुअवधि	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु. अचक्षु.	अवधि एवं केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	१	स्वकीय	अभव्य
१२.	सम्यक्त्व	१	मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	पहला	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्था. ५ त्र.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ ब.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	५	३ ज्ञानो. २ दर्शनो	
२१.	ध्यान	८	४ आर्त्त ४ रौ.	धर्म एवं शुक्ल ध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	५५	५मि. १२अ. २५क. १३यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९$\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : अभव्य जीव के लिए क्या उदाहरण दिया जा सकता है ?

उत्तर : अभव्य जीव के लिए वन्ध्या स्त्री का उदाहरण दिया जा सकता है। जिस प्रकार वन्ध्या स्त्री के पति का संयोग होते हुए तथा और भी सभी प्रकार के बाह्य कारणों के मिलने पर भी कभी पुत्र नहीं होता क्योंकि उसमें संतान उत्पन्न करने की शक्ति या योग्यता ही नहीं है। उसी प्रकार अभव्य जीव में मुक्ति के कारण मिलने पर भी कभी इसकी मुक्ति नहीं होगी। **(गो.जी. ५५८)**

२. प्रश्न : अभव्य जीव कहाँ-कहाँ नहीं होते हैं ?

उत्तर : अभव्य जीव-नव अनुदिश तथा पाँच अनुत्तर विमानों में नहीं होते।

लौकान्तिक देव, सभी दक्षिणेन्द्र, अग्रमहिषी, लोकपालों सहित सौधर्म इन्द्र **(ति.प. ८/६९५-९९)** १६९ महापुरुषों में, सीता आदि विशिष्ट सतियाँ एवं वे स्त्रियाँ जिनको तीर्थंकर भगवान ने मोक्षगामी बताया है, सादि मिथ्यादृष्टि तथा द्वितीय गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक कोई अभव्य नहीं होते हैं अर्थात् सभी जीव भव्य ही होते हैं।

३. प्रश्न : क्या अभव्य जीव के भी वैक्रियिक मिश्र काययोग हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, अभव्य जीव के भी वैक्रियिक मिश्र काययोग हो सकता है, क्योंकि अभव्य जीव भी देव-नारकियों में जा सकता है। **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

४. प्रश्न : क्या अभव्य जीवों के भी अवधिदर्शन होता है ?

उत्तर : हाँ, जो आचार्य महाराज पहले गुणस्थान से अवधिदर्शन मानते हैं उनके अनुसार विभंगावधिज्ञानी अभव्य के भी अवधिदर्शन हो जायेगा।

नोट : सामान्य से अभव्य जीवों के अवधिदर्शन नहीं हो सकता, क्योंकि अवधिदर्शन तीसरे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक होता है।

५. प्रश्न : क्या अभव्य जीवों के भी सभी लेश्याएँ हो सकती हैं ?

उत्तर : हाँ, अभव्य जीवों के भी सभी लेश्याएँ हो सकती हैं-

शुभ लेश्याएँ

(१) वैमानिक देवों की पर्याप्त एवं अपर्याप्त अवस्था में, क्योंकि द्रव्यलिङ्गी अभव्य मुनि नवम ग्रैवेयक तक जा सकता है।

(२) भवनत्रिक के पर्याप्त अवस्था में पीत लेश्या।

(३) मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की पर्याप्त अवस्था में।

३ अशुभ लेश्याएँ-

(१) नारकियों की पर्याप्त एवं अपर्याप्त अवस्था में।

(२) मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की पर्याप्त-अपर्याप्त अवस्था में। **(गो.जी.आ.अ.)**

(३) एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

(४) भवनत्रिक की अपर्याप्तावस्था में।

६. प्रश्न : अभव्य असंज्ञी जीव के कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : अभव्य असंज्ञी जीव के अधिक-से-अधिक नौ प्राण होते हैं-

५ इन्द्रिय २ बल (वचन तथा काय बल) श्वासोच्छ्‌वास तथा आयु ये नौ प्राण असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों की पर्याप्त अवस्था की अपेक्षा कहे गये हैं।

तथा अभव्य असंज्ञी जीव के कम-से-कम तीन प्राण होते हैं-

१ इन्द्रिय (स्पर्शन) १ कायबल, १ आयु = ३ प्राण

ये तीन प्राण एकेन्द्रिय की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में अथवा लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के होते हैं। कार्मण काययोग में भी तीन ही प्राण होते हैं। **(गो.जी. जी.आ.अ.)**

– समुच्चय प्रश्नोत्तर –

१. प्रश्न : अभव्यसमभव्य जीव किस-किस गति में पाये जाते हैं ?

उत्तर : अभव्यसमभव्य जीव चारों ही गतियों में पाये जाते हैं।

२. प्रश्न : सिद्ध भगवान भव्य हैं या अभव्य हैं ?

उत्तर : सिद्ध भगवान न भव्यसिद्ध हैं और न अभव्यसिद्ध, क्योंकि भव्य व अभव्य भी कर्मों के उदय से संभव होता है। अत: कर्मोदय के अभाव में वे न तो भव्य हैं न अभव्य हैं ? इन्हें पारिणामिक भावों की दृष्टि से देखा जाता है। तब फिर यों समझना कि पारिणामिक भावों का भी नाश संभव है, क्योंकि ऐसा आर्ष उपदेश है तथा आर्ष उपदेश को असत्यत्वऽभाव सम्प्राप्त है। **(सर्वा. १०/३)**

३. प्रश्न : भव्य पंचेन्द्रिय जीवों के कौन से योग नियम से होते हैं ?

उत्तर : भव्य पंचेन्द्रिय जीवों के एक भी योग नियम से नहीं होता है, क्योंकि चौदहवें गुणस्थान वाले भव्य पंचेन्द्रिय जीवों के एक भी योग नहीं होता है।

छद्‌मस्थों की अपेक्षा सैनी पंचेन्द्रिय भव्य जीवों के आठ योग नियम से होते हैं।

चार मनोयोग, चार वचनयोग।

यहाँ पर्याप्त सैनी पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा कथन किया गया है, निर्वृत्यपर्याप्तक तथा लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के तो उपर्युक्त आठ योग होते ही नहीं हैं।

नोट : पंचेन्द्रिय भव्य जीवों के एक काय योग भी नियम से होता है, लेकिन यह सुनिश्चित नहीं है कि औदारिक काययोग ही होगा या वैक्रियिक काययोग। सात काययोगों में से कोई भी काययोग हो सकता है।

४. प्रश्न : किस भव्य पंचेन्द्रिय के कौनसा काययोग होता है ?

उत्तर : भव्य पंचेन्द्रिय के काययोग-

पर्याप्तावस्था में - मनुष्यों के औदारिक काययोग और आहारक काययोग।

तिर्यञ्चों के औदारिक काययोग।

देव-नारकी के-वैक्रियिक काययोग।

अपर्याप्तावस्था में- मनुष्य के औदारिक मिश्र काययोग, आहारकमिश्र काययोग।

देव-नारकी के वैक्रियिक मिश्रकाययोग।

तिर्यञ्च के औदारिक मिश्र काययोग।

अनाहारकावस्था में सभी जीवों के (चौदहवें गुणस्थानवर्ती बिना) कार्मण काययोग होता है।

५. प्रश्न : चौबीस स्थानों के ऐसे कौन-कौन से उत्तर भेद हैं जो भव्य के होते हैं, लेकिन अभव्य के नहीं होते ?

उत्तर : वे उत्तर भेद जो भव्य के होते हैं लेकिन अभव्य के नहीं-

	मार्गणा		**भेद**
(१)	योग	-	आहारकद्विक काययोग
(२)	ज्ञान	-	मति आदि पाँच ज्ञान
(३)	संयम	-	असंयम को छोड़कर शेष संयम
(४)	दर्शन	-	अवधि और केवलदर्शन
(५)	भव्य	-	भव्य
(६)	सम्यक्त्व	-	मिथ्यात्व को छोड़कर शेष पाँच सम्यक्त्व।
(७)	गुणस्थान	-	दूसरे से चौदहवें गुणस्थान तक
(८)	उपयोग	-	५ ज्ञानो. २ दर्शनो.
(९)	ध्यान	-	४ धर्मध्यान ४ शुक्लध्यान
(१०)	आस्रव के प्रत्यय	-	आहारकद्विक

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **अभव्य जीवों के कौनसा जीवसमास नहीं होता है ?**

(अ) एकेन्द्रिय (ब) स्थावर

(स) पंचेन्द्रिय (द) कोई नहीं।

(ii) **भव्य और अभव्य दोनों ही विकल्प किस गुणस्थान में होते हैं ?**

(अ) मिथ्यात्व (ब) चौदहवें

(स) चौथे (द) कोई नहीं।

(iii) **अभव्य जीवों के कितनी लेश्याएँ होती हैं ?**

(अ) ३ अशुभ (ब) ३ शुभ

(स) छहों (द) कोई नहीं

(iv) **अभव्य जीवों के किस वेद का अभाव हो सकता है ?**

(अ) स्त्रीवेद (ब) पुरुषवेद

(स) नपुंसक वेद (द) कोई नहीं।

(v) **अभव्यसमभव्य जीवों के कितने जीवसमास होते हैं ?**

(अ) १९ (ब) १

(स) १० (द) १४

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) भव्य जीवों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?

(ii) अभव्य जीवों के कितने योग नहीं होते हैं ?

(iii) भव्य मार्गणा के कितने उत्तर भेद असंयम में पाये जाते हैं ?

(iv) भव्य मार्गणा के कितने उत्तर भेद सर्वार्थसिद्धि विमान में भी होते हैं ?

(v) भव्य जीवों के कितने गुणस्थान होते हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) अभव्य जीव पंचेन्द्रिय नहीं होते हैं ?

(ii) भव्य जीव पुरुष वेदी ही होते हैं ?

(iii) भव्य जीव योग से रहित भी होते हैं ?

(iv) अभव्य जीव को मोक्ष के साधन कभी प्राप्त नहीं होते हैं ?

(v) भव्याभव्य से रहित जीव त्रस-स्थावर नहीं होते हैं ?

३. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) भव्य जीवों के............गुणस्थान............प्राण तथा........... कुल होते हैं।

(ii) अभव्य जीव के...........योग ....आस्रव के प्रत्यय तथा .... ध्यान होते हैं।

(iii) भव्य जीवों के.............सम्यक्त्व.............संयम तथा...........कषायें होती हैं।

(iv) भव्य जीव के............संज्ञा.............आस्रव के प्रत्यय............. योगों का अभाव हो सकता है।

(v) अभव्य जीव के......... संयम......... सम्यक्त्व मार्गणा के भेद तथा....... ज्ञान नहीं होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		**ब**
(i)	अभव्यसम भव्य	-	भव्याभव्य आहारक
(ii)	अभव्य	-	आस्रव के ४० प्रत्यय
(iii)	अतीत भव्य	-	पाँच गुणस्थान
(iv)	भव्यद्वीन्द्रिय	-	भव्य चतुरिन्द्रिय
(v)	तीन योग	-	भव्य एकेन्द्रिय
(vi)	भव्य अनाहारक	-	वन्ध्या स्त्री
(vii)	एक गुणस्थान	-	सती विधवा
(viii)	चार योग	-	सिद्ध भगवान

– उत्तरमाला –

१. (i) द (ii) अ (iii) स (iv) द (v) अ

२. (i) १ (ii) २ (iii) २ (iv) १ (v) १४

३. (i) ना (ii) ना (iii) हाँ (iv) ना (v) हाँ

४. (i) १४, १०, १९९$\frac{१}{२}$ ला. करोड़ (ii) १३, ५५, ८
(iii) ६, ७, २५ (iv) ४, ५७, १५ (v) ६, ५, ५

५. (i) सती विधवा (ii) वन्ध्या स्त्री (iii) सिद्ध भगवान (iv) आस्रव के ४० प्रत्यय
(v) भव्य एकेन्द्रिय (vi) पाँच गुणस्थान (vii) भव्याभव्य आहारक (viii) भव्य चतुरिन्द्रिय।

१२. सम्यक्त्व मार्गणा

१. प्रश्न : सम्यक्त्व मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिनेन्द्र भगवान के द्वारा उपदिष्ट छह द्रव्य, पंचास्तिकाय और नवप्रकार के पदार्थों का आज्ञा अथवा अधिगम से श्रद्धान करना सम्यक्त्व है। **(गो.जी. ५६१)**

सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का श्रद्धान करना सम्यक्त्व है। **(र.क.श्रा.)**

सम्यक्त्वों में जीवों की खोज करना सम्यक्त्व मार्गणा है।

२. प्रश्न : सम्यक्त्व मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : सम्यक्त्व मार्गणा छह प्रकार की होती है-

सम्यक्त्व मार्गणा के अनुवाद से -

(१) क्षायिक सम्यग्दृष्टि (२) वेदक सम्यग्दृष्टि (३) उपशम सम्यग्दृष्टि

(४) सासादन सम्यग्दृष्टि (५) सम्यग्मिथ्यादृष्टि (६) मिथ्यादृष्टि जीव होते हैं **(ध. १/३९७)**

(१) क्षायिक सम्यक्त्व (२) वेदक सम्यक्त्व (३) उपशम सम्यक्त्व

(४) सासादन सम्यक्त्व (५) सम्यग्मिथ्यात्व (६) मिथ्यात्व

३. प्रश्न : क्षायिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : सात प्रकृतियों के क्षय से क्षायिक सम्यक्त्व होता है। वह मेरु की भाँति निष्प्रकम्प, निर्मल व अक्षय अनन्त है। **(ल.सा. १६४)**

सात प्रकृतियों के सर्वथा विनाश से क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहा जाता है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव कभी भी मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं होता, किसी प्रकार के सन्देह को भी नहीं करता और मिथ्यात्वजन्य अतिशयों को देखकर विस्मय को भी प्राप्त नहीं होता है। **(ध. १/१७१)**

४. प्रश्न : क्षय किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिनके मूल प्रकृति और उत्तर प्रकृति के भेद से प्रकृति बंध, स्थिति बंध, अनुभाग बंध और प्रदेश बन्ध अनेक प्रकार के हो जाते हैं; ऐसे आठ कर्मों का जीव से जो अत्यन्त विनाश हो जाता है उसे क्षपण (क्षय) कहते हैं।[१] **(ध. १/२१५)**

आत्यन्तिक निवृत्ति को क्षय कहते हैं। जैसे उसी जल को (जिसमें फिटकरी डालकर साफ करके दूसरे बर्तन में निकाला था) दूसरे साफ बर्तन में बदल देने पर कीचड़ का अत्यंत

---

१. क्षय करने की क्रिया को क्षपण तथा कार्य को क्षय कहते हैं।

अभाव हो जाता है, वैसे ही कर्मों का आत्मा से सर्वथा दूर हो जाना क्षय है। **(सर्वा.सि. २/१)** प्रतिपक्ष कर्म के पुन: उत्पन्न न होने रूप अभाव को क्षय कहते हैं। **(गो.क.जी.८)**

५. प्रश्न : **वेदक सम्यक्त्व किसे कहते हैं?**

उत्तर : सम्यक्त्व मोहनीय प्रकृति के उदय से पदार्थों का जो चल, मलिन और अगाढ़ रूप श्रद्धान होता है, उसे **वेदक सम्यक्त्व** कहते हैं। यह भी नहीं कहना चाहिए कि दर्शनमोहनीय के उदय रहते सम्यक्त्व कैसे होगा, क्योंकि दर्शनमोहनीय की देशघाति प्रकृति के उदय रहने पर भी जीव के स्वभाव रूप श्रद्धान के एकदेश रहने में कोई विरोध नहीं आता है। **(ध. १/३९८-४००)** सम्यक्त्व के एकदेश घातरूप से वेदन कराने वाली सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से उत्पन्न होने वाला वेदक सम्यक्त्व क्षायोपशमिक है। **(ध.१/१७३)**

६. प्रश्न : **औपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?**

उत्तर : दर्शन मोहनीय के उपशम से कीचड़ के नीचे बैठ जाने से निर्मल जल के समान पदार्थों का जो निर्मल श्रद्धान होता है वह उपशम सम्यग्दर्शन है। **(ध. १/३९८)**

अनन्तानुबन्धी चार और दर्शनमोह की तीन प्रकृतियों के उपशम से औपशमिक सम्यक्त्व होता है। **(सर्वा.सि. २५७) नोट -** सादि मिथ्यादृष्टि के उपशम-सम्यक्त्व क्रमश: ५ तथा ६ प्रकृतियों के उपशम से भी हो सकता है। **(ज.ध. २/२५५, ८/३२)**

७. प्रश्न : **उपशम किसे कहते हैं ?**

उत्तर : करण परिणामों के द्वारा नि:शक्त किये गये दर्शनमोहनीय के उदय रूप पर्याय के बिना अवस्थित रहने को उपशम कहते हैं। **(ज.ध. १२/२८०)**

उदय, उदीरणा, उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृतिसंक्रमण, स्थितिकाण्डकघात और अनुभाग काण्डक घात के बिना ही कर्मों के सत्ता में रहने को उपशम कहते हैं। **(ध. १/२१३)**

८. प्रश्न : **सासादन सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?**

उत्तर : सम्यक्त्व रूप रत्नपर्वत के शिखर से च्युत, मिथ्यात्व रूप भूमि के सम्मुख और सम्यक्त्व के नाश को प्राप्त जो जीव है उसे सासादन नाम वाला जानना चाहिए। **(गो.जी.२०)**

उपशम सम्यक्त्व से परिपतित होकर जीव जब तक मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं हुआ है तब तक उसे सासादन सम्यग्दृष्टि जानना चाहिए। **(गो.जी. ६५४)**

मिथ्यादर्शन के उदय का अभाव होने पर भी जिनका आत्मा अनन्तानुबन्धी के उदय से कलुषित हो रहा है वह सासादन सम्यग्दृष्टि है। **(रा.वा. ८/९)**

जो सम्यक्त्व की आसादना से युक्त है उसे सासादन कहते हैं। **(ध. १/१६४)**

९. प्रश्न : इसके लिए लौकिक उदाहरण क्या दिया जा सकता है ?

उत्तर : जिस प्रकार कोई फल वृक्ष से टूट चुका है, लेकिन जमीन पर नहीं पहुँचा है उसके बीच का काल न वृक्ष पर रहने का होता है और न जमीन पर रहने का। उसी प्रकार सासादन सम्यक्त्व वाला न सम्यक्त्व रूप वृक्ष पर रहता है और न मिथ्यात्व रूपी भूमि को स्पर्श करता है परंतु मिथ्यात्व को अवश्य प्राप्त करेगा।

१०.प्रश्न : सम्यग्मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिस जीव के तत्त्वों में श्रद्धान और अश्रद्धान युगपत् प्रगट होता है, वह वास्तव में सम्यग्मिथ्यात्व कर्म निरन्वय रूप से आप्त, आगम और पदार्थ विषयक श्रद्धा के नाश करने के प्रति असमर्थ है, किन्तु उसके उदय से सत्-समीचीन और असमीचीन पदार्थ को युगपद् विषय करने वाली श्रद्धा उत्पन्न होती है। **(ध. १/१६९)**

वही मिथ्यात्व प्रक्षालन विशेष के कारण क्षीणाक्षीण मद शक्ति वाले कोदों के समान अर्ध शुद्ध स्वरवाला होने पर तदुभय या सम्यग्मिथ्यात्व कहा है। उसके उदय से अर्ध शुद्ध मद शक्ति कोदों और ओदन के उपयोग से प्राप्त हुए मिश्र परिणाम के समान उभयात्मक परिणाम होता है। **(सर्वा.सि. ८/९)**

११.प्रश्न : मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होने वाला तत्त्वार्थ का अश्रद्धान मिथ्यात्व है। **(गो.जी.१५)**

मिथ्यादृष्टि जीव नियम से उपदिष्ट यथार्थ प्रवचन का तो श्रद्धान नहीं करता, किन्तु उपदिष्ट या अनुपदिष्ट असद्भाव का श्रद्धान करता है। **(गो.जी. १८/६५६)**

आप्त, आगम और पदार्थों में अश्रद्धा को उत्पन्न करने वाला कर्म मिथ्यात्व कहलाता है। **(ध. १३/३५९)**

१२.प्रश्न : सम्यक्त्व मार्गणा में मिथ्यात्व का ग्रहण क्यों किया है ?

उत्तर : जैसे पुत्रोचित कार्य को नहीं करने वाले पुत्र को ही अपुत्र कहा जाता है। अथवा जिस प्रकार आम्रवन के भीतर रहने वाले नीम के वृक्षों को आम्रवन यह संज्ञा प्राप्त हो जाती है, उसी प्रकार मिथ्यात्व आदि को सम्यक्त्व यह संज्ञा देना उचित ही है। **(ध. १/३९७)**

तालिका संख्या ५०

क्षायिक सम्यक्त्व

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	योगातीत भी होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदरहित भी होते हैं।
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	५	म.श्रु.अ.मनः. केव.	३ कुज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	७	सा.छे.प.सू.य.संय.असं.	
९.	दर्शन	४	च.अच.अव.केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	लेश्यातीत जीव भी होते हैं।
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	क्षायिक सम्यक्त्व
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी-असैनी से रहित भी हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	११	चौथे से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	संज्ञातीत भी होते हैं।
२०.	उपयोग	९	५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१६	४ आर्त्त ४ रौ. ४ध. ४ शु.	
२२.	आस्रव	४८	१२ अ. २१ क. १५ यो.	५ मि. ४ अनन्ता. नहीं हैं।
२३.	जाति	२६ ला.	न.दे. मनु. तथा पंचे.ति.	
२४.	कुल	९६ ला.क.	न.दे. मनु. तथा पंचे.ति.	जलचर जीवों के कुल नहीं हैं।

१. प्रश्न : कौन-कौन सी कर्मप्रकृतियों के क्षय से क्षायिक सम्यग्दर्शन होता है ?

उत्तर : दर्शन मोहनीय की तीन-मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व एवं सम्यक् प्रकृति तथा चारित्रमोहनीय की चार- अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ, इन सात कर्मप्रकृतियों के क्षय से क्षायिक सम्यग्दर्शन होता है। **(सर्वा. २/४)**

नोट : अनन्तानुबन्धी कषाय का क्षय विसंयोजना पूर्वक ही होता है।

२. प्रश्न : जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि कैसे होता है ?

उत्तर : दर्शनमोहनीय के नि:शेष विनाश को क्षय कहते हैं और क्षय से उत्पन्न परिणाम को क्षायिक-लब्धि कहते हैं। उसी क्षायिक लब्धि से जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है। **(ध. ७/१०८)**

३. प्रश्न : दर्शनमोह की क्षपणा का प्रतिष्ठापक कौन होता है ?

उत्तर : दर्शनमोह की क्षपणा के प्रतिष्ठापक की विशेषताएँ-

(१) अढ़ाई द्वीप-समुद्रों में स्थित कर्मभूमिया जीव होता है। **(ध.६/२४३-४६)**

(२) केवली, श्रुतकेवली अथवा तीर्थंकर भगवान के पादमूल में होता है। **(ल.सा.११०)** अथवा जो उसी भव में तीर्थंकर या जिन होने वाले हैं वे तीर्थंकरादि की अनुपस्थिति में भी (प्रतिष्ठापक होते हैं) तथा दुषम सुषम काल में स्थित हो। **(ध. ६/२४७)**

(३) असंयत गुणस्थान से अप्रमत्तगुणस्थान वाला हो। **(गो.क.जी. ५५०)**

(४) वेदक सम्यग्दृष्टि हो। **(गो.जी.जी. ७०५)**

(५) जघन्य से तेजोलेश्या में वर्तमान हो। **(क.पा. ११/६३९)**

नोट : दर्शनमोह की क्षपणा का प्रतिष्ठापक मनुष्य ही होता है।

४. प्रश्न : दर्शनमोह की क्षपणा का प्रस्थापक कब माना जाता है ?

उत्तर : मिथ्यात्व वेदनीय कर्म के सम्यक्त्व प्रकृति में अपवर्तित अर्थात् संक्रमित कर देने पर जीव दर्शनमोह की क्षपणा का प्रस्थापक कहलाता है। **(क.पा. ११/६३९)**

५. प्रश्न : दर्शनमोह की क्षपणा का निष्ठापक कौन होता है ?

उत्तर : दर्शनमोह की क्षपणा का निष्ठापक-

(१) उसी स्थान में अर्थात् जहाँ पर क्षपणा प्रारम्भ की है।

(२) विमानवासी देवों में

(३) भोगभूमिज मनुष्यों तथा तिर्यञ्चों में

(४) घर्मा नामक प्रथम नरक में भी होता है, क्योंकि बद्धायुष्क कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि मरकर चारों ही गतियों में उत्पन्न होता है। **(ल.सा. ११०-११)**

६. प्रश्न : ढाई द्वीप के बाहर क्षायिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति क्यों नहीं होती है ?

उत्तर : अढ़ाई द्वीप में ही दर्शन मोहनीय कर्म के क्षपण को प्रारम्भ करता है, शेष द्वीपों में नहीं। इसका कारण यह है कि शेष द्वीपों में स्थित जीवों के दर्शन मोहनीय कर्म के क्षपण की शक्ति का अभाव होता है। लवण और कालोदक संज्ञा वाले दो समुद्रों में जीव दर्शनमोहनीय कर्म का क्षपण करते हैं, शेष समुद्रों में नहीं, क्योंकि उनमें दर्शन-मोह के क्षपण करने के सहकारी कारणों का अभाव है। 'जहाँ जिन तीर्थंकर संभव है' इस विशेषण के द्वारा उसका प्रतिषेध कर दिया गया है। **(ध. ६/२४४)**

७. प्रश्न : क्या ढाई द्वीप के बाहर भी क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, ढाई द्वीप के बाहर की भोग-भूमियों में भी क्षायिक-सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च हो सकते हैं अन्यथा क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों का स्वस्थान पद की अपेक्षा ढाई द्वीप से असंख्यात गुणा और तिर्यक् लोक का असंख्यात भाग क्षेत्र नहीं बन सकता है। **(ध. ४/३०२)**

८. प्रश्न : क्षायिक सम्यक्त्व में औदारिकमिश्र काययोग किस-किस अपेक्षा से पाया जाता है ?

उत्तर : क्षायिक सम्यक्त्व में औदारिकमिश्र काययोग की अपेक्षाएँ-

(१) भोगभूमि में उत्पन्न होते समय (मनुष्य-तिर्यञ्चों के)

(२) नरक तथा देवगति से मनुष्यगति में उत्पन्न होते समय।

(३) तेरहवें गुणस्थान में कपाट समुद्घात के समय।

९. प्रश्न : क्षायिक सम्यक्त्व किस वेद वालों के होता है ?

उत्तर : जिस प्रकार अप्रशस्त वेद के उदय के साथ मन:पर्यय ज्ञानादि का होना संभव नहीं है, उसी प्रकार अप्रशस्त वेद के उदय में दर्शन-मोह की क्षपणा संभव है या नहीं, इस प्रकार संदेह से जिसका हृदय घुल रहा है, उस शिष्य के संदेह को दूर करने के लिए सूत्र में ''मणुसस्स मणुस्सणीए वा'' यह पद कहा है। सूत्र में मनुष्य कहने पर उससे पुरुष वेद और नपुंसक वेद के उदय वाले मनुष्यों का ग्रहण होता है। मनुष्यिनी ऐसा कहने पर उससे स्त्रीवेद के उदय वाले मनुष्य जीवों का ग्रहण होता है। **(ज.ध. ३/२४१)**

क्षायिक सम्यक्त्व तो असंयतादि अप्रमत्त पर्यन्त चार गुणस्थानवर्ती मनुष्यों के तथा असंयत, देशसंयत और उपचार से महाव्रती मनुष्यिनियों के कर्मभूमिज वेदक सम्यग्दृष्टियों के ही सात प्रकृतियों का निरवशेष क्षय हो जाने पर होता है। **(गो.जी.जी. ७०४)**

१०. प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के किस-किस गुणस्थान में मन:पर्यय ज्ञान नहीं होता है ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के चार गुणस्थानों में मन:पर्यय ज्ञान नहीं होता है-
चौथे, पाँचवें, तेरहवें तथा चौदहवें में।

११.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के यथाख्यात संयम कहाँ-कहाँ पाया जाता है ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के यथाख्यात संयम चार गुणस्थानों में पाया जाता है-
ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें, चौदहवें में।
ग्यारहवें गुणस्थान में उपशम श्रेणी की अपेक्षा कहा गया है।

१२.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कृष्ण तथा नील लेश्या कौनसी गति में नहीं पायी जाती है?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के तीन गतियों में कृष्ण और नील लेश्या नहीं पाई जाती है-
नरकगति, तिर्यञ्चगति तथा देवगति।

१३.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि नारकी के कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि नारकी के केवल एक लेश्या होती है-
कापोत लेश्या, क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव प्रथम नरक से आगे नहीं जाता है।

१४.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों के कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों के चार लेश्याएँ होती हैं-
कापोत, पीत, पद्म तथा शुक्ल।
ये चारों लेश्याएँ भोगभूमि में उत्पन्न होने वाले तिर्यञ्चों की अपेक्षा जानना चाहिए।
निर्वृत्यपर्याप्तक की अपेक्षा- कापोत लेश्या तथा पर्याप्तक की अपेक्षा- पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या।
क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च भोगभूमि में ही पाये जाते हैं।

१५.प्रश्न : क्षायिक-सम्यक्त्व सम्यक्त्व मार्गणा के किस भेद वाले को हो सकता है ?

उत्तर : क्षायिक-सम्यक्त्व सम्यक्त्व-मार्गणा के भेदों में से केवल क्षयोपशम सम्यक्त्व वाले को ही होता है। कहा भी है- सम्यग्दर्शन में निश्चय से पहले औपशमिक भाव होता है, फिर क्षायोपशमिक होता है और तत्पश्चात् क्षायिक होता है। **(रा.वा. २/१)**
क्षायिक सम्यक्त्व वेदक-सम्यग्दृष्टियों को ही होता है। **(गो.जी.जी. ७०४)**

१६.प्रश्न : ऐसा कौनसा गुणस्थान है जहाँ क्षायिक सम्यग्दृष्टियों के आहारक अवस्था नहीं पाई जाती है ?

उत्तर : मात्र चौदहवें गुणस्थान में क्षायिक सम्यग्दृष्टियों के आहारक अवस्था नहीं पाई जाती है, क्योंकि वहाँ सभी जीव अनाहारक ही होते हैं।

मनुष्य गति से दर्शन-मोह की क्षपणा करता हुआ चारों गतियों में कार्मण काययोग में क्षायिक सम्यग्दर्शन का निष्ठापक हो सकता है। **(क.पा.)**

१७.प्रश्न : क्या ऐसे कोई जीव हैं जिनके निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में तो क्षायिक सम्यक्त्व नहीं है, लेकिन पर्याप्तक अवस्था में पाया जाता है ?

उत्तर : हाँ, जो कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि जीव हैं उनके निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है लेकिन पर्याप्तक अवस्था में क्षायिक सम्यक्त्व हो जाता है। कर्म भूमिया मनुष्य जो क्षायिक सम्यक्त्व लेकर नहीं आया है वह भी क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है।

१८.प्रश्न : जीव कृतकृत्य वेदक कब होता है ?

उत्तर : अनिवृत्तिकरण के अन्त समय में सम्यक्त्व मोहनीय की अन्तिम फालि के द्रव्य के नीचे के निषेकों के साथ क्षेपण करने के अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि होता है। **(ध. ६/२४८)**

अन्तिम स्थितिकाण्डक के समाप्त होने पर कृतकृत्य वेदक कहलाता है। **(ध. ६/२६३)**

१९.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कम-से-कम कितने गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कम-से-कम आठ गुणस्थान तो होते ही हैं-

ग्यारहवें को छोड़कर छठे से चौदहवें गुणस्थान तक।

नोट : (१) कोई मुनिराज सातवें गुणस्थान में सम्यक्त्व प्राप्त करे तो भी वे छठे सातवें में झूले बिना श्रेणी आरोहण नहीं कर सकते हैं।

(२) यह कथन क्षपक श्रेणी की अपेक्षा जानना चाहिए, क्योंकि उपशम श्रेणी चढे बिना भी जीव क्षपक श्रेणी चढकर निर्वाण प्राप्त कर सकता है।

२०.प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के श्वासोच्छ्वास प्राण कहाँ-कहाँ नहीं पाया जाता है ?

उत्तर : वे स्थान जहाँ क्षायिक सम्यग्दृष्टि के श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं पाया जाता है-

(१) चतुर्थ एवं छठे गुणस्थान में जब तक श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है।

(२) तेरहवें गुणस्थान में जब तक श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है

(३) तेरहवें गुणस्थान में जब श्वासोच्छ्वास का निरोध हो जाता है।

(४) चौदहवें गुणस्थान में।

२१. प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कौनसे ध्यान में सबसे ज्यादा गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के शुक्ल ध्यान में सबसे ज्यादा सात गुणस्थान होते हैं- ८वाँ, ९वाँ, १०वाँ, ११वाँ, १२वाँ, १३वाँ, १४वाँ

अथवा

क्षायिक सम्यग्दृष्टि के धर्मध्यान में सबसे ज्यादा सात गुणस्थान होते हैं- चौथे से दसवें तक।

आचार्य वीरसेन स्वामी दसवें गुणस्थान तक धर्मध्यान मानते हैं इसलिए उनकी अपेक्षा धर्मध्यान में सात गुणस्थान बन जाते हैं।

२२. प्रश्न : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी कौन-कौन से कुल नहीं होते हैं ?

उत्तर : क्षायिक सम्यग्दृष्टि के पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च में जलचर सम्बन्धी साढ़े बारह लाख करोड़ कुल नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च भोगभूमि में ही पाये जाते हैं, वहाँ जलचर जीव नहीं पाये जाते हैं।

२३. प्रश्न : क्या पंचम काल में भी श्रुतकेवली के पादमूल में जीव दर्शनमोह की क्षपणा कर सकता है ?

उत्तर : जिस काल में जिन संभव है उसी काल में दर्शनमोह की क्षपणा का प्रस्थापक होता है अन्य कालों में नहीं। तथा दर्शनमोह की क्षपणा का प्रारम्भ तीर्थंकर, जिन, चतुर्दशपूर्वधारी केवली, केवलज्ञानी के पादमूल में होता है। **(ध. ६/२४४)**

मेरे विचार से वर्तमान (पंचमकाल) में गुरुवर भद्रबाहु स्वामी श्रुतकेवली हुए हैं तथा सेठ सुदर्शन, जम्बूस्वामी आदि निर्वाण को प्राप्त हुए हैं। उनके पादमूल में क्षायिक सम्यक्त्व हो सकता है, लेकिन वह दुषम-सुषम काल में उत्पन्न जीव होना चाहिए, दुषम काल का जन्मा नहीं।

तालिका संख्या ५१

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	अनन्तानुबन्धी चतुष्क नहीं है।
७.	ज्ञान	४	म.श्रु.अ.मनः.	
८.	संयम	५	सा. छे. परि. संय. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	क्षायोपशमिक सम्यक्त्व
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	चौथे से सातवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मनः	
१८.	प्राण	१०	५इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	आहार संज्ञा से रहित भी होते हैं।
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१२	४ आ. ४ रौ. ४ ध.	४ शुक्लध्यान नहीं हैं।
२२.	आस्रव	४८	१२ अवि. २१ क. १५यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	चारों गति सम्बन्धी	तिर्यञ्चों में पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की जाति लेना चाहिए।
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	पं. ति. के कुल लेना चाहिए।

१. प्रश्न : क्षायोपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : चार अनन्तानुबन्धी कषाय, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन छह सर्वघाती प्रकृतियों के उदयाभावी क्षय और इन्हीं के सदवस्था रूप उपशम से तथा देशघाती स्पर्द्धक वाली सम्यक्त्व प्रकृति के उदय में जो तत्त्वार्थ श्रद्धान होता है वह क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है। **(सर्वा.सि. २/५)** इसको वेदक सम्यक्त्व भी कहते हैं।

२. प्रश्न : क्षायोपशमिक सम्यक्त्व को वेदक सम्यक्त्व क्यों कहते हैं ?

उत्तर : यथास्थित अर्थ के श्रद्धान को घात करने वाली शक्ति जब सम्यक्त्व प्रकृति के स्पद्धर्कों में क्षीण हो जाती है, तब उनकी क्षायिक संज्ञा है। क्षीण हुए स्पर्द्धकों के उपशम को अर्थात् प्रसन्नता को क्षयोपशम कहते हैं। उसमें उत्पन्न होने से वेदक सम्यक्त्व क्षायोपशमिक है। **(ध. ५/२००)** अनन्तगुण हानि के द्वारा उदय में आये हुए तथा अत्यन्त अल्प देशघातित्व के रूप से उपशान्त हुए सम्यक्त्व मोहनीय प्रकृति के देशघाति स्पर्द्धकों का चूँकि क्षयोपशम नाम दिया गया है, इसलिए उस क्षयोपशम से उत्पन्न जीव के परिणाम को क्षयोपशम लब्धि कहते हैं, उसी क्षयोपशम लब्धि से वेदक सम्यक्त्व होता है। **(ध. ७/१०८)**

३. प्रश्न : आठवें आदि गुणस्थानों में वेदक सम्यग्दर्शन क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : आठवें आदि........ ऊपर के गुणस्थानों में वेदक सम्यग्दर्शन नहीं होता है, क्योंकि अगाढ़....... आदि मल सहित श्रद्धान के साथ क्षपक और उपशमश्रेणी का चढ़ना नहीं बनता है। **(ध. १/३९९)**

४. प्रश्न : वेदक सम्यग्दर्शन में कौन-कौन से दोष लगते हैं ?

उत्तर : वेदक सम्यग्दर्शन में तीन दोष लगते हैं-

(१) चल दोष (२) मल दोष (३) अगाढ़ दोष। **(गो.जी. २५)**

५. प्रश्न : चल दोष किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिस प्रकार एक ही जल अनेक लहरों रूप से परिणत होता है उसी प्रकार सम्पूर्ण तीर्थंकर भगवन्तों में समान शक्ति होती है तो भी क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि 'शान्तिनाथ जिनेन्द्र शान्ति करते हैं, पार्श्वनाथ जिनेन्द्र संकट हरते हैं,' इत्यादि रूप अपने परिणामों में चंचलता लाता है। वह चल दोष कहलाता है। **(गो.जी. २५)**

६. प्रश्न : अगाढ़ एवं मल दोष किसे कहते हैं, जिनके कारण वेदक सम्यक्त्व मलिन होता है ?

उत्तर : **अगाढ़ दोष** – जैसे वृद्ध पुरुष के हाथ में लाठी काँपती रहती है वैसे यह मंदिर मेरा है।

मैंने बनाया है, ''यह मंदिर दूसरों का है'' इत्यादि रूप श्रद्धा में कमजोरी होती है। वह अगाढ़ दोष है।

मलदोष - जिस प्रकार शुद्ध सुवर्ण मल के निमित्त से मलिन कहलाता है उसी प्रकार सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से श्रद्धा में पूर्ण निर्मलता नहीं होती, वह मल दोष है। **(गो.जी.२५)**

७. प्रश्न : सम्यक्त्व प्रकृति किसे कहते हैं जिसका उदय वेदक सम्यक्त्व में रहता है ?

उत्तर : जिस कर्म के उदय से आप्त, आगम व पदार्थों की श्रद्धा में शिथिलता होती है वह सम्यक् प्रकृति है। **(ध. ६/२३५)**

वही मिथ्यात्व जब शुभ-परिणामों के कारण अपने स्वरस को रोक देता है और उदासीन रूप से अवस्थित रहकर आत्मा के श्रद्धान को नहीं रोकता है, तब सम्यक्त्व है और यही सम्यक्त्व प्रकृति है। **(सर्वा.सि. ८/९)** इसका सेवन करने वाला पुरुष सम्यग्दृष्टि कहा जाता है।

उत्पन्न हुए सम्यक्त्व में शिथिलता का उत्पादक और उसकी अस्थिरता का कारणभूत कर्म सम्यक्त्व मोहनीय कहलाता है। **(ध. १३/३५८)**

८. प्रश्न : इस प्रकृति को सम्यक्त्व/सम्यक् प्रकृति क्यों कहते हैं ?

उत्तर : सम्यग्दर्शन के सहचरित उदय होने के कारण उपचार से इस प्रकृति को 'सम्यक्त्व' ऐसा कहा जाता है। **(ध. ६/३९)**

९. प्रश्न : वेदक सम्यग्दृष्टि का श्रद्धान कैसा होता है ?

उत्तर : वेदक सम्यग्दृष्टि जीव शिथिल श्रद्धानी होता है इसलिए वृद्ध पुरुष जिस प्रकार अपने हाथ में लकड़ी को शिथिलता पूर्वक पकड़ता है उसी प्रकार वह भी तत्त्वार्थ के श्रद्धान में शिथिलग्राही होता है। अत: कुहेतु और कुदृष्टान्त से उसे सम्यक्त्व की विराधना करने में देर नहीं लगती है। **(ध. १/१७१)**

१०.प्रश्न : वेदक सम्यग्दृष्टि के संयम-मार्गणा के किस-किस भेद में केवल एक गुणस्थान होता है ?

उत्तर : वेदक-सम्यग्दृष्टि के संयम-मार्गणा के दो भेदों में केवल एक गुणस्थान होता है।

१. संयमासंयम - पाँचवें में।

२. असंयम - चौथे में।

११.प्रश्न : क्षयोपशम-सम्यग्दृष्टि के नपुंसक वेद कितनी गतियों में पाया जाता है ?

उत्तर : क्षयोपशम-सम्यग्दृष्टि के नपुंसक-वेद तीन गतियों में पाया जाता है।

नरकगति, तिर्यंच गति तथा मनुष्यगति।

मनुष्यगति में - कर्मभूमि की अपेक्षा।

तिर्यंच गति में - कर्मभूमिया गर्भजों की अपेक्षा।

१२.प्रश्न : वेदक सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : वेदक सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में छहों लेश्याएँ होती हैं।

नरकों से आने वाले क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के तीन अशुभ लेश्या।

प्रथम-द्वितीय नरक से आने वालों के - कापोत लेश्या।

तीसरे नरक से आने वालों के - कापोत तथा नील लेश्या।

चौथे नरक से आने वालों के - नील लेश्या।

पाँचवें छठे नरक से आने वालों के - कृष्ण लेश्या।

देवगति से आने वाले तथा देवगति में जाने वालों के तीन शुभ लेश्या पीत, पद्म, शुक्ल।

कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में चार लेश्या ही होती हैं। कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या **(ध. २/५११, ६५०)** कापोत लेश्या भोगभूमि तथा प्रथम नरक में जाने की अपेक्षा कही गई है। पीत-पद्म-शुक्ल लेश्या वैमानिक देवों में जाने की अपेक्षा जानना चाहिए।

नोट : कृतकृत्य वेदक के समान ही क्षायिक सम्यग्दृष्टि के भी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कापोतादि चार लेश्याएँ जानना चाहिए।

१३.प्रश्न : वेदक सम्यग्दृष्टि के किस-किस योग में सात प्राण पाये जाते हैं ?

उत्तर : वेदक सम्यग्दृष्टि के चार योगों में सात प्राण पाये जाते हैं-

औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रियिक मिश्र काययोग, आहारक मिश्र काययोग, कार्मण काययोग में। ५ इन्द्रिय + कायबल + आयु, ये सात प्राण पाये जाते हैं।

१४.प्रश्न : किस वेदक सम्यग्दृष्टि के सबसे ज्यादा ध्यान होते हैं ?

उत्तर : पंचम गुणस्थानवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टि के सबसे ज्यादा अर्थात् ११ ध्यान होते हैं- ४ आर्त्तध्यान ४ रौद्रध्यान ३ धर्मध्यान (आज्ञाविचय, अपायविचय तथा विपाकविचय।)

तालिका संख्या ५२

प्रथमोपशम सम्यक्त्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१०	४ म. ४ व. २ का.	औदारिक एवं वैक्रियिक काययोग है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	अनन्तानुबन्धी कषाय नहीं है।
७.	ज्ञान	३	म.श्रु.अव.	
८.	संयम	४	सा. छे. संय. असंय.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	प्रथमोपशम सम्यक्त्व
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	४	चौथे से सातवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१२	४ आ. ४ रौ. ४ ध.	शुक्लध्यान नहीं होते हैं।
२२.	आस्रव	४३	१२ अवि. २१ क. १०यो.	
२३.	जाति	२६लाख	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ १/२ ला.क.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : उपशम सम्यक्त्व कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर : उपशम सम्यक्त्व दो प्रकार का होता है-

(१) प्रथमोपशम सम्यक्त्व (२) द्वितीयोपशम सम्यक्त्व

२. प्रश्न : प्रथमोपशम सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो सम्यक्त्व सर्व प्रथम, पहली बार होता है अर्थात् अनादि मिथ्यादृष्टि को होता है, वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व है। **अथवा** सादि मिथ्यादृष्टि के भी सम्यग्मिथ्यात्व तथा सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना होने पर जो सम्यक्त्व होता है वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व है।

३. प्रश्न : कौनसी प्रकृतियों के उपशम से प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है ?

उत्तर : दर्शनमोहनीय की तीन- सम्यक्प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्व और चारित्रमोहनीय की चार, अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ इन सात प्रकृतियों के उपशम से प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है।

सादि मिथ्यादृष्टि के यदि सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्र मोहनीय इन दो प्रकृतियों का सत्त्व हो तो उसके सात प्रकृतियाँ हैं, यदि इन दोनों का सत्त्व नहीं है अर्थात् इन दोनों की उद्वेलना कर दी है तो उसके दर्शन मोह की पाँच प्रकृतियाँ हैं। ऐसा जीव भी अनादि मिथ्यादृष्टि ही है। वह भी मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क इन पाँच प्रकृतियों को प्रशस्त उपशम या सर्वोपशम विधान के द्वारा युगपत् उपशमाकर अन्तर्मुहूर्त काल पर्यन्त उपशम सम्यक्त्व को अंगीकार करता है। **(गो.क.जी.)**

४. प्रश्न : प्रथमोपशम सम्यक्त्व किसको प्राप्त होता है ?

उत्तर : चारों गति का कोई भी सैनी पंचेन्द्रिय, गर्भज, पर्याप्तक, संख्यात या असंख्यात वर्ष की आयु वाला मिथ्यादृष्टि जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। **(ध.६/४१८-३१)** चारों गति में से किसी भी गति वाला भव्य, सैनी, पर्याप्त, साकारोपयोगी, जागृत, शुभ लेश्या वाला तथा करणलब्धि रूप परिणमा जीव यथासम्भव सम्यक्त्व प्राप्त करता है। **(गो.जी. ६५२)** दर्शन मोह का उपशामक सर्व ही जीव निर्व्याघात अर्थात् उपसर्गादि के आने पर भी विच्छेद और मरण से रहित होता है। **(ध. ६/२३४)**

५. प्रश्न : प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टि के कौनसा योग सबसे कम गुणस्थानों में पाया जाता है?

उत्तर : प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टि के केवल एक योग सबसे कम गुणस्थानों में पाया जाता है। वैक्रियिक काययोग, यह योग केवल एक चौथे गुणस्थान में पाया जाता है।

६. प्रश्न : प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टि के छठे गुणस्थान में योग ज्यादा हैं या चौथे गुणस्थान में?

उत्तर : प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टि के छठे-गुणस्थान की अपेक्षा चौथे गुणस्थान में योग ज्यादा हैं। इनके चतुर्थ गुणस्थान में १० योग होते हैं।
४ मनोयोग ४ वचनयोग २ काययोग (औदारिक एवं वैक्रियिक काययोग)
तथा छठे गुणस्थान में ९ ही योग हैं-
४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिक काययोग।
अर्थात् इनके चौथे गुणस्थान में १ वैक्रियिक काययोग ज्यादा है।

७. प्रश्न : उपशम सम्यक्त्व के साथ परिहार विशुद्धि संयम क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : उपशम सम्यक्त्व के साथ परिहार विशुद्धि संयम नहीं होता है, क्योंकि तीस वर्ष की अवस्था हुए बिना परिहार विशुद्धि संयम नहीं होता है और प्रथमोपशम इतने काल तक रहता नहीं है। परिहारविशुद्धि संयम को त्यागे बिना उपशम श्रेणी पर आरोहण भी नहीं होता और दर्शन मोह का उपशम भी नहीं होता, अत: द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी नहीं होता है। **(गो.जी.जी. ७१५)**

८. प्रश्न : उपशम सम्यक्त्व के साथ आहारक ऋद्धि क्यों नहीं होती ?

उत्तर : उपशम सम्यक्त्व के साथ आहारक ऋद्धि नहीं होती, क्योंकि अत्यन्त अल्प उपशम सम्यक्त्व के काल में आहारक ऋद्धि का होना सम्भव नहीं है। न उपशम सम्यक्त्व के साथ उपशम श्रेणी में आहारक ऋद्धि पाई जाती है, क्योंकि वहाँ पर प्रमाद का अभाव है। न उपशम श्रेणी उतरते हुए जीवों के भी उपशम सम्यक्त्व के साथ आहारक ऋद्धि पाई जाती है, क्योंकि जितने काल के द्वारा आहारक ऋद्धि उत्पन्न होती है उपशम सम्यक्त्व का उतने काल तक अवस्थान नहीं रहता है। **(ध. ५/२९८)**

९. प्रश्न : उपशम सम्यग्दृष्टि के चौथे गुणस्थान में कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : उपशम सम्यग्दृष्टि के चौथे गुणस्थान की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में तीन शुभ लेश्याएँ होती हैं। ये लेश्याएँ द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के मरण करके वैमानिक देवों में जाते समय होती हैं। तथा इनके पर्याप्त अवस्था में छहों लेश्याएँ होती हैं। द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के चौथे गुणस्थान में छहों लेश्याएँ मनुष्य की अपेक्षा ही होती हैं, क्योंकि पर्याप्तक अवस्था में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व मनुष्यगति में ही होता है एवं प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टि के चौथे गुणस्थान में मनुष्य-तिर्यंचों की अपेक्षा छहों लेश्याएँ होती हैं।

१०. प्रश्न : क्या प्रथमोपशम सम्यक्त्व शुभ लेश्याओं में ही उत्पन्न होता है ?

उत्तर : हाँ, प्रथमोपशम सम्यक्त्व शुभ लेश्याओं में ही उत्पन्न होता है, लेकिन जहाँ अर्थात् नरकों में शुभ लेश्याएँ होती नहीं हैं वहाँ अशुभ लेश्याओं में भी सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। शेष तीन गतियों में शुभ लेश्याओं में ही सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। **(ज.ध. १२/२०५, ३०६ के आधार से)**

११.प्रश्न : कौन-कौन जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि अथवा वेदक सम्यग्दृष्टि जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि इन जीवों के उस प्रथमोपशम सम्यक्त्व रूप पर्याय के द्वारा परिणमन होने की शक्ति का अभाव है।

उपशम श्रेणी पर चढ़ने वाले वेदक सम्यग्दृष्टि जीव यद्यपि उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाले होते हैं, किन्तु उस सम्यक्त्व का प्रथमोपशम सम्यक्त्व यह नाम नहीं है, क्योंकि इस उपशम श्रेणी वाले के उपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति वेदक सम्यक्त्व से होती है। अत: प्रथमोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाला जीव मिथ्यादृष्टि ही होना चाहिए। **(ध.६/२०६)**

नोट : क्षायिक सम्यग्दृष्टि कभी सम्यक्त्व से च्युत नहीं होते हैं इसलिए उन्हें भी कभी प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त नहीं होता है।

१२.प्रश्न : जिस प्रकार क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च के संयमासंयम नहीं होता है क्या उसी प्रकार उपशम सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च के भी संयमासंयम नहीं होता है ?

उत्तर : नहीं, क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंचों के समान उपशम सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों के संयमासंयम होने में कोई बाधा नहीं है, क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च केवल भोगभूमि में ही होते हैं किन्तु उपशम सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च तो कर्मभूमि में भी होते हैं। उन कर्मभूमिया तिर्यञ्चों के संयमासंयम होने में कोई विरोध नहीं है।

नोट : भोगभूमि में संयमासंयम नहीं होता है, इसलिए क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चों में संयमासंयम का निषेध किया है।

१३.प्रश्न : क्या सम्यक्त्व प्राप्त करने में उम्र का भी नियम होता है ?

उत्तर : हाँ, प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिए-

१. नारकी मिथ्यादृष्टि जीव पर्याप्तकों में सम्यक्त्व उत्पन्न करने वाले अंतर्मुहूर्त से लगाकर (सम्यक्त्व की उत्पत्ति के योग्य अंतर्मुहूर्त के पश्चात् उपरिम काल में सम्यक्त्व प्राप्त करते हैं उससे नीचे नहीं।)

२. तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीव दिवस पृथक्त्व से लगाकर उपरिम काल में उत्पन्न करता है, नीचे के काल में नहीं। इस प्रकार सर्व द्वीप-समुद्रों में जानना चाहिए।

३. मनुष्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्तकों में सम्यक्त्व उत्पन्न करने वाले आठ वर्ष से लेकर ऊपर किसी भी समय में उत्पन्न कर सकते हैं। उससे नीचे के काल में नहीं। इसी प्रकार ढाई द्वीप समुद्रों में जानना चाहिए।

४. देव मिथ्यादृष्टि पर्याप्तकों में प्रथम सम्यक्त्व उत्पन्न करने वाले जीव अंतर्मुहूर्त से लेकर ऊपर उत्पन्न करते हैं, उससे नीचे के काल में नहीं। इस प्रकार उपरिम ग्रैवेयक विमानवासी देवों तक जानना चाहिए। **(ध. ६/४१९-३१)**

तालिका संख्या ५३

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	२	म.दे	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	औदारिक, वैक्रियिकमिश्र तथा कार्मण काययोग है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	४	म.श्रु.अ.मनः.	
८.	संयम	६	सा. छे. सू.य. संय. असं.	परिहारविशुद्धि संयम नहीं है।
९.	दर्शन	३	चक्षु. अच. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	द्वितीयोपशमसम्यक्त्व
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	८	चौथे से ग्यारहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मनः.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल,श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१३	४ आ. ४ रौ. ४ ध.१ शु.	पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्लध्यान है।
२२.	आस्रव	४४	१२ अवि. २१ क. ११यो.	
२३.	जाति	१८ लाख	१४ ला. मनु. ४ ला.देव	
२४.	कुल	४० ला.क.	१४ ला.क.मनुष्यों के २६ ला.क. देवों के	

१. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : श्रेणी चढ़ते समय क्षयोपशम सम्यक्त्व से जो उपशम सम्यक्त्व होता है, उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्क की विसंयोजना पूर्वक जो उपशम सम्यक्त्व होता है उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

नोट : जो आचार्य ग्यारहवें गुणस्थान में १४६ कर्मप्रकृतियों की सत्ता मानते हैं उनकी अपेक्षा श्रेणी चढ़ते समय द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना आवश्यक नहीं है।

२. प्रश्न : इसको द्वितीयोपशम सम्यक्त्व क्यों कहते हैं ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने वाला जीव पहले ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करके वेदक सम्यग्दृष्टि हो चुका है। वही जब सम्यक् प्रकृति एवं सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उद्वेलना होने के पहले ही पुन: उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त कर लेता है इसलिए संभवत: इसका नाम द्वितीयोपशम कहा गया है।

३. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किन-किन जीवों के पाया जाता है ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान तक होता है। श्रेणी से उतरते हुए अविरतादि गुणस्थानों में होता है। **(क्ष.सा.३४८)**

यह सम्यक्त्व मनुष्यों की पर्याप्तावस्था में तथा वैमानिक देवों की निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में होता है। **(ध. ५/२१६)**

४. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में कौन-कौनसे योग नहीं होते हैं ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में चार योग नहीं होते हैं- वैक्रियिक काययोग, औदारिकमिश्र काययोग तथा आहारकद्विक काययोग।

देवगति में उत्पन्न होते समय वैक्रियिक काययोग होने के पहले ही द्वितीयोपशम सम्यक्त्व समाप्त हो जाता है इसलिए उनके वैक्रियिक काययोग नहीं होता है।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व वाला मरकर देवगति को छोड़कर अन्य कहीं नहीं जाता है इसलिए उनके औदारिकमिश्र काययोग नहीं होता है।

आहारकद्विक काययोग के साथ उपशम सम्यक्त्व नहीं होता है इसलिए उनके आहारकद्विक-काययोग नहीं होते हैं।

५. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में कितने वेद होते हैं ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में मनुष्यों की अपेक्षा तीनों वेद होते हैं, क्योंकि नौवें गुणस्थान तक तीनों वेद पाये जाते हैं। तथा देवों की अपेक्षा एक पुरुष वेद ही होता है। मनुष्यों में अवेद अवस्था भी पाई जाती है।

६. प्रश्न : उपशम सम्यक्त्व में मन:पर्ययज्ञान किस अपेक्षा से होता है ?

उत्तर : जो वेदक सम्यक्त्व के पीछे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त होता है उस उपशम सम्यग्दृष्टि के प्रथम समय में भी मन:पर्ययज्ञान पाया जाता है किन्तु मिथ्यात्व से पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टि जीव में मन:पर्ययज्ञान नहीं पाया जाता है क्योंकि मिथ्यात्व से पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टि के उत्कृष्ट उपशमसम्यक्त्व के काल से भी ग्रहण किये गये संयम के प्रथम समय से लगाकर सर्व जघन्य काल से मन:पर्ययज्ञान को उत्पन्न करने वाला संयम काल बहुत बड़ा है।

जो ऋजुमति मन:पर्ययज्ञानी जीव उपशम श्रेणी चढ़ने के लिए वेदक सम्यक्त्व से द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करता है / होता है, उसके उपशम सम्यक्त्व के साथ मन:पर्यय ज्ञान पाया जाता है। **(ध. २/७२७)**

७. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में विपुलमति मन:पर्ययज्ञान क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : विपुलमति मन:पर्ययज्ञान प्रवर्धमान चारित्र वालों के ही होता है। दूसरी बात यह अप्रतिपाती होता है। कहा भी है- ''विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेष:'' इससे समझ में आता है कि विपुलमति मन:पर्यय ज्ञान वाले उपशम श्रेणी नहीं चढ़ते हैं अत: उनके द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी नहीं होता है।

८. प्रश्न : क्या द्वितीयोपशम सम्यक्त्व देवों की आहारक एवं अनाहारक दोनों अवस्थाओं में पाया जाता है ?

उत्तर : हाँ, द्वितीयोपशम सम्यक्त्व देवों की आहारक एवं अनाहारक दोनों अवस्थाओं में पाया जाता है।

अनाहारक अवस्था - विग्रह गति की अपेक्षा।

आहारक अवस्था - वैक्रियिक मिश्र काययोग की अपेक्षा।

९. प्रश्न : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में कितने कुल एवं कितनी जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में ४० लाख करोड़ कुल एवं १८ लाख जातियाँ होती हैं-

४० लाख करोड़ कुल - १४ लाख करोड़ मनुष्यों के तथा देवों के २६ लाख करोड़।

१८ लाख जातियाँ - १४ लाख मनुष्यों की तथा देवों की ४ लाख।

१०. प्रश्न : प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में क्या अन्तर है ?

उत्तर : प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में अन्तर-

क्र.	अपेक्षा	प्रथमोपशम सम्यक्त्व	द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	विशेष
१.	गति	चारों गति में होता है	दो गति में होता है	मनुष्य एवं देवगति में।
२.	गुणस्थान	चौथे से सातवें तक होता है	चौथे से ग्यारहवें तक होता है।	चौथे से छठा गिरने की अपेक्षा होता है।
३.	मरण	मरण नहीं होता है	मरण हो सकता है	
४.	उत्पत्ति	असंख्यात बार हो सकता है	केवल चार बार हो सकता है	एक जीवन में दो बार से अधिक नहीं हो सकता है
५.	पर्याप्त	पर्याप्तावस्था में ही होता है	पर्याप्तापर्याप्त दोनों अवस्थाओं में पाया जाता है।	देवगति की अपर्याप्त अवस्था में होता है।
६.	योग	१०यो.-४म. ४व. २काय. (औदारिक एवं वैक्रियिक)	११ यो. ४ म. ४ व ३ का. (औदा, वैक्रि-मिश्र एवं कार्मण)	आहारकद्विक दोनों में नहीं होता है।
७.	ज्ञान	३ ज्ञा. (म.श्रु.अव.)	४ ज्ञा. (म.श्रु.अव.मनः)	
८.	संयम	४ संयम होते हैं।	६ संयम होते हैं।	परिहारविशुद्धि दोनों में नहीं है।
९.	कषाय	कषायवान ही होते हैं।	कषायातीत भी होते हैं।	
१०.	आहार	आहारक ही होते हैं।	अनाहारक भी होते हैं।	अनाहारक अवस्था देवगति में ही है।
११.	प्राण	१० प्राण ही होते हैं।	७ प्राण भी होते हैं।	
१२.	संज्ञा	चार संज्ञाएं होती हैं।	संज्ञातीत भी होते हैं।	
१३.	उपयोग	६ उपयोग होते हैं।	७ उपयोग होते हैं।	मन:पर्ययज्ञानो. भी होता है।
१४.	ध्यान	१२ ध्यान होते हैं।	१३ ध्यान होते हैं।	१ शुक्लध्यान भी होता है।[१]
१५.	जाति	२६ लाख	१८ लाख	मनुष्य तथा देव की जाति ही होती है।
१६.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़	४० लाख करोड़	मनुष्य तथा देवके कुल ही होते हैं।

१. कोई आचार्य दूसरा शुक्लध्यान भी मानते हैं।

तालिका संख्या ५४

सासादन सम्यक्त्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में ही होता है।
३.	काय	४	पृ. ज.व.त्रस	अग्निकायिक, वायुकायिक में नहीं है।
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक योग नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	३	कुम. कुश्रु. कुअ.	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु. अचक्षु.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	सासादन सम्यक्त्व
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	सासादन	
१६.	जीवसमास	९	४ स्थावर के ५ त्रस के	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मन:	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	५	३ ज्ञानो. २ दर्शनो	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	५०	१२ अवि. २५ क. १३यो.	
२३.	जाति	५६ लाख	न.४ ला.ति. ३४ ला.म.१४ ला. देव ४ ला.	
२४.	कुल	१८९$\frac{१}{२}$ ला.क	न.२५ ला.क.ति.१२४$\frac{१}{२}$ ला.क. म. १४ ला.क. दे. २६ ला.क.	

१. प्रश्न : **इसका नाम सासादन सम्यक्त्व क्यों है ?**

उत्तर : ''सासादन'' यह अन्वर्थ संज्ञा है। आसादना का अर्थ विराधना है। आसादना के साथ रहे वह सासादन है। आसादन सहित समीचीन दृष्टि जिसके है वह सासादन सम्यग्दृष्टि है। **(रा.वा. ९/१)**

२. प्रश्न : **इसको सासादन सम्यक्त्व ही क्यों कहते हैं ?**

उत्तर : सम्यग्दर्शन और चारित्र का अनुबन्ध करने वाली अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से उत्पन्न हुआ विपरीताभिनिवेश दूसरे गुणस्थान में पाया जाता है। इसलिए द्वितीय गुणस्थानवर्ती जीव मिथ्यादृष्टि है किन्तु मिथ्यात्व कर्म के उदय से उत्पन्न हुआ विपरीताभिनिवेश यहाँ नहीं पाया जाता है। इसलिए उसे मिथ्यादृष्टि नहीं कहते हैं। केवल सासादन सम्यग्दृष्टि कहते हैं। **(ध. १/१६३)**

दूसरे गुणस्थान में विपरीताभिनिवेश उत्पन्न करने वाली अनन्तानुबन्धी दर्शनमोहनीय का भेद न होकर चारित्र का आवरण करने वाला होने से चारित्रमोहनीय का भेद है। इसलिए दूसरे गुणस्थान को मिथ्यादृष्टि न कहकर सासादन सम्यग्दृष्टि कहा है। **(ध. १/१६६)**

३. प्रश्न : **सासादन-सम्यक्त्व कैसे उत्पन्न होता है ?**

उत्तर : प्रथमोपशम-सम्यक्त्व के काल में से जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट से छह आवली शेष रहने पर जब अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया व लोभ इन चारों में से किसी एक का उदय होता है तब वह जीव सासादन-सम्यग्दृष्टि कहा जाता है अर्थात् उस जीव को सासादन-सम्यक्त्व उत्पन्न होता है।

४. प्रश्न : **सासादन-सम्यग्दृष्टि सम्यक्त्व-मार्गणा के किस-किस स्थान को प्राप्त कर सकता है ?**

उत्तर : सासादन-सम्यग्दृष्टि सम्यक्त्व-मार्गणा के केवल एक स्थान को प्राप्त कर सकता है। मिथ्यात्व को क्योंकि वह नियम से नीचे ही गिरता है।

५. प्रश्न : **यदि सासादन सम्यक्त्व में विपरीताभिनिवेश पाया जाता है तो उसे सम्यग्दृष्टि नहीं कहना चाहिए ?**

उत्तर : नहीं, क्योंकि पहले वह (अर्थात् सासादन सम्यग्दृष्टि प्रथमोपशम सम्यक्त्व से गिरने के कारण) सम्यग्दृष्टि था इसलिए भूतपूर्व न्याय की अपेक्षा उसके सम्यग्दृष्टि संज्ञा बन जाती है। **(ध. १/१६७)**

६. प्रश्न : **नारकियों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में सासादन सम्यक्त्व नहीं है फिर उनके वैक्रियिकमिश्र काययोग कैसे बन सकता है ?**

उत्तर : यह सत्य है कि नारकियों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में सासादन सम्यक्त्व नहीं है, लेकिन वैक्रियिक मिश्रकाययोग मात्र नारकियों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में ही नहीं होता, देवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में भी होता है अत: देवों की अपेक्षा सासादन सम्यक्त्व में वैक्रियिकमिश्र काययोग बन जायेगा। **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

७. प्रश्न : सासादन सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में कितने वेद होते हैं ?

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में तीनों वेद होते हैं।

स्त्रीवेद-पुरुषवेद - देव, मनुष्य तथा तिर्यञ्चों की अपेक्षा

नपुंसकवेद - तिर्यञ्च एवं मनुष्यों की अपेक्षा

८. प्रश्न : सासादन सम्यग्दृष्टि के कितने जीवसमास होते हैं ?

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टियों में जीवसमास-

एक जीवसमास - सैनी पंचेन्द्रिय

अथवा - पाँच जीवसमास

(१) पृथ्वीकायिक बादर (२) जलकायिक बादर (३) सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति (४) अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति (५) सैनी पंचेन्द्रिय।

अथवा - नौ जीवसमास - जो आचार्य सासादन सम्यग्दृष्टि जीव को विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होना मानते हैं उनके अनुसार-

(१) पृथ्वीकायिक बादर (२) जलकायिक बादर (३) सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति (४) अप्रतिष्ठित-प्रत्येक वनस्पति (५) द्वीन्द्रिय (६) त्रीन्द्रिय (७) चतुरिन्द्रिय (८) असैनी पंचेन्द्रिय तथा (९) सैनी पंचेन्द्रिय। **(गो.जी.जी. ६९५)**

९. प्रश्न : सासादन सम्यग्दृष्टि के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टि के आस्रव के कम-से-कम ३१ प्रत्यय होते हैं-

२३ कषाय, ७ अविरति तथा १ योग (औदारिकमिश्र या कार्मण में से एक) ये आस्रव के प्रत्यय एकेन्द्रिय के निर्वृत्यपर्याप्तक या विग्रहगति में होते हैं तथा अधिक-से-अधिक ५० प्रत्यय होते हैं-

२५ कषाय, १२ अविरति तथा १३ योग।

१०. प्रश्न : सासादन सम्यग्दृष्टि के कितनी जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टि के सामान्य से ५६ लाख जातियाँ होती हैं और पर्याप्तावस्था में २६

लाख जातियाँ होती हैं-

नारकियों की - ४ लाख, तिर्यञ्चों की ४ लाख,

मनुष्यों की - १४ लाख, देवों की ४ लाख।

इनकी निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में ५२ लाख जातियाँ-

तिर्यञ्चों की ३४ लाख, मनुष्यों की १४ लाख,

देवों की ४ लाख = ५२ लाख

११. प्रश्न : सासादन सम्यग्दृष्टि के कितने कुल होते हैं ?

उत्तर : सासादन सम्यग्दृष्टि के सामान्य से १८९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं-

सासादन सम्यग्दृष्टि के पर्याप्त-अवस्था में १०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं।

नारकियों के २५ लाख करोड़, तिर्यञ्चों के ४३ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़

देवों के २६ लाख करोड़, मनुष्यों के १४ लाख करोड़

सासादन सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में १६४ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं।

तिर्यञ्चों के १२४ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़, मनुष्यों के १४ लाख करोड़

देवों के २६ लाख करोड़।

१२. प्रश्न : सासादन-सम्यग्दृष्टि के पर्याप्तक की अपेक्षा निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कौन-कौन से जाति एवं कुल ज्यादा होते हैं ?

उत्तर : सासादन-सम्यग्दृष्टि के पर्याप्तक की अपेक्षा निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में क्रमश: पृथ्वीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय सम्बन्धी-७ लाख + ७ लाख + १० लाख + २ लाख + २ लाख + २ लाख = ३० लाख जातियाँ अधिक होती हैं तथा इन्हीं के २२ लाख करोड़ + ७ लाख करोड़ + २८ लाख करोड़ + ७ लाख करोड़ + ८ लाख करोड़ + ९ लाख करोड़ = ८१ लाख करोड़ कुल ज्यादा होते हैं।

नोट : नारकियों की ४ लाख जाति, २५ लाख करोड़ कुल निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में नहीं होते हैं।

तालिका संख्या ५५

सम्यग्मिथ्यात्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१०	४ म. ४ व. २ का.	औदारिक तथा वैक्रियिक काययोग
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	३	मति. श्रु. अव.	तीनों मिश्र रूप होते हैं।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	सम्यग्मिथ्यात्व
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	मरण नहीं होता इसलिए अनाहारक अवस्था नहीं है।
१५.	गुणस्थान	१	तीसरा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मन:	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल,श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	९	४ आ. ४ रौ. १ ध.	आज्ञाविचय धर्मध्यान है।
२२.	आस्रव	४३	१२ अवि. २१ क. १० यो.	
२३.	जाति	२६ लाख	न.४ ला.ति. ४ ला. म.१४ ला. देव ४ ला.	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की जातियाँ हैं।
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से कैसे भाव होते हैं ?

उत्तर : जैसे दही और गुड़ मिलाने पर उनका खट्टा-मीठा स्वाद पृथक् नहीं कर सकते, उसी प्रकार इस गुणस्थान में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों का मिला हुआ मिश्र भाव होता है, उनको पृथक् करना शक्य नहीं है। **(गो.जी. २२)**

२. प्रश्न : इस सम्यक्त्व का नाम सम्यग्मिथ्यात्व क्यों है ?

उत्तर : सम्यग्मिथ्यात्व में जीवों के कुदेवों के अत्याग पूर्वक जिनेन्द्र देव की श्रद्धा होती है। जिनेन्द्र देव की श्रद्धा होने से इनके सम्यक्त्व का अंश तथा कुदेवों का त्याग नहीं होने से मिथ्यात्व का अंश पाया जाता है इसलिए इसको सम्यग्मिथ्यात्व कहते हैं। इसका दूसरा नाम मिश्र सम्यक्त्व भी है।

३. प्रश्न : क्या तीसरे गुणस्थान में मिश्रज्ञान होते हैं ?

उत्तर : हाँ, सम्यग्मिथ्यात्व मिश्र प्रकृति के उदय से तीन अज्ञान और तीन ज्ञान का परस्पर मिश्रण होने वाले मिश्रज्ञान होते हैं अर्थात् तीनों ज्ञान, अज्ञान से मिश्रित होते हैं। **(गो.जी.३०२)** हाँ, तीसरे गुणस्थान में सम्यक्त्व का अंश होने से ज्ञान में भी कुछ सम्यक्पना रहता है तथा मिथ्यात्व का अंश होने से कुछ मिथ्यात्व भी रहता है, इन्हीं तीनों को मिश्रज्ञान कहते हैं।

४. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यात्व के साथ होने वाले ज्ञान को मिश्रज्ञान क्यों कहा है ?

उत्तर : सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों के सम्यग्दर्शन नहीं होता है इसलिए उनके ज्ञान को सम्यग्ज्ञान नहीं कहा जा सकता है तथा वे मिथ्यादृष्टि भी नहीं हैं इसलिए उनके ज्ञान को मिथ्याज्ञान भी नहीं कहा जा सकता है। इन जीवों के सम्यक्त्व का कुछ अंश रहता है, क्योंकि सम्यक्त्व की विरोधी अनन्तानुबंधी चतुष्क तथा मिथ्यात्व का उदय नहीं पाया जाता है तथा कुछ अंश में मिथ्यात्व रहता है क्योंकि सम्यक्त्व का घात करने वाली जात्यन्तर सर्वघाती सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय पाया जाता है। इसलिए इनके ज्ञान भी न मिथ्या रूप होते हैं और न सम्यक् रूप, अपितु मिश्र रूप होते हैं।

५. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यात्व में सम्यक्त्व का अंश कैसे संभव है ?

उत्तर : अभेद की विवक्षा में सम्यग्मिथ्यात्व के भिन्न जातीयता भले ही रही आवे, किन्तु भेद की विवक्षा करने पर उसमें सम्यग्दर्शन का अंश है ही। यदि ऐसा न माना जाये तो उसके जात्यन्तरत्व के मानने में विरोध आता है और ऐसा मानने पर सम्यग्मिथ्यात्व के सर्वघातिपना भी विरोध को प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि उसके भिन्न जातीयता प्राप्त होने पर सम्यग्दर्शन के एकदेश का अभाव है इसलिए उसके सर्वघातिपना मानने में कोई विरोध नहीं आता है। **(ध. ५/२०५)**

६. प्रश्न : यथार्थ श्रद्धा से अनुविद्ध अवगम को ज्ञान कहते हैं और अयथार्थ श्रद्धा से अनुविद्ध

ज्ञान को अज्ञान कहते हैं। ऐसी हालत में भिन्न-भिन्न जीवों के आधार से रहने वाले ज्ञान और अज्ञान का मिश्रण नहीं बन सकता है ?

उत्तर : यह कहना सत्य है, क्योंकि हमें यही इष्ट है। किन्तु यहाँ सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में यह अर्थ ग्रहण नहीं करना चाहिए क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व कर्म मिथ्यात्व तो हो नहीं सकता, क्योंकि उससे अनन्तगुणी हीन शक्ति वाले सम्यग्मिथ्यात्व में विपरीताभिनिवेश को उत्पन्न करने का सामर्थ्य नहीं पाया जाता है और न वह सम्यक् प्रकृति रूप ही है, क्योंकि उससे अनन्तगुणी अधिक शक्ति वाले सम्यग्मिथ्यात्व के यथार्थ श्रद्धान के साथ साहचर्य सम्बन्ध का विरोध है इसलिए जात्यन्तर होने से सम्यग्मिथ्यात्व जात्यन्तर रूप परिणामों का ही उत्पादक है। अत: उसके उदय से उत्पन्न हुए परिणामों से युक्त ज्ञान 'ज्ञान' इस संज्ञा को प्राप्त हो नहीं सकता है, क्योंकि उस ज्ञान में यथार्थ श्रद्धा का अन्वय नहीं पाया जाता है और उसे अज्ञान भी नहीं कह सकते हैं, क्योंकि वह अयथार्थ श्रद्धा के साथ सम्पर्क नहीं रखता है इसलिए वह ज्ञान सम्यग्मिथ्यात्व परिणाम की तरह जात्यन्तर रूप अवस्था को प्राप्त है। अत: एक होते हुए भी मिश्र कहा जाता है। **(ध. १/३६५-३६६)**

७. प्रश्न : किन-किन जीवों के सम्यग्मिथ्यात्व नहीं हो सकता है ?

उत्तर : वे जीव जिनको सम्यग्मिथ्यात्व प्राप्त नहीं हो सकता है-
(१) अभव्य जीव (२) अभव्यसम भव्य जीव (३) कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि तथा (४) क्षायिक सम्यग्दृष्टि।

नोट : एकेन्द्रियादि भव्य जीव भवान्तर में सम्यग्मिथ्यात्व को प्राप्त कर सकते हैं इसलिए उन्हें यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

८. प्रश्न : क्या ऐसे कोई जीव हैं जिनके सम्यग्मिथ्यात्व हो, लेकिन नपुंसक वेद न हो?

उत्तर : हाँ, तीन प्रकार के जीवों में सम्यग्मिथ्यात्व होता है लेकिन नपुंसकवेद नहीं होता है-
(१) सभी देवों के अर्थात् देवगति में (२) उत्तमादि भोगभूमियों तथा कुभोगभूमियों में (३) स्त्रीवेदी-पुरुषवेदी जीवों में।

९. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव के कितनी लेश्या होती है ?

उत्तर : सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव के तीन शुभ लेश्या ही होती हैं क्योंकि देवों के निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में ही अशुभ लेश्याएँ होती हैं, पर्याप्त अवस्था में नहीं। सम्यग्मिथ्यात्व पर्याप्त अवस्था में होता है, निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में नहीं। इसलिए देवों के सम्यग्मिथ्यात्व के साथ शुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

१०. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यादृष्टि के अनाहारक अवस्था क्यों नहीं होती है ?

उत्तर : सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव का कभी मरण नहीं होता है। इसलिए उसके अनाहारक-अवस्था नहीं होती है। **आचार्य नेमिचन्द्र स्वामी** ने **गोम्मटसार जीवकाण्ड** में कहा है कि

सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव ने यदि मिथ्यात्व के साथ आयु का बन्ध किया है तो मिथ्यात्व में जाकर और यदि सम्यक्त्व के साथ आयु का बन्ध किया है तो वह सम्यक्त्व में जाकर ही मरण करता है। क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व के साथ आयु बंध नहीं होता है और न मरण ही होता है। **(गो.जी. २४)**

११. प्रश्न : सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीव पर्याप्त ही क्यों होते हैं ?

उत्तर : तीसरे गुणस्थान में मरण नहीं होता है तथा अपर्याप्त काल में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान की उत्पत्ति भी नहीं होती है इसलिए सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीव पर्याप्त ही होते हैं। **(ध. १/३३७)**

१२. प्रश्न : चौबीस स्थान के कितने उत्तर भेदों में सम्यग्मिथ्यात्व नहीं होता है ?

उत्तर : चौबीस स्थान के वे उत्तर भेद जिनमें सम्यग्मिथ्यात्व नहीं होता है-

स्थान		उत्तरभेद
(१) इन्द्रिय	-	एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय
(२) काय	-	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायुका. वनस्पतिकायिक।
(३) योग	-	औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकद्विक, कार्मणकाययोग।
(४) कषाय	-	अनन्तानुबन्धी चतुष्क
(५) ज्ञान	-	मति. श्रुत. अव.मन:पर्यय. केवल (तीन मिथ्याज्ञान भी नहीं हैं, क्योंकि यहाँ मति आदि तीन ज्ञान मिश्र रूप में पाये जाते हैं।)
(६) संयम	-	सामा. छेदो. परि. सूक्ष्म. यथा. संयमा.।
(७) दर्शन	-	केवलदर्शन
(८) भव्य	-	अभव्यत्व
(९) सम्यक्त्व	-	क्षा. क्षायो.उप. सासा. मिथ्यात्व।
(१०) संज्ञी	-	असैनी
(११) आहार	-	अनाहारक
(१२) गुणस्थान	-	तीसरे को छोड़कर पहले से चौदहवें तक।
(१३) जीवसमास	-	सैनी पंचेन्द्रिय को छोड़कर शेष अठारह।
(१४) उपयोग	-	५ ज्ञानो. १ दर्शनो. अथवा ८ ज्ञानो. १ दर्शनो.
(१५) ध्यान	-	३ धर्मध्यान ४ शुक्लध्यान
(१६) आस्रव	-	५ मि. ५ यो. ४ कषाय।
(१७) जाति	-	५८ लाख-सैनी-पंचेन्द्रिय को छोड़कर शेष की जातियाँ।
(१८) कुल	-	९१ लाख करोड़ सैनी-पंचेन्द्रिय को छोड़कर शेष के कुल।

तालिका संख्या ५६

मिथ्यात्व

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पं.	
३.	काय	६	५ स्थावर १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक बिना
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	३	कुमति, कुश्रुत, कुअवधि	पाँच सम्यग्ज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु, अचक्षु,	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	२	भव्य अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	स्वकीय	मिथ्यात्व
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	पहला	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्था. ५ त्रस	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मनः.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	५	३ ज्ञानो. २ दर्शनो	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	धर्म और शुक्ल ध्यान नहीं होते हैं।
२२.	आस्रव	५५	५मि. १२अ. २५क.१३यो.	
२३.	जाति	८४ लाख	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : मिथ्यात्व कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर : मिथ्यात्व दो प्रकार का होता है-

(१) गृहीत मिथ्यात्व (२) अगृहीत मिथ्यात्व।

(१) निसर्गज मिथ्यात्व (२) परोपदेशिक मिथ्यात्व। **(रा.वा. ८/६)**

अथवा: मिथ्यात्व तीन प्रकार का होता है।

(१) आप्त, आगम, पदार्थों का अश्रद्धान (२) विपर्यय (३) संशय।

अथवा: मिथ्यात्व पाँच प्रकार का होता है-

(१) एकान्त मिथ्यात्व (२) विपरीत मिथ्यात्व (३) संशय मिथ्यात्व (४) विनय मिथ्यात्व (५) अज्ञान मिथ्यात्व।

२. प्रश्न : नैसर्गिक मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : परोपदेश के बिना मिथ्यात्व कर्म के उदय से जो तत्त्वार्थ का अश्रद्धान उत्पन्न होता है वह नैसर्गिक मिथ्यात्व है। **(रा.वा. ८/२)**

जिस प्रकार अंधेरे में काले वस्त्र से वेष्टित मनुष्य भीतर के अनेक प्रकार के चित्रों को अनेक प्रकार की वस्तुओं को नहीं देख सकता है, उसी प्रकार अगृहीत मिथ्यात्व से तिरस्कृत जीव जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहे हुए यथार्थ वस्तु स्वरूप को नहीं देख सकता है। **(सु.र.सं. १३६)**

३. प्रश्न : परोपदेशिक मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : पर के उपदेश वा कुशास्त्रों के सुनने से जो अनन्त श्रद्धान हो वह परोपदेशिक या गृहीत मिथ्यात्व है। **(हरि.पु. ५८/१९४)**

जिस प्रकार चमड़े के टुकड़ों से परिपूर्ण चमार का कुत्ता अन्न रूप भोजन की इच्छा नहीं करता है उसी प्रकार खोटे हेतु और उदाहरण रूप वचनों से परिपूर्ण पुरुष भी जिनेन्द्र द्वारा कथित यथार्थ वस्तु स्वरूप को अन्यथा स्वीकार करता है, वह गृहीत या परोपदेशिक मिथ्यादृष्टि कहा जाता है। इसी को गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। **(सु.र. सं. १३६)**

४. प्रश्न : एकांत मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : ''यह ऐसा ही है'' ''इसी प्रकार है'' इस प्रकार धर्म तथा धर्मी के विषय में एकान्त अभिनिवेश रखना एकान्त मिथ्यात्व है। जैसे- यह सारा संसार ब्रह्म स्वरूप ही है, नित्य ही है वा अनित्य ही है। इत्यादि रूप से एकान्त की अवधारणा करना। **(रा.वा. ८/१)**

द्रव्य-पर्याय रूप पदार्थ में अथवा रत्नत्रय में किसी एक का ही निश्चय करना एकान्त मिथ्यात्व है। **(म.पु. ६२/३००)**

५. प्रश्न : विपरीत मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : तीन मूढ़ता रूप मिथ्यात्व के वश से मनुष्य परिग्रह से सहित जनों को तपस्वी, बहुत प्रकार से किये जाने वाले प्राणियों के वध में भी धर्म तथा अनेक दोषों से संयुक्त देवों को भी यथार्थ देव बतलाया करता है। **(सु.र.सं. १३०)**

दुर्गति में ले जाने वाली हिंसा को स्वर्गादि का हेतु मानना तथा अहिंसा को दुर्गति का कारण मानना विपर्यय मिथ्यात्व है। **(भ.आ.वि. २३)**

६. प्रश्न : संशय मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र मोक्षमार्ग हो सकते हैं या नहीं, इस प्रकार दूषित चित्तवृत्ति संशय मिथ्यात्व है। **(रा.वा. ८/१)**

मिथ्यात्व के उदय से जिस मनुष्य के वीतराग सर्वज्ञ के द्वारा निर्दिष्ट समस्त तत्त्व वैसे हैं अथवा नहीं हैं ऐसा संदेह बना हुआ है उसे तत्त्व का निश्चय सर्वथा नहीं हो पाता है। उसे सांशयिक मिथ्यादृष्टि समझना चाहिए। **(सु.र.सं. १३३)**

७. प्रश्न : वैनयिक मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : सभी देवताओं और शास्त्रों में बिना विवेक के समभाव रखना, सभी का समान विनय करना वैनयिक मिथ्यात्व है। **(रा.वा. ८/१)**

जिस मत में प्रतिदिन पात्र-अपात्रों की, देव-अदेवों की........... सबकी विनय की जाती हो वह तपस्वियों का विनय मिथ्यात्व है।

ऐहिक एवं पारलौकिक सुख सभी विनय से ही प्राप्त होते हैं न कि ज्ञान-दर्शन-तप और उपवास जनित क्लेशों से। ऐसे अभिनिवेश को वैनयिक मिथ्यात्व कहते हैं। **(ध. ८/२०)**

८. प्रश्न : अज्ञान मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : हित और अहित की परीक्षा का न होना अर्थात् हेयोपादेय के विवेक से शून्य हृदय का होना आज्ञानिक मिथ्यात्व है। **(रा.वा. ८/१)**

अज्ञान मिथ्यात्व म्लेच्छ आदि जीवों के होता है जो शून्यवादी हैं और जिनमें भक्ष्य-अभक्ष्य का कुछ विचार नहीं होता है। **(प्र.श्रा. ४/२४)**

पाप से युक्त और धार्मिक ज्ञान से रहित जीवों के मिथ्यात्व कर्म के उदय से उत्पन्न परिणाम अज्ञान मिथ्यात्व है। **(म.पु. ६२/२९८)**

९. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

उत्तर : दर्शन या श्रद्धा शब्द का नाम दृष्टि है। मिथ्या शब्द का अर्थ वितथ और दृष्टि शब्द का अर्थ रुचि, श्रद्धा या प्रत्यय है, इसलिए जिन जीवों की रुचि असत्य में होती है उन्हें मिथ्यादृष्टि कहते हैं। **(ध. १/१६३)**

जिन जीवों की विपरीत आदि मिथ्यात्व कर्मोदय से उत्पन्न हुई मिथ्या रूप दृष्टि होती है उन्हें मिथ्यादृष्टि कहते हैं। **(ध. १/१६३)**

१०. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि दो प्रकार के होते हैं-

(१) अनादि मिथ्यादृष्टि (२) सादि मिथ्यादृष्टि

(१) सातिशय मिथ्यादृष्टि (२) निरतिशय (सामान्य) मिथ्यादृष्टि

(१) हिताहित की परीक्षा से रहित (२) हिताहित के परीक्षक

११. प्रश्न : अनादि एवं सादि मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

उत्तर : **अनादि मिथ्यादृष्टि -** जिनको आज तक कभी सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं हुआ है वे अनादि मिथ्यादृष्टि जीव हैं।

सादि मिथ्यादृष्टि - जिन्होंने एक बार सम्यग्दर्शन प्राप्त करके छोड़ दिया है वे सादि मिथ्यादृष्टि कहलाते हैं।

१२. प्रश्न : सातिशय एवं निरतिशय मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

उत्तर : **सातिशय मिथ्यादृष्टि -** प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव सातिशय मिथ्यादृष्टि कहलाते हैं। **(ल.सा.जी. २२०)**

सामान्य (निरतिशय) मिथ्यादृष्टि - जो सम्यक्त्व के अभिमुख नहीं है, वह सामान्य मिथ्यादृष्टि है।

१३. प्रश्न : कौनसे मिथ्यादृष्टि हिताहित के परीक्षक तथा कौनसे अपरीक्षक हैं ?

उत्तर : संज्ञी पर्याप्तक हिताहित की परीक्षा से रहित और परीक्षक दोनों प्रकार के होते हैं। तथा संज्ञी पर्याप्तक को छोड़कर शेष एकेन्द्रिय आदि सभी जीव हिताहित की परीक्षा से रहित होते हैं। **(रा.वा. ९/१)**

१४. प्रश्न : अनादि मिथ्यादृष्टि कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : अनादि मिथ्यादृष्टि दो प्रकार के होते हैं-

(१) अनादि अनन्त मिथ्यादृष्टि - जिन जीवों ने आज तक सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं किया है और न कभी भविष्य में सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे वे अनादि अनन्त मिथ्यादृष्टि हैं।

(२) अनादि सान्त मिथ्यादृष्टि - जिन जीवों ने आज तक सम्यग्दर्शन को प्राप्त नहीं किया है, लेकिन भविष्य में निश्चित रूप से सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे, वे अनादि सान्त मिथ्यादृष्टि हैं।

१५. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि के आहारकद्विक योग क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : आहारक ऋद्धि के कारणभूत संयमादि का अभाव होने से मिथ्यादृष्टि आदि के अर्थात् मिथ्यादृष्टि आदि चतुर्थ गुणस्थान तक तथा संयतासंयत के आहारकद्विक काययोग नहीं होते हैं। **(ध. ४/३८)**

१६. प्रश्न : क्या अनन्तानुबन्धी चतुष्क से रहित मिथ्यात्व गुणस्थान भी हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, अनन्तानुबन्धी का विसंयोजक जब सम्यक्त्व को छोड़कर मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होता है तब उसके एक आवली मात्र काल तक अनन्तानुबन्धी चतुष्क का उदय नहीं होता है अर्थात् एक आवली काल तक अनन्तानुबन्धी रहित भी मिथ्यात्व गुणस्थान होता है। **गोम्मटसार कर्मकाण्ड** में एक जीव की अपेक्षा बन्ध प्रत्ययों का वर्णन करते हुए कहा है- मिथ्यादृष्टि जीव के मोहनीय कर्म के कम-से-कम ७ बन्ध प्रत्यय हैं-

१ मिथ्यात्व, ३ कषाय (३ क्रोध या ३ मान या ३ माया या ३ लोभ) १ वेद, हास्य-रति तथा अरति-शोक में से एक युगल : ७ प्रत्यय।

१७. प्रश्न : क्या अनन्तानुबन्धी से रहित मिथ्यात्व गुणस्थान चारों गतियों में हो सकता है ?

उत्तर : हाँ, अनन्तानुबन्धी से रहित मिथ्यात्व गुणस्थान चारों गतियों में हो सकता है, क्योंकि अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना सम्यग्दृष्टि जीव करता है। विसंयोजना करने के पश्चात् मिथ्यात्व को प्राप्त करने वाले के अनन्तानुबन्धी से रहित मिथ्यात्व गुणस्थान बनता है। चारों गतियों के सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना करते हैं। अत: चारों गतियों में अनन्तानुबंधी से रहित हो सकता है। **(ज.ध. २/२१३ के आधार से)**

१८. प्रश्न : क्या संसार में ऐसे कोई स्थान हैं जहाँ अनादि मिथ्यादृष्टि ही रहते हैं ?

उत्तर : हाँ, नित्य निगोद में अनादि मिथ्यादृष्टि ही रहते हैं।

१९. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि के पुरुषवेद में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि के पुरुष वेद में आस्रव के कम-से-कम ४० प्रत्यय होते हैं-

५ मिथ्यात्व - विपरीत, एकान्त, विनय, संशय, अज्ञान।

११ अविरति - मन के बिना।

२३ कषाय - स्त्री एवं नपुंसक वेद के बिना।

१ योग - औदारिकमिश्र या कार्मण काययोग।

ये प्रत्यय असैनी पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा जानना चाहिए।

तथा अधिक से अधिक ५३ आस्रव के प्रत्यय होते हैं-

५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २३ कषाय, १३ योग (आहारकद्विक बिना)।

नोट : इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि स्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी जीवों के भी जानना चाहिए।

२०. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि के कितने स्थानों के सभी उत्तर भेद नहीं पाये जाते हैं ?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि के नौ स्थानों के सभी उत्तर भेद नहीं पाये जाते हैं-

	स्थान		**नहीं होने वाले भेद**
(१)	योग	-	आहारकद्विक
(२)	ज्ञान	-	मति आदि पाँच ज्ञान
(३)	संयम	-	सामायिकादि छह संयम
(४)	दर्शन	-	अवधि एवं केवलदर्शन
(५)	सम्यक्त्व	-	क्षायिक आदि पाँच सम्यक्त्व
(६)	गुणस्थान	-	दूसरा आदि तेरह
(७)	उपयोग	-	सात उपयोग
(८)	ध्यान	-	४ धर्म तथा ४ शुक्लध्यान
(९)	आस्रव के प्रत्यय	-	आहारकद्विक योग सम्बन्धी

- समुच्चय प्रश्नोत्तर -

१. प्रश्न : मिथ्यादृष्टि भी भगवान की पूजा, स्वाध्याय, जाप्यानुष्ठान आदि करता है, तो क्या उसके वह धर्मध्यान नहीं है ?

उत्तर : मिथ्यादृष्टि जीव के भगवान की पूजा, स्वाध्याय, जाप्यानुष्ठान आदि करने पर भी उसके धर्मध्यान नहीं होता है, क्योंकि सम्यग्दर्शन प्राप्त हुए बिना सभी क्रियाएँ व्यर्थ होती हैं, सम्यग्दर्शन के अभाव में धर्मध्यान नहीं हो सकता है। उसकी पूजा करना आदि क्रियाएँ प्रशस्त आर्त्तध्यान कही जा सकती हैं। उससे उसके पुण्य का बंध होता है, पूर्वोपार्जित पापों का नाश भी होता है, लेकिन संवर नहीं होता, अर्थात् सम्यग्दृष्टि के जो मिथ्यात्वादि

प्रकृतियों की बन्ध व्युच्छित्ति होती है, वह उसके नहीं होती है। इसीलिए वे क्रियाएँ उसके धर्मध्यान रूप नहीं कही गई हैं।

२. प्रश्न : जिनके घ्राण इन्द्रिय नहीं पाई जाती है उनके सम्यक्त्व मार्गणा का कौनसा भेद नहीं हो सकता है ?

उत्तर : जिनके घ्राण इन्द्रिय नहीं पाई जाती है उनके सम्यक्त्व-मार्गणा में से तीन सम्यक्त्व नहीं हो सकते हैं-

(१) मिश्र (२) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व (३) औपशमिक सम्यक्त्व।

मिथ्यात्व और सासादन सम्यक्त्व एकेन्द्रिय तथा द्वीन्द्रिय जीवों की अपेक्षा हो जाते हैं। क्षायिक सम्यक्त्व तेरहवें तथा चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा कहे गये हैं, क्योंकि इन गुणस्थानों में भावेन्द्रियाँ नहीं पाई जाती हैं।

३. प्रश्न : संशय व विनय मिथ्यात्व तथा सम्यग्मिथ्यात्व में क्या अन्तर है ?

उत्तर : वैनयिक एवं संशय मिथ्यादृष्टि तो सभी देवों में तथा सब शास्त्रों में से किसी एक की भी भक्ति के परिणाम से मुझे पुण्य होगा, ऐसा मानकर संशय रूप से भक्ति करता है। उसको किसी एक देव में निश्चय नहीं है और मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव के दोनों में निश्चय है। बस यही अन्तर है। **(द्र.सं. टी. १३)**

४. प्रश्न : सम्यक्त्व मार्गणा के कितने भेदों में ज्ञान मार्गणा के तीन भेद ही होते हैं ?

उत्तर : चार सम्यक्त्वों में ज्ञान मार्गणा के तीन भेद ही होते हैं-

सम्यक्त्व	ज्ञान	विशेष
(१) प्रथमोपशम सम्यक्त्व	३ ज्ञान	मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान
(२) सम्यग्मिथ्यात्व	३ ज्ञान	मति आदि तीनों ज्ञान मिश्र रूप
(३-४) मिथ्यात्व एवं सासादन	३ कुज्ञान	कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान

५. प्रश्न : सम्यक्त्व मार्गणा के कौनसे भेद में षट् काय के जीव पाये जाते हैं ?

उत्तर : सम्यक्त्व मार्गणा के केवल एक भेद में षट्काय के जीव पाये जाते हैं- मिथ्यात्व में।

६. प्रश्न : कौन-कौन से सम्यक्त्व में सभी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है ?

उत्तर : दो सम्यक्त्वों में सभी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है-

उपशम - द्वितीयोपशम की अपेक्षा ग्यारहवें गुणस्थान में।

क्षायिक - ग्यारहवें आदि सभी गुणस्थानों में तथा सिद्ध भगवान में।

७. प्रश्न : सम्यक्त्व-मार्गणा के किस भेद में कितनी संज्ञाएँ होती हैं ?

उत्तर : सम्यक्त्व-मार्गणा के भेदों में संज्ञाएँ-

सम्यक्त्व		संज्ञाएँ
क्षायिक	-	चार संज्ञा, तीन संज्ञा, दो संज्ञा, १ संज्ञा और संज्ञातीत
प्रथमोपशम	-	चार संज्ञा, तीन संज्ञा
द्वितीयोपशम	-	चार संज्ञा, तीन संज्ञा, दो संज्ञा, १ संज्ञा और संज्ञातीत
क्षायोपशमिक	-	चार संज्ञा, तीन संज्ञा (आहार संज्ञा बिना)
सासादन-सम्यक्त्व	-	चारों संज्ञा
मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व	-	चारों संज्ञा।

८. प्रश्न : कौनसे सम्यक्त्व में सम्यग्मिथ्यात्व के बराबर आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : प्रथमोपशम सम्यक्त्व में सम्यग्मिथ्यात्व के बराबर आस्रव के प्रत्यय पाये जाते हैं- दोनों में ४३ प्रत्यय होते हैं - १२ अविरति, २१ कषाय, १० योग

ये आस्रव के प्रत्यय चतुर्थगुणस्थानवर्ती प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि जीव के होते हैं।

९. प्रश्न : सम्यक्त्व-मार्गणा के किस भेद में आस्रव के कौन-कौन से प्रत्यय नहीं होते हैं?

उत्तर :

सम्यक्त्व		**जो आस्रव के प्रत्यय नहीं हैं**
क्षायिक	-	५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी।
प्रथमोपशम	-	५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी, औदा. मिश्र, आहा.द्विक, वैक्रि. मिश्र और कार्मण काययोग।
द्वितीयोपशम	-	५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी, आहा.द्विक, औदारिक मिश्र काय-योग और वैक्रियिक काययोग।
क्षायोपशमिक	-	५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी।
सासादन सम्यक्त्व	-	५ मिथ्यात्व।
सम्यग्मिथ्यात्व	-	५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी, आहा.द्विक, औदा. मिश्र, वैक्रि. मिश्र, कार्मण काययोग।
मिथ्यात्व	-	आहारक द्विक काययोग।

१०. प्रश्न : कौन-कौन से सम्यक्त्व में आर्त्त-रौद्र तथा धर्म-शुक्ल चारों ध्यान होते हैं ?

उत्तर : दो सम्यक्त्वों में आर्त्तादि चारों ध्यान होते हैं-

(१) उपशम (२) क्षायिक

आर्त्तध्यान	चौथे से छठे तक
रौद्रध्यान	चौथे पाँचवें में
धर्मध्यान	चौथे से सातवें तक
शुक्लध्यान	आठवें से चौदहवें तक

नोट : उपशम सम्यक्त्व में शुक्लध्यान ८वें गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान तक जानना चाहिए।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **कितने सम्यक्त्वों में सभी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है ?**

(अ) ३ (ब) १

(स) २ (द) ४

(ii) **कौनसे सम्यक्त्व में सबसे ज्यादा गुणस्थान होते हैं ?**

(अ) उपशम सम्यक्त्व (ब) क्षायिक सम्यक्त्व

(स) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व (द) मिथ्यात्व

(iii) **मिथ्यात्व में कौन से आस्रव के प्रत्यय होते भी हैं और नहीं भी होते हैं ?**

(अ) मिथ्यात्व (ब) आहारकद्विक

(स) अनन्तानुबन्धी (द) कोई नहीं।

(iv) **कौनसे सम्यक्त्व में आस्रव के प्रत्ययों का अभाव भी होता है ?**

(अ) क्षायिक सम्यक्त्व (ब) उपशम सम्यक्त्व

(स) सासादन सम्यक्त्व (द) कोई नहीं।

(v) **कौनसे सम्यक्त्व में अनाहारक अवस्था नहीं होती है ?**

(अ) सम्यग्मिथ्यात्व (ब) मिथ्यात्व

(स) उपशम सम्यक्त्व (द) कोई नहीं।

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) सम्यक्त्व-मार्गणा के किस भेद में वैक्रियिकमिश्र काययोग नहीं होता है ?

(ii) सम्यक्त्व-मार्गणा के किस भेद में मिथ्यात्व सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय नहीं होते लेकिन अनन्तानुबन्धी सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

(iii) सम्यक्त्व-मार्गणा के कितने भेदों में अप्रत्याख्यान कषाय सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय होते हैं?

(iv) कौनसे सम्यक्त्व में पाँच ज्ञान होते हैं ?

(v) सासादन सम्यग्दृष्टि कितनी गतियों में नहीं जाता है ?

३. प्रश्न : हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) क्षायिक सम्यक्त्व में कम-से-कम आस्रव का एक प्रत्यय होता है।

(ii) उपशम सम्यक्त्व में औदारिकमिश्र काययोग भी होता है।

(iii) क्षायिक सम्यक्त्व में ग्यारहवाँ गुणस्थान भी होता है।

(iv) मिथ्यात्व में संज्ञी-असंज्ञी दोनों प्रकार के जीव होते हैं।

(v) क्षायिक सम्यक्त्व तिर्यञ्चगति में नहीं होता है।

४. प्रश्न : रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) उपशम सम्यक्त्व में............गतियाँ............प्राण तथा............ गुणस्थान होते हैं।

(ii) मिथ्यात्व में............पर्याप्तियाँ ....संज्ञा तथा .... उपयोग होते हैं।

(iii) क्षायिक सम्यक्त्व में कम-से-कम..................प्राण................संज्ञा...............योग होते हैं।

(iv) सम्यग्मिथ्यात्व में.............आस्रव के प्रत्यय............. दर्शन...........संयम होता है।

(v) सासादन सम्यक्त्व में .... योग .... ध्यान........कषायें होती हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	क्षायिक सम्यक्त्व	-	५० आस्रव के प्रत्यय
(ii)	सम्यग्मिथ्यात्व	-	आठ गुणस्थान
(iii)	मिथ्यात्व	-	क्षायिक सम्यक्त्व
(iv)	सासादन	-	१९९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल
(v)	बारहवाँ गुणस्थान	-	मिथ्यात्व
(vi)	द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	-	अयोग केवली
(vii)	आस्रव के ४५ प्रत्यय	-	१० योग
(viii)	८४ लाख जाति	-	उपशम सम्यक्त्व

– उत्तरमाला –

१. (i) स (ii) ब (iii) स (iv) अ (v) अ

२. (i) सम्यग्मिथ्यात्व (ii) सासादन सम्यक्त्व (iii) छह (iv) क्षायिक सम्यक्त्व (v) एक

३. (i) हाँ (ii) ना (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना

४. (i) चार, दस, आठ (ii) छह, चार, पाँच (iii) एक, शून्य, शून्य (iv) ४३, तीन, (असंयम) एक (v) १३, ८, २५

५. (i) अयोग केवली (ii) १० योग (iii) १९९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल (iv) आस्रव के ५० प्रत्यय (v) क्षायिक सम्यक्त्व (vi) आठ गुणस्थान (vii) उपशम सम्यक्त्व (viii) मिथ्यात्व।

१३. संज्ञी मार्गणा

१. **प्रश्न : संज्ञी मार्गणा किसे कहते हैं ?**

उत्तर : संज्ञी तथा असंज्ञी अवस्था में जीवों की खोज करने को संज्ञी मार्गणा कहते हैं।

२. **प्रश्न : संज्ञी मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?**

उत्तर : संज्ञी मार्गणा दो प्रकार की होती है-

(१) संज्ञी (२) असंज्ञी **(ध. १/४०८)**

(२) सैनी (२) असैनी **(रा.वा. ९/७)**

संज्ञी - असंज्ञी से रहित जीव भी होते हैं।

३. **प्रश्न : संज्ञी-मार्गणा के स्वामी कौन हैं?**

उत्तर : संज्ञी-मार्गणा के स्वामी-

संज्ञी जीव मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान तक होते हैं। **(ध. २/८२५)**

असंज्ञी जीवों के एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। **(ध. २/२३४)**

तथा असंज्ञी जीवों के प्रथम एवं द्वितीय दो गुणस्थान होते हैं। **(गो.क.जी. ५५१)**

४. **प्रश्न : संज्ञी जीव किसे कहते हैं ?**

उत्तर : नो इन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम एवं उससे होने वाले ज्ञान को संज्ञा कहते हैं। वह जिसके हो उसे संज्ञी जीव कहते हैं। **(गो.जी.जी. ७०४)**

जो भली प्रकार जानता है उसको संज्ञ अर्थात् मन कहते हैं, वह मन जिसके पाया जाता है उसको संज्ञी कहते हैं। **(ध. १/१५३)**

जो जीव किसी कार्य को करने से पूर्व कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य की मीमांसा करे, तत्त्व और अतत्त्व का विचार करे, योग्य को सीखे और उसके नाम को पुकारने पर आवे वह समनस्क है, उसे ही संज्ञी कहते हैं। **(गो.जी. ६६२)**

५. **प्रश्न : असंज्ञी जीव किसे कहते हैं ?**

उत्तर : जो मन से शून्य हैं, वे अमनस्क अर्थात् असंज्ञी है। **(द्र.सं.टी. १२)**

हिताहित परीक्षा के प्रति असामर्थ्य होना असंज्ञित्व है। **(रा.वा.)**

नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से तज्जन्य ज्ञान को संज्ञा कहते हैं। जिनके यह संज्ञा न हो किन्तु यथासम्भव इन्द्रिय ज्ञान हो उसको असंज्ञी कहते हैं। **(गो.जी. ६६०)**

जो जीव शिक्षा, क्रिया, उपदेश और आलाप को ग्रहण नहीं करता है वह असंज्ञी है। **(रा.वा. २/६)**

६. प्रश्न : शिक्षा, आलापादि किसे कहते हैं ?

उत्तर : **शिक्षा** - हित का ग्रहण और अहित का परिहार जिसके द्वारा किया जा सके उसे शिक्षा कहते हैं।

क्रिया - इच्छापूर्वक हाथ-पैर चलाने को क्रिया कहते हैं।

उपदेश - वचन या चाबुक आदि के द्वारा बताये हुए कर्त्तव्य को उपदेश कहते हैं।

आलाप - श्लोक आदि का पाठ करना आलाप है।

७. प्रश्न : क्या संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीव भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीव भी होते हैं। तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान वाले अरहंत भगवान तथा सिद्ध भगवान भी संज्ञी-असंज्ञी से रहित होते हैं।

८. प्रश्न : जीव संज्ञी-असंज्ञी से रहित क्यों होते हैं ?

उत्तर : केवली भगवान अर्थात् १३वें तथा १४वें गुणस्थान वाले जीव संज्ञी-असंज्ञीपने से रहित होते हैं, क्योंकि आवरणकर्म से रहित उनके मन के अवलम्बन से बाह्य अर्थ का ग्रहण नहीं पाया जाता है, इसलिए उन्हें संज्ञी नहीं कह सकते हैं तथा जिन्होंने समस्त पदार्थों का साक्षात् कर लिया है उन्हें असंज्ञी मानने में विरोध आता है।

विकलेन्द्रिय के समान मन के बिना पदार्थों का ग्रहण करते हैं इसलिए भी उन्हें असंज्ञी नहीं कह सकते हैं, क्योंकि यदि मन की अपेक्षा न करके ज्ञान की उत्पत्ति मात्र का आश्रय करके ज्ञानोत्पत्ति असंज्ञीपने का कारण होती तो ऐसा होता, परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि कदाचित् मन के अभाव से विकलेन्द्रिय जीवों की तरह केवली के बुद्धि के अतिशय का अभाव भी कहा जावेगा। इसलिए केवली के पूर्वोक्त दोष लागू नहीं होता। **(ध.१/४०८)**
सयोगी और अयोगी मन से नहीं जानते हैं इससे वे न संज्ञी कहे जाते हैं और न असंज्ञी। **(गो.जी.जी.७०४)**

९. प्रश्न : पंचेन्द्रियत्व समान होने पर भी उनमें संज्ञित्व-असंज्ञित्व का भेद क्यों होता है ?

उत्तर : संज्ञी जाति नाम कर्म विशेष के उदय के बल का लाभ होने पर और नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम विशेष की अपेक्षा से संज्ञी होता है, उसके अभाव में संज्ञित्व नहीं होता है, यह विशेषता है। जैसे एकेन्द्रिय जाति नाम कर्म के उदय विशेष की अपेक्षा एकेन्द्रियादि के क्षयोपशम होता है, उससे एकेन्द्रियादि के भेद होते हैं। **(रा.वा. ९)**

तालिका संख्या ५७

संज्ञी

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञा. ४ ज्ञा.	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	७	सा.छे.परि.सू.य.संय.असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी. प. शु.	
११.	भव्य	२	भव्य अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	स्वकीय (सैनी)	सैनी-असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१२	पहले से बारहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मन.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध., २ शुक्ल	आदि के दो शुक्ल ध्यान होते हैं।
२२.	आस्रव	५७	५ मि. १२ अ. २५ क. १५ यो.	
२३.	जाति	२६ लाख	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : संज्ञी जीवों में कषाय की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए ?

उत्तर : संज्ञी जीवों में कषायों के भंग-

२५, २४, २३, २१, २०, १९, १७, १५, १३, ११, ७, ६, ५, ४, ३, २, १, ०

२५ कषाय - मिथ्यादृष्टि तिर्यञ्च-मनुष्यों के।

२४ कषाय - मिथ्यादृष्टि भोगभूमिया मनुष्य-तिर्यञ्च, देवगति में तथा म्लेच्छखण्डों में।

२३ कषाय - सम्मूर्च्छन संज्ञी पंचेन्द्रिय तथा नारकी।

२१ कषाय - मिश्र तथा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती मनुष्य-तिर्यञ्च।

२० कषाय - मिश्र तथा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती देव तथा भोगभूमिया जीव।

१९ कषाय - मिश्र एवं चतुर्थगुणस्थानवर्ती सम्मूर्च्छन तिर्यञ्च तथा नारकी।

१७ कषाय - पंचमगुणस्थानवर्ती जीव।

१५ कषाय - सम्मूर्च्छन पंचमगुणस्थानवर्ती।

१३ कषाय - छठे से आठवें गुणस्थान तक।

११ कषाय - आहारकद्विक काययोगी मन:पर्यय ज्ञानी आदि तथा छठे गुणस्थान वाले जिनके पुरुषवेद ही होता है।

७ से २ तक कषाय - नवें गुणस्थान के प्रथम भाग से छठे भाग तक।

१ कषाय - नवें गुणस्थान के सातवें भाग से दसवें गुणस्थान तक।

० कषाय - ग्यारहवें एवं बारहवें गुणस्थान में।

२. प्रश्न : संज्ञी जीव कितने गुणस्थानों में भव्य ही होते हैं ?

उत्तर : संज्ञी जीव ग्यारह गुणस्थानों में भव्य ही होते हैं।

दूसरे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक।

तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में भी भव्य ही होते हैं, लेकिन वहाँ संज्ञी-असंज्ञी का विकल्प नहीं है।

३. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संज्ञी जीव हैं जिनके मनोबल प्राण नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, लब्ध्यपर्याप्तक संज्ञी जीवों के मनोबल प्राण नहीं होता है, क्योंकि वे शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार इनके श्वासोच्छ्वास तथा वचनबल प्राण भी नहीं होते हैं।

निर्वृत्यपर्याप्तक संज्ञी जीवों के भी जब तक मन:पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है तब तक मनोबल प्राण नहीं होता है।

कार्मण काययोगी जीवों के भी मनोबल प्राण नहीं है।

४. प्रश्न : संज्ञी जीवों के यथाख्यात संयम में कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : संज्ञी जीवों के यथाख्यात संयम में कम-से-कम भी और अधिक-से-अधिक भी दस प्राण ही होते हैं, क्योंकि संज्ञी जीवों के यथाख्यात संयम मात्र ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान में पाया जाता है।

५. प्रश्न : क्या ऐसे कोई संज्ञी जीव हैं जिनके संज्ञाओं का अभाव होकर पुन: संज्ञाएँ उत्पन्न हो जाती हैं ?

उत्तर : हाँ, ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती संज्ञी जीवों के संज्ञाओं का अभाव हो जाता है, लेकिन जब वे ग्यारहवें गुणस्थान से गिर जाते हैं, तो उनके क्रमश: परिग्रह, मैथुन, भय तथा आहार संज्ञा उत्पन्न हो जाती है। अथवा यदि भवक्षय से गिरते हैं तो एक साथ आहारादि चारों संज्ञाएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

कालक्षय-समय समाप्त होना। **भवक्षय** - आयु समाप्त होना।

६. प्रश्न : संज्ञी जीवों के कषायातीत अवस्था में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : संज्ञी जीवों के कषायातीत अवस्था में आस्रव के ९ प्रत्यय होते हैं-

४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ काययोग (औदारिक काययोग)

ये आस्रव के ९ प्रत्यय ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा जानने चाहिए।

७. प्रश्न : संज्ञी जीवों के कौनसी गति सम्बन्धी जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : संज्ञी जीवों के चारों गति सम्बन्धी जातियाँ होती हैं, क्योंकि तीन गतियों में तो सभी जीव संज्ञी ही होते हैं तथा तिर्यञ्च गति की भी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जातियाँ संज्ञी जीवों के पाई जाती हैं।

तालिका संख्या ५८

असंज्ञी

क्र.	स्थान	संख्या	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यञ्चगति	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि १ त्रस	
४.	योग	४	१ वच. ३ का.	अनुभय वचन योग
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	२	कुमति कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु. अचक्षु.	
१०.	लेश्या	४	कृ. नी. का. पी.	पद्म और शुक्ल लेश्या नहीं है।
११.	भव्य	२	भव्य-अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	मिथ्यात्व, सासादन	
१३.	संज्ञी	१	स्वकीय	असैनी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	२	पहला, दूसरा	
१६.	जीवसमास	१८	१४ स्था. ४ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	५	आ.श.इ.श्वा. भा.	मन:पर्याप्ति नहीं है।
१८.	प्राण	९	५ इन्द्रिय, २बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	४	२ ज्ञानो. २ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	४५	५ मि.११अ. २५ क. ४यो.	त्रस सम्बन्धी अविरति नहीं है।
२३.	जाति	६२ लाख	तिर्यञ्च सम्बन्धी	
२४.	कुल	१३४ $\frac{१}{२}$ ला.क.	तिर्यञ्च सम्बन्धी	

१. प्रश्न : एकेन्द्रिय आदि असैनी जीवों के मन के बिना श्रुत (कुश्रुत) ज्ञान कैसे उत्पन्न हो सकता है ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि मन के बिना भी वनस्पतिकायिक जीवों के हित में प्रवृत्ति और अहित से निवृत्ति देखी जाती है, इसलिए मन सहित जीवों के ही श्रुतज्ञान मानने में उनसे अनेकान्त दोष आता है। ऐसा भी नहीं कहना चाहिए कि एकेन्द्रियों के श्रोत्र इन्द्रिय का अभाव होने से शब्द का ज्ञान नहीं हो सकता है, शब्दज्ञान के अभाव में शब्द के विषयभूत अर्थ का भी ज्ञान नहीं होता है, क्योंकि यह कोई नियम नहीं है कि शब्द के निमित्त से होने वाले पदार्थ के ज्ञान को ही श्रुत कहते हैं। किन्तु शब्द से भिन्न रूपादिक लिङ्ग से भी जो लिङ्गी का ज्ञान होता है उसे भी श्रुतज्ञान कहते हैं। **(ध. १/३६३)**

अत: एकेन्द्रियादि असैनी जीवों के मन के अभाव में भी श्रुतज्ञान होने में कोई बाधा नहीं है।

मन के बिना भी जाति विशेष के कारण लिङ्गी विषयक ज्ञान की उत्पत्ति मानने में कोई विरोध नहीं आता है। **(ध. १३/२१०)**

२. प्रश्न : किन-किन असैनी जीवों के तीन ही योग होते हैं ?

उत्तर : पाँच प्रकार के असैनी जीवों के तीन ही योग होते हैं-

(१) पृथ्वीकायिक (२) जलकायिक (३) अग्निकायिक

(४) वायुकायिक (५) वनस्पति कायिक।

३. प्रश्न : क्या सभी असैनी जीवों के तीनों वेद होते हैं ?

उत्तर : नहीं, मात्र गर्भज असैनी पंचेन्द्रिय के तीनों वेद होते हैं। शेष असैनी जीवों के तो मात्र एक नपुंसक वेद ही होता है।

४. प्रश्न : क्या सभी असैनी जीवों के सभी कषायें होती हैं ?

उत्तर : नहीं, मात्र गर्भज असैनी पंचेन्द्रिय जीवों के ही सभी (पच्चीस) कषायें होती हैं। शेष एकेन्द्रिय आदि चतुरिन्द्रिय पर्यन्त जीवों के तेवीस कषायें ही होती हैं, क्योंकि ये जीव नपुंसकवेद वाले ही होते हैं। इसलिए इनके स्त्री एवं पुरुष वेद रूप कषायें नहीं होती हैं।

सम्मूर्च्छन संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय के भी २३ कषायें होती हैं।

५. प्रश्न : असैनी जीवों के कितने दर्शन होते हैं ?

उत्तर : असैनी जीवों के सामान्य से दो दर्शन होते हैं।

चक्षु दर्शन-अचक्षु दर्शन

अचक्षु दर्शन सामान्य से सभी असैनी जीवों के होते हैं लेकिन चक्षु दर्शन चतुरिन्द्रिय तथा असैनी पंचेन्द्रिय के भी होता है।

६. प्रश्न : **क्या सभी असंज्ञी जीवों के पीत लेश्या हो सकती है ?**

उत्तर : नहीं, सभी असंज्ञी जीवों के पीत लेश्या नहीं हो सकती है, मात्र असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के ही पीत लेश्या हो सकती है। कहा भी है- यदि वह कापोत लेश्या से मरता है तो घर्मा नरक में उत्पन्न होता है और तेजो लेश्या से मरता है तो भवनवासी और व्यन्तरों में उत्पन्न होता है। **(गो.जी. ५३०)**

७. प्रश्न : **असैनी जीवों के त्रसकाय सम्बन्धी कितने जीवसमास होते हैं ?**

उत्तर : असैनी जीवों के त्रसकाय सम्बन्धी चार जीवसमास होते हैं-

(१) द्वीन्द्रिय (२) त्रीन्द्रिय (३) चतुरिन्द्रिय (४) असैनी पंचेन्द्रिय।

- समुच्चय प्रश्नोत्तर -

१. प्रश्न : **असंज्ञी जीवों की अपेक्षा संज्ञी जीवों के कितने योग ज्यादा होते हैं ?**

उत्तर : असंज्ञी जीवों की अपेक्षा संज्ञी जीवों के ११ योग ज्यादा होते हैं-

४ मनोयोग, ३ वचनयोग, ४ काययोग (वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक)

२. प्रश्न : **संज्ञी असंज्ञी जीवों के किस लेश्या में भव्य-अभव्य दोनों प्रकार के जीव होते हैं ?**

उत्तर : संज्ञी असंज्ञी जीवों के छहों लेश्याओं में भव्य-अभव्य दोनों पाये जाते हैं, क्योंकि पहले गुणस्थान में भी छहों लेश्याएँ पाई जाती हैं।

३. प्रश्न : **चींटी आदि भी अपने प्रतिकूल भोजन-पानी आदि से अपना रास्ता मोड़ लेती है अत: उसे असंज्ञी कैसे कह सकते हैं ?**

उत्तर : प्रतिकूल सामग्रियों से अपने को बचाना मन का ही कार्य नहीं है। यह कार्य तो इन्द्रियों के माध्यम से भी हो जाता है, क्योंकि इन्द्रियों के इष्ट विषयों में जीव की प्रवृत्ति बिना किसी प्रयास से देखी जाती है, मन का कार्य तो हेय-उपादेय को समझना, शिक्षा-उपदेश को ग्रहण करना, बुलाने पर आ जाना, हित-अहित को समझना आदि है। यह कार्य चींटी आदि असैनी पर्यन्त जीवों के नहीं देखे जाते हैं इसलिए ये जीव असंज्ञी ही कहे गये हैं।

दूसरी बात जिनेन्द्र भगवान ने एकेन्द्रिय से लेकर असैनी पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवों को असंज्ञी ही कहा है इसलिए प्रतिकूल सामग्री के मिलने पर रास्ता मोड़ लेने वाली चींटी आदि भी असंज्ञी ही है।

४. प्रश्न : संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीवों के आहारक मार्गणा का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीवों के आहारक मार्गणा का विवेचन-

तेरहवें गुणस्थान वाले - आहारक अनाहारक दोनों होते हैं।

चौदहवें गुणस्थान वाले - अनाहारक ही होते हैं।

सिद्ध भगवान भी अनाहारक ही होते हैं।

५. प्रश्न : संज्ञी मार्गणा में उपयोगों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : संज्ञी मार्गणा में उपयोग-

मार्गणा	**उपयोग**	**विशेष**
(१) संज्ञी	१०	केवलज्ञानो, केवलदर्शनो बिना
(२) असंज्ञी	४	कुमति, कुश्रुतज्ञानो. चक्षु. अचक्षुदर्शनी
(३) सैनी-असैनी से रहित	२	केवलज्ञानो, केवलदर्शनो

कुमति, कुश्रुतज्ञानो. तथा चक्षु-अचक्षु दर्शनोपयोग सैनी असैनी दोनों के होते हैं।

मति आदि चार ज्ञान, विभंगावधिज्ञान तथा अवधिदर्शनोपयोग भी सैनी जीवों के ही होते हैं।

६. प्रश्न : संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीवों के कौनसे स्थानों का एक भेद नहीं पाया जाता है?

उत्तर : संज्ञी-असंज्ञी से रहित जीवों के सात स्थानों का एक भी भेद नहीं पाया जाता है ?

स्थान		**नहीं पाये जाने वाले भेद**
योग	-	अयोग केवली के एक भी योग नहीं है।
वेद	-	सयोग तथा अयोग केवली के एक भी वेद नहीं पाया जाता है।
कषाय	-	सयोग तथा अयोग केवली के एक भी कषाय नहीं होती है।
लेश्या	-	अयोग केवली के एक भी लेश्या नहीं है।
संज्ञी	-	सयोग तथा अयोग केवली के संज्ञी मार्गणा का एक भी भेद नहीं है।
संज्ञा	-	सयोग तथा अयोग केवली के संज्ञा का एक भी भेद नहीं है।
आस्रव के प्रत्यय	-	अयोग केवली के आस्रव का एक भी प्रत्यय नहीं पाया जाता है।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **असंज्ञी जीवों के कौनसी गति होती है ?**

(अ) नरकगति (ब) मनुष्यगति

(स) तिर्यञ्चगति (द) कोई नहीं

(ii) **सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च किसमें आते हैं ?**

(अ) सैनी में (ब) असैनी में

(स) सैनी-असैनी दोनों में (द) किसी में भी नहीं

(iii) **सम्मूर्च्छन मनुष्य सैनी होते हैं या असैनी ?**

(अ) असैनी (ब) सैनी

(स) न सैनी न असैनी (द) कोई नहीं

(iv) **सैनी जीवों के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं ?**

(अ) १० (ब) १

(स) ७ (द) ४

(v) **असैनी जीवों के कम-से-कम कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?**

(अ) ४ (ब) ६

(स) ३ (द) ५

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) सैनी जीवों के अधिक-से-अधिक कितने ध्यान होते हैं ?

(ii) असैनी जीवों के कितनी जातियाँ नहीं होती हैं ?

(iii) असैनी जीवों के कितनी संज्ञाओं का अभाव हो सकता है ?

(iv) सैनी जीवों के आठवें गुणस्थान में कितने वेद होते हैं ?

(v) असैनी जीवों के कितने जीव समास नहीं होते हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) जो मनुष्य धर्म ग्रहण नहीं करता है वह असैनी है ?

(ii) पानी असैनी ही होता है ?

(iii) असैनी जीवों में मनुष्य सम्बन्धी जातियाँ नहीं आती हैं ?

(iv) भोगभूमि में भी सैनी-असैनी दोनों प्रकार के पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च होते हैं ?

(v) चींटी, केंचुआ तथा जूं आदि संज्ञी-असंज्ञी दोनों होते हैं ?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) असैनी जीवों के प्रथम गुणस्थान में............कषाय............अविरति........... योग होते हैं।

(ii) सैनी जीवों के आहार संज्ञा में..........गुणस्थान.........गति तथा संयम मार्गणा में से......... संयम होते हैं।

(iii) सैनी-असैनी से रहित जीवों के............कषाय...........वेद तथा..........संज्ञा नहीं होती है।

(iv) सैनी जीवों के ज्ञान मार्गणा में से .... ज्ञान............ लेश्या तथा..........दर्शन होते हैं।

(v) असैनी जीवों के......वचन योग...... काययोग तथा ज्ञान मार्गणा में से.....ज्ञान नहीं होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	संज्ञी अनाहारक	-	११ योग
(ii)	संज्ञी भव्य	-	आस्रव के ५५ प्रत्यय
(iii)	तीन योग	-	संज्ञी जीव
(iv)	संज्ञी मिथ्यादृष्टि	-	असैनी आहारक
(v)	असैनी	-	आस्रव के ४५ प्रत्यय
(vi)	१२ गुणस्थान	-	संज्ञी असंज्ञी से रहित
(vii)	पर्याप्त सैनी	-	३ गुणस्थान
(viii)	सयोग केवली	-	आहारकद्विक

– उत्तरमाला –

१. (i) स (ii) अ (iii) ब (iv) स (v) अ

२. (i) १४ (ii) २२ लाख (iii) एक भी नहीं (iv) ३ (v) १

३. (i) ना (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) ना (v) ना

४. (i) २५, ११, ४ (ii) छह, चार, पाँच (iii) २५, ३ ४
(iv) ७, ६, ३ (v) ३, ४, ६

५. (i) ३ गुणस्थान (ii) आहारकद्विक (iii) असैनी आहारक
(iv) आस्रव के ५५ प्रत्यय (v) आस्रव के ४५ प्रत्यय (vi) संज्ञी जीव
(vii) ११ योग (viii) संज्ञी-असंज्ञी से रहित

१४. आहार मार्गणा

१. प्रश्न : आहार किसे कहते हैं ?

उत्तर : तीन शरीर और छह पर्याप्तियों के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करना आहार है ?

शरीर नामकर्म के उदय से औदारिक आदि तीन शरीरों में से यथासम्भव शरीर के योग्य वर्गणा का तथा वचन और द्रव्य मन के योग्य वर्गणाओं का जो ग्रहण होता है उसको आहार कहते हैं। **(गो.जी. ६६४)**

२. प्रश्न : आहार मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : आहारक तथा अनाहारक स्थानों में जीवों की खोज करना आहार मार्गणा है।

३. प्रश्न : आहार मार्गणा कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : आहार मार्गणा दो प्रकार की होती है-

(१) आहारक (२) अनाहारक

४. प्रश्न : आहारक किसे कहते हैं ?

उत्तर : औदारिक आदि तीन शरीरों में से किसी एक वर्गणा का तथा भाषा और मनोवर्गणा का यथायोग्य आहरण करता है, ग्रहण करता है। **आहरति गृह्णाति जीवः वर्गणा इति आहारकः** अर्थात् शरीरादि के योग्य पुद्गल वर्गणा को जीव ग्रहण करता है उसको आहारक कहते हैं। **(गो.जी. ६६५)** औदारिकादि तीन शरीर तथा छह पर्याप्तियों के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण करना आहारक है।

५. प्रश्न : अनाहारक किसे कहते हैं ?

उत्तर : तीन शरीर तथा छह पर्याप्तियों के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण नहीं करना अनाहारक है।

६. प्रश्न : आहार मार्गणा में आहारक और अनाहारक किस अपेक्षा से कहा गया है ?

उत्तर : आहार मार्गणा में आहारक और अनाहारकपना नोकर्माहार की अपेक्षा कहा गया है अर्थात् जहाँ नोकर्माहार का ग्रहण होता है वहाँ आहारक अवस्था तथा जहाँ नोकर्माहार का ग्रहण नहीं होता है वहाँ अनाहारक अवस्था है। **(प्र.सा. २०)**

जो नो-कर्म को ग्रहण करता है, वह आहारक तथा जो नो कर्म को ग्रहण नहीं करता है, वह अनाहारक कहलाता है।

तालिका संख्या ५९

आहारक

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि १ त्रस	
४.	योग	१४	४ म. ४ व. ६ का.	कार्मण काययोग नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायरहित जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञान ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा.छे.परि.सू.य.संय.असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच.अव.केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य-अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षयो.उ.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	सैनी-असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	१	स्वकीय	आहारक
१५.	गुणस्थान	१३	पहले से तेरहवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्था. ५ त्रस	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा. भा. मनः.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१५	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ३ शु.	चौथा शुक्ल ध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	५६	५मि.१२अ.२५क.१४यो.	कार्मण योग सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय नहीं है।
२३.	जाति	८४ लाख	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यहाँ आहार शब्द से कौनसे आहार को ग्रहण करना चाहिए ?

उत्तर : यहाँ पर आहार शब्द से कवलाहार, लेपाहार, उष्माहार, मानसिक आहार, कर्माहार को ग्रहण न करके मात्र नोकर्माहार को ही ग्रहण करना चाहिए। अन्यथा आहार काल और विरहकाल के साथ विरोध आता है। **(ध. १/४१२)**

२. प्रश्न : यह कैसे जाना जाता है कि आहारक-अनाहारकपना नोकर्माहार की अपेक्षा कहा गया है ?

उत्तर : **तत्त्वार्थसूत्र महाग्रन्थ** में कहा है **''एकं द्वौ त्रीन्वानाहारक:'' (२/३०)** एक, दो अथवा तीन समय तक जीव अनाहारक होता है। इस सूत्र का अर्थ कहते हैं कि एक भव से दूसरे भव में गमन के समय विग्रहगति में औदारिक आदि तीन शरीर का अभाव होने पर नवीन शरीर को धारण करने के लिए तीन शरीरों की पर्याप्ति के योग्य पुद्गल पिण्ड को ग्रहण करना नोकर्माहार कहलाता है। वह नोकर्माहार विग्रहगति में कर्माहार के विद्यमान होने पर भी एक, दो, तीन समय पर्यन्त नहीं होता है। इसलिए आगम में आहारक व अनाहारकपना नोकर्माहार की अपेक्षा है, ऐसा कहा गया है। **(प्र.सा. २०)**

३. प्रश्न : कवलाहार आदि का क्या लक्षण है ?

उत्तर :

कवलाहार - जो कवल अर्थात् ग्रास रूप से खाया जाता है उसे कवलाहार कहते हैं, यह मुख्य रूप से मनुष्य-तिर्यञ्चों के होता है।

लेपाहार - जो लेप रूप से ग्रहण किया जाता है उसे लेपाहार कहते हैं। यह मुख्य रूप से वनस्पति आदि के होता है।

उष्माहार - जो गर्मी देने रूप आहार होता है वह उष्माहार या ओजाहार होता है। इसे मुख्य रूप से पक्षी आदि अपने अण्डे आदि को भोजन रूप में देते हैं।

मानसिकाहार - जो मन में कल्पना मात्र से कण्ठ में अमृत रूप उत्पन्न होता है। यह देवों के होता है।

कर्माहार - कर्म के फल भोगने की मुख्यता जहाँ होती है वह कर्माहार है। यह नारकियों के होता है।

नोकर्माहार - नोकर्म वर्गणाओं का ग्रहण मात्र जिनका आहार है वह नोकर्माहार है। यह सयोग केवली भगवान के होता है।

४. प्रश्न : यदि कवलाहार की अपेक्षा आहारक-अनाहारक मानें तो क्या हानि है ?

उत्तर : यदि कवलाहार की अपेक्षा आहारक-अनाहारकपना माना जावेगा तो भोजन काल को छोड़कर जीव सर्वदा अनाहारक हो जावेगा और तीन समय का नियम घटित नहीं होगा। **(प्र.सा. २०)**

५. प्रश्न : क्या जीव अधिक-से-अधिक तीन समय तक ही अनाहारक रह सकता है ?

उत्तर : हाँ, विग्रहगति की अपेक्षा जीव तीन समय तक ही अनाहारक रह सकता है, केवली समुद्घात की अपेक्षा भी तीन समय तक ही अनाहारक रहता है, लेकिन चौदहवें गुणस्थान में जीव अ इ उ ऋ लृ इन पाँच ह्रस्व स्वरों के उच्चारण के प्रमाण काल तक अनाहारक कहा गया है।[१]

६. प्रश्न : क्या ऐसा भी हो सकता है कि जीव एक भव से दूसरे भव में चला जावे, लेकिन आहारक ही बना रहे ?

उत्तर : हाँ, ऐसा भी हो सकता है कि जीव एक भव से दूसरे भव में चला जावे, लेकिन आहारक ही बना रहे। जब यह जीव उपपाद क्षेत्र के प्रति ऋजुगति में रहता है तब आहारक होता है, क्योंकि शरीर छोड़ने व अन्य शरीर ग्रहण करने के बीच एक समय का भी अन्तर नहीं पड़ने देता है। अर्थात् ऋजुगति (मोड़े से रहित गति) से जाने वाला जीव एक भव से दूसरा भव लेने के बीच में भी अनाहारक नहीं बनता है, क्योंकि वह आहारकादि वर्गणाओं को ग्रहण करता हुआ ही जाता है। **(रा.वा. ६)**

७. प्रश्न : ऐसे कौनसे आहारक जीव हैं जो उसी भव में अनाहारक बन सकते हैं ?

उत्तर : मनुष्यगति के आहारक जीव जो तेरहवें गुणस्थान में पहुँच गये हैं, वहाँ प्रतर व लोकपूरण समुद्घात के समय कार्मण काययोग में अनाहारक बन जाते हैं फिर अनाहारक अवस्था समाप्त होने पर दण्ड व कपाट समुद्घात में आहारक हो जाते हैं और पुन: चौदहवें गुणस्थान में जाकर अनाहारक बन जाते हैं।

८. प्रश्न : ऐसे कौनसे आहारक जीव हैं जिनके केवल क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है ?

उत्तर : ऐसे आहारक जीव जिनके केवल क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है-

(१) क्षपक श्रेणी में स्थित ८वें, ९वें, १०वें गुणस्थानवर्ती मुनिराज।

(२) बारहवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज।

(३) कार्मण काययोग की अवस्था को छोड़कर शेष चौथे तथा तेरहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान।

---

१. विग्रह-गति में जीव चार समय तक अनाहारक हो सकता है। क्योंकि तिर्यंचगत्यानुपूर्वी का उदय चार समय कहा है। **(ध. १५)**

९. प्रश्न : चौबीस स्थानों के कौन-कौन से उत्तर भेद आहारक अवस्था में ही होते हैं।

उत्तर : आहारक अवस्था में ही होने वाले उत्तर भेद-

नाम	विशेष विवरण
(१) योग	- १४ (कार्मण काययोग बिना)
(२) ज्ञान	- २ (विभंगावधिज्ञान तथा मन:पर्ययज्ञान)
(३) संयम	- ५ (यथाख्यात एवं असंयम के बिना)
(४) सम्यक्त्व	- १ (सम्यग्मिथ्यात्व) प्रथमोपशम सम्यक्त्व भी आहारक के ही होता है।
(५) आहारक	- आहारक
(६) गुणस्थान	- ९ (पहले, दूसरे, चौथे, तेरहवें तथा चौदहवें के बिना)
(७) पर्याप्ति	- सभी पर्याप्तियाँ आहारक के ही होती हैं। (चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा अनाहारकावस्था में भी होती हैं।)
(८) प्राण	- मनोबल, वचनबल, श्वासोच्छ्वास
(९) उपयोग	- २ (विभंग तथा मन:पर्य.)
(१०)ध्यान	- ५ (२ धर्मध्यान तथा ३ शुक्लध्यान)
(११)आस्रव के प्रत्यय	- १४ योग सम्बन्धी (कार्मणकाययोग बिना)

१०.प्रश्न : कौन-कौन से जीव आहारक ही होते हैं ?

उत्तर : विग्रहगति स्थित जीव, प्रतर व लोकपूरण समुद्घात अवस्था प्राप्त सयोग केवली और अयोग केवली तथा सिद्ध भगवान के अतिरिक्त शेष जीव आहारक ही होते हैं। **(गो.सा.जी. ६६६)**

विग्रह गति को प्राप्त मिथ्यात्व, सासादन और अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानगत जीव तथा समुद्घातगत सयोग केवली इन चार गुणस्थानों में रहने वाले जीव और अयोग केवली तथा सिद्ध भगवान अनाहारक होते हैं, इनके बिना शेष जीव आहारक होते हैं। **(ध. १/४१०)**

जब यह जीव उपपाद क्षेत्र के प्रति ऋजुगति में रहता है, तब आहारक होता है। **(सर्वा. सि. २/३०)**

तालिका संख्या ६०

अनाहारक

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.च.पं.	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि १ त्रस	
४.	योग	१	कार्मण योग	शेष योग आहारक अवस्था में ही होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	६	२ कुज्ञान ४ ज्ञान	कुअवधि एवं मन:पर्यय ज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	२	यथाख्यात, असंयम	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अच.अव.केव.	
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य-अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	५	क्षा.क्षयो.उप.सा.मि.	सम्यग्मिथ्यात्व नहीं है।
१३.	संज्ञी	२	सैनी-असैनी	
१४.	आहार	१	स्वकीय	अनाहारक
१५.	गुणस्थान	५	प., दू., चौ. तेरहवाँ, चौदहवाँ	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्था. ५ त्रस	
१७.	पर्याप्ति	०	एक भी पर्याप्ति नहीं है।	पर्याप्ति का प्रारम्भ ही नहीं होता है।
१८.	प्राण	७	५ इन्द्रिय, १ बल, आयु	कायबल होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	६ ज्ञानो. ४ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ ध.	आदि के दो धर्म ध्यान होते हैं।
२२.	आस्रव	४३	५ मि.१२ अ.२५ क.१ यो.	कार्मण काययोग
२३.	जाति	८४ लाख	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : कौन-कौन से जीव अनाहारक ही होते हैं ?

उत्तर : अनाहारक जीव-

(१) विग्रहगति को प्राप्त मिथ्यादृष्टि, सासादन और अविरत सम्यग्दृष्टि।

(२) समुद्घातगत सयोग केवली (कार्मण काययोग के काल में)।

(३) चौदहवें गुणस्थानवर्ती भगवान। **(ध. १/४१२)**

२. प्रश्न : क्या अनाहारक जीव भी पर्याप्तक होते हैं ?

उत्तर : हाँ, चौदहवें गुणस्थानवर्ती पर्याप्त मनुष्य भी अनाहारक होते हैं, उसका कारण यह है कि अयोगकेवली भगवान के शरीर के निमित्तभूत आने वाले परमाणुओं का अभाव देखकर पर्याप्तक मनुष्य को भी अनाहारकपना बन जाता है। **(ध. १/५०३)**

३. प्रश्न : अनाहारक अवस्था के साथ वेद की प्ररूपणा किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : अनाहारक अवस्था में वेद प्ररूपणा-

स्त्रीवेद में प्रथम एवं दूसरे गुणस्थान के साथ ही अनाहारक अवस्था पाई जाती है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि स्त्रियों में उत्पन्न नहीं होता है।

नपुंसकवेदी में प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ गुणस्थान में अनाहारक अवस्था पाई जाती है। नपुंसक वेद के साथ चतुर्थ गुणस्थान में अनाहारक अवस्था मात्र प्रथम नरक में जाने वाले क्षायिक एवं कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा जानना चाहिए।

पुरुषवेद में प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ गुणस्थान में अनाहारक अवस्था पाई जाती है।

अवेदी जीवों के १३वें (समुद्घात की अपेक्षा) १४वें गुणस्थानवर्ती तथा सिद्ध भगवान के भी अनाहारक अवस्था पाई जाती है।

४. प्रश्न : अनाहारक जीवों के अवधिदर्शन किस-किस वेद के साथ होता है ?

उत्तर : अनाहारक जीवों के अवधिदर्शन दो वेदों के साथ होता है-

पुरुषवेद तथा नपुंसक वेद

पुरुषवेद - तीन गतियों की अपेक्षा (नरकगति को छोड़कर)

नपुंसकवेद - नरकगति की अपेक्षा (प्रथम नरक में)

जो आचार्य प्रथम गुणस्थान से अवधिदर्शन मानते हैं, उनकी अपेक्षा तीनों वेद बन जायेंगे।

५. प्रश्न : अनाहारक जीवों के किस सम्यक्त्व में कितने गुणस्थान होते हैं ?

उत्तर : अनाहारक जीवों के क्षायिक सम्यक्त्व में तीन गुणस्थान होते हैं-

चौथा, तेरहवाँ, चौदहवाँ।

शेष सम्यक्त्वों में केवल एक-एक गुणस्थान ही होता है।

प्रथमोपशम तथा सम्यग्मिथ्यात्व में अनाहारक अवस्था नहीं होती है।

६. प्रश्न : अनाहारक जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : अनाहारक जीवों के प्राण-

	अनाहारक जीव	प्राण (अधिक से अधिक)	कम से कम प्राण
(१)	प्रथम गुणस्थानवर्ती	७	३
(२)	द्वितीय गुणस्थानवर्ती	७	३/७
(३)	चतुर्थ गुणस्थानवर्ती	७	७
(४)	तेरहवें गुणस्थानवर्ती	२	२
(५)	चौदहवें गुणस्थानवर्ती	१	१

नोट : जो आचार्य एकेन्द्रिय जीव के द्वितीय गुणस्थान मानते हैं उनकी अपेक्षा दूसरे गुणस्थान में कम-से-कम तीन प्राण कहे गये हैं।

७. प्रश्न : अनाहारक जीवों के कितने ध्यान होते हैं ?

उत्तर : अनाहारक जीवों के ११ ध्यान होते हैं-

(१) ४ आर्त्तध्यान - प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ गुणस्थान की अपेक्षा

(२) ४ रौद्रध्यान - प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ गुणस्थान की अपेक्षा

(३) २ धर्मध्यान - चतुर्थ गुणस्थान की अपेक्षा

(४) १ शुक्लध्यान - चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा

८. प्रश्न : क्या कोई ऐसे जीव हैं जो अनाहारक होने के बाद कभी आहारक नहीं होंगे?

उत्तर : हाँ, चौदहवें गुणस्थान वाले अयोगी केवली भगवान जो अनाहारक ही हैं और भविष्य में भी कभी आहारक नहीं बनेंगे, क्योंकि मोक्ष प्राप्त करने के बाद जीव अनाहारक ही रहते हैं।

९. प्रश्न : क्या अनाहारक जीव आस्रव के प्रत्यय से रहित भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, चौदहवें गुणस्थानवाले अनाहारक जीव आस्रव रहित ही होते हैं, क्योंकि उनके आस्रव के कारणभूत कोई प्रत्यय नहीं पाये जाते हैं तथा सिद्ध भगवान भी आस्रव से रहित होते हैं।

- समुच्चय प्रश्नोत्तर -

१. प्रश्न : आहार मार्गणा में अवेदी जीवों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : आहार मार्गणा में अवेदी जीवों का विवेचन-

(१) नवमें गुणस्थानवर्ती जीव अवेद भाग में, दसवें, ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान वाले जीव आहारक ही होते हैं।

(२) तेरहवें गुणस्थान वाले आहारक-अनाहारक दोनों होते हैं।

(३) चौदहवें गुणस्थान वाले अनाहारक ही होते हैं।

(४) सिद्ध भगवान भी अनाहारक ही होते हैं।

२. प्रश्न : आहार मार्गणा में सम्यक्त्व मार्गणा का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : आहार मार्गणा में सम्यक्त्व मार्गणा-

सम्यक्त्व	**आहारक**	**अनाहारक**
क्षायिक सम्यक्त्व	चौथे से तेरहवाँ गुणस्थान।	चौथे, तेरहवें तथा चौदहवें गुणस्थान में
क्षायोपशमिक	चौथे से सातवाँ गुणस्थान।	चौथे गुणस्थान में
उपशम	चौथे से ग्यारहवाँ गुण.।	चौथे में (द्वितीयोपशम की अपेक्षा)
सासादन	दूसरा गुणस्थान	दूसरे गुणस्थान में
सम्यग्मिथ्यात्व	तीसरा गुणस्थान	अनाहारक नहीं होते हैं
मिथ्यात्व	पहला गुणस्थान	पहले गुणस्थान में

३. प्रश्न : आहार मार्गणा में कषायातीत जीवों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थानवर्ती कषायातीत जीव आहारक ही होते हैं ?

तेरहवें गुणस्थानवर्ती कषायातीत जीव आहारक-अनाहारक दोनों होते हैं।

चौदहवें गुणस्थानवर्ती एवं सिद्ध भगवान अनाहारक ही होते हैं।

४. प्रश्न : आहार मार्गणा में ध्यान की प्ररूपणा किस प्रकार करनी चाहिए ?

उत्तर : आहार मार्गणा में ध्यान की प्ररूपणा-

आहारक जीवों के १५ ध्यान होते हैं- ४ आर्त्तध्यान, ४ रौद्र ध्यान, ४ धर्मध्यान, ३ शुक्लध्यान।

अनाहारक जीवों के ११ ध्यान होते हैं- ४ आर्त्त, ४ रौद्र, २ धर्म, १ शुक्ल।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **वैक्रियिक शरीर के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण करना क्या है ?**

(अ) आहारक (ब) अनाहारक

(स) आहारक-अनाहारक दोनों (द) दोनों नहीं

(ii) **आहारक जीवों के कितने गुणस्थान पाये जाते हैं ?**

(अ) १३ (ब) १४

(स) ५ (द) ४

(iii) **अनाहारक जीवों के कौनसा गुणस्थान नहीं होता है ?**

(अ) चौदहवाँ (ब) तेरहवाँ

(स) तीसरा (द) चौथा

(iv) **चार घातिया कर्म से रहित जीव आहारक होते हैं या अनाहारक ?**

(अ) आहारक (ब) दोनों

(स) अनाहारक (द) कोई नहीं

(v) **आहारक-अनाहारक दोनों अवस्थाओं में कौनसे संयम होते हैं ?**

(अ) यथाख्यात, परिहारविशुद्धि (ब) सामायिक-छेदोपस्थापना

(स) असंयम-यथाख्यात (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) अनाहारक जीवों के कितने वेद होते हैं ?

(ii) आहारक जीवों के आस्रव के अधिक-से-अधिक कितने प्रत्यय होते हैं ?

(iii) अनाहारक अवस्था में कितने ज्ञान नहीं होते हैं ?

(iv) आहारक-अनाहारक दोनों अवस्थाओं में सम्यक्त्व मार्गणा के कितने भेद होते हैं ?

(v) अनाहारक अवस्था में तिर्यञ्चों के कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) अनाहारक जीवों के कम-से-कम सात प्राण होते हैं ?

(ii) अनाहारक अवस्था में आहारकमिश्र काययोग भी होता है।

(iii) अनाहारक जीव संज्ञातीत भी होते हैं।

(iv) आहारक अवस्था में पाँच संयम ही होते हैं।

(v) अनाहारक अवस्था में एकेन्द्रिय जीव ही होते हैं।

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) अनाहारक जीवों के............कषाय............योग तथा............ लेश्या होती है।

(ii) आहारक जीवों के............दर्शन............प्राण............ ध्यान होते हैं।

(iii) अनाहारक जीवों के संज्ञातीत अवस्था में............गुणस्थान तथा.........संयम होता है।

(iv) आहारक जीवों के अपगतवेदी अवस्था में............ज्ञान............ सम्यक्त्व होता है।

(v) अनाहारक जीवों के सासादन गुणस्थान में......... गति .... योग नहीं होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	आहारक भी है	-	आस्रव के ७ प्रत्यय
(ii)	प्रथमोपशम सम्यक्त्व	-	८४ लाख जाति
(iii)	आहारक केवली	-	सम्यग्मिथ्यात्व
(iv)	आहारक ही है	-	अयोगकेवली
(v)	द्वितीय गुणस्थान	-	आहारक ही हैं
(vi)	अनाहारक ही हैं	-	तीन गति
(vii)	कार्मण काययोग	-	आहारक-अनाहारक दोनों
(viii)	अनाहारक सासादन सम्यग्दृष्टि	-	अनाहारक ही हैं।

– उत्तरमाला –

१. (i) अ (ii) अ (iii) स (iv) ब (v) स

२. (i) ३ (ii) ५६ (iii) २ (iv) ५ (v) ३

३. (i) ना (ii) ना (iii) हाँ (iv) ना (v) ना

४. (i) २५, १, ६ (ii) ४, १०, १५ (iii) २, १ (iv) ५, २ (v) १, १४

५. (i) ८४ लाख जाति (ii) आहारक ही हैं। (iii) आस्रव के सात प्रत्यय
(iv) सम्यग्मिथ्यात्व (v) आहारक-अनाहारक दोनों (vi) अयोग केवली
(vii) अनाहारक ही हैं (viii) तीन गति।

१५. गुणस्थान

१. प्रश्न : गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : मोहनीय कर्म के उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम आदि अवस्थाओं के निमित्त से जीवों के जो परिणाम होते हैं, उन परिणामों को गुणस्थान कहते हैं। **(गो.जी. ८)**

मोह और योग के निमित्त से होने वाली जीव के दर्शन, ज्ञान, चारित्र गुण की अवस्था विशेष को गुणस्थान कहते हैं। **(गो. जी. ३)**

२. प्रश्न : मोह और योग किसे कहते हैं ?

उत्तर : **मोह** - मिथ्यात्व, राग-द्वेष को मोह कहते हैं।

योग - मन, वचन व काय के निमित्त से आत्मा के प्रदेशों के चंचल होने को योग कहते हैं।

३. प्रश्न : गुणस्थान कितने होते हैं ?

उत्तर : गुणस्थान चौदह होते हैं-

(१) मिथ्यात्व (२) सासादन (३) मिश्र (४) अविरत सम्यक्त्व (५) देशविरत

(६) प्रमत्तविरत (७) अप्रमत्तविरत (८) अपूर्वकरण (९) अनिवृत्तिकरण

(१०) सूक्ष्म-साम्पराय (११) उपशान्त मोह (१२) क्षीणमोह (१३) सयोग केवली

(१४) अयोग केवली।

(१) मिथ्यात्व/मिथ्यादृष्टि (२) सासादन सम्यग्दृष्टि (३) मिश्र (सम्यग्मिथ्यात्व)

(४) अविरत सम्यक्त्व (५) संयतासंयत (६) प्रमत्तसंयत (७) अप्रमत्तसंयत

(८) अपूर्वकरण-प्रविष्ट विशुद्धि संयत (क्षपक, उपशमक) (९) अनिवृत्तिकरण बादर प्रविष्ट शुद्धि संयत (क्षपक, उपशमक) (१०) सूक्ष्म साम्पराय प्रविष्ट शुद्धि संयत (क्षपक, उपशमक) (११) उपशान्त कषाय वीतराग छद्मस्थ (१२) क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ (१३) सयोग केवली जिन (१४) अयोग केवली जिन। **(ध. १/१६१-१९२)**

नोट : पहले, दूसरे तथा तीसरे गुणस्थान का वर्णन- देखें सम्यक्त्व मार्गणा।

४. प्रश्न : अविरत सम्यक्त्व गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो पाँचों इन्द्रियों के विषयों से विरत नहीं है और न त्रस तथा स्थावर जीवों के घात से ही विरक्त है किन्तु केवल जिनोक्त तत्त्व का श्रद्धान करता है वह चतुर्थ गुणस्थानवर्ती सम्यग्दृष्टि है। **(गो.जी. २९)** जिसकी दृष्टि श्रद्धा समीचीन होती है उसे सम्यग्दृष्टि कहते हैं और

संयम से रहित सम्यग्दृष्टि को असंयत सम्यग्दृष्टि कहते हैं। **(ध. १/१७२)**

नोट : संयतासंयत गुणस्थान देखें- संयममार्गणा।

५. प्रश्न : प्रमत्तसंयत किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो प्रमत्त होते हुए भी संयत होते हैं उन्हें प्रमत्तसंयत कहते हैं। **(ध. १/१७६)**

क्रोधादि संज्वलन कषाय और हास्यादि नोकषाय इनके उदय से उत्पन्न होने के कारण जिस संयत में मल को उत्पन्न करने वाला प्रमाद पाया जाता है वह प्रमत्तविरत कहलाता है। **(गो.जी. ३२)** प्रकर्ष रूप से मत्त जीवों को प्रमत्त कहते हैं। **(ध. १/१७७)**

६. प्रश्न : अप्रमत्त संयत किसे कहते हैं ?

उत्तर : संज्वलन और नौ नोकषाय के मन्द उदय से संयम भाव तथा प्रमाद रहित परिणाम को अप्रमत्तविरत गुणस्थान कहते हैं। **(गो.जी. ४५)**

संयत होते हुए जिनके पन्द्रह प्रकार का प्रमाद नहीं पाया जाता है उन्हें अप्रमत्त संयत समझना चाहिए। **(ध. १/१७९)**

७. प्रश्न : अपूर्वकरण गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिसमें जीवों के परिणाम अपूर्व-अपूर्व ही पाये जाते हैं उसे अपूर्वकरण गुणस्थान कहते हैं। **(ध. १/१८२)**

अपूर्व - जो पूर्व अर्थात् पहले नहीं हुए उन्हें अपूर्व कहते हैं।

करण - परिणाम। तात्पर्य यह है कि नाना जीवों की अपेक्षा आदि से लेकर प्रत्येक समय में क्रम से बढ़ते हुए असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम वाले इस गुणस्थान के अन्तर्गत विवक्षित समयवर्ती जीवों को छोड़कर अन्य समयवर्ती जीवों के द्वारा अप्राप्य परिणाम अपूर्व कहलाते हैं। अर्थात् विवक्षित समयवर्ती जीवों के परिणामों से भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम असमान अर्थात् विलक्षण ही होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक समय में होने वाले अपूर्व परिणामों को अपूर्वकरण कहते हैं। **(ध. १/१८१)**

८. प्रश्न : अनिवृत्तिकरण गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिन परिणामों की निवृत्ति अर्थात् व्यावृत्ति नहीं होती है उन्हें अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं। जिस कारण से भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम विसदृश ही हों और एक समयवर्ती जीवों के परिणाम सदृश ही हों उसे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं। **(गो.जी.)**

नोट : सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान- देखें संयम मार्गणा।

(चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा पूर्वार्द्ध में)

९. प्रश्न : उपशान्त कषाय गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जहाँ समस्त मोह का उपशम हो जाता है वह उपशान्त कषाय गुणस्थान कहलाता है **(रा.वा. ९/१)** चारित्र मोहनीय की इक्कीस प्रकृतियों के उपशम से और यथाख्यात चारित्र सहित जो परिणाम हो उसे उपशान्त मोह गुणस्थान कहते हैं।

निर्मली फल से युक्त निर्मल जल की तरह अथवा शरद् ऋतु में निर्मल होने वाले सरोवर के जल की तरह सम्पूर्ण कर्मों के उपशम से उत्पन्न होने वाले निर्मल परिणामों को उपशान्तकषाय गुणस्थान कहते हैं। **(ध. १/१९०)**

१०.प्रश्न : क्षीणकषाय गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जहाँ समस्त मोह का क्षय हो जाता है उसे क्षीणकषाय गुणस्थान कहते हैं। **(रा.वा.९/१)**

समस्त मोहनीय कर्म के क्षय से अत्यन्त निर्मल यथाख्यात चारित्र के परिणाम को क्षीणमोह गुणस्थान कहते हैं।

जिन्होंने सम्पूर्ण रूप से मोह का क्षय कर दिया है अतएव जिनका चित्त स्फटिक मणि के निर्मल भाजन में रखे हुए जल के समान निर्मल है। ऐसे निर्ग्रन्थ को वीतराग देव ने क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती कहा है। **(ध. १/१८१)**

११.प्रश्न : सयोग केवली गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो योग के साथ रहते हैं उन्हें सयोग कहते हैं इस तरह जो सयोग होते हुए केवली हैं उन्हें सयोग केवली कहते हैं। **(ध. १/१९२)** समस्त ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन तीनों को एक काल में सर्वथा निर्मूल करके मेघपटल से निकले हुए सूर्य के समान केवलज्ञान की किरणों से लोकालोक के प्रकाशक तेरहवें गुणस्थानवर्ती जिनभास्कर सयोगी जिन होते हैं। **(वृ.द्र.सं.टी. १३)**

१२.प्रश्न : अयोगकेवली गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर : जिन्होंने अठारह हजार शील के स्वामित्व को प्राप्त कर लिया है जिनके सम्पूर्ण कर्मों का आस्रव रुक गया है तथा नवीन कर्म-बन्धन से भी रहित हैं, उन्हें अयोगकेवली जिन कहते हैं। **(गो.जी. ६५)** योगरहित केवली का जो स्थान होता है, वह अयोग केवली गुणस्थान कहलाता है। **(ध. १/१९३)**

जिनके पुण्य और पाप के संजनक अर्थात् उत्पन्न करने वाले शुभ और अशुभ योग नहीं होते हैं वे अयोगि जिन कहलाते हैं जो कि अनुपम अनन्त गुणों से सहित होते हैं। **(पं.सं. प्रा. १/१००)**

मन, वचन और काय वर्गणा के अवलम्बन से कर्मों के ग्रहण करने में कारण जो आत्मा के प्रदेशों का परिस्पन्दन रूप योग है उससे रहित चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी जिन होते हैं। **(वृ.द्र.सं.टी. १३)**

१३. प्रश्न : जितने परिणाम होते हैं उतने ही गुणस्थान क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : नहीं, क्योंकि जितने परिणाम होते हैं, उतने ही गुणस्थान यदि माने जायें तो व्यवहार ही नहीं चल सकता है, इसलिए द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा नियत संख्या वाले ही गुणस्थान कहे गये हैं। **(ध. १/१८५-८६)**

१४. प्रश्न : कौन से गुणस्थान से चढ़कर अथवा गिरकर कहाँ-कहाँ जा सकता है ?

उत्तर : गुणस्थानों से चढ़ने और गिरने के क्रम की विवेचना :-

क्र.	गुणस्थानवर्ती	चढ़ने के गुणस्थान	गिरने के गुणस्थान	विशेष
१.	मिथ्यादृष्टि			
	अनादि मि.	चौथे, पाँचवें, सातवें में	–	प्रथमोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा जानना चाहिए।
	सादि मिथ्यादृ.	३, ४, ५, ७ में	–	
२.	सासादन स.दृ.	–	पहले में	–
३.	मिश्र	चौथे में	पहले में	–
४.	असंयत स.दृ.	पाँचवें तथा सातवें में	तीसरे, दूसरे, पहले में	उपशम-सम्यक्त्व की अपेक्षा तीनों में। क्षयोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा पहले तथा तीसरे में। क्षायिक-सम्यक्त्व की अपेक्षा नहीं गिरता है।
५.	संयतासंयत	सातवें में	चौ., ती., दू., प., में	
६.	प्रमत्त-संयत	सातवें में	पाँ. चौ. ती. दू. प. में	
७.	अप्रमत्तसंयत	आठवें में	छठे में	मरण की अपेक्षा चौथे में आ जाता है।
८.	अपूर्वकरण	नौवें में	सातवें में	मरण की अपेक्षा चौथे में आ जाता है।
९.	अनिवृत्तिकरण	दसवें में	आठवें में	,, ,, ,, ,, ,,
१०.	सूक्ष्मसाम्पराय	ग्यारहवें व बारहवें में	नौवें में	,, ,, ,, ,, ,,
११.	उपशांत कषाय-वीतराग छद्मस्थ	–	सूक्ष्म-साम्पराय में	मरण की अपेक्षा चौथे में आ जाता है।
१२.	क्षीणकषाय-वीतराग छद्मस्थ	तेरहवें में	–	–
१३.	सयोग केवली	चौदहवें में	–	
१४.	अयोग केवली	मोक्ष जाते हैं।	–	

(ध. १२ के आधार से)

तालिका संख्या ६१

अविरत सम्यग्दृष्टि

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न.ति.म.दे.	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	अनन्तानुबन्धी कषाय नहीं है।
७.	ज्ञान	३	मति. श्रुत. अव.	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ. नी. का. पी.प.शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक-अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	चौथा	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	६	३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१०	४ आ. ४ रौ. २ धर्म	आदि के दो धर्मध्यान होते हैं।
२२.	आस्रव	४६	१२ अवि. २१ क. १३ यो.	
२३.	जाति	२६ लाख	संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क	संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : चौथे गुणस्थान वालों को अविरत क्यों कहा गया है ?

उत्तर : चौथे गुणस्थान में इन्द्रिय विषयों का त्याग तथा हिंसादि पाँच पापों के त्याग रूप किसी भी प्रकार की विरति नहीं पाई जाती है इसलिए इसे अविरत कहा गया है।

२. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : अविरत सम्यग्दृष्टि तीन प्रकार के होते हैं-

(१) क्षायिक सम्यग्दृष्टि (२) वेदक/क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि (३) उपशम सम्यग्दृष्टि **(ध. १/१७२)**

इस गुणस्थान वाले अर्थात् चतुर्थ गुणस्थान वाले द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि भी होते हैं। **(गो.जी. ६९६)**

३. प्रश्न : चौथे गुणस्थान के अन्य क्या नाम हैं ?

उत्तर : चौथे गुणस्थान के कई नाम हैं-

अविरत सम्यग्दृष्टि, असंयत सम्यग्दृष्टि, असंयम, असंयत, अविरत।

अविरत सम्यग्दृष्टि : जो व्रतों से रहित सम्यग्दृष्टि हैं, वे अविरत सम्यग्दृष्टि हैं।

असंयत सम्यग्दृष्टि : जो संयम से रहित सम्यग्दृष्टि हैं, वे असंयत सम्यग्दृष्टि हैं।

यहाँ असंयम को अन्त्यदीपक समझना चाहिए, क्योंकि उसके आगे कोई असंयमी नहीं होता है और इसके पहले प्रथम गुणस्थान से चतुर्थ गुणस्थान तक असंयमी ही होते हैं। यहाँ सम्यग्दृष्टि पद आदि दीपक है, आगे के सभी जीव सम्यग्दृष्टि ही हैं। **(गो.जी.जी. २९)**

४. प्रश्न : चतुर्थ गुणस्थानवर्ती उपशम सम्यग्दृष्टि के कौन-कौन से योग हो सकते हैं ?

उत्तर : चतुर्थ गुणस्थानवर्ती द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के ११ योग होते हैं-

४ मनोयोग ४ वचनयोग तथा ३ काययोग (औदारिक, वैक्रियिकमिश्र, कार्मण काययोग)

यहाँ वैक्रियिकमिश्र तथा कार्मण काययोग वैमानिक देवों की अपेक्षा जानना चाहिए।

प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि के चतुर्थ गुणस्थान में १० योग होते हैं-

४ मनोयोग, ४ वचनयोग, २ काययोग (औदारिक एवं वैक्रियिक काययोग)

५. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के कार्मणकाययोग किस-किस गति में पाया जाता है ?

उत्तर : अविरत सम्यग्दृष्टि के कार्मणकाययोग चारों गतियों में पाया जाता है-

मनुष्यगति में - कर्मभूमि की अपेक्षा तथा बद्धायुष्क की अपेक्षा भोगभूमिया मनुष्यों के।

तिर्यञ्चगति में - बद्धायुष्क मनुष्य जब भोगभूमिया तिर्यञ्चों में उत्पन्न होते हैं।
देवगति में - सम्यग्दृष्टि मनुष्य-तिर्यञ्च जब स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं।
नरक गति में - बद्धायुष्क मनुष्य जब नरकगति में उत्पन्न होते हैं।

६. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के कार्मण-काययोग में किस वेद के साथ कौनसी गति होती है ?

उत्तर : अविरत-सम्यग्दृष्टि के कार्मण-काययोग में वेद एवं गति-

स्त्री वेद - (कोई भी गति नहीं)
पुरुष वेद - चारों गति
नपुंसक वेद - नरक गति

७. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

उत्तर : अविरत सम्यग्दृष्टि के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में छहों लेश्याएँ होती हैं-

कृष्णलेश्या - छठी तथा पाँचवीं पृथ्वी से जो कृष्ण लेश्या वाले अविरत सम्यग्दृष्टि जीव जब मनुष्यों में आते हैं तब उनके निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में वेदक सम्यक्त्व के साथ कृष्ण लेश्या पाई जाती है। **(ध. २/७५२)**

नील और कापोत लेश्या - प्रथमादि नरकों के सम्यग्दृष्टि जीव अपनी-अपनी योग्य लेश्या के साथ जब मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं तब निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में सम्यग्दृष्टियों के नील और कापोत लेश्या का अस्तित्व बन जाता है।

पीतादि शुभ लेश्याएँ - इसी प्रकार असंयत सम्यग्दृष्टि देव भी अपने-अपने योग्य पीत पद्म शुक्ल लेश्याओं के साथ मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्यों के अपर्याप्त काल में छहों लेश्याएँ बन जाती हैं। **(ध. २/५११)**

नोट : सम्यग्दृष्टि जीव तिर्यञ्चों में उत्पन्न नहीं होते हैं इसलिए यहाँ मनुष्य को ही ग्रहण किया है।

८. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किस अपेक्षा होता है ?

उत्तर : द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान से उपशान्त कषाय गुणस्थान पर्यन्त होता है, क्योंकि अप्रमत्त गुणस्थान में इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को उत्पन्न करके ऊपर उपशांतकषाय पर्यन्त जाकर नीचे उतरने पर असंयत सम्यग्दृष्टि पर्यन्त भी उसका अस्तित्व रहता है। **(गो.जी.जी. ६९६)**

अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्व इन सात प्रकृतियों का असंयतसम्यग्दृष्टि से अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तक इन चार गुणस्थानों में रहने वाला कोई भी जीव उपशम करने वाला होता है। **(ध. १/२११)**

९. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि सम्मूर्च्छन जीवों के कितने उपयोग होते हैं ?

उत्तर : चतुर्थ गुणस्थानवर्ती सम्मूर्च्छन जीवों के चार उपयोग होते हैं-

२ ज्ञानोपयोग - मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग।

२ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग।

अथवा : चतुर्थ गुणस्थानवर्ती सम्मूर्च्छन जीवों के छह उपयोग भी होते हैं।

३ ज्ञानोपयोग - मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञानोपयोग, अवधिज्ञानोपयोग।

३ दर्शनोपयोग - चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधिदर्शनोपयोग।

नोट : १. सम्मूर्च्छन जीवों के अवधिज्ञान एवं अवधिदर्शन नहीं हो सकता है तथा शेष उपयोग अन्य गुणस्थानों में ही होते हैं।

२. सम्मूर्च्छन जीवों के अवधिज्ञान होता है। **(ध. ५)**

१०. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के अनाहारक अवस्था में आस्रव के कम-से-कम कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : अविरत सम्यग्दृष्टि के अनाहारक अवस्था में आस्रव के कम-से-कम ३२ प्रत्यय होते हैं-

१२ अविरति १९ कषाय १ योग = ३२

नोट : १. ये आस्रव के प्रत्यय नारकियों के नपुंसक वेद की अपेक्षा अथवा अन्य गतियों में पुरुषवेद की अपेक्षा जानना चाहिए।

२. मात्र चौथे गुणस्थान की अपेक्षा कथन करने पर पुरुष तथा नपुंसक दोनों वेद होने से आस्रव के ३३ प्रत्यय होते हैं।

११. प्रश्न : अविरत सम्यग्दृष्टि के किस सम्यक्त्व के साथ सबसे कम आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : अविरत-सम्यग्दृष्टि के उपशम-सम्यक्त्व के साथ सबसे कम आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

१२ अविरति + २१ कषाय + १२ योग = ४५

क्षायोपशमिक एवं क्षायिक सम्यक्त्व के साथ एक औदारिक मिश्र सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय ज्यादा है।

यहाँ उपशम-सम्यक्त्व से तात्पर्य- प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम दोनों ही सम्यक्त्वों को ग्रहण करना है।

तालिका संख्या ६२

प्रमत्तसंयत

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ मनो. ४वचन ३ काय	आहारकद्विक एवं औदारिक काययोग हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	१३	४ क. ९ नोक.	संज्वलन चतुष्क है।
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अव.मन:पर्यय	३ कुज्ञान एवं केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	३	सामा. छेदो. परि.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	
१०.	लेश्या	३	पी.प.शु.	अशुभ लेश्याएँ नहीं हैं।
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	प्रमत्तसंयत/प्रमत्तविरत
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०/७	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	सात प्राण आहा.मिश्र काययोग की अपेक्षा कहे हैं।
१९.	संज्ञा	४	आ.भ.मै. परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	७	३ आर्त्त. ४ धर्म.	निदान आर्त्त ध्यान नहीं है।
२२.	आस्रव	२४	१३ क. ११ यो.	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान को प्रमत्तसंयत क्यों कहते हैं ?

उत्तर : जो व्यक्त (स्वसंवेद्य) और अव्यक्त (प्रत्यक्षज्ञानियों) ज्ञान के द्वारा जानने योग्य प्रमाद में वास करता है, जो सम्यक्त्व ज्ञानादि सम्पूर्ण गुणों से और व्रतों के रक्षण करने में समर्थ ऐसे शीलों से युक्त है, जो महाव्रती है और जिसका आचरण प्रमादमिश्रित है। अथवा चित्रल सारंग को कहते हैं इसलिए जिसका आचरण सारंग के समान शबलित (अनेक प्रकार का) है। **अथवा** चित्त में प्रमाद को उत्पन्न करने वाला जिसका आचरण है उसे प्रमत्तसंयत कहते हैं और इस गुणस्थान को प्रमत्तसंयत गुणस्थान कहते हैं। **(गो.जी. ३३)**

२. प्रश्न : प्रमाद किसे कहते हैं ?

उत्तर : आठ शुद्धियों तथा उत्तम क्षमादि दसलक्षण धर्मों में जो अनुत्साह है उसे सर्वज्ञदेव ने प्रमाद कहा है। **(त.सा. ५/१०)**

छठे गुणस्थान में व्रतों में संशय उत्पन्न करने वाली जो मन, वचन, काय की प्रवृत्ति है उसे प्रमाद कहते हैं, यह बन्ध का कारण है। **(म.पु. ६२/३०५)**

व्रतों में दोष वा मल उत्पन्न करने वाली मन, वचन, काय की प्रवृत्ति को प्रमाद कहते हैं। **(शा.पु. ४/११८)**

कषाय के भार से भारी होने को आलस्य का होना कहा है उसे प्रमाद कहते हैं। **(स.सा.क. १९०)**

अच्छे कार्यों के करने में आदर भाव का न होना यह प्रमाद है। **(रा.वा. ८/१)**

३. प्रश्न : प्रमाद कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : प्रमाद पन्द्रह प्रकार के होते हैं-

५ इन्द्रिय, ४ विकथा, ४ कषाय, १ निद्रा, १ स्नेह।

५ इन्द्रिय - स्पर्शन आदि इन्द्रियों सम्बन्धी।

४ विकथा - स्त्रीकथा, भोजनकथा, राजकथा, चोरकथा।

४ कषाय - क्रोध, मान, माया, लोभ।

१ निद्रा और १ स्नेह।

अथवा - प्रमाद पाँच प्रकार का होता है-

(१) विकथा (२) कषाय (३) इन्द्रिय विषयों में आसक्ति (५) निद्रा (५) प्रणय।

अथवा - (१) संक्लिष्ट हस्त कर्म (२) कुशीलानुवृत्ति (३) बाह्य शास्त्र (४) काव्य रचना और (५) समिति में उपयोग न देना। **(भ.आ.वि. ६१३)**

अथवा - प्रमाद के सैंतीस हजार पाँच सौ भेद होते हैं-

२५ विकथा, २५ कषाय, ५ इन्द्रिय एवं मन, पाँच निद्रा एवं मोह तथा प्रणय.......... इनको परस्पर गुणा करने पर ३७५०० भेद होते हैं। **(गो. जी. ४४)**

४. प्रश्न : **इन्द्रिय प्रमाद किसे कहते हैं ?**

उत्तर : पाँच इन्द्रियों के विषयों की आसक्ति से आत्मकल्याण के कार्य में आलस्य होना इन्द्रिय प्रमाद है। **(गो. जी. ३४)**

५. प्रश्न : **इन्द्रिय रूप प्रमाद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर : इन्द्रिय रूप प्रमाद पाँच प्रकार के होते हैं-

(१) स्पर्श सम्बन्धी हल्का-भारी, रूखा-चिकना, कड़ा-नरम तथा ठण्डा-गरम में रागादि भाव होना स्पर्शन इन्द्रिय प्रमाद है।

(२) खट्टे-मीठे, कड़वे-कषायले तथा चटपटे रसों में रागादि भाव होना रसना इन्द्रिय प्रमाद है।

(३) सुगन्ध तथा दुर्गंध में रागादि भाव होना घ्राण इन्द्रिय प्रमाद है।

(४) काला, पीला, सफेद, लाल तथा हरे वर्णों में रागादि भाव होना चक्षु इन्द्रिय प्रमाद है।

(५) सारंग आदि सात प्रकार के शब्दों में रागादि भाव होना कर्ण इन्द्रिय प्रमाद है। **(गो.जी.३४)**

६. प्रश्न : **विकथा प्रमाद किसे कहते हैं ?**

उत्तर : संयम विरुद्ध कथाओं को विकथा कहते हैं। **(गो.जी. ३४)**

स्त्री आदि की कथाओं में लगकर आत्मकल्याण के कार्यों में उत्साह नहीं होना विकथा प्रमाद है।

७. प्रश्न : **विकथाएँ कितनी होती हैं ?**

उत्तर : विकथाएँ चार होती हैं-

(१) स्त्रीकथा (२) राजकथा (३) चोर कथा (४) भक्त कथा।

(१) स्त्रीकथा (२) राजकथा (३) भोजनकथा (४) देश कथा।

(१) स्त्रीकथा - जिनके काम अतिवृद्धि को प्राप्त हुआ हो ऐसे कामी जनों के द्वारा की जाने वाली और सुनी जाने वाली, स्त्रियों के संयोग-वियोग जनित विविध वचन प्रपंच रचना है, वही स्त्रीकथा है।

स्त्रियों के अंग, हाव-भाव, वस्त्र और आभूषणादि का वर्णन करना-उसके नेत्र कमल के समान हैं, कटि सिंह के समान है, अत: वह बहुत सुन्दर रूपवती है- ऐसा वर्णन स्त्रीकथा है।

(२) **राजकथा** - राजाओं का युद्धहेतुक कथन राजकथा प्रपंच है।

अमुक राजा कायर है, हमारा राजा शूर है, अमुक राज्य में घोड़ा तथा हाथी बहुत अच्छे होते हैं, अमुक राज्य में सेना बहुत है, इत्यादि वर्णन करना राजकथा है।

(३) **चोरकथा** - चोरों का चोरप्रयोग कथन चोरकथाविधान है।

भक्तकथा - अतिगृद्धि को प्राप्त भोजन की प्रीति के द्वारा मैदा की पूरी और शक्कर, दही-शक्कर, मिसरी इत्यादि अनेक प्रकार के अशन-पान की प्रशंसा भक्तकथा या भोजनकथा है।

लड्डू, बरफी आदि पदार्थ खाने में अच्छे होते हैं, अमुक मनुष्य बहुत प्रीति से भक्षण करता है, मुझे भी ये अच्छे लगते हैं, अमुक मिष्ठान्न अमुक देश में बहुत अच्छा बनता है उसको मैं भी मंगाकर खाऊँगा। इस प्रकार खाने-पीने की कथा को भोजनकथा कहते हैं।

(४) **देशकथा** - दक्षिण देश में अन्न की उपज अधिक होती है, वहाँ के निवासी भी अधिक विलासी हैं। पूर्व देश में अनेक प्रकार के वस्त्र, गुड़, शक्कर-चावल आदि होते हैं। उत्तर देश के पुरुष शूर होते हैं। वहाँ गेहूँ अधिकतर उत्पन्न होते हैं। वहाँ कुमकुम, दाख, दाड़िम आदि सुगमता से मिलते हैं। पश्चिम देश में कोमल वस्त्र होते हैं, वहाँ जल निर्मल और स्वच्छ होता है, इत्यादि देशों का वर्णन करना सो देशकथा है।

८. प्रश्न : पच्चीस विकथाएँ कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर : स्त्रीकथा, धनकथा, भोजनकथा, नदी-पर्वत से घिरे हुए स्थान की कथा, केवल पर्वत से घिरे हुए स्थान की कथा, राजकथा, चोरकथा, देश-नगरकथा, खानि सम्बन्धी कथा, नटकथा, भाटकथा, मल्लकथा, कपट जीवी व्याध व जुआरी की कथा, हिंसकों की कथा, ये सब लौकिक कथा हैं। **(मू.आ. ८५५-५६)**

(१) स्त्रीकथा (२) अर्थकथा (३) भोजनकथा (४) राजकथा (५) चोरकथा (६) बैरकथा (७) परपाखण्डकथा (८) देशकथा (९) भाषाकथा (१०) गुणप्रतिबन्धकथा (११) देवीकथा (१२) निष्ठुर कथा (१३) परपैशुन्यकथा (१४) कन्दर्पकथा (१५) देश-काल के अनुचित कथा (१६) भण्ड (निर्लज्ज) कथा (१७) मूर्खकथा (१८) आत्मप्रशंसाकथा

(१९) परपरिवाद कथा (२०) परजुगुप्सा कथा (२१) परपीड़ा कथा (२२) कलहकथा (२३) परिग्रहकथा (२४) कृषि आदि आरम्भ कथा (२५) संगीत-वादित्रादिकथा। **(गो.जी.जी.४४)**

९. प्रश्न : कषाय प्रमाद किसे कहते हैं ?

उत्तर : क्रोधादि कषायों के वशीभूत होकर आत्मकल्याण के कार्यों में उत्साह नहीं होने को या आलस्य आने को कषाय प्रमाद कहते हैं।

क्रोधादि कषायों के विशेष वर्णन हेतु देखें- (कषाय मार्गणा) - **(चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मंजूषा पूर्वार्द्ध में)**

१०.प्रश्न : निद्रा प्रमाद किसे कहते हैं ?

उत्तर : निद्रा-प्रचला आदि दर्शनावरण कर्म के उदय से जो जाड्यावस्था होती है वह निद्रा प्रमाद है। **(गो.जी. ३४)**

११.प्रश्न : निद्रा प्रमाद कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर : निद्रा प्रमाद पाँच प्रकार का होता है-

(१) निद्रा (२) निद्रा-निद्रा (३) प्रचला (४) प्रचला-प्रचला (५) स्त्यानगृद्धि।

निद्रा - मद, खेद और परिश्रमजन्य थकावट को दूर करने के लिए नींद लेना निद्रा है।

निद्रानिद्रा- निद्रा की उत्तरोत्तर अर्थात् पुनः पुनः प्रवृत्ति होना निद्रा-निद्रा है। निद्रा के ऊपर जो प्रवर्तमान है अर्थात् जो दूसरों के द्वारा उठाये जाने पर भी नहीं उठता है, वह निद्रा-निद्रा है। **(क.वि.)**

प्रचला - जो शोक, श्रम और मद आदि के कारण उत्पन्न हुई है और जो बैठे हुए प्राणी के भी नेत्र गात्र की विक्रिया की सूचक है, ऐसी जो क्रिया आत्मा को चलायमान करती है वह प्रचला है।

प्रचलाप्रचला- प्रचला की पुनः पुनः प्रवृत्ति होना प्रचला-प्रचला है।

स्त्यानगृद्धि-जिसके निमित्त से स्वप्न में वीर्यविशेष का आविर्भाव होता है वह स्त्यानगृद्धि है।

१२.प्रश्न : स्नेह प्रमाद किसे कहते हैं ?

उत्तर : स्पर्शनादि पाँचों इन्द्रियों के विषयों में स्वच्छन्द रूप से प्रवृत्ति और स्नेह के वशीभूत होकर यह मेरा है, मैं इसका स्वामी हूँ इत्यादि दुराग्रह को स्नेह या प्रणय अथवा मोह कहते हैं।

ममत्व भाव होना, हँसी की तीव्रता होना स्नेह प्रमाद है। **(गो.जी. ३४)**

१३.प्रश्न : छठे गुणस्थान में प्रमाद किस कारण उत्पन्न होता है ?

उत्तर : चार संज्वलन कषाय एवं नव नोकषाय इन तेरह कषायों के तीव्र उदय से छठे गुणस्थान में प्रमाद उत्पन्न होता है।

१४.प्रश्न : छठे गुणस्थान को किस-किस नाम से कहा जाता है ?

उत्तर : छठे गुणस्थान के नाम-

(१) प्रमत्तसंयत (२) प्रमत्तविरत।

१५.प्रश्न : प्रमत्तसंयत और प्रमत्तविरत में क्या अन्तर है ?

उत्तर : प्रमत्त शब्द का अर्थ दोनों स्थानों पर एकसा है, लेकिन संयत का अर्थ समितियों के साथ अणुव्रतों और महाव्रतों का पालन करना है और विरत का अर्थ समितियों के बिना ही महाव्रत आदि का पालन करना है। **(ध. १४/१२)**

संयम निवृत्ति रूप होता है। विरति प्रवृत्ति रूप होती है। **(स.सि. ७/१ के आधार से)**

१६.प्रश्न : यदि छठे गुणस्थानवर्ती प्रमत्त हैं तो संयत नहीं हो सकते हैं, क्योंकि उनको अपने स्वरूप का संवेदन नहीं हो सकता है। यदि वे संयत हैं तो प्रमत्त नहीं हो सकते हैं, क्योंकि संयत भाव प्रमाद के अभाव रूप होता है ?

उत्तर : यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँच पापों से विरति भाव को संयम कहते हैं जो तीन गुप्ति और पाँच समितियों से अनुरक्षित है। वह संयम वास्तव में प्रमाद से नष्ट नहीं किया जा सकता है, क्योंकि प्रमाद से संयम में केवल मल की ही उत्पत्ति है। **(ध. १/१७७)**

१७.प्रश्न : ऐसा ही सूक्ष्म प्रमाद यहाँ विवक्षित है, यह कैसे जाना ?

उत्तर : छठे गुणस्थान में संयम का विनाश न होना अन्यथा बन नहीं सकता। वहाँ होने वाला स्वल्प कालवर्ती मन्दतम प्रमाद संयम का नाश भी नहीं करता है, क्योंकि सकल संयम का उत्कट रूप से प्रतिबन्ध करने वाले प्रत्याख्यानावरण के अभाव में संयम का नाश नहीं पाया जाता है। **(ध. १/१७७)**

१८.प्रश्न : प्रमत्तसंयम को चित्रलाचरण वाला क्यों कहा गया है ?

उत्तर : छठे गुणस्थान में सकल-चारित्रपना या महाव्रतपना अपने से नीचे वाले देशसंयम की अपेक्षा जानना चाहिए, अपने से ऊपर के गुणस्थान की अपेक्षा नहीं। इसलिए ही प्रमत्तसंयत को चित्रलाचरण कहा गया है। **(गो.जी.जी. ३३)**

१९.प्रश्न : छठे गुणस्थान में कितने योग होते हैं ?

उत्तर : छठे गुणस्थान में ९ योग अथवा ११ योग होते हैं-

९ योग - (४ मनो. ४ वचन १ औदारिक काययोग)

ये ९ योग सामान्य से जिनके आहारकद्विक नहीं हो सकता है ऐसे मन:पर्यय ज्ञान, परिहार विशुद्धि संयमधारी आदि मुनिराज के होते हैं।

जिनके आहारकद्विक काययोग होते हैं उनके ११ योग होते हैं।

२०.प्रश्न : छठे गुणस्थानवर्ती सात प्राण वालों के कितनी कषायें नहीं होती हैं ?

उत्तर : छठे गुणस्थानवर्ती सात प्राण वालों के १४ कषायें नहीं होती हैं।

चार अनंतानुबंधी - क्रोध, मान, माया, लोभ।

चार अप्रत्याख्यानावरण - क्रोध, मान, माया, लोभ।

चार प्रत्याख्यानावरण - क्रोध, मान, माया, लोभ।

२ नोकषाय - स्त्रीवेद, नपुंसक वेद

२१.प्रश्न : छठे गुणस्थानवर्ती स्त्रीवेदी के संयम मार्गणा के कितने भेद नहीं हो सकते हैं ?

उत्तर : छठे गुणस्थानवर्ती स्त्रीवेदी के पाँच संयम नहीं हो सकते हैं।

परिहार विशुद्धिसंयम, २. सूक्ष्म-साम्पराय संयम, ३. यथाख्यात संयम

४. संयमासंयम, ५. असंयम।

२२.प्रश्न : छठे गुणस्थानवर्ती भय संज्ञा वालों के कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : छठे गुणस्थानवर्ती भय संज्ञा वालों के १० और ७ प्राण होते हैं।

१० प्राण - पर्याप्तक की अपेक्षा।

७ प्राण - आहारकमिश्र काययोगी की अपेक्षा।

२३.प्रश्न : छठे गुणस्थान में आस्रव के ऐसे कौन से प्रत्यय हैं, जो और अन्य कहीं नहीं पाये जाते हैं ?

उत्तर : छठे गुणस्थान में आस्रव के ऐसे दो प्रत्यय हैं, जो और अन्य कहीं नहीं पाये जाते हैं। १. आहारक काययोग, २. आहारकमिश्र काययोग।

२४.प्रश्न : छठे गुणस्थान में आस्रव के प्रत्ययों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : छठे गुणस्थान में आस्रव के प्रत्ययों का विवेचन चार प्रकार से हो सकता है-

२४, २२, २०, १२

२४ आस्रव प्रत्यय - ४ कषाय (संज्वलन चतुष्क) ९ नोकषाय, ११ योग।

२२ आस्रव प्रत्यय - ४ कषाय ९ नोकषाय ९ योग।

२० आस्रव प्रत्यय - ४ कषाय ७ नोकषाय (स्त्री एवं नपुंसकवेद बिना) ९ योग।

१२ आस्रव प्रत्यय - ४ कषाय ७ नोकषाय १ योग (आहारक या आहारकमिश्र में से एक)।

४ म. ४ व. एवं औदारिक काययोग में भी स्वकीय योग को आस्रव का प्रत्यय मानने पर दो वेद रूप प्रत्यय बढ़ जाते हैं अत: उनके आस्रव के १४ प्रत्यय बनेंगे।

इसी प्रकार मार्गणा के अन्य उत्तर भेदों में भी लगा लेना चाहिए।

२५. प्रश्न : आस्रव के उपर्युक्त २० प्रत्यय किन-किन जीवों के होते हैं ?

उत्तर : वे जीव जिनके आस्रव के २० प्रत्यय होते हैं-

(१) मन:पर्यय ज्ञानी

(२) परिहार विशुद्धि संयमी

(३) तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाले मुनिराज (छठे गुणस्थानवर्ती)

(४) चक्रवर्ती तथा बलभद्र जब मुनि बन जाते हैं।

इन सबके एक पुरुष वेद ही होता है।

तीर्थंकर प्रकृतिबंध वालों के यद्यपि आहारकद्विक की क्षमता होती है लेकिन मेरे विचारों से उनके आहारकद्विक काययोग नहीं होता होगा, क्योंकि जब उनको देखकर मुनिराज की शंका का समाधान हो जाता है, वे कभी किसी को नमस्कार नहीं करते हैं तो उन्हें मुनि बनने के बाद कोई शंका कैसे उत्पन्न हो सकती है या किसी क्षेत्र आदि की वन्दना का विकल्प कैसे उत्पन्न हो सकता है?........। इसलिए उनके छठे गुणस्थान में आस्रव के २० प्रत्यय कहे गये हैं। चक्रवर्ती, बलभद्र आदि जिनके आहारकऋद्धि नहीं होती है उनकी अपेक्षा आस्रव के २० प्रत्यय बन जाते हैं।

नोट : आहारक व आहारकमिश्र काययोग में तीर्थंकर प्रकृति के बंध का जघन्य काल एक समय है। **(महा बंध. १/६५)**

इनके आस्रव के प्रत्यय यथायोग्य जानना चाहिए।

तालिका संख्या ६३

अप्रमत्त संयत

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मनो. ४वचन १ काय	औदारिककाययोग होता है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	१३	४ कषाय ९ नोक.	संज्वलन चतुष्क कषाय है।
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अवधि. मन:पर्यय.	कुज्ञान एवं केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	३	सा. छेदो. परि.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	
१०.	लेश्या	३	पी.प.शु.	अशुभ लेश्याएँ नहीं हैं।
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा.क्षायो.उप	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	अप्रमत्तसंयत
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.मन	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	३	भ.मै. परि.	आहार संज्ञा नहीं है।
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	४	धर्मध्यान	
२२.	आस्रव	२२	१३ क. ९ यो.	
२३.	जाति	१४ ला.	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : अप्रमत्तसंयत मुनिराज की क्या-क्या विशेषताएँ होती हैं ?

उत्तर : अप्रमत्तसंयत मुनिराज की विशेषताएँ-

(१) जो व्यक्त तथा अव्यक्त समस्त प्रकार के प्रमाद से रहित हैं,

(२) महाव्रत, मूलगुण तथा उत्तरगुण की माला से मण्डित हैं,

(३) स्व और पर के ज्ञान से युक्त हैं तथा

(४) कषायों के अनुपशामक तथा अक्षपक होते हुए भी ध्यान में लीन हैं।**(गो.जी. ४६)**

२. प्रश्न : अप्रमत्तसंयत कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर : अप्रमत्तसंयत दो प्रकार के होते हैं-

(१) स्वस्थान अप्रमत्तसंयत (२) सातिशय अप्रमत्तसंयत।

३. प्रश्न : स्वस्थान अप्रमत्तसंयत किसे कहते हैं ?

उत्तर : हजारों बार छठे से सातवें गुणस्थान तथा सातवें से छठे गुणस्थान में झूलने रूप परिणाम को स्वस्थान अप्रमत्त विरत गुणस्थान कहते हैं।

४. प्रश्न : सातिशय अप्रमत्तसंयत किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो उपशम वा क्षपक श्रेणी चढ़ने के सम्मुख हो उसे सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान कहते हैं।

सातवें गुणस्थान से उपशम श्रेणी पर आरूढ़ होने के अभिमुख होता है तब अध:करण अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में से अध:प्रवृत्तकरण को करता है उसको सातिशय अप्रमत्त कहते हैं। **(का.अ. ४८४ टी.)** जिस प्रकार प्रथमोपशम सम्यक्त्व के सम्मुख जीव सातिशय मिथ्यादृष्टि होता है उसी प्रकार जो अध:प्रवृत्तकरण अप्रमत्त संयत है वह सातिशय अप्रमत्त कहलाता है। **(ल.सा.जी. २२०)**

उपशम चारित्र के सम्मुख वेदक सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन करके अन्तर्मुहूर्त्त काल पर्यन्त अध:प्रवृत्त अप्रमत्त कहलाता है। **(ल.सा.जी. २१९)**

५. प्रश्न : श्रेणी किसे कहते हैं ?

उत्तर : जहाँ चारित्र मोहनीय कर्म की इक्कीस प्रकृतियों का उपशम या क्षय होता है उसे श्रेणी कहते हैं। **(रा.वा. ९/१८)**

६. प्रश्न : श्रेणी कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर : श्रेणी दो प्रकार की होती है-

(१) उपशम श्रेणी (२) क्षपक श्रेणी।

उपशम श्रेणी - जहाँ (चारित्र) मोहनीय कर्म का उपशम करते हुए जीव आगे बढ़ता है उसे उपशम श्रेणी कहते हैं।

क्षपक श्रेणी - जहाँ (चारित्र) मोहनीय कर्म का क्षय करते हुए आत्मा आगे बढ़ता है उसे क्षपक श्रेणी कहते हैं। **(रा.वा. २९९/१)**

७. प्रश्न : क्षपक श्रेणी कौन चढ़ता है ?

उत्तर : जिसने असंयतादिक ४ गुणस्थानों में से किसी एक में सात प्रकृतियों का क्षय किया है और देव, तिर्यंच और नरकायु का जिसके सत्त्व न हो और जिसके आयुबंध नहीं हुआ हो वही क्षपक श्रेणी माँडता है। **(गो.क.जी. ३३६)**

बद्धायुष्क जीवों का क्षपक श्रेणी पर आरोहण संभव नहीं है। **(ध. १२/४१२)**

क्षपक के क्षायिक भाव होता है, क्योंकि जिसने दर्शनमोहनीय का क्षय नहीं किया हो, वह क्षपक श्रेणी पर नहीं चढ़ सकता है। **(ध. १/१८२)**

८. प्रश्न : उपशम श्रेणी कौन चढ़ सकता है ?

उत्तर : उपशमक के उपशम और क्षायिक भाव होता है क्योंकि जिसने दर्शनमोहनीय का क्षय या उपशम नहीं किया है वह उपशम श्रेणी नहीं चढ़ सकता है। **(ध. १/१८२)**

९. प्रश्न : इन श्रेणियों में कौन-कौन सा गुणस्थान होता है ?

उत्तर : उपशम श्रेणी में चार गुणस्थान होते हैं-

८वाँ, ९वाँ, १०वाँ, ११वाँ।

क्षपक श्रेणी में भी चार गुणस्थान होते हैं-

८वाँ, ९ वाँ, १०वाँ, १२वाँ। **(रा.वा. ९/१ के आधार से)**

१०.प्रश्न : सातवें गुणस्थान में प्रमाद क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : सातवें गुणस्थान में क्रोधादि संज्वलन कषाय तथा हास्यादि नौ नोकषायों का मन्द उदय पाया जाता है इसलिए यह अप्रमत्त कहलाता है अर्थात् यहाँ संज्वलन चौकड़ी एवं हास्यादि नोकषायों के तीव्र उदय का अभाव होने से प्रमाद नहीं पाया जाता है। **(गो.जी. ४५ के आधार से)**

११.प्रश्न : अप्रमत्त गुणस्थान में विक्रिया ऋद्धि होती है तो उनके वैक्रियिक काययोग क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : अप्रमत्त गुणस्थान में विक्रिया ऋद्धि होने पर भी उनके वैक्रियिक काययोग नहीं होता है, क्योंकि- (१) वैक्रियिक काययोग के स्वामी देव और नारकी ही माने गये हैं। **(ध.१/२९९)**

(२) वैक्रियिक काययोग संज्ञी मिथ्यादृष्टि से लेकर असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक होता है। **(ध. १/३०५)**

१२.प्रश्न : अप्रमत्त गुणस्थान में आहारकद्विक काययोग क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : आप्त वचन में संदेहजनित शिथिलता के होने से उत्पन्न प्रमाद और असंयम की बहुलता से उत्पन्न प्रमाद आहारकशरीर की उत्पत्ति का निमित्त कारण है। अत: ये दोनों योग प्रमत्तविरत गुणस्थान में ही होते हैं। **(गो. जी. २३५)**

जो कार्य प्रमाद के निमित्त से उत्पन्न होता है, वह प्रमाद रहित जीव में नहीं होता है, अर्थात् ये दोनों योग अप्रमत्त गुणस्थान में नहीं होते हैं।

१३.प्रश्न : क्या ऐसे कोई अप्रमत्त संयत हैं जिनके केवल एक लेश्या ही होती है ?

उत्तर : हाँ, सप्तम गुणस्थानवर्ती अप्रमत्तसंयत मुनिराज जब श्रेणी के सम्मुख होते हैं तब उनके केवल एक शुक्ल लेश्या होती है।

१४.प्रश्न : क्या कोई ऐसे अप्रमत्तसंयत हैं जिनके क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन नहीं होता है ?

उत्तर : हाँ, सप्तम गुणस्थान वाले मुनिराज जब अध:प्रवृत्तकरण में प्रवेश करते हैं अर्थात् श्रेणी के सम्मुख होते हैं तब उनके क्षायोपशमिक सम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ श्रेणी नहीं चढ़ सकते हैं। यदि कोई क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि मुनिराज हैं तो वे द्वितीयोपशम या क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करके ही श्रेणी चढ़ते हैं।

१५.प्रश्न : क्या सप्तमगुणस्थानवर्ती मन:पर्ययज्ञानी मुनिराज भी दोनों सम्यक्त्वों से श्रेणी चढ सकते हैं ?

उत्तर : हाँ, सप्तमगुणस्थानवर्ती मन:पर्ययज्ञानी मुनिराज भी दोनों सम्यक्त्वों से श्रेणी चढ सकते हैं, क्योंकि मन:पर्यय ज्ञान का प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ विरोध है, द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के साथ नहीं।

१६.प्रश्न : अप्रमत्तसंयत मुनिराज के आहारसंज्ञा क्यों नहीं होती है ?

उत्तर : अप्रमत्तसंयत मुनिराज के असातावेदनीय कर्म की उदीरणा का अभाव हो जाने से आहारसंज्ञा नहीं होती है। किन्तु भय आदि संज्ञाओं के कारणभूत कर्मों का उदय सम्भव है इसलिए उपचार से भय, मैथुन और परिग्रह संज्ञाएँ होती हैं। **(ध. २/४३७)**

तालिका संख्या ६४

अपूर्वकरण

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मनो. ४व. १ का.	औदारिक काययोग होता है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	१३	४ कषाय ९ नोक.	
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अव.मनः	
८.	संयम	२	सामा. छेदो.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षा. उप	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	अपूर्वकरण
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	३	भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	शुक्ल	पृथक्त्व वितर्कवीचार शुक्ल ध्यान है।
२२.	आस्रव	२२	९ यो. १३ कषाय	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान को अपूर्वकरण गुणस्थान क्यों कहते हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान में यत: विभिन्न समयस्थित जीवों के पूर्व में अप्राप्त अपूर्व परिणाम होते हैं अत: इसे अपूर्वकरण गुणस्थान कहते हैं। **(गो.जी. ५२-५६)**

२. प्रश्न : अपूर्वकरण गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का उपशम/क्षय नहीं होता है फिर उन्हें क्षपक या उपशमक कैसे कह सकते हैं ?

उत्तर : यह सही है कि इस गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का उपशम या क्षय नहीं होता है, फिर भी आगे होने वाले उपशम या क्षय की दृष्टि से इस गुणस्थान में भी उपशमक और क्षपक व्यवहार घी के घड़े की तरह हो जाता है। **(रा.वा. ९/१)**

नहीं, क्योंकि भावी अर्थ में भूतकालीन अर्थ के समान उपचार कर लेने से आठवें गुणस्थान में क्षपक और उपशमक व्यवहार की सिद्धि हो जाती है और इस प्रकार मानने पर अतिप्रसंग दोष भी नहीं आता है, क्योंकि प्रतिबन्धक मरण के अभाव में नियम से चारित्रमोह का उपशम करने वाले तथा चारित्रमोह का क्षय करने वाले हैं, अतएव उपशमन व क्षय के सम्मुख हुए और उपचार से उपशमक या क्षपक संज्ञा को प्राप्त होने वाले जीवों के आठवें गुणस्थान में भी क्षपक या उपशमक संज्ञा बन जाती है। **(ध. १/१८१)**

क्षपक व उपशमक अपूर्वकरण के प्रथम समय से लगाकर थोड़े-थोड़े क्षपण व उपशमन रूप कार्य की निष्पत्ति देखी जाती है। यदि प्रत्येक समय कार्य की निष्पत्ति न हो तो अन्तिम समय में भी कार्य पूरा होता नहीं पाया जा सकता है। **(ध. ७/९३)**

३. प्रश्न : क्या सभी सम्यग्दृष्टि जीव आठवाँ गुणस्थान प्राप्त कर सकते हैं ?

उत्तर : नहीं, सभी सम्यग्दृष्टि जीव आठवाँ गुणस्थान प्राप्त नहीं कर सकते हैं। आठवाँ गुणस्थान प्राप्त करने के लिए कुछ विशेषताएँ होना आवश्यक है।

आठवाँ गुणस्थान प्राप्त करने के लिए विशेषताएँ-

१. आठवाँ गुणस्थान द्वितीयोपशम व क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही प्राप्त कर सकते हैं।

२. जिसने तीन आयु (नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य) का बन्ध नहीं किया है।

३. जिन्होंने देवायु का भी बन्ध कर लिया है वे अष्टमगुणस्थानवर्ती क्षपक नहीं बन सकते हैं।

४. उपशम सम्यग्दृष्टि अष्टमगुणस्थानवर्ती क्षपक नहीं बन सकते हैं।

५. वज्रवृषभनाराच संहनन वाले ही क्षपक बन सकते हैं किन्तु तीन उत्तमसंहनन वाले उपशमक बन सकते हैं।

६. तीन हीन संहनन वाले न उपशमक बन सकते हैं, न क्षपक।

७. कर्मभूमिया मनुष्य ही योग्य काल में उपशमक और क्षपक बनते हैं।

४. प्रश्न : **आठवें गुणस्थान में चारित्रमोह का उपशम या क्षय नहीं होता है तो क्या कार्य होते हैं ?**

उत्तर : आठवें गुणस्थान में भले ही मोह का उपशम या क्षय न हो, लेकिन वहाँ अनेक विशेष कार्य होते हैं-

१. प्रतिसमय अनन्तगुणी विशुद्धि बढ़ती है।

२. स्थितिकाण्डकघात होते हैं।

३. हजारों अनुभाग काण्डकघात होते हैं।

४. स्थितिबन्धापसरण होते हैं।

५. गुणश्रेणी निर्जरा होती है।

६. गुणसंक्रमण होता है। **(ल. सा.)**

५. प्रश्न : **स्थितिकाण्डकादि किसे कहते हैं ?**

उत्तर : **स्थितिकाण्डकघात** - सत्ता में स्थित कर्मों की स्थिति का समूह-समूह रूप से घात करना।

अनुभाग काण्डकघात - प्रारम्भ किये गये प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त काल के द्वारा जो घात निष्पन्न होता है उसे अनुभाग काण्डकघात कहते हैं। एक एक स्थितिकाण्डककाल में हजारों अनुभागकाण्डक होते हैं।

स्थितिबन्धापसरण - आगे बँधने वाले कर्मों की स्थिति को कम-कम करके बाँधना।

गुणश्रेणी - 'गुण' शब्द का अर्थ गुणकार है। श्रेणी का अर्थ आवली या पंक्ति है **(ध. १२/८०)** अर्थात् गुणकार रूप से पंक्ति का नाम गुणश्रेणी है।

जब तक अपकृष्ट द्रव्य सूक्ष्म से लेकर असंख्यात गुणा क्रम लिये अवस्थितादि आयाम में दिया जाता है उसका नाम गुणश्रेणी है। **(क्ष.सा. ५८३)**

गुणसंक्रमण - बन्ध रहित अप्रशस्त प्रकृतियों के द्रव्य का प्रतिसमय असंख्यात गुणित क्रम से संक्रमण होना गुणसंक्रमण है।

प्रत्येक समय असंख्यात गुणश्रेणी के द्वारा जो प्रदेश संक्रम (अन्य प्रकृति रूप परिणमन) होता है वह गुणसंक्रम कहलाता है।

६. प्रश्न : **करण किसे कहते हैं ?**

उत्तर : करण शब्द का अर्थ परिणाम है। **(ध. १/१८०)**

परिणामों की करणसंज्ञा कैसे हुई यह भी कोई दोष नहीं है, क्योंकि असि (तलवार) और वासि (वसूला) के समान साधकतम भाव की विवक्षा में परिणामों के करणपना पाया जाता है। **(ध. ६/२१७)**

अर्थात् इन परिणामों से मोहनीय कर्म का क्षय तथा उपशम होता है इसलिए इन्हें करण कहा गया है।

७. प्रश्न : **आठवें आदि गुणस्थानवर्ती संयतों का अप्रमत्त गुणस्थान में अन्तर्भाव हो जाता है इसलिए शेष गुणस्थानों का अभाव हो जायेगा ?**

उत्तर : ऐसा नहीं है, क्योंकि जो आगे चलकर प्राप्त होने वाले अपूर्वकरण आदि विशेषणों से युक्त नहीं होते हैं और जिनका प्रमाद नष्ट हो गया है, ऐसे संयतों का ही यहाँ पर ग्रहण किया गया है, इसलिए आगे के समस्त गुणस्थानों का इसमें अन्तर्भाव नहीं होता है। **(ध. १/१८०)**

८. प्रश्न : **आठवें गुणस्थानवर्ती स्त्रीवेदी के ज्ञान मार्गणा के कौन-कौन से भेद नहीं हो सकते हैं ?**

उत्तर : आठवें गुणस्थानवर्ती स्त्रीवेदी के पाँच ज्ञान नहीं होते हैं-

१. कुमतिज्ञान, २. कुश्रुतज्ञान, ३. कुअवधिज्ञान, ४. मन:पर्ययज्ञान, ५. केवलज्ञान।

क्योंकि कुमति आदि तीन कुज्ञान प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थान में होते हैं, मन:पर्ययज्ञान पुरुषवेदी तथा केवलज्ञान अवेदी जीवों के होता है।

नोट : इसी प्रकार नपुंसक वेदी के भी जानना चाहिए।

९. प्रश्न : **आठवें गुणस्थानवर्ती मन:पर्ययज्ञानी के कितने दर्शन होते हैं ?**

उत्तर : आठवें गुणस्थानवर्ती मन:पर्ययज्ञानी के अधिक-से-अधिक तीन दर्शन होते हैं-

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन।

तथा कम-से-कम दो दर्शन होते हैं- चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन।

तालिका संख्या ६५

अनिवृत्तिकरण

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मनो. ४व. १ का.	औदारिक काययोग
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	अवेदी जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	७	४ कषाय ३ नोक.	
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अव. मन:पर्यय	
८.	संयम	२	सामा. छेदो.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	१	शुक्ल लेश्या	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षा. उप.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	अनिवृत्तिकरण
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	२	मै. परि.	आहार और भय संज्ञा नहीं हैं।
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१	शुक्ल ध्यान	पृथक्त्ववितर्कवीचार
२२.	आस्रव	१६	७ क. ९ यो.	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान को अनिवृत्तिकरण बादर साम्पराय प्रविष्ट शुद्धि संयत क्यों कहते हैं ?

उत्तर : अनिवृत्ति समान समयवर्ती जीवों के परिणामों की भेद रहित वृत्ति को निवृत्ति कहते हैं। अथवा - निवृत्ति का अर्थ व्यावृत्ति होता है, जहाँ परिणामों की निवृत्ति/व्यावृत्ति नहीं होती है वह अनिवृत्ति है।

बादर - स्थूल, साम्पराय-कषाय अर्थात् स्थूल कषाय को बादर साम्पराय कहते हैं।

इन अनिवृत्ति बादर साम्पराय रूप परिणामों में जिन संयतों की विशुद्धि प्रविष्ट हो गई है उन्हें अनिवृत्ति बादर साम्पराय प्रविष्ट शुद्धि संयत गुणस्थान कहा गया है। **(ध. १/१८५)**

२. प्रश्न : इस गुणस्थान में 'बादर' पद क्यों दिया है ?

उत्तर : सूत्र (इस गुणस्थान) में जो बादर पद का ग्रहण किया है, वह अन्तदीपक होने से पूर्ववर्ती समस्त गुणस्थान बादर कषाय हैं इस बात का ज्ञान कराने के लिए ग्रहण किया है ऐसा समझना चाहिए, क्योंकि जहाँ पर विशेषण संभव हो और न देने पर व्यभिचार आता हो, ऐसी जगह दिया गया विशेषण सार्थक है, ऐसा न्याय है। **(ध. १/१८६)**

३. प्रश्न : नौवें गुणस्थान में सामायिक तथा छेदोपस्थापना संयम कैसे सम्भव है ?

उत्तर : कर्मों के विनाश करने की अपेक्षा प्रति समय असंख्यातगुणी श्रेणी रूप से कर्मनिर्जरा की अपेक्षा सम्पूर्ण पापक्रिया के निरोध रूप संयम नौवें गुणस्थान में पाया जाता है। वह संयम सम्पूर्ण व्रतों को सामान्य की अपेक्षा एक मानकर एक यम को ग्रहण करने वाला होने से सामायिक संयम द्रव्यार्थिक नय रूप है और उसी एक व्रत रूप संयम को पाँच अथवा अनेक भेद करके धारण करने वाला होने से छेदोपस्थापना संयम पर्यायार्थिक नय रूप है। **(ध.१/३७२)**

४. प्रश्न : क्या इसी प्रकार सामायिक-छेदोपस्थापना संयम से रहित भी नवमा गुणस्थान हो जाता है ?

उत्तर : नहीं, सामायिक-छेदोपस्थापना संयम से रहित नवमा गुणस्थान नहीं हो सकता है, क्योंकि इन दोनों संयमों में बादर संज्वलन चतुष्क का उदय रहता है। नौवें गुणस्थान के अन्त तक बादर कषाय का उदय रहता है इसलिए इस गुणस्थान के अन्त तक सामायिक-छेदोपस्थापना संयम पाये जाते हैं।

५. प्रश्न : क्या पूरे नवम गुणस्थान में मैथुन संज्ञा पाई जाती है ?

उत्तर : नहीं, जब तक तीनों वेदों की उदय व्युच्छित्ति नहीं हो जाती तब तक इस गुणस्थान में

मैथुन संज्ञा पाई जाती है। उसके बाद तो यह गुणस्थान भी वेद रहित ही माना गया है अर्थात् तीन भागों के बाद यह गुणस्थान अवेद भाव रूप हो जाता है।

६. प्रश्न : इस गुणस्थान में मैथुन संज्ञा कब नष्ट होती है ?

उत्तर : नवमें गुणस्थान में अन्तरकरण करने के अनन्तर अन्तर्मुहूर्त जाकर वेद का उदय नष्ट हो जाता है इसलिए अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के चतुर्थभागवर्ती जीवों के मैथुन संज्ञा नहीं रहती है। **(ध. २/४३६)**

७. प्रश्न : इस गुणस्थान में भय संज्ञा क्यों नहीं पाई जाती है ?

उत्तर : इस गुणस्थान में भय संज्ञा की कारणभूत भय कषाय का उदय एवं उदीरणा नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि भय कषाय की उदय-व्युच्छित्ति आठवें गुणस्थान में ही हो जाती है इसलिए यहाँ भय संज्ञा नहीं पाई जाती है। **(गो.क. के आधार से)**

८. प्रश्न : इस गुणस्थान में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान में आस्रव के प्रत्यय-

१६, १५, १४, १३, १२, ११ तथा १०।

१६ प्रत्यय - ७ कषाय ९ योग (४ संज्वलन ३ वे. ४ म. ४ व. १ का.)

१५ प्रत्यय - ६ कषाय ९ योग (एक वेद का अभाव होने पर)

१४ प्रत्यय - ५ कषाय ९ योग (दो वेद का अभाव होने पर)

१३ प्रत्यय - ४ कषाय ९ योग (अवेद अवस्था में)

१२ प्रत्यय - ३ कषाय ९ योग (क्रोध का अभाव होने पर)

११ प्रत्यय - २ कषाय ९ योग (मान का अभाव होने पर)

१० प्रत्यय - १ कषाय ९ योग (माया का अभाव होने पर)

नोट : दसवाँ गुणस्थान देखें- सूक्ष्मसाम्पराय संयम। **(ध. ८/२३)**

९. प्रश्न : दसवें गुणस्थान को सूक्ष्मसाम्पराय प्रविष्ट शुद्धि संयत क्यों कहते हैं ?

उत्तर : **सूक्ष्म साम्पराय -** जिनकी कषाय सूक्ष्म हो गई है उन्हें सूक्ष्म साम्पराय कहते हैं।

शुद्धिसंयत - जो संयत विशुद्धि को प्राप्त हो गये हैं उन्हें शुद्धि संयत कहते हैं। जो सूक्ष्म कषाय वाले होते हुए शुद्धि प्राप्त संयत हैं उन्हें सूक्ष्मसाम्पराय संयत कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि सामायिक या छेदोपस्थापना संयम को धारण करने वाले साधु जब अत्यन्त सूक्ष्म कषाय वाले हो जाते हैं तब वे सूक्ष्मसाम्पराय शुद्धि संयत कहे जाते हैं। **(ध. १/३७३)**

तालिका संख्या ६६

उपशान्त कषाय

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मनो. ४व. १ का.	औदारिक काययोग है।
५.	वेद	०	–	
६.	कषाय	०	–	
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अवधि मन:पर्यय	
८.	संयम	१	यथाख्यात	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षा. उप.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थ
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	०	–	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	शुक्ल ध्यान	
२२.	आस्रव	९	४ म. ४ व. १ का.	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान के क्या-क्या नाम हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान को उपशान्त कषाय, उपशांत मोह और उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थ भी कहते हैं।

२. प्रश्न : इस गुणस्थान को उपशांत कषाय वीतराग छद्मस्थ क्यों कहते हैं ?

उत्तर : **उपशान्त कषाय** - जिनकी सकल कषायें उपशान्त हो गयी हैं उन्हें उपशान्त कषाय कहते हैं।

वीतराग - जिनका राग नष्ट हो गया है। (जहाँ राग-द्वेष भाव नहीं है) उन्हें वीतराग कहते हैं।

छद्मस्थ - छद्म-ज्ञानावरण, दर्शनावरण को कहते हैं और उनमें जो रहते हैं उन्हें छद्मस्थ कहते हैं।

इसलिए इस गुणस्थान को उपशांत कषाय वीतराग छद्मस्थ कहते हैं। **(ध. १/१८९)**

३. प्रश्न : छद्मस्थ किसे कहते हैं ?

उत्तर : छद्म शब्द से ज्ञानावरण और दर्शनावरण ये कहे जाते हैं, उसमें जो रहते हैं, वे छद्मस्थ हैं **(वृ.द्र.सं.-४४)** अर्थात् जिस घातिकर्म समूह के कारण जीव चारों गतियों में संसरण करते हैं वह घातिकर्म समूह संसार है और इसमें रहने वाले जीव संसारस्थ या छद्मस्थ हैं। **(ध.१३/१४)**

छद्मस्थ चार प्रकार के होते हैं।

१. सम्यक्त्व से रहित छद्मस्थ, जिनके प्रथम, दूसरा और तीसरा गुणस्थान होता है।

२. सराग छद्मस्थ - जिनके चौथे से दसवाँ गुणस्थान तक होता है।

३. वीतराग छद्मस्थ - जो ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज हैं।

४. कृतकृत्य छद्मस्थ - बारहवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के अन्तिम काण्डक के पतित होने पर, उनको कृतकृत्य छद्मस्थ कहा जाता है। जैसा कि श्री **क्षपणासार** में कहा है-

चरिमेखण्डे पडिदेकदकरणिज्जोत्ति भण्णदे ऐसा।।२१२।।

४. प्रश्न : इस गुणस्थानवर्ती को अकषायी क्यों कहा है ?

उत्तर : उपशान्त कषाय गुणस्थानवर्ती जीवों के कषाय के उदय के अभाव की अपेक्षा उनमें कषायों से रहितपना अर्थात् अकषाय भाव बन जाता है और इसी अपेक्षा से उन्हें अकषायी कहा जाता है। **(ध. १/३५४)**

५. प्रश्न : ग्यारहवें गुणस्थान में केवलदर्शन क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : ग्यारहवें गुणस्थान वाले वीतरागी हैं फिर भी उनके केवलदर्शन का विरोधी कारण दर्शनावरण कर्म का उदय पाया जाता है, इसलिए उनके केवलदर्शन नहीं होता है। दर्शनावरण कर्म के निर्मूल नाश होने पर ही केवलदर्शन होता है। **(ज.ध. १/३५९ के आधार से)**

६. प्रश्न : उपशांत कषाय गुणस्थान तो मोहनीय कर्म के उपशम से होता है, फिर वहाँ क्षायिक सम्यक्त्व कैसे हो सकता है ?

उत्तर : चारित्र मोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों का उपशम होने पर उपशान्त कषाय गुणस्थान उत्पन्न होता है और क्षायिक सम्यक्त्व दर्शनमोहनीय की मिथ्यात्वादि तीन प्रकृतियों तथा चार अनन्तानुबन्धी के क्षय से होता है अर्थात् ग्यारहवाँ गुणस्थान चारित्रमोह की अपेक्षा से होता है। इसलिए यहाँ क्षायिक सम्यक्त्व होने में कोई बाधा नहीं है।

७. प्रश्न : क्या ग्यारहवें गुणस्थान में प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम दोनों सम्यक्त्व होते हैं?

उत्तर : नहीं, ग्यारहवें गुणस्थान में दोनों उपशम सम्यक्त्व नहीं होते हैं-

१. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व वाला ही श्रेणी आरोहण करता है, क्योंकि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को अप्रमत्त संयत गुणस्थान में उत्पन्न करके ऊपर उपशान्त कषाय गुणस्थान तक जाकर फिर नीचे उतरते हुए असंयत गुणस्थान तक आता है। **(गो.जी.जी. ६९६)**

२. उपशम श्रेणी चढने वाले वेदक सम्यग्दृष्टि जीव यद्यपि उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाले होते हैं किन्तु उस सम्यक्त्व का प्रथमोपशम सम्यक्त्व यह नाम नहीं है। **(ध. ६/२०६)**

३. प्रथमोपशम सम्यक्त्व चौथे से सातवें गुणस्थान तक होता है। **(गो.जी. भाषा ६९५)**

४. प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अल्पकाल में श्रेणी चढना संभव नहीं है।

आदि कारणों से सिद्ध है कि उपशम श्रेणी वालों के ८वें से ११वें गुणस्थान तक द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होता है प्रथमोपशम नहीं होता।

८. प्रश्न : इस गुणस्थान में कितने ज्ञानोपयोग नहीं होते हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान में ४ ज्ञानोपयोग नहीं होते हैं-

कुमतिज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग, कुअवधिज्ञानोपयोग तथा केवलज्ञानोपयोग।

९. प्रश्न : इस गुणस्थान में कितने ध्यान होते हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान में केवल पृथक्त्ववितर्कवीचार ध्यान ही होता है, ऐसा कोई नियम नहीं है। अर्थात् इस गुणस्थान में एकत्ववितर्क अवीचार ध्यान भी होता है। एकत्ववितर्कअवीचार ध्यान को अप्रतिपाती नहीं कहा है, क्योंकि उपशान्तकषायी जीव भवक्षय या कालक्षय के निमित्त से पुन: कषायों को प्राप्त होते हैं। उस समय एकत्ववितर्क अवीचार ध्यान का प्रतिपात देखा जाता है। यदि यह ध्यान मात्र क्षीणकषाय जीव को ही होता तो उसका प्रतिपात नहीं होता। इस प्रकार इस गुणस्थान में पृथक्त्ववितर्कवीचार एवं एकत्ववितर्क अवीचार दोनों ध्यान होते हैं। **(ध. १३/८१)**

१०. प्रश्न : भवक्षय एवं कालक्षय का क्या अर्थ है ?

उत्तर : **भवक्षय -** आयु का समाप्त हो जाना।

कालक्षय - गुणस्थान का काल समाप्त हो जाना।

तालिका संख्या ६७

क्षीणकषाय

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ मनो. ४ वचन. १ काय.	औदारिक काययोग
५.	वेद	०	-	
६.	कषाय	०	-	
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अवधि. मन:पर्यय.	
८.	संयम	१	यथाख्यात	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि.	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	क्षायिक	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय, ३बल, श्वा. आ.	
१९.	संज्ञा	०	–	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो	
२१.	ध्यान	२	शुक्ल	पहला और दूसरा
२२.	आस्रव	९	४ म. ४ व. १ का.	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. **प्रश्न : इस गुणस्थान के क्या-क्या नाम हैं ?**

उत्तर : इस गुणस्थान के नाम-

१. क्षीणकषाय गुणस्थान, २. क्षीणकषायवीतराग छद्मस्थ। ३. क्षीणमोह

२. **प्रश्न : क्षीणकषायवीतराग छद्मस्थ गुणस्थान किसे कहते हैं ?**

उत्तर : क्षीणकषाय - जिनकी कषायें क्षीण हो गई हैं वे क्षीणकषाय हैं।

जो क्षीणकषाय होते हुए वीतराग होते हैं वे क्षीणकषाय वीतराग कहलाते हैं।

छद्मस्थ - जो छद्म (ज्ञानावरण, दर्शनावरण) में स्थित हैं वे छद्मस्थ हैं।

जो क्षीणकषाय वीतराग होते हुए छद्मस्थ होते हैं वे क्षीणकषाय वीतरागछद्मस्थ कहलाते हैं। **(ध. १/१९०-९१)**

३. **प्रश्न : बारहवें गुणस्थान तक असत्य एवं उभय मन-वचन योग कैसे घटित होते हैं ?**

उत्तर : इन चारों अर्थात् असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचन योग इनका मूल कारण आवरणकर्म है। आवरणकर्म से युक्त जीवों के विपर्ययज्ञान और अनध्यवसाय के कारणभूत मन का सद्भाव होने से असत्य एवं उभय मनोयोग घटित हो जाते हैं। **(गो.जी.२२७)**

४. **प्रश्न : इस गुणस्थान में वीतराग हैं तो उनके केवलज्ञान क्यों नहीं कहा है ?**

उत्तर : बारहवें गुणस्थान में यद्यपि वीतराग हैं, एक अन्तर्मुहूर्त के पश्चात् निश्चित रूप से उन्हें केवलज्ञान होगा, फिर भी यहाँ केवलज्ञान के बाधक कारण ज्ञानावरणादि घातिया कर्म का उदय पाया जाता है। कहा भी है- **मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् (त.सू. १०/१)।** इसलिए यहाँ केवलज्ञान नहीं होता है।

नोट : इसी प्रकार ग्यारहवें गुणस्थान में भी बाधक कारणों का सद्भाव होने से केवलज्ञान नहीं होता है।

५. **प्रश्न : क्या ऐसे भी कोई क्षीणकषाय वाले जीव हैं जिनके अवधि और मन:पर्ययज्ञान नहीं हों ?**

उत्तर : हाँ, ऐसे भी क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीव हो सकते हैं, जिनके अवधि और मन:पर्ययज्ञान नहीं हो। क्योंकि अवधिज्ञान या मन:पर्ययज्ञान प्राप्त किये बिना भी केवलज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। कहा भी है- ज्ञान की अपेक्षा कोई एक ज्ञान से, कोई दो ज्ञान से, कोई तीन ज्ञान से और कोई चार ज्ञान विशेष से सिद्धावस्था प्राप्त करते हैं। प्रत्युत्पन्न नय की अपेक्षा एक केवलज्ञान से ही सिद्धि होती है। भूत प्रज्ञापन नय की दृष्टि से मति, श्रुत इन दोनों से; मति, श्रुत, अवधि इन तीनों से या मति, श्रुत, मन:पर्यय इन तीन ज्ञानों

से तथा मति, श्रुत, अवधि और मन:पर्यय इन चार ज्ञानों से सिद्धि होती है। **(रा.वा. १०/९)**

६. प्रश्न : **इस गुणस्थान में यथाख्यात संयम को छोड़कर शेष संयम क्यों नहीं होते हैं ?**

उत्तर : सामायिकादि संयम कषाय के उदय रहते हुए ही होते हैं और यथाख्यात संयम कषायों का अभाव होने पर ही होता है। कहा भी है-

प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय सकल संयम अर्थात् सामायिक-छेदोपस्थापना तथा परिहारविशुद्धि संयम का घात करती है।

अप्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय संयमासंयम का तथा संज्वलन कषाय यथाख्यात संयम का घात करती है। **(गो.जी. २८३)**

सामायिकादि तीन संयमों की उत्पत्ति तीन चौकड़ी कषाय का उदय अभाव तथा संज्वलन कषाय का उदय रहते हुए होती है। सूक्ष्मसाम्पराय संयम केवल संज्वलन लोभ के उदय के साथ होता है और इस गुणस्थान में किसी भी कषाय का उदय नहीं पाया जाता है। यह गुणस्थान कषायों का मूल नाश होने पर होता है इसलिए इस गुणस्थान में यथाख्यात संयम को छोड़कर शेष कोई संयम नहीं होता है।

इसी प्रकार ग्यारहवें गुणस्थान में कषायों के उदय का अभाव होने पर यथाख्यात संयम ही होता है।

७. प्रश्न : **इस गुणस्थान में उपशम सम्यक्त्व क्यों नहीं होता है ?**

उत्तर : १. यदि इस गुणस्थान में उपशम सम्यक्त्व माना जावे तो अन्तर्मुहूर्त के बाद जब उपशम सम्यक्त्व नष्ट हो जायेगा। (उपशम सम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल भी अन्तर्मुहूर्त मात्र है) फिर आगे के गुणस्थानों / समय में क्या होगा, क्योंकि बारहवें आदि गुणस्थानों में कोई सम्यक्त्व उत्पन्न नहीं होता है।

२. उपशम सम्यग्दृष्टि के मोहनीय कर्म की सत्ता पाई जाती है जबकि मोहनीय कर्म का मूल नाश हो जाने पर ही बारहवाँ गुणस्थान बनता है।

३. उपशम सम्यग्दृष्टि क्षपक श्रेणी चढ़ ही नहीं सकता है, ऐसा सिद्धान्त है और क्षपक श्रेणी चढ़े बिना बारहवाँ गुणस्थान नहीं बन सकता है।

४. उपशम सम्यक्त्व के साथ आचार्य भगवन्तों ने चौथे से ग्यारहवाँ गुणस्थान ही बताया है।

अत: बारहवें गुणस्थान में उपशम सम्यक्त्व नहीं होता है।

इसी प्रकार क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भी मलिन होने के कारण सातवें गुणस्थान से आगे नहीं पाया जाता है।

८. प्रश्न : इस गुणस्थान में कितने ध्यान होते हैं ?

उत्तर : इस गुणस्थान में आदि के दो शुक्ल ध्यान होते हैं-

१. पृथक्त्ववितर्कवीचार, २. एकत्ववितर्क अवीचार।

क्षीणकषाय गुणस्थान के प्रारम्भ में पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्लध्यान होता है। पश्चात् एकत्ववितर्क अवीचार शुक्लध्यान होता है। **(ध. १३/८१)**

क्षीणकषाय गुणस्थान के काल में सर्वत्र एकत्ववितर्क अवीचार शुक्लध्यान ही होता है, ऐसा भी कोई नियम नहीं है, क्योंकि वहाँ योग परावृत्ति का कथन एक समय प्रमाण अन्यथा बन नहीं सकता। इससे क्षीणकषाय काल के प्रारम्भ में पृथक्त्ववितर्कवीचार ध्यान का अस्तित्व भी सिद्ध होता है। **(ध. १३/८१)**

९. प्रश्न : बारहवें गुणस्थान में किस-किस स्थान का केवल एक-एक उत्तर भेद पाया जाता है ?

उत्तर : बारहवें गुणस्थान में ग्यारह स्थानों का केवल एक-एक उत्तर भेद पाया जाता है-

	स्थान	**भेद**
१.	गति	मनुष्यगति
२.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
३.	काय	त्रस
४.	संयम	यथाख्यात
५.	लेश्या	शुक्ल
६.	भव्य	भव्य
७.	सम्यक्त्व	क्षायिक सम्यक्त्व
८.	संज्ञी	सैनी
९.	आहार	आहारक
१०.	गुणस्थान	बारहवाँ
११.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय।
१२.	जाति	मनुष्यगति संबंधी
१३.	कुल	मनुष्यगति संबंधी

तालिका संख्या ६८

सयोग केवली

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	७	२ मनो. २वचन ३ काय	औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग।
५.	वेद	०	—	
६.	कषाय	०	—	
७.	ज्ञान	१	केवलज्ञान	
८.	संयम	१	यथाख्यात	
९.	दर्शन	१	केवलदर्शन	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	उपचार से कही गई है।
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	क्षायिक	परमावगाढ़ सम्यक्त्व होता है।
१३.	संज्ञी	०	—	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	सयोगकेवली
१६.	जीवसमास	१	पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	४	२ बल, श्वा. आ.	वचनबल एवं कायबल हैं।
१९.	संज्ञा	०	—	
२०.	उपयोग	२	१ ज्ञानो. १ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	शुक्लध्यान	सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान।
२२.	आस्रव	७	योग सम्बन्धी	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान को सयोग केवली जिन क्यों कहते हैं ?

उत्तर : केवलज्ञान रूपी सूर्य की किरणों से जिनका अज्ञान नष्ट हो गया है, जिनको केवललब्धि होकर परमात्मा संज्ञा प्राप्त हो गयी है, जो तीनों योगों से युक्त होने के कारण सयोगी हैं, घातिया कर्मों से रहित होने के कारण जिन हैं वे असहाय ज्ञान और दर्शन से युक्त होने के कारण केवली भगवान हैं उन्हें सयोगी केवली जिन कहते हैं। **(गो.जी. ६३)**

२. प्रश्न : सयोग-केवली भगवान को किस-किस नाम से कहा जा सकता है ?

उत्तर : सयोग-केवली भगवान को अनेक नामों से कहा जा सकता है-

१. तीर्थंकर केवली, २. अन्त:कृत केवली, ३. उपसर्ग केवली, ४. सातिशय केवली, ५. सयोग केवली, ६. समुद्घात केवली, ७. सामान्य केवली, ८. मूक केवली, ९. स्वस्थान केवली, १०. अरहंत केवली आदि।

१. तीर्थंकर केवली - जिन केवली भगवान के तीर्थंकर नामकर्म का उदय होता है वे तीर्थंकर केवली हैं।

२. अन्त:कृत केवली - जिस समय केवलज्ञान की उत्पत्ति होती है उसी समय जो निर्वाण पद प्राप्त करते हैं उन्हें अन्त:कृतकेवली कहते हैं।

३. उपसर्ग केवली - जो उपसर्ग को जीतकर केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं वे उपसर्ग केवली हैं।

४. सातिशय केवली - जो अतिशय से युक्त केवली होते हैं वे सातिशय केवली हैं।

५. सयोग केवली - जो योग सहित केवली होते हैं वे सयोग केवली हैं।

६. समुद्घात केवली - जो केवली समुद्घात करते हैं वे समुद्घात केवली हैं।

७. सामान्य केवली - जिनके चार घातिया कर्म नष्ट हो गये हैं वे सामान्य केवली हैं।

८. मूक केवली - जिन केवली भगवान की देशना नहीं होती है वे मूककेवली हैं।

९. स्वस्थान केवली - समुद्घात से रहित समय में स्थित केवली स्वस्थान केवली हैं।

१०. अरहंत केवली - जो केवली पंच कल्याणक से पूज्य होते हैं वे अरहंत केवली हैं।

नोट : १. ये सभी केवली भगवान चार घातिया कर्म से रहित और अनन्त चतुष्टय से युक्त होते हैं। कुछ विशेषताओं के कारण इनके नामों में अन्तर कहा गया है। मूल में तो सभी केवली भगवान नियम से परम निर्वाण को प्राप्त करते हैं।

२. अरहंत केवली और तीर्थंकर केवली एक ही हैं।

३. प्रश्न : क्या इस गुणस्थान के अलावा भी कोई केवली होते हैं ?

उत्तर : हाँ, इस गुणस्थान के अलावा भी चौदहवें गुणस्थान में अयोग केवली तथा छठे से बारहवें गुणस्थान तक श्रुतकेवली भी होते हैं।

अयोग केवली – जो योग से रहित होते हैं वे अयोग केवली भगवान हैं।

श्रुत केवली – जिनको पूरे श्रुत या आगम का पूरा ज्ञान होता है, ऐसे मुनि को श्रुतकेवली कहते हैं।

४. प्रश्न : **अरहंत परमेष्ठी अर्थात् तेरहवें गुणस्थान वाले जीव सयोगी क्यों होते हैं ?**

उत्तर : अरहंत भगवान के प्रथम (सत्य) और चतुर्थ (अनुभय) भाषा की उत्पत्ति के निमित्तभूत आत्मप्रदेशों का परिस्पन्दन (वहाँ) पाया जाता है इसलिए अरहंत परमेष्ठी के सयोग होने में कोई विरोध नहीं आता है। **(ध. १/३७०)**

५. प्रश्न : **सयोग केवली के कितने योग होते हैं ?**

उत्तर : सयोग केवली के ७ योग होते हैं-

२ मनोयोग - सत्य और अनुभय मनोयोग।

२ वचनयोग - सत्य और अनुभय वचनयोग।

३ काययोग - औदारिक, औदारिकमिश्र और कार्मण काययोग। **(सि.सा. २६)**

६. प्रश्न : **केवली भगवान के औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग किस अपेक्षा होते हैं ?**

उत्तर : केवली भगवान के कपाट समुद्घात में औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग प्रतर व लोक-पूरण समुद्घात की अपेक्षा पाये जाते हैं।

७. प्रश्न : **क्या सभी सयोगी केवली भगवान के औदारिकमिश्र एवं कार्मणकाययोग होते हैं?**

उत्तर : जो आचार्य सभी केवली भगवन्तों के समुद्घात पूर्वक ही मुक्ति मानते हैं उनकी अपेक्षा सभी सयोग केवलियों के औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग निश्चित रूप से होते हैं, लेकिन जिन आचार्यों ने लोकपूरण करने वाले केवलियों की बीस संख्या का नियम माना है उनके मतानुसार कितने ही केवली समुद्घात करते हैं और कितने ही केवली समुद्घात नहीं करते हैं। उनकी अपेक्षा सभी केवलियों के औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग हो यह आवश्यक नहीं है। **(ध. १/३०२)**

८. प्रश्न : **समुद्घात किसे कहते हैं ?**

उत्तर : मूल शरीर को न छोड़कर आत्मप्रदेशों के बाहर निकलने को समुद्घात कहते हैं। **(का.अ. १७६ टी.)**

९. प्रश्न : **समुद्घात कितने प्रकार के होते हैं-**

उत्तर : समुद्घात सात प्रकार के होते हैं-

१. वेदना समुद्घात, २. कषाय समुद्घात, ३. विक्रिया समुद्घात, ४. मारणान्तिक समुद्घात, ५. तैजस समुद्घात, ६. आहारक समुद्घात, ७. केवली समुद्घात। **(का.अ. १७६ टी.)**

१०.प्रश्न : केवली समुद्घात किसे कहते हैं ?

उत्तर : दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण रूप जीवप्रदेशों की अवस्था को केवली समुद्घात कहते हैं। **(ध. १३/३००)** जिस प्रकार मदिरा में फेन आकर समाप्त हो जाता है उसी प्रकार समुद्घात में देहस्थ आत्मप्रदेश बाहर निकलकर फिर शरीर में समा जाते हैं, ऐसा समुद्घात केवली करते हैं सो उसे केवली समुद्घात कहते हैं। **(रा.वा. १/२०)**

११.प्रश्न : केवली समुद्घात कितने समय तक होता है ?

उत्तर : केवली समुद्घात का काल आठ समय है-

१. दण्ड, २. कपाट, ३. प्रतर, ४. लोकपूरण, ५. प्रतर, ६. कपाट, ७. दण्ड, ८. स्वशरीर में प्रवेश। **(रा.वा. १/२०)**

प्रथम समय में दण्ड, अनन्तर अगले समय में कपाट, तृतीय समय में मंथान और चतुर्थ समय में लोकव्यापी, पाँचवें समय में संकोच क्रिया, छठे समय में मंथान, सातवें समय में कपाट तथा उसका संकोच होकर आठवें समय में दण्ड हो जाता है। **(ज.ध.२२७८-८२)**

१२.प्रश्न : दण्डादि समुद्घात किसे कहते हैं ?

उत्तर : **दण्ड समुद्घात -** जिसकी अपने विष्कम्भ से कुछ अधिक तिगुनी परिधि है ऐसे पूर्व शरीर के बाहल्यरूप अथवा पूर्व शरीर से तिगुने बाहल्य रूप दण्डाकार से केवली के जीव-प्रदेशों का कुछ कम चौदह राजू उत्सेध रूप फैलने का नाम दण्ड समुद्घात है।

कपाट समुद्घात - दण्ड समुद्घात में बताये गये बाहल्य और आयाम के द्वारा पूर्व-पश्चिम में वातवलय से रहित सम्पूर्ण क्षेत्र में व्याप्त करने का नाम कपाट समुद्घात है।

प्रतर समुद्घात - केवली भगवान के जीवप्रदेशों का वातवलय से रुके हुए क्षेत्र को छोड़कर सम्पूर्ण लोक में व्याप्त होने का नाम प्रतर समुद्घात है।

लोकपूरण समुद्घात - घन लोकप्रमाण केवली भगवान के जीवप्रदेशों का सर्व लोक के व्याप्त करने को लोकपूरण समुद्घात कहते हैं। **(ध. ४/२८)**

१३.प्रश्न : किस समुद्घात में कौनसा योग होता है ?

उत्तर : केवली भगवान के समुद्घात के समय योग-

समुद्घात		**योग**
दण्ड रूप फैलाने एवं समेटने के समय	-	औदारिक काययोग
कपाट रूप फैलाने एवं समेटने के समय	-	औदारिकमिश्र काययोग
प्रतर रूप फैलाने एवं समेटने के समय	-	कार्मण काययोग

लोकपूरण	-	कार्मण काययोग
मूल शरीर में प्रवेश के प्रथम समय से लेकर पर्याप्त होने तक	-	औदारिक काययोग
	(ध. ४/२६३)	

दंडदुगे ओरालं कवाडजुगले य पयरसंवरणे।

मिस्सोरालिय भवियं सेसतिए जाण कम्मइयं॥१॥ (सि.सा.टी. २६)

१४.प्रश्न : जिन केवलियों की कभी भी देशना नहीं होती है, क्या उनके भी वचन योग बनता है ?

उत्तर : हाँ, जिन केवली भगवान की देशना नहीं होती है उनके भी वचन योग होता ही है, क्योंकि बोलने से वचनयोग का कोई सम्बन्ध नहीं है। वचन योग तो आत्मप्रदेशों के परिस्पंदन स्वरूप होता है, दूसरी बात सामान्य रूप से एक योग का उत्कृष्ट काल भी मात्र एक अन्तर्मुहूर्त ही होता है इसलिए मूककेवली के भी वचनयोग होने में कोई बाधा नहीं है।

१५.प्रश्न : जिन केवली भगवान का विहार नहीं होता है क्या उनके भी काययोग होता है?

उत्तर : हाँ, १. जिन केवली भगवान का विहार नहीं होता है उनके भी काययोग होता ही है, क्योंकि काययोग का कायिक चेष्टाओं के साथ सम्बन्ध नहीं है, योग तो आत्मप्रदेशों के परिस्पंदन स्वरूप होता है।

२. यद्यपि औदारिक काययोग का उत्कृष्ट काल कुछ कम २२००० वर्ष कहा गया है वह एकेन्द्रियों में पृथ्वीकायिक जीवों के ही बनता है। द्वीन्द्रियादि जीवों के तो काययोग का उत्कृष्टकाल अंतर्मुहूर्त मात्र ही होता है। **(ध. ७/१५३)**

३. तीसरा शुक्लध्यान काययोग से ही होता है। ऐसा तत्त्वार्थसूत्र महाग्रन्थ में कहा है- **''त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम्''** ॥९/४०॥ यदि उनके काययोग नहीं होगा तो तृतीय शुक्लध्यान कैसे होगा और तृतीय शुक्लध्यान के अभाव में योगनिरोध....... आदि क्रियाएँ कैसे सम्पन्न होंगी, अत: जो केवली भगवान विहार नहीं करते हैं उनके भी तृतीय शुक्ल ध्यान होता है तब उनके काययोग भी होता है, ऐसा मानने में कोई विरोध नहीं है।

१६.प्रश्न : सयोग केवली भगवान किस-किस समय अनाहारक होते हैं ?

उत्तर : सयोगकेवली भगवान प्रतर और लोकपूरण समुद्घात के समय अनाहारक होते हैं, क्योंकि उस समय उनके कार्मण काययोग होता है। **(गो.जी.जी. ७०४)**

'शेष त्रिक प्रतरलोकपूरणसंवरणत्रये कार्मण काययोगं जाणीहि' (सि.सा. २६ टी.)

अर्थात् प्रतर में (संवरण के समय) लोकपूरण एवं लोकपूरण के संवरण में कार्मण काययोग जानना चाहिए।

१७.प्रश्न : केवली भगवान के समुद्घात के समय कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : केवली भगवान के समुद्घात के समय प्राण-
४ प्राण, ३ प्राण, २ प्राण।
४ प्राण - ४ समय तक (दण्डद्विक, कपाट तथा शरीरप्रवेश के समय)
३ प्राण - जब तक भाषा पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती।
२ प्राण - लोकपूरण तथा प्रतर के दो समयों में।

१८.प्रश्न : केवली भगवान के समुद्घात अवस्था में चार प्राण कैसे होते हैं ?

उत्तर : समुद्घात के समय केवली भगवान के वचनबल और श्वासोच्छ्वास की कारणभूत वचन तथा आनपान पर्याप्तियाँ पाई जाती हैं, इसलिए लोकपूरण समुद्घात के अनन्तर होने वाले प्रतर समुद्घात के पश्चात् उपरिम छठे समय से लेकर आगे वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राण का सद्भाव हो जाता है, इसलिए सयोगकेवली के औदारिक काययोग में चार प्राण भी होते हैं। **(ध. २/६५९-६६०)**

१९.प्रश्न : केवली भगवान के कार्मण काययोग में कितने प्राण होते हैं ?

उत्तर : केवली भगवान के कार्मण काययोग में दो प्राण होते हैं- कायबल तथा आयु।

२०.प्रश्न : सयोग केवली के इन्द्रिय प्राण क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : सयोग केवली भगवान के ज्ञानावरणीय एवं अन्तराय कर्म का नाश हो जाने से इन्द्रिय प्राण के कारणभूत ज्ञानावरण एवं वीर्यान्तराय का क्षयोपशम नहीं पाया जाता है, इसलिए उनके इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं।

इसी प्रकार अनिन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम का अभाव होने से मनोबल प्राण नहीं होता है।

२१.प्रश्न : क्या केवली भगवान के समुद्घात अवस्था में एक समय में पर्याप्तियाँ पूर्ण हो जाती हैं ?

उत्तर : यद्यपि प्रत्येक पर्याप्ति के पूर्ण होने का काल अन्तर्मुहूर्त है फिर भी केवली भगवान का प्रत्येक कार्य अलौकिक होता है इसलिए उनके एक समय में पर्याप्तियाँ पूर्ण हो जाती हों तो कोई आश्चर्य नहीं है। ऐसा मेरा विचार है।

२२.प्रश्न : क्या सयोग केवली भगवान के जीवनभर ध्यान होता है ?

उत्तर : नहीं, केवली भगवान के जीवन भर ध्यान नहीं हो सकता है, क्योंकि ध्यान का उत्कृष्ट काल भी अन्तर्मुहूर्त **(त.सू. ९/२७)** ही कहा गया है और केवली भगवान (सयोग केवली गुणस्थान) का उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण बताया है अत: केवली भगवान के जीवनभर ध्यान नहीं हो सकता है।

२३. प्रश्न : यदि भगवान के जीवनभर ध्यान नहीं होता है तो उनके तीसरा शुक्लध्यान कब होता है ?

उत्तर : इस प्रकार एकत्ववितर्क शुक्लध्यानरूपी अग्नि के द्वारा जिन्होंने चार घातिया कर्म रूपी ईंधन को जला दिया है वे जब आयु कर्म में अन्तर्मुहूर्त्त काल शेष रहता है तब सब प्रकार के वचनयोग मनोयोग और बादर काययोग को त्यागकर सूक्ष्म काययोग का आलम्बन लेकर सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान को स्वीकार करते हैं। परन्तु जब उनकी (सयोगी जिन की) आयु अन्तर्मुहूर्त्त शेष रहती है तब चार कर्मों की स्थिति को समान करके अपने पूर्व शरीर प्रमाण होकर सूक्ष्म काययोग के द्वारा सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान को स्वीकार करते हैं। **(सर्वा. ९/४४)**

२४. प्रश्न : सम्पूर्ण पदार्थों को प्रत्यक्ष करने वाले तथा इन्द्रिय ज्ञान से रहित केवली भगवान के ''एकाग्रचिन्तानिरोध'' रूप ध्यान कैसे सम्भव है ?

उत्तर : यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि प्रकृत में एक वस्तु में चिन्ता का निरोध करना ध्यान है, ऐसा ग्रहण किया जाता तो उक्त दोष आता परन्तु यहाँ ऐसा ग्रहण नहीं करते हैं।..... यहाँ उपचार से योग का अर्थ चिन्ता है। उसका एकाग्र रूप से निरोध अर्थात् विनाश जिस ध्यान में किया जाता है, वह ध्यान है, ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। **(ध. १३/८७)**

२५. प्रश्न : केवली भगवान के ध्यान को ध्यान संज्ञा किस कारण से दी गई है ?

उत्तर : एकाग्र रूप से जीव के चिन्ता का निरोध अर्थात् परिस्पन्दन का अभाव होना ही ध्यान है, इस दृष्टि से यहाँ ध्यान संज्ञा दी गई है। **(ध. १३/८७)** स्वरूप निश्चल होने से भावमुक्त केवली के ध्यान का कार्यभूत पूर्व संचित कर्मों की स्थिति का विनाश अर्थात् गलन देखा जाता है। निर्जरा रूप इस ध्यान के कार्य-कारण में उपचार करने से केवली के ध्यान कहा जाता है, ऐसा समझना चाहिए। **(पं.का.ता. १५२)**

२६. प्रश्न : सयोग केवली भगवान के एकत्व वितर्क शुक्लध्यान का अभाव क्यों कहा है ?

उत्तर : आवरण का अभाव होने से केवली जिन का उपयोग अशेष द्रव्य-पर्यायों में उपयुक्त होने लगता है। इसलिए एक द्रव्य में या एक पर्याय में अवस्थान का अभाव देखकर उस एकत्ववितर्क ध्यान का अभाव कहा है।

तालिका संख्या ६९

अयोगकेवली

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	०	---	
५.	वेद	०	---	
६.	कषाय	०	---	
७.	ज्ञान	१	केवलज्ञान	
८.	संयम	१	यथाख्यात	
९.	दर्शन	१	केवलदर्शन	
१०.	लेश्या	०	---	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	क्षायिक	
१३.	संज्ञी	०	---	
१४.	आहार	१	अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१	स्वकीय	अयोगकेवली
१६.	जीवसमास	१	पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१	आयु	
१९.	संज्ञा	०	---	
२०.	उपयोग	२	१ ज्ञानो. १ दर्शनो	
२१.	ध्यान	१	शुक्ल	व्युपरतक्रियानिवृत्ति
२२.	आस्रव	०	---	
२३.	जाति	१४ लाख	मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ ला.क.	मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : इस गुणस्थान को अयोग केवली जिन क्यों कहते हैं ?

उत्तर : जिसके योग विद्यमान नहीं है उसे अयोग कहते हैं, जिसके केवलज्ञान पाया जाता है उसे केवली कहते हैं, जो योगरहित होते हुए केवली होते हैं वे अयोग केवली जिन कहलाते हैं।

२. प्रश्न : अयोग केवली के योग क्यों नहीं होते हैं ?

उत्तर : अयोग केवली के शरीर नामकर्म के उदय का अभाव होने से योग का अभाव है। **(गो.जी.२२७)**

३. प्रश्न : अयोग केवली के लेश्या क्यों नहीं होती है ?

उत्तर : अयोग केवली के योग और कषाय का अभाव होने से लेश्या नहीं है। **(गो.जी.जी. ५३२)**

४. प्रश्न : अयोग केवली भगवान के आहारक अवस्था क्यों नहीं होती है ?

उत्तर : अयोग केवली भगवान तीन शरीर एवं छह पर्याप्तियों के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण नहीं करते हैं। उसका भी कारण यह है कि जब तक योग नहीं होता तब तक जीव कर्म-नोकर्म किसी प्रकार की वर्गणाओं को ग्रहण नहीं करता है। अयोगी भगवान के योग नहीं हैं इसलिए उनके आहारक अवस्था नहीं होती है।

५. प्रश्न : अयोग केवली के एक ही प्राण क्यों होता है ?

उत्तर : ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम स्वरूप पाँच इन्द्रिय प्राण तो अयोगकेवली के हैं नहीं, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मों के क्षय हो जाने पर क्षयोपशम का अभाव पाया जाता है। इसी प्रकार आनपान, भाषा और मन: प्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि पर्याप्तिजनित प्राण संज्ञावाली शक्ति का उनके अभाव है। उसी प्रकार उनके कायबल नामक प्राण भी नहीं है, क्योंकि उनके शरीर नामकर्म के उदयजनितकर्म और नोकर्म के आगमन का अभाव है। इसलिए अयोग केवली के एक आयु प्राण ही होता है। ऐसा समझना चाहिए। **(ध. २/४४५)**

६. प्रश्न : अयोग केवली भगवान के आस्रव क्यों नहीं होता है ?

उत्तर : अयोग केवली भगवान के मिथ्यात्व, अविरति, कषाय तथा योग रूप आस्रव के सभी प्रत्ययों का अभाव हो जाने के कारण आस्रव नहीं होता है।

- समुच्चय प्रश्नोत्तर -

१. प्रश्न : किस-किस गुणस्थान को प्राप्त किये बिना भी जीव मोक्ष जा सकता है ?

उत्तर : ५ गुणस्थानों को प्राप्त किये बिना भी जीव मोक्ष जा सकता है-

दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ तथा ग्यारहवाँ।

- दूसरा गुणस्थान उपशम सम्यक्त्व से गिरने पर ही होता है लेकिन उपशम सम्यक्त्व से गिरकर इसमें आना आवश्यक नहीं है।
- तीसरा गुणस्थान भी सम्यक्त्व से च्युत होकर अथवा सादि मिथ्यादृष्टि के होता है किन्तु किसी जीव के सम्यक्त्व से च्युत होकर इसमें आना आवश्यक नहीं है।
- अनादि मिथ्यादृष्टि के एक साथ सम्यक्त्व एवं संयम (अप्रमत्त गुणस्थान) बनता है तो उसको छठे गुणस्थान में आना तो आवश्यक है लेकिन चौथे पाँचवें गुणस्थान में आना जरूरी नहीं है।
- सीधे क्षपक श्रेणी चढ़ जाने पर ग्यारहवें गुणस्थान को प्राप्त नहीं करते हैं।

इस प्रकार इन पाँच गुणस्थानों को प्राप्त किये बिना भी जीव मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

२. प्रश्न : केवल पहला गुणस्थान किस-किस काय के जीवों के होता है ?

उत्तर : दो काय के जीवों के केवल पहला गुणस्थान ही होता है-

अग्निकायिक, वायुकायिक

३. प्रश्न : तीन गुणस्थान किस-किस योग में होते हैं ?

उत्तर : तीन गुणस्थान केवल एक योग में होते हैं-

पहला, दूसरा तथा चौथा, ये तीन गुणस्थान वैक्रियिक मिश्र काययोग में होते हैं।

४. प्रश्न : चार गुणस्थान किस-किस योग में पाये जाते हैं ?

उत्तर : चार गुणस्थान केवल तीन योग में पाये जाते हैं-

औदारिक मिश्र, वैक्रियिक तथा कार्मणकाययोग।

५. प्रश्न : गुणस्थानों में कषाय मार्गणा की प्ररूपणा किस प्रकार करनी चाहिए ?

उत्तर : गुणस्थानों में कषाय मार्गणा का विवेचन-

गुणस्थान	कषाय	विशेष
प्रथम, द्वितीय	२५ कषाय	
तृतीय, चतुर्थ	२१ कषाय	अनन्तानुबन्धी चतुष्क नहीं है।
पंचम	१७ कषाय	अप्रत्याख्यान चतुष्क भी नहीं है।
षष्ठ, सप्तम्, अष्टम्	१३ कषाय	प्रत्याख्यानावरण चतुष्क भी नहीं है।
नवम्	७ कषाय	छह नोकषाय नहीं हैं।

दशम्	१ कषाय	संज्वलनत्रिक एवं तीन वेद भी नहीं हैं।
ग्यारहवें से चौदहवें तक	० कषाय	सभी कषायों का अभाव है।

नोट : नवमें गुणस्थान में ६, ५, ४, ३, २, १ कषाय रूप स्थान भी पाये जाते हैं।

६. प्रश्न : पाँच गुणस्थान कितनी कषायों में पाये जाते हैं ?

उत्तर : पाँच गुणस्थान मात्र एक कषाय में पाये जाते हैं- संज्वलन लोभ में।

यह छठे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक होता है। अथवा प्रत्याख्यानावरण चतुष्क में भी पहले से पाँचवें तक ५ गुणस्थान होते हैं।

७. प्रश्न : चार गुणस्थान किस-किस संयम में होते हैं ?

उत्तर : चार गुणस्थान चार संयमों में होते हैं।

गुणस्थान	**संयम**
छठा, सातवाँ, आठवाँ, नवाँ	सामायिक एवं छेदोपस्थापना
ग्यारहवें से चौदहवें में	यथाख्यात संयम
पहले से चौथे में	असंयम

८. प्रश्न : कितने गुणस्थानों में सम्यक्त्व मार्गणा का केवल एक भेद होता है ?

उत्तर : छह गुणस्थानों में सम्यक्त्व मार्गणा का केवल एक भेद होता है-

गुणस्थान	**सम्यक्त्व**
पहले मिथ्यात्व में	मिथ्यात्व
दूसरे सासादन में	सासादन
तीसरे मिश्र में	सम्यग्मिथ्यात्व
१२ वें १३वें १४वें में	क्षायिक सम्यक्त्व

नोट : क्षपक श्रेणी चढ़ने वाले ८ वें, ९ वें, १०वें गुणस्थान में भी केवल एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है।

९. प्रश्न : किस गुणस्थान की अनाहारक अवस्था में तीन सम्यक्त्व होते हैं ?

उत्तर : केवल चौथे गुणस्थान की अनाहारक अवस्था में उपशम, क्षायिक एवं क्षायोपशमिक, ये तीन सम्यक्त्व होते हैं।

नोट : उपशम सम्यक्त्व द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा कहा गया है।

१०. प्रश्न : कौन से गुणस्थान में जीव अनाहारक ही होते हैं ?

उत्तर : चौदहवें गुणस्थान में जीव अनाहारक ही होते हैं।

११.प्रश्न : किस-किस गुणस्थान में सात प्राण नहीं हो सकते हैं ?

उत्तर : १० गुणस्थानों में सात प्राण नहीं हो सकते हैं-

३रा, ५वाँ, ७वाँ, ८वाँ, ९वाँ, १०वाँ, ११वाँ, १२वाँ, १३वाँ, १४वाँ

इन गुणस्थानों में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था नहीं होती है इसलिए इनके सात प्राण नहीं होते हैं। तेरहवें गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था होने पर भी उनके मूल में ही चार प्राण होते हैं, इसलिए उनके सात प्राण नहीं होते हैं।

१२.प्रश्न : कितने गुणस्थानों की अनाहारक अवस्था में केवल एक सम्यक्त्व होता है ?

उत्तर : चार गुणस्थानों की अनाहारक अवस्था में केवल एक सम्यक्त्व होता है-

पहले गुणस्थान की अनाहारक अवस्था में मात्र मिथ्यात्व तथा दूसरे गुणस्थान की अनाहारक अवस्था में सासादन-सम्यक्त्व होता है। तेरहवें एवं चौदहवें में केवल क्षायिक सम्यक्त्व होता है।

१३.प्रश्न : किस-किस गुणस्थान में आस्रव के समान संख्या वाले प्रत्यय होते हैं ?

उत्तर : ७वें, ८वें, ११वें, १२वें तथा ९वें, १०वें गुणस्थान में आस्रव के समान संख्या वाले प्रत्यय होते हैं-

७वें - ८वें में - १३ कषाय एवं ९ योग।

९वें - १०वें में - १ कषाय एवं ९ योग (नवमें गुणस्थान में जहाँ बादर लोभ बचता है वहाँ ये प्रत्यय होते हैं।)

११वें १२वें में - ९ योग।

१४.प्रश्न : किस स्थान के किस उत्तर भेद में सभी गुणस्थान पाये जाते हैं ?

उत्तर : वे उत्तर भेद जिनमें सभी गुणस्थान पाये जाते हैं-

	स्थान	**उत्तरभेद**
१.	गति	मनुष्यगति
२.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
३.	काय	त्रस
४.	भव्य	भव्य
५.	जीवसमास	पंचेन्द्रिय

६.	पर्याप्ति	छहों
७.	प्राण	आयु
८.	जाति	१४ लाख (मनुष्य सम्बन्धी)
९.	कुल	१४ लाख करोड़ (मनुष्य सम्बन्धी)

१५.प्रश्न : गुणस्थानों में आस्रव के प्रत्ययों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : गुणस्थानों में आस्रव के प्रत्ययों का विवेचन-

क्र.	**गुणस्थान**	**आस्रव के प्रत्यय**	**विवरण**	**विशेष**
१.	मिथ्यात्व	५५	५ मि. १२ अवि. २५ क. १३ यो.	आहारकद्विक बिना
२.	सासादन सम्यक्त्व	५०	१२ अवि. २५क. १३ यो.	५ मि. एवं आहारकद्विक नहीं है।
३.	मिश्र	४३	१२ अवि. २१क. १० यो.	औ.मि. वै.मि. कार्म. आहा.द्विक नहीं हैं।
४.	अविरतसम्यक्त्व	४६	१२ अवि. २१ क. १३ यो.	अनन्तानुबन्धी कषाय नहीं है।
५.	संयमासंयम	३७	१७ क. ११ अवि. ९ यो.	४ म. ४ व. १ काययोग
६.	प्रमत्तसंयत	२४	१३ क. ११ यो.	आहारकद्विक होता है।
७.	अप्रमत्तसंयत	२२	१३ क. ९ यो.	४ म. ४ व. १ का.
८.	अपूर्वकरण	२२	१३ क. ९ यो.	-
९.	अनिवृत्तिकरण संयत	१६	७ क. ९ यो.	-
१०.	सूक्ष्मसाम्पराय संयत	१०	१ क. ९ यो.	सूक्ष्मलोभ होता है।
११.	उपशान्तकषाय वीतराग छद्मस्थ	९	९ यो.	-
१२.	क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ	९	९ यो.	-
१३.	सयोग केवली जिन	७	२ म. २ व. ३ काययोग	औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग है।
१४.	अयोग केवली जिन	०	-	-

प्रश्न-पत्र

१. प्रश्न : उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगावें-

(i) **सबसे ज्यादा गुणस्थान किस सम्यक्त्व में होते हैं ?**

(अ) क्षायिक (ब) उपशम

(स) क्षायोपशमिक (द) द्वितीयोपशम

(ii) **चार गुणस्थान कौनसे संयम में पाये जाते हैं ?**

(अ) परिहार विशुद्धि (ब) सूक्ष्म साम्पराय

(स) असंयम (द) कोई नहीं।

(iii) **कितने गुणस्थानों में छह पर्याप्तियाँ होती हैं ?**

(अ) १४ (ब) १

(स) १३ (द) ११

(iv) **कौनसे गुणस्थान में चार प्राण ही होते हैं ?**

(अ) मिथ्यात्व (ब) तेरहवें

(स) चौदहवें (द) कोई नहीं।

(v) **कितने गुणस्थानों में ७ प्राण भी होते हैं ?**

(अ) ४ (ब) ८

(स) १३ (द) कोई नहीं।

२. प्रश्न : एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) कितने गुणस्थानों में मनोयोगी जीव भी होते हैं ?

(ii) कितने गुणस्थानों में तीन संज्ञाएँ होती हैं ?

(iii) कौनसे गुणस्थान में आहारकद्विक भी आस्रव के प्रत्यय होते हैं ?

(iv) कितने गुणस्थानों में १३ योग होते हैं ?

(v) कितने गुणस्थानों में वीतराग-छद्मस्थ नहीं होते हैं?

३. प्रश्न : हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) केवल एक गुणस्थान में ही ७ योग होते हैं।

(ii) मात्र दो गुणस्थानों में वैक्रियिक मिश्र काययोग होता है।

(iii) तेरहवें गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था भी होती है।

(iv) चौदहवें गुणस्थान में जीव सयोगी भी होते हैं।

(v) दूसरे गुणस्थान में चारों गतियाँ होती हैं।

४. प्रश्न : रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) दसवें गुणस्थान में............प्राण............पर्याप्ति तथा........... संयम होता है।

(ii) ग्यारहवें गुणस्थान में...........सम्यक्त्व ....योग तथा.......... गति होती है।

(iii) चौदहवें गुणस्थान में............जीवसमास............कषायें तथा............. संज्ञाएँ होती हैं।

(iv) पहले गुणस्थान में.............काय............. वेद तथा........ उपयोग होते हैं।

(v) पाँचवें गुणस्थान में........ संयम .... ज्ञान.......लेश्याएँ होती हैं।

५. प्रश्न : सही जोड़ी बनाइये-

(i)	सम्यग्मिथ्यात्व	-	नवम गुणस्थान
(ii)	सूक्ष्मसाम्पराय संयम	-	आहारकद्विक
(iii)	१ आयु प्राण	-	२ गति
(iv)	छठा गुणस्थान	-	२ प्राण
(v)	तेरहवाँ गुणस्थान	-	५ मिथ्यात्व
(vi)	प्रथम गुणस्थान	-	चौदहवाँ गुणस्थान
(vii)	दो संज्ञा	-	दसवाँ गुणस्थान
(viii)	पाँचवाँ गुणस्थान	-	तीसरा गुणस्थान

– उत्तरमाला –

१. (i) अ (ii) स (iii) अ (iv) द (v) अ

२. (i) १३ (ii) २ (iii) छठे में (iv) ३ (v) १२

३. (i) हाँ (ii) ना (iii) हाँ (iv) ना (v) हाँ

४. (i) १०, ६, १ (ii) २, ९, १ (iii) १, ०, ० (iv) ६, ३, ५ (v) १, ३, ३

५. (i) तीसरा गुणस्थान (ii) दसवाँ गुणस्थान (iii) चौदहवाँ गुणस्थान
(iv) आहारकद्विक (v) २ प्राण (vi) ५ मिथ्यात्व
(vii) नवमा गुणस्थान (viii) २ गति।

१६. जीव समास

१. प्रश्न : जीव समास किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसके द्वारा अनेक जीव और उनकी जातियाँ जानी जाएँ, ऐसे अनेक धर्मों का संग्रह करने वाले धर्मों को **जीवसमास** कहते हैं। **(ध.पु. २/४२०)**

जिन समान धर्मों द्वारा अनेक जीवों का संग्रह किया जाता है उन्हें **जीवसमास** कहते हैं। **(गो.जी. ७०)**

अनन्तानन्त जीव जिसमें संग्रह किये जाते हैं उन्हें **जीवसमास** कहते हैं। **(ध. १/१३२)** जिसमें जीव भले प्रकार रहते हैं अर्थात् पाये जाते हैं उसे **जीवसमास** कहते हैं। **(ध. १/१६१)**

२. प्रश्न : जीव समास कितने होते हैं?

उत्तर : जीव समास चौदह होते हैं -

(१) एकेन्द्रिय सूक्ष्म (२) एकेन्द्रिय बादर (३) द्वीन्द्रिय (४) त्रीन्द्रिय (५) चतुरिन्द्रिय (६) पंचेन्द्रिय सैनी (७) पंचेन्द्रिय असैनी।

इनके पर्याप्त एवं अपर्याप्त भेद करने पर जीवसमास के चौदह भेद होते हैं। **(वृ.द्र.सं. ९२)**

अथवा : जीवसमास के १९ भेद होते हैं -

स्थावर सम्बन्धी १४ - (१) पृथ्वीकायिक (२) जलकायिक (३) अग्निकायिक (४) वायुकायिक (५) नित्य निगोद (६) इतर निगोद

ये सब सूक्ष्म और बादर दोनों होते हैं इसलिए ६×२=१२ तथा प्रत्येक वनस्पति के दो भेद हैं -

(१) सप्रतिष्ठित प्रत्येक (२) अप्रतिष्ठित प्रत्येक = १४

त्रस सम्बन्धी ५, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असैनी पंचेन्द्रिय तथा सैनी पंचेन्द्रिय =५ १४+५ =१९ जीवसमास **(गो.जी.जी.७३)**

अथवा : तिर्यःों के ८५ तथा मनुष्यों के ९, नारकियों के २ तथा देवों के २=कुल ९८ जीवसमास।

३. प्रश्न : तिर्यञ्चों के ८५ जीवसमास कौन-कौन से हैं?

उत्तर : तिर्यञ्चों के ८५ जीवसमास -

सम्मूर्च्छनों के ६९ तथा गर्भजों के १६ = ८५ **(का.अ. १३१ टी.)**

४. प्रश्न : सम्मूर्च्छनों के ६९ जीवसमास कौन-कौन से हैं?

उत्तर : सम्मूर्च्छनों के ६९ जीवसमास -

एकेन्द्रिय के ४२, विकलत्रय के ९ तथा पंचेन्द्रिय के १८।

एकेन्द्रियों के उपर्युक्त पृथ्वीकायिकादि १४, ये चौदह ही पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक तथा लब्ध्यपर्याप्तक तीन प्रकार के हैं अत: १४×३ = ४२।

विकलत्रय भी पर्याप्तकादि के भेद से तीन प्रकार के होते हैं अत: ३×३ = ९।

पञ्चेन्द्रिय तिर्यःा तीन प्रकार के होते हैं -

जलचर, थलचर, नभचर। ये तीन सैनी तथा असैनी दोनों होते हैं अत: ३×२ = ६।

ये छहों पर्याप्तकादिक के भेद से तीन-तीन प्रकार के होते हैं अत: ६×३ = १८।

५. प्रश्न : गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च के १६ जीवसमास कौन-कौन से हैं?

उत्तर : कर्मभूमियों के १२ + भोगभूमियों के ४ = १६

कर्मभूमियों के १२ = जलचर, थलचर तथा नभचर ये सैनी-असैनी दोनों होते हैं अत: ३×२ = ६, ये छहों पर्याप्तक एवं निर्वृत्यपर्याप्तक होते हैं अत: ६×२=१२

भोगभूमियों के ४ - थलचर तथा नभचर ये सैनी ही होते हैं, इनके पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक दोनों होते हैं अत: २×२ = ४

इस प्रकार १२+४ = १६ **(का.अ. १३१ टी.)**

६. प्रश्न : मनुष्यों के नौ जीवसमास कौन-कौन से हैं?

उत्तर : मनुष्यों के नौ जीवसमास -

आर्यखण्ड, म्लेच्छखण्ड, भोगभूमि तथा कुभोगभूमि, इनमें पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्तक मनुष्य होते हैं अत: ४×२ = ८ तथा सम्मूर्च्छन मनुष्यों का - १ (लब्ध्यपर्याप्तक) ८+१ = ९ **(का.अ. १३२-३३ टी.)**

७. प्रश्न : देव-नारकियों के कौन-कौन से जीवसमास होते हैं?

उत्तर : देवों के दो जीवसमास होते हैं - पर्याप्तक तथा निर्वृत्यपर्याप्तक।

नारकियों के दो जीवसमास होते हैं - पर्याप्तक तथा निर्वृत्यपर्याप्तक **(का.अ. १३३ टी.)**

८. प्रश्न : चउबीस ठाणा में कितने जीवसमासों की मुख्यता से कथन है?

उत्तर : यहाँ **(चउबीस ठाणा में)** १९ जीवसमासों की अपेक्षा कथन किया है।

९. प्रश्न : सप्रतिष्ठित एवं अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति किसे कहते हैं?

उत्तर : जिनकी नसें नहीं दिखतीं, बन्धन व गाँठें नहीं दिखतीं, जिनके टुकड़े समान हो जाते हैं और दोनों भंगों में परस्पर तंतु न लगा रहे तथा छेदन करने पर भी जिनकी पुनः वृद्धि हो जाय उसको सप्रतिष्ठित प्रत्येक तथा इससे विपरीत को अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कहते हैं **(मू. २१६ आ.)**

जिन वनस्पतियों के मूल, कन्द, त्वचा, प्रवाल, क्षुद्रशाखा, पत्र, फूल, फल तथा बीजों को तोड़ने से समान भंग हो उसे सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कहते हैं और जिनका भंग समान न हो उसको अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कहते हैं। जिस वनस्पति के कन्द, मूल, क्षुद्रशाखा या स्कन्ध की छाल मोटी हो उसको अनन्त जीव (सप्रतिष्ठित प्रत्येक) कहते हैं और जिसकी छाल पतली हो उसको अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कहते हैं। **(गो.जी. १८९-९०)**

१०. प्रश्न : पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमासों का कथन किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर : पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमासों में से एक जीवसमास कहने पर संज्ञी पंचेन्द्रिय अथवा असंज्ञी पंचेन्द्रिय का जीवसमास लेना चाहिए। दो जीवसमास कहने पर पंचेन्द्रिय संज्ञी एवं असंज्ञी दोनों जीवसमासों को ग्रहण करना चाहिए।

जहाँ पंचेन्द्रिय जीवसमास कहा गया है, वहाँ संज्ञी-असंज्ञी से रहित केवली भगवान को ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि जब भगवान संज्ञी-असंज्ञीपने से रहित होते हैं, तो उनके संज्ञी सम्बन्धी जीवसमास कैसे माना जा सकता है, लेकिन जीवसमासों में अलग से पंचेन्द्रिय जीवसमास नहीं कहा गया है, इसलिए भूतप्रज्ञापन नय से संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास कहा जा सकता है, क्योंकि संज्ञी जीवों को ही केवलज्ञानादि लब्धियाँ प्राप्त होती हैं अर्थात् संज्ञी जीव ही भगवान बनता है।

नोट : यहाँ पर केवलीभगवान के पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास कहा गया है, पंचेन्द्रिय कहने से संज्ञी-असंज्ञी दोनों के जीवसमास नहीं लेना चाहिए।

तालिका संख्या ७०

संकेत - इस तालिका में प्रथम अंक जीवसमास की संख्या का तथा दूसरा अंक स्थानों के उत्तर भेदों की संख्या का है। जैसे-प्रथम स्थान में १८ का अंक जीवसमासों की संख्या का तथा १ का अंक गति की संख्या का है।

जीव समास

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	१८-१, १-४	सैनी पंचेन्द्रिय में चारों गतियाँ हैं।
२.	इन्द्रिय	१४-१, १-२, १-३, १-४, २-५	
३.	काय	१४-५, ५-१	
४.	योग	१४-३, ४-४, १-१५	सैनी पंचेन्द्रिय में १५ योग हैं।
५.	वेद	१७-१, २-३	
६.	कषाय	१७-२३, २-२५	
७.	ज्ञान	१८-२, १-७	केवलज्ञान पंचेन्द्रिय जीवसमास में होता है।
८.	संयम	१८-१, १-७	
९.	दर्शन	१६-१, २-२, १-३	केवलदर्शन पंचेन्द्रिय जीव समास में होता है।
१०.	लेश्या	१७-३, १-४, १-६	
११.	भव्य	१९-२	
१२.	सम्यक्त्व	८-२, १०-१, १-६	
१३.	संज्ञी	१८-१, १-१	
१४.	आहार	१९-२	
१५.	गुणस्थान	८-२, १०-१, १-१२	१३वाँ, १४वाँ गुणस्थान पंचेन्द्रिय जीवसमास में पाया जाता है।
१६.	जीवसमास	—	
१७.	पर्याप्ति	१४-४, ४-५, १-६	
१८.	प्राण	१४-४, १-६, १-७, १-८, १-९, १-१०	
१९.	संज्ञा	१९-४	
२०.	उपयोग	१६-३, २-४, १-१०	
२१.	ध्यान	१८-८, १-१४	अन्तिम दो ध्यान पंचेन्द्रिय जीवसमास में पाये जाते हैं।
२२.	आस्रव	१४-३८, १-४०, १-४१, १-४२, १-४५, १-५७	
२३.	जाति	इन्द्रिय मार्गणा के समान जानना चाहिए।	
२४.	कुल	इन्द्रिय मार्गणा के समान जानना चाहिए।	

१. प्रश्न : किस-किस जीवसमास में कौन-कौन सी इन्द्रिय के जीव होते हैं?

उत्तर : एकेन्द्रिय सम्बन्धी १४ जीवसमासों में - एकेन्द्रिय

द्वीन्द्रिय जीवसमास में - द्वीन्द्रिय

त्रीन्द्रिय जीवसमास में - त्रीन्द्रिय

चतुरिन्द्रिय जीवसमास में - चतुरिन्द्रिय

सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय जीवसमास में - पंचेन्द्रिय

२. प्रश्न : सबसे अधिक जीवसमास किस काय वालों के होते हैं?

उत्तर : सबसे अधिक जीवसमास वनस्पतिकायिक जीवों के होते हैं -

इनके छह जीवसमास होते हैं -

(१) नित्यनिगोद सूक्ष्म (२) नित्यनिगोद बादर (३) इतर निगोद सूक्ष्म (४) इतर निगोद बादर (५) अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति (६) सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति

३. प्रश्न : किस जीवसमास में कितने योग होते हैं?

उत्तर : जीवसमासों में योग -

	जीवसमास	**योगों की संख्या**	**विशेष**
(१)	१४ (एकेन्द्रिय सम्बन्धी)	३	औदारिक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग
(२)	४ (द्वी.त्री.चतु. असैनीपंचे.)	४	उपर्युक्त तीन के साथ अनुभय वचन योग भी होता है।
(३)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	१५	-

विशेष - पंचेन्द्रिय जीवसमास में १३ वें गुणस्थान की अपेक्षा ७ योग होते हैं तथा १४वें गुणस्थान की अपेक्षा योगातीत जीव भी होते हैं।

४. प्रश्न : किस-किस जीवसमास में औदारिकमिश्र काययोग होता है?

उत्तर : सभी जीवसमासों में औदारिकमिश्र काययोग होता है।

पंचेन्द्रिय जीवसमास में भी तेरहवें गुणस्थान में समुद्घात की अपेक्षा औदारिकमिश्र काययोग होता है।

५. प्रश्न : **किस जीवसमास में कितनी कषायें होती हैं?**

उत्तर : जीवसमासों में कषायें -

	जीवसमास	कषायों की संख्या	विशेष
(१)	१७ (एकेन्द्रिय सम्बन्धी १४ तथा विकलत्रय के तीन)	२३	स्त्री एवं पुरुष वेद बिना
(२)	२ (सैनी तथा असैनी पंचेन्द्रिय)	२५	-

विशेष - (१) सैनी पंचेन्द्रिय जीवसमास में ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा कषायातीत जीव भी होते हैं।

(२) पंचेन्द्रिय जीवसमास वाले (तेरहवें-चौदहवें गुणस्थानवर्ती) कषायातीत ही होते हैं।

६. प्रश्न : **कौन से जीवसमास में सभी ज्ञान होते हैं?**

उत्तर : ऐसा कोई भी जीवसमास नहीं है जिसमें सभी ज्ञान होते हों, क्योंकि केवलज्ञान सैनी पंचेन्द्रिय जीवों के नहीं होता है, और तेरहवें-चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव सैनी-असैनीत्व से रहित होते हैं उनका ग्रहण केवल पंचेन्द्रिय में किया जाता है।

नोट - गोम्मटसार जीवकाण्ड के **आलाप अधिकार** में तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में भी सैनीपञ्चेन्द्रिय जीवसमास माना है, उनकी अपेक्षा सैनी पंचेन्द्रिय जीवसमास में सभी ज्ञान हो सकते हैं।

७. प्रश्न : **चतुरिन्द्रिय जीवसमास में कितने प्रकार के अचक्षुदर्शन होते हैं?**

उत्तर : चतुरिन्द्रिय जीवसमास में तीन प्रकार के अचक्षुदर्शन होते हैं - स्पर्शन इन्द्रिय सम्बन्धी, रसना इन्द्रिय सम्बन्धी तथा घ्राण इन्द्रिय सम्बन्धी।

८. प्रश्न : **कितने जीवसमासों में चक्षुदर्शन होता है?**

उत्तर : तीन जीव समासों में चक्षुदर्शन होता है - चतुरिन्द्रिय, असैनी पःोन्द्रिय तथा सैनी पःोन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास में।

९. प्रश्न : **किस जीवसमास में कितनी लेश्याएँ होती हैं?**

उत्तर : जीवसमासों में लेश्याएँ -

	जीवसमास	लेश्याएँ	विशेष
(१)	१७ (सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय को छोड़कर)	३	कृष्ण,नील, कापोत
(२)	असैनी पंचेन्द्रिय	४	कृष्ण,नील,कापोत,पीत
(३)	सैनी पंचेन्द्रिय	६	कृष्ण,नील,कापोत पीत,पद्म,शुक्ल

विशेष - (१) पंचेन्द्रिय जीवसमास में तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा एक शुक्ल लेश्या भी होती है।

(२) पंचेन्द्रिय जीवसमास में चौदहवें गुणस्थान वाले लेश्यातीत भी होते हैं।

१०. प्रश्न : किस जीवसमास में कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं?

उत्तर : जीवसमासों में पर्याप्तियाँ -

	जीवसमास	**पर्याप्तियों की संख्या**	**पर्याप्तियों के नाम**
(१)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	६	आ.श.इ.श्वा.भा.म.
(२)	चार (द्वी.त्री.चतु.असै.पं.)	५	द्वीन्द्रिय आदि प्रत्येक के एक-एक जीवसमास में मन:पर्याप्ति बिना ५ पर्याप्तियाँ
(३)	चौदह (एकेन्द्रिय सम्बन्धी)	४	आहार, शरीर, इन्द्रिय एवं श्वासो.

नोट - छह पर्याप्तियों में केवल पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जीव समास भी होता है।

११. प्रश्न : किस-किस जीवसमास में सात प्राण होते हैं?

उत्तर : तीन जीव समासों में सात प्राण होते हैं -

(१) त्रीन्द्रिय सम्बन्धी (पर्याप्तक के)

(२) असैनी पंचेन्द्रिय

(३) सैनी पंचेन्द्रिय

नोट - सैनी तथा असैनी पंचेन्द्रिय के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था तथा लब्ध्यपर्याप्तक एवं कार्मण काययोग में सात प्राण होते हैं।

१२. प्रश्न : किस-किस जीवसमास में कौन-कौन से उपयोग होते हैं?

उत्तर : जीवसमासों में उपयोग -

	जीवसमास	**उपयोगों की संख्या**	**विशेष**
(१)	१६ (एकेन्द्रिय सम्बन्धी १४, द्वीन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय)	३	कुमति, कुश्रुत, अचक्षुदर्शन
(२)	२ (चतुरिन्द्रिय तथा असैनी पंचेन्द्रिय)	४	उपर्युक्त तीन के साथ चक्षुदर्शन भी होता है।
(३)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	१०	केवलज्ञानो. तथा केवलदर्शनो. बिना

नोट - (१) पंचेन्द्रिय जीवसमास में केवलज्ञानोपयोग तथा केवलदर्शनोपयोग पाये जाते हैं।
(२) ये दोनों उपयोग जीवसमासातीत सिद्ध भगवान के भी पाये जाते हैं।

१३.प्रश्न : किस जीवसमास में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : जीवसमासों में आस्रव के प्रत्यय -

	जीवसमास	आस्रव के प्रत्यय	विशेष
(१)	१४ (एकेन्द्रिय सम्बन्धी)	३८	५ मि. ७ अवि. २३ क. ३ यो.
(२)	१ (द्वीन्द्रिय सम्बन्धी)	४०	५ मि. ८ अवि. २३ क. ४ यो.
(३)	१ (त्रीन्द्रिय सम्बन्धी)	४१	५ मि. ९ अवि. २३ क. ४ यो.
(४)	१ (चतुरिन्द्रिय सम्बन्धी)	४२	५ मि. १० अवि. २३ क. ४ यो.
(५)	१ (असैनी पंचेन्द्रिय)	४५	५ मि. ११ अवि. २५ क. ४ यो.
(६)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	५७	५ मि. १२ अवि. २५ क. १५ यो.

नोट - पंचेन्द्रिय जीवसमास में सयोग केवली भगवान के आस्रव के ७ प्रत्यय होते हैं तथा अयोगकेवली भगवान के आस्रव का एक भी प्रत्यय नहीं पाया जाता है।

१४.प्रश्न : किस-किस जीवसमास में कौन-कौनसी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : जीवसमासों में जातियाँ -

	जीवसमास	जातियाँ	विशेष
(१)	१२ (पृ.ज.अ.वा. नित्यनिगोद तथा इतरनिगोद के सूक्ष्म बादर)	७ लाख	पृथ्वीकायिकादिक प्रत्येक जीवसमास में ७-७ लाख जातियाँ पाई जाती हैं।
(२)	२ (सप्रतिष्ठित प्रत्येक तथा अप्रतिष्ठित प्रत्येक)	१० लाख	दोनों ही वनस्पतिकायिक के भेद हैं।
(३)	३ (द्वी.त्री.चतु.)	२ लाख	प्रत्येक की दो-दो लाख जातियाँ हैं।
(४)	१ (असैनी पंचेन्द्रिय)	४ लाख	असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी।
(५)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	२६ लाख	देव, नारकी, मनुष्य तथा सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी।

नोट - (१) केवली भगवान के पंचेन्द्रिय जीवसमास होता है, उनके मनुष्य सम्बन्धी १४ लाख जातियाँ होती हैं।
(२) पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की जातियाँ सैनी-असैनी दोनों के होती हैं।

१५. प्रश्न : किस जीवसमास में कितने कुल होते हैं?

उत्तर : जीवसमासों में कुल

	जीवसमास	कुल	विशेष
(१)	२ (तेजकायिक सूक्ष्म बादर)	३ लाख करोड़	इन दोनों के तीन-तीन लाख करोड़ कुल होते हैं।
(२)	५ (जलकायिक सूक्ष्म-बादर वायुकायिक सूक्ष्म-बादर तथा द्वीन्द्रिय)	७ लाख करोड़	प्रत्येक के ७-७ लाख करोड़ कुल होते हैं।
(३)	६ (वनस्पतिकायिक सम्बन्धी)	२८ लाख करोड़	प्रत्येक में....
(४)	१ (त्रीन्द्रिय सम्बन्धी)	८ लाख करोड़	
(५)	३ (चतुरिन्द्रिय, असैनी तथा सैनी थलचर पंचेन्द्रिय)	९ लाख करोड़	छाती के बल से रेंगकर चलने वाले पचंन्द्रियों को ग्रहण करना चाहिए।
(६)	२ (सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय थलचर चौपाये तिर्यञ्च)	१० लाख करोड़	दोनों के १०/ १० लाख करोड़ कुल होते हैं।
(७)	२ (सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय	१२ लाख करोड़	नभचर जीवों के
(८)	२ (सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय)	१२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़	जलचर जीवों के
(९)	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)	१०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़	तीन गति तथा सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के

नोट - पंचेन्द्रिय जीवसमास में मनुष्य सम्बन्धी १४ लाख करोड़ कुल होते हैं।

विशेष प्रश्नोत्तर

१६. प्रश्न : गर्भज जीवों के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : गर्भज जीवों के २४ जीवसमास होते हैं - १६ तिर्यःों सम्बन्धी, ८ मनुष्यों के।

१७. प्रश्न : कबूतर के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : कबूतर के १२ जीवसमास होते हैं?

कर्मभूमिया तिर्यःा दो प्रकार के होते हैं - संज्ञी तथा असंज्ञी।

ये दोनों भी दो-दो प्रकार के होते हैं -

गर्भज ४ तथा सम्मूर्च्छनज ६ = १०

गर्भज सैनी - पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त - २

गर्भज असैनी - पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त - २

सम्मूर्च्छन सैनी - पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त, लब्ध्यपर्याप्त - ३

सम्मूर्च्छन असैनी - पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त, लब्ध्यपर्याप्त - ३

भोगभूमिया कबूतर के २-पर्याप्तक तथा निर्वृत्यपर्याप्तक (गर्भज संज्ञी ही होते हैं)

नोट - इसी प्रकार थलचर जीवों के जानना चाहिए।

१८.प्रश्न : गर्भज जीवों की कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : गर्भज जीवों की १८ लाख जातियाँ होती हैं -

४ लाख पंचेन्द्रिय तिर्यःग्रों की तथा १४ लाख मनुष्यों की।

१९.प्रश्न : सम्मूर्च्छन जीवों की कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : सम्मूर्च्छन जीवों की ७६ लाख जातियाँ होती हैं -

एकेन्द्रिय जीवों की - ५२ लाख विकलत्रय की - ६ लाख

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की - ४ लाख मनुष्यों की - १४ लाख

२०.प्रश्न : सम्मूर्च्छन जीवों के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : सम्मूर्च्छन जीवों के १४८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -

एकेन्द्रिय जीवों के - ६७ लाख करोड़ पंचेन्द्रिय तिर्यःग्रों के -४३ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़

विकलत्रय जीवों के - २४ लाख करोड़ मनुष्यों के - १४ लाख करोड़

२१.प्रश्न : गर्भज जीवों के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : गर्भज जीवों के ५७ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -

पंचेन्द्रिय तिर्यःग्रों के ४३ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ तथा मनुष्यों के १४ लाख करोड़।

२२.प्रश्न : मछली के कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : मछली के दस जीवसमास होते हैं -

गर्भजों के ४-पर्याप्तक संज्ञी-असंज्ञी, निर्वृत्यपर्याप्तक संज्ञी-असंज्ञी

सम्मूर्च्छन के ६ -पर्याप्तक संज्ञी-असंज्ञी, निर्वृत्यपर्याप्तक संज्ञी-असंज्ञी तथा लब्ध्यपर्याप्तक संज्ञी असंज्ञी। कुल - ४+६ = १०

नोट - (१.) भोगभूमियों में जलचर जीव नहीं होते हैं।

(२.) इसी प्रकार सभी जलचर जीवों के जानना चाहिए।

प्रश्न पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये -

(i) **एकेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास किस-किस गति में होते हैं?**

(अ) मनुष्यगति (ब) स्थावरगति

(स) तिर्यःगगति (द) सिद्ध गति

(ii) **द्वीन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास किन जीवों के होता है?**

(अ) पर्याप्त (ब) अपर्याप्तक

(स) पर्याप्तक और अपर्याप्तक (द) कोई नहीं

(iii) **सबसे ज्यादा जीवसमास किस काय के जीवों के होते हैं?**

(अ) स्थावर (ब) त्रसकाय

(स) वनस्पतिकाय (द) पृथ्वीकाय

(iv) **किस जीवसमास में दस उपयोग होते हैं?**

(अ) सैनी पंचेन्द्रिय (ब) एकेन्द्रिय

(स) द्वीन्द्रिय (द) कोई नहीं

(v) **किस जीवसमास में चौरासी लाख जातियाँ होती हैं?**

(अ) चारों गति (ब) पंचेन्द्रिय

(स) एकेन्द्रिय (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) तीन जीवसमास में कौनसा दर्शन होता है?

(ii) कितने जीवसमास में ४ उपयोग होते हैं?

(iii) कितने जीवसमासों में १० लाख जातियाँ होती हैं?

(iv) कितने जीवसमासों में गर्भज जीव होते हैं?

(v) समासातीत जीव कौन होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) सैनी पंचेन्द्रिय जीवसमास अचक्षुदर्शन में भी होता है।

(ii) उन्नीस जीवसमासों में धर्मध्यान पाया जाता है।

(iii) दो जीवसमासों में पंचेन्द्रिय जीव होते हैं।
(iv) केवली भगवान समासातीत होते हैं।
(v) भोगभूमि में भी कबूतर-सम्बन्धी जीवसमास होते हैं।

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) त्रस के जीवसमासों में............योग................गति.............संज्ञाएँ होती हैं।
(ii) समासातीत जीवों के..............ज्ञान.............दर्शन..............सम्यक्त्व होता है।
(iii) सैनी पंचेन्द्रिय जीवसमास में..............संयम................काय तथा...... वेद होते हैं।
(iv) १४ जीवसमासों में.............उपयोग.............योग तथा.............लेश्याएँ होती हैं।
(v) छह जीवसमासों में..........काय..........जाति तथा आस्रव के ....प्रत्यय होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	वनस्पति	-	१४ जीवसमास
(ii)	तिर्यःगगति	-	१ जीवसमास
(iii)	२ जीवसमास	-	सिद्ध भगवान
(iv)	१ जीवसमास	-	९ जीवसमास
(v)	३ योग	-	पंचेन्द्रिय
(vi)	समासातीत	-	६ जीवसमास
(vii)	द्वीन्द्रिय	-	१९ जीवसमास
(viii)	सासादन सम्यक्त्व	-	१५ योग

– उत्तरमाला –

१. (i) स (ii) स (iii) स (iv) अ (v) द
२. (i) चक्षुदर्शन (ii) २ (iii) २ (iv) २४ (v) सिद्ध भगवान
३. (i) हाँ (ii) ना (iii) हाँ (iv) ना (v) हाँ
४. (i) १५, ४,४ (ii) केवल, केवल, क्षायिक (iii) ७, त्रस, ३
(iv) ३,३,३ (v) वनस्पति, ३८ लाख, ३८
५. (i) ६ जीवसमास (ii) १९ जीवसमास (iii) पंचेन्द्रिय (iv) १५ योग
(v) १४ जीवसमास (vi) सिद्ध भगवान (vii) १ जीवसमास (viii) ९ जीवसमास।

१७. पर्याप्ति

१. **प्रश्न : पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : आहार, भाषा तथा मनोवर्गणा के परमाणुओं को शरीर, इन्द्रिय आदि रूप परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को पर्याप्ति कहते हैं। **(का.अ. १४१)**

जो पर्याप्ति नामकर्म के उदय से अपने योग्य सर्व पर्याप्तियों को पूर्ण करने की शक्ति से सम्पन्न होते हैं उन्हें पर्याप्तक जानना चाहिए। **(गो.जी. ११८)**

आहार, शरीर आदि की निष्पत्ति को पर्याप्ति कहते हैं।

गृहीत आहारादि कारणों की पूर्णता को पर्याप्ति कहते हैं। **(मू.आ. १०४५)**

२. **प्रश्न : पर्याप्तियाँ कितनी होती हैं?**

उत्तर : पर्याप्तियाँ छह होती हैं -

(१) आहार पर्याप्ति (२) शरीर पर्याप्ति (३) इन्द्रिय पर्याप्ति (४) श्वासोच्छ्‌वास पर्याप्ति (५) भाषा पर्याप्ति (६) मन:पर्याप्ति **(मू.आ. १०४७)**

३. **प्रश्न : आहार पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : तीन शरीर तथा छह पर्याप्तियों के योग्य पुद्‌गल स्कन्धों को खल और रस भाग रूप से परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को आहार पर्याप्ति कहते हैं। जैसे-तिलों को पेलकर खल और तेल के रूप में परिवर्तित करते हैं वैसे ही शरीर नामकर्म का उदय होते ही शरीर और पर्याप्तियों के योग्य जो पुद्‌गल स्कन्ध जीव ग्रहण करता है, उनको खल और रस भाग रूप से परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को आहार पर्याप्ति कहते हैं। **(गो.जी. ११९)**

गृहीत आहार वर्गणाओं को खल तथा रस रूप से परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को आहार पर्याप्ति कहते हैं। **(का.अ. १३५ टी.)**

४. **प्रश्न : शरीर पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : खल और रस रूप से परिणत पुद्‌गल स्कन्धों में खल भाग को हड्डी आदि कठोर अवयव रूप तथा रस भाग को खून आदि द्रव्य (तरल) अवयव रूप परिणमाने की शक्ति के पूर्ण होने को शरीर पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. १/२५४)**

५. **प्रश्न : इन्द्रिय पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : उन्हीं नोकर्मवर्गणा के स्कन्धों में से कुछ वर्गणाओं को अपनी-अपनी इन्द्रिय के स्थान पर उस द्रव्येन्द्रिय के आकार परिणमाने की शक्ति के पूर्ण होने को इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं। योग्य देश में स्थित रूपादि युक्त पदार्थों के ग्रहण करने रूप शक्ति की उत्पत्ति के निमित्त-भूत पुद्‌गल प्रचय की प्राप्ति को इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. १/२५४)**

६. **प्रश्न : इन्द्रिय पर्याप्ति की शक्ति किस कर्म की अपेक्षा होती है?**

उत्तर : इन्द्रिय पर्याप्ति की शक्ति के पूर्ण होने में ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वीर्यान्तराय कर्म के

क्षयोपशम तथा जाति नामकर्म के उदय की अपेक्षा होती है। **(गो.जी. ११९)**

७. प्रश्न : **इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण हो जाने पर भी बाह्य पदार्थों का ग्रहण क्यों नहीं होता है?**

उत्तर : इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण हो जाने पर भी उसी समय बाह्य पदार्थ सम्बन्धी ज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि उस समय उसके उपकरण रूप द्रव्येन्द्रियाँ नहीं पाई जाती हैं। **(ध. १/२५५)**

८. प्रश्न : **श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : उच्छ्वास और नि:श्वास रूप शक्ति की पूर्णता के निमित्तभूत पुद्‌गल प्रचय की प्राप्ति को श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. १/२५४)**

९. प्रश्न : **भाषा पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : स्वर नामकर्म के उदय से भाषा वर्गणा रूप पुद्‌गल स्कन्धों को सत्यादि भाषा रूप से परिणमाने की शक्ति की निष्पत्ति को भाषा पर्याप्ति कहते हैं। **(गो.जी. ११९)**

भाषा वर्गणा के स्कन्धों के निमित्त से चार प्रकार की भाषा रूप से परिणमन करने की शक्ति के निमित्तभूत नोकर्म पुद्‌गल प्रचय की प्राप्ति को भाषा पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. १/२५४)**

१०.प्रश्न : **मन:पर्याप्ति किसे कहते हैं?**

उत्तर : अनुभूत अर्थ के स्मरण रूप शक्ति के निमित्तभूत मनोवर्गणा के स्कन्धों के निष्पन्न पुद्‌गल प्रचय को मन:पर्याप्ति कहते हैं। अथवा द्रव्यमन के आलम्बन से अनुभूत अर्थ के स्मरण रूप शक्ति की उत्पत्ति को मन:पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. १/२५४)**

११.प्रश्न : **संसार में कितनी अवस्था वाले जीव पाये जाते हैं?**

उत्तर : संसार में दो अवस्था वाले जीव पाये जाते हैं -

(१) पर्याप्तावस्था वाले (२) अपर्याप्तावस्था वाले

अपर्याप्त अवस्था दो प्रकार की है - (१) निर्वृत्यपर्याप्तावस्था (२) लब्ध्यपर्याप्तावस्था

निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था का पर्याप्तक जीवों में ही ग्रहण होता है। **(ध. १/२५४)**

१२.प्रश्न : **निर्वृत्यपर्याप्तक किसे कहते हैं?**

उत्तर : पर्याप्ति नामकर्म के उदय से एकेन्द्रियादि जीव अपने-अपने योग्य पर्याप्तियों की सम्पूर्णता की शक्ति से युक्त होते हैं। जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती उतने काल तक जीव निर्वृत्यपर्याप्तक होता है। **(गो.जी. १२१)**

जीव पर्याप्ति को ग्रहण करते हुए जब तक मन:पर्याप्ति को समाप्त नहीं कर लेता है तब तक निर्वृत्यपर्याप्तक कहा जाता है। **(का.अ. १३६)**

१३.प्रश्न : **लब्ध्यपर्याप्तक किसे कहते हैं?**

उत्तर : अपर्याप्त नामकर्म के उदय से उत्पन्न हुई शक्ति से जिन जीवों की शरीर पर्याप्ति पूर्ण न करके मरने रूप अवस्था विशेष उत्पन्न हो जाती है उन्हें अपर्याप्त कहते हैं। **(ध. १/२९७)**

जो जीव श्वास के अठारहवें भाग में मर जाता है एक भी पर्याप्ति को पूर्ण नहीं कर पाता है उसे लब्धि अपर्याप्तक कहते हैं। **(का.अ. १३७)**

लब्धि-अपनी पर्याप्ति को पूर्ण करने की योग्यता से अपर्याप्त अर्थात् अनिष्पन्न जीव लब्ध्यपर्याप्त है ऐसी निरुक्ति है। **(गो.जी. १२२ टी.)**

१४. प्रश्न : निर्वृत्यपर्याप्तक से पर्याप्तक को ग्रहण करना चाहिए या लब्ध्यपर्याप्तक को?

उत्तर : निर्वृत्यपर्याप्तक से पर्याप्तक को ग्रहण करना चाहिए क्योंकि जब तक पर्याप्तियाँ पूर्ण नहीं हो जाती हैं तब तक इसका मरण नहीं होता है अर्थात् निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में मरण नहीं होता है और वहाँ नियम से पर्याप्तियाँ पूर्ण होती हैं।

१५. प्रश्न : निर्वृत्यपर्याप्तक को पर्याप्तक कैसे कह सकते हैं?

उत्तर : नहीं, क्योंकि नियम से शरीर को उत्पन्न करने वाले जीवों के होने वाले कार्य में यह कार्य हो गया इस प्रकार उपचार कर लेने से पर्याप्त संज्ञा कर लेने में कोई विरोध नहीं आता है। अथवा पर्याप्त नामकर्म से युक्त होने के कारण पर्याप्त संज्ञा दी गई है। **(ध. १/२५४)**

१६. प्रश्न : पर्याप्तियों के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : पर्याप्तियों के ३ स्थान होते हैं -

(१) ६ पर्याप्ति रूप - सैनी पंचेन्द्रिय जीव

(२) ५ पर्याप्ति रूप - द्वीन्द्रिय से असैनी पंचेन्द्रिय पर्यन्त

(३) ४ पर्याप्ति रूप - एकेन्द्रिय जीव **(गो.जी. ११९)**

अर्थात् छह पर्याप्ति वाले, पाँच पर्याप्ति वाले और चार पर्याप्ति वाले जीव होते हैं। **(गो.जी.११९)**

१७. प्रश्न : विग्रहगति में जीव पर्याप्तक होता है या अपर्याप्तक?

उत्तर : विग्रहगति में स्थित जीवों का अपर्याप्तकों में ही अन्तर्भाव किया है। इसमें अतिप्रसंग दोष भी नहीं आता है, क्योंकि कार्मण शरीर में स्थित जीवों के अपर्याप्तकों के सामर्थ्याभाव, उपपादयोग स्थान,[१] एकांतानुवृद्धियोगस्थान[२] और गति तथा आयु सम्बन्धी प्रथम, द्वितीय

---

१. पर्याय धारण करने के पहले समय में तिष्ठते हुए जीव के उपपाद योग स्थान होता है। **(गो.क. २१९)** उपपाद योग उत्पन्न होने के प्रथम समय में ही होता है, इसका जघन्य व उत्कृष्ट काल एक समय मात्र है। **(ध. १०/४२०)**

२. उत्पन्न होने के द्वितीय समय से लेकर शरीर पर्याप्ति से अपर्याप्त रहने के अंतिम समय तक एकान्तानुवृद्धि योग होता है। **(ध. १०/४२०)**

और तृतीय समयमें होने वाली अवस्था के द्वारा जितनी समीपता पाई जाती है, उतनी शेष प्राणियों के नहीं पाई जाती है। अत: सम्पूर्ण प्राणियों की दो अवस्थाएँ ही होती हैं। इनसे भिन्न कोई तीसरी अवस्था नहीं होती है। **(ध. १/३३४)**

१८.प्रश्न : किन-किन जीवों के कितनी-कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं?

उत्तर : पृथ्वीकायिक से लेकर वनस्पति कायिक पर्यन्त एकेन्द्रिय जीवों के चार पर्याप्तियाँ होती हैं -

आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तथा असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के पाँच पर्याप्तियाँ होती हैं -

आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास एवं भाषा।

संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के छहों पर्याप्तियाँ होती हैं -

आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा एवं मन: पर्याप्ति। **(मू. १०४८-४९)**

१९.प्रश्न : किस जन्म वाले के कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?

उत्तर : जन्म में पर्याप्तियों की विवक्षा-

गर्भ-जन्म वाले के कम-से-कम पाँच एवं अधिक-से-अधिक ६ पर्याप्तियाँ होती हैं। असंज्ञी पंचेन्द्रिय के पाँच एवं संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यों के ६ पर्याप्तियाँ ग्रहण करना चाहिए।

सम्मूर्च्छन जन्म वाले एकेन्द्रिय जीवों के चार (भाषा एवं मन:पर्याप्ति बिना) पर्याप्तियाँ। द्वीन्द्रियादि असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के पाँच (मन: पर्याप्ति बिना) पर्याप्तियाँ। तथा सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के छहों पर्याप्तियाँ ग्रहण करना चाहिए।

सम्मूर्च्छन जन्म वाले जो लब्ध्यपर्याप्तक जीव हैं, उनके यथायोग्य चार, पाँच, छह अपर्याप्तियाँ होती हैं।

निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में जीवों के यथायोग्य अपर्याप्तियाँ होती हैं, लेकिन इनके नियम से पर्याप्तियाँ पूर्ण होती हैं।

लब्ध्यपर्याप्तक जीव सम्मूर्च्छन जन्म वाले ही होते हैं।

उपपाद जन्म वाले अर्थात् देव-नारकियों के छह पर्याप्तियाँ होती हैं।

२०.प्रश्न : अतीत पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर : छह पर्याप्ति के अभाव को अतीत पर्याप्ति कहते हैं। **(ध. २/४१६)**

तालिका संख्या ७१

छह पर्याप्तियाँ

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	यहाँ सैनी को ही ग्रहण करना चाहिए।
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	योगातीत जीव भी होते हैं।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	८	३ कुज्ञान ५ ज्ञान	
८.	संयम	७	सा.छे.परि.सू.य.संय. असं.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अचक्षु. अवधि.केवल.	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	लेश्यातीत जीव भी होते हैं।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	अनाहारक चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा जानना चाहिए।
१५.	गुणस्थान	१४	पहले से चौदहवें गुणस्थान तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	—	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१६	४ आ. ४ रौ. ४ ध. ४ शु.	
२२.	आस्रव	५३	५मि.१२ अवि.२५ क.११यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	सैनी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क.	सैनी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : छह पर्याप्ति वालों के कौन-कौनसे योग नहीं होते हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वालों के चार योग नहीं होते हैं -

(१) औदारिकमिश्र (२) वैक्रियिकमिश्र (३) आहारकमिश्र (४) कार्मण **(गो.जी.आ.अ.)**

नोट - (१) औदारिकमिश्र आदि तीन योग निर्वृत्यपर्याप्तक एवं लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था में होते हैं तथा कार्मण काय योग अनाहारक अवस्था में होता है। **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

(२) निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में ही उपचार से पर्याप्तक मान लेने पर कार्मण काययोग को छोड़कर शेष चौदह योग होते हैं।

२. प्रश्न : छह पर्याप्ति वालों के कितने काययोग होते हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वालों के कम-से-कम एक औदारिक काययोग होता है। औदारिक काय-योग पाँचवें तथा सातवें गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान तक होता है। **अथवा** छह पर्याप्ति वाले अयोग केवली भगवान योग से रहित होते हैं।

छह पर्याप्ति वालों के अधिक-से-अधिक ३ काययोग होते हैं।

औदारिक काययोग, वैक्रियिक काययोग, आहारक काययोग। ये योग त्रस काय, संज्ञी पंचेन्द्रिय....... आदि मार्गणाओं में होते हैं।

३. प्रश्न : छह पर्याप्ति वाले नपुंसकवेदी के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वाले नपुंसकवेदी के ८२$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -

नारकियों के	-	२५ लाख करोड़
मनुष्यों के	-	१४ लाख करोड़
पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के	-	४३$\frac{१}{२}$ लाख करोड़

४. प्रश्न : छह पर्याप्ति वालों के संयम मार्गणा के कौन-कौन से भेदों का अभाव हो सकता है?

उत्तर : छह पर्याप्ति वालों के यथाख्यात संयम को छोड़कर शेष संयम का अभाव हो सकता है, क्योंकि बारहवें आदि गुणस्थानवर्ती जीवों के यथाख्यात संयम होने के बाद जब तक छह पर्याप्तियाँ रहती हैं तब तक नियम से रहता है।

नोट - तेरहवें गुणस्थान की कार्मण काययोग एवं निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में भी यथाख्यात संयम रहता है।

५. प्रश्न : छह पर्याप्ति वाले मिथ्यादृष्टि के कम-से-कम कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वाले मिथ्यादृष्टि के कम-से-कम भी १० प्राण होते हैं, क्योंकि छह पर्याप्तियाँ पूर्ण होने पर १० प्राण हो जाते हैं, पर्याप्तियाँ पूर्ण होने के पहले उसके छह अपर्याप्तियाँ होती हैं।

५ इन्द्रिय, ३ बल, १ श्वासोच्छ्वास, १ आयु **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

नोट - (१.) निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में उपचार से पर्याप्त मान लेने पर वचनबल तथा मनोबल एवं श्वासोच्छ्वास को छोड़कर शेष सात प्राण कह सकते हैं।

६. प्रश्न : क्या छह पर्याप्ति वालों के १, २, ३ प्राण भी होते हैं ?

उत्तर : हाँ, छह पर्याप्ति वालों के १, २, ३ प्राण भी हो सकते हैं, क्योंकि छह पर्याप्ति वाले जीव मिथ्यादृष्टि से चौदहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं। चौदहवें गुणस्थान में १ प्राण।

तेरहवें गुणस्थान में सयोग केवली भगवान के योगनिरोध के समय २ एवं ३ प्राण का स्थान बनता है। वहाँ उनके छहों पर्याप्तियाँ भी होती हैं।

७. प्रश्न : छह पर्याप्ति वालों के कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वालों के २६ लाख जातियाँ होती हैं -

देवों की	४ लाख,	मनुष्यों की १४ लाख,
नारकियों की	४ लाख,	पंचेन्द्रिय तिर्यःगों की ४ लाख।

इनमें से तिर्यञ्च सम्बन्धी चार लाख जातियाँ पाँच पर्याप्ति वालों के भी होती हैं।

८. प्रश्न : छह पर्याप्ति वाले कौन-कौन सी मार्गणा से अतीत हो सकते हैं?

उत्तर : छह पर्याप्ति वाले पाँच मार्गणाओं से अतीत हो सकते हैं -

(१) **योग** - चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा।

(२) **वेद** - नवें गुणस्थान के अवेद भाग से चौदहवें तक।

(३) **कषाय** - ग्यारहवें से चौदहवें गुणस्थान तक।

(४) **लेश्या** - चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा।

(५) **संज्ञी** - तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा।

तालिका संख्या ७२

पाँच पर्याप्तियाँ

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यञ्च	
२.	इन्द्रिय	४	द्वी.त्री.चतु.पंचे.	असैनी पंचेन्द्रिय को ग्रहण करना चाहिए।
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	२	१ व. १ का.	अनुभय वचन योग है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	२	कुमति, कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	२	चक्षु. अचक्षु.	
१०.	लेश्या	४	कृ.नी.का.पी.	पद्म-शुक्ल लेश्या नहीं हैं।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	पहला	
१६.	जीवसमास	४	द्वी.त्री.चतु.असैनी पंचे.सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	५	—	मन:पर्याप्ति नहीं है।
१८.	प्राण	९	५ इन्द्रिय.२ बल.श्वा.आ.	मनोबल प्राण नहीं है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	४	२ ज्ञानो. २ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	४३	५मि.११ अवि.२५ क.२ यो.	
२३.	जाति	१० ला.	द्वीन्द्रिय से असैनी पंचे. तक	एकेन्द्रिय एवं सैनी पंचे. की जाति नहीं है।
२४.	कुल	६७$\frac{१}{२}$ ला.क.	द्वीन्द्रिय से असैनी पंचे. तक	

१. प्रश्न : क्या सभी पाँच पर्याप्ति वालों के तीन वेद होते हैं?

उत्तर : नहीं, पाँच पर्याप्ति वालों में द्वीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय पर्यन्त तथा असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यःाों में जो सम्मूर्च्छन जन्म वाले हैं उनके तो केवल एक नपुंसक वेद ही होता है। मात्र असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यःाों में जो गर्भ जन्म वाले हैं उनके ही तीनों वेद होते हैं।

इसी प्रकार इन्हीं के पच्चीस कषायें भी जाननी चाहिए।

२. प्रश्न : पाँच पर्याप्ति वालों के कितने योग होते हैं ?

उत्तर : पाँच पर्याप्ति वालों के २ योग होते हैं।

औदारिक काययोग तथा अनुभय वचन योग। यद्यपि असंज्ञी जीवों के औदारिक मिश्र एवं कार्मण काययोग भी होता है, लेकिन उनके जब ये दोनों योग होते हैं, तब पाँच पर्याप्तियाँ नहीं होती हैं, क्योंकि पाँच पर्याप्ति पूर्ण होने पर ही जीव पर्याप्त होता है।

३. प्रश्न : क्या सभी पाँच पर्याप्ति सम्बन्धी जातियों में चक्षुदर्शन होता है ?

उत्तर : नहीं, पाँच पर्याप्ति सम्बन्धी जातियों में से मात्र ६ लाख जातियों में चक्षुदर्शन होता है।

चतुरिन्द्रिय की २ लाख तथा असैनी पंचेन्द्रिय की ४ लाख। सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय की जातियाँ अलग-अलग नहीं हैं, क्योंकि पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में ही सैनी-असैनी का विभाजन है।

यद्यपि द्वीन्द्रिय-त्रीन्द्रिय भी असैनी जीवों में आते हैं, लेकिन इनके चक्षुदर्शन नहीं होता है।

नोट :- इसी प्रकार कुल का विवरण भी जानना चाहिए अर्थात् इनके ५२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं।

४. प्रश्न : क्या सभी पाँच पर्याप्ति वालों के चार लेश्याएँ होती हैं?

उत्तर : नहीं, सभी पाँच पर्याप्ति वालों के चार लेश्याएँ नहीं होती हैं, मात्र असैनी पंचेन्द्रिय के ही पीत लेश्या होती है, शेष जीवों के तो तीन अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

५. प्रश्न : क्या पाँच पर्याप्ति वाले सभी असैनी होते हैं?

उत्तर : हाँ, यद्यपि सैनी-असैनी के भेद पंचेन्द्रिय तिर्यंच के ही कहे जाते हैं फिर भी जिनके मन नहीं पाया जाता है उन्हें असैनी कहते हैं। एकेन्द्रिय आदि जीवों के भी मन नहीं होता है इसलिए वे भी असैनी ही हैं। यहाँ पाँच पर्याप्ति वाले असैनियों में एकेन्द्रिय को छोड़कर द्वीन्द्रिय आदि असैनी पंचेन्द्रिय पर्यन्त को ग्रहण करना चाहिए।

६. प्रश्न : पाँच पर्याप्ति वालों के कितनी अविरतियाँ होती हैं?

उत्तर : पाँच पर्याप्ति वालों के अविरतियाँ - ८, ९, १०, ११

द्वीन्द्रिय जीवों के - ८ (षट् कायिक जीवों की हिंसा सम्बन्धी तथा दो इन्द्रियाँ वश में न होना)

त्रीन्द्रिय जीवों के - ९ (षट् कायिक जीवों की हिंसा सम्बन्धी तथा तीन इन्द्रियाँ वश में न होना)

चतुरिन्द्रिय जीवों के - १० (षट् कायिक जीवों की हिंसा सम्बन्धी तथा चार इन्द्रियाँ वश में न होना)

असैनी पंचेन्द्रिय जीवों के - ११ (मन सम्बन्धी अविरति के बिना)

७. प्रश्न : पाँच पर्याप्ति वालों के प्राणों सम्बन्धी कौन-कौन से विकल्प नहीं होते हैं?

उत्तर : पाँच पर्याप्ति वालों के प्राणों सम्बन्धी पाँच विकल्प नहीं होते हैं -

४ प्राण - चार एवं छह पर्याप्ति वालों के (एकेन्द्रिय तथा सयोग केवली भगवान के)

१० प्राण - छह पर्याप्ति वालों के (सैनी पंचेन्द्रिय के)

१ प्राण - छह पर्याप्ति वालों के (चौदहवें गुणस्थान में)

३ प्राण - छह पर्याप्ति वालों के (सयोग केवली)

२ प्राण - छह पर्याप्ति वालों के (सयोग केवली भगवान के)

८. प्रश्न : पाँच पर्याप्ति वालों के कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : पाँच पर्याप्ति वालों के दस लाख जातियाँ होती हैं -

द्वीन्द्रिय की - २ लाख, चतुरिन्द्रिय की २ लाख,

त्रीन्द्रिय की - २ लाख, असैनी पंचेन्द्रिय की - ४ लाख।

नोट - असैनी पंचेन्द्रिय की ४ लाख जातियाँ सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के भी होती हैं।

९. प्रश्न : पाँच पर्याप्ति वालों के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : पाँच पर्याप्ति वालों के ६७$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -

द्वीन्द्रिय के - ७ लाख करोड़, चतुरिन्द्रिय के - ९ लाख करोड़,

त्रीन्द्रिय के - ८ लाख करोड़, असैनी पंचेन्द्रिय के - ४३$\frac{१}{२}$ लाख करोड़।

तालिका संख्या ७३

४ पर्याप्तियाँ

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	तिर्यंच	
२.	इन्द्रिय	१	एकेन्द्रिय	
३.	काय	५	पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यन्त	
४.	योग	१	१ का.	औदारिक काय योग
५.	वेद	१	नपुंसक	
६.	कषाय	२३	१६ क. ७ नोक.	दो वेद नहीं हैं।
७.	ज्ञान	२	कुमति, कुश्रुत	
८.	संयम	१	असंयम	
९.	दर्शन	१	अचक्षुदर्शन	
१०.	लेश्या	३	कृ.नी.का.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	१	मिथ्यात्व	
१३.	संज्ञी	१	असैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१	प्रथम	
१६.	जीवसमास	१४	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	४	आ.श.इ. श्वा.	
१८.	प्राण	४	१ इन्द्रिय.१ बल.श्वा.आ.	कायबल प्राण होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	३	२ ज्ञानो. १ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	३६	५ मि. ७ अवि. २३ क. १ यो.	
२३.	जाति	५२ ला.	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	६७ला.क.	एकेन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : **क्या चार पर्याप्तियाँ सभी एकेन्द्रिय जीवों के होती हैं?**

उत्तर : नहीं, चार पर्याप्तियाँ मात्र एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीव के ही होती हैं। निर्वृत्यपर्याप्तक, लब्ध्यपर्याप्तक तथा कार्मण काययोग में स्थित एकेन्द्रिय जीवों के चार पर्याप्तियाँ नहीं होती हैं। वहाँ चार अपर्याप्तियाँ होती हैं।

२. प्रश्न : **४ पर्याप्तियों में कितनी काय के जीव पाये जाते हैं?**

उत्तर : ४ पर्याप्तियों में पाँच काय के जीव पाये जाते हैं -
(१) पृथ्वीकायिक (२) जलकायिक (३) अग्निकायिक (४) वायुकायिक (५) वनस्पतिकायिक।

३. प्रश्न : **चार पर्याप्ति वाले जीवों के सम्यक्त्व मार्गणा के कितने भेद हो सकते हैं?**

उत्तर : चार पर्याप्ति वाले जीवों के एक मिथ्यात्व ही हो सकता है, क्योंकि चार पर्याप्तियाँ एकेन्द्रिय जीवों के होती हैं। यद्यपि एकेन्द्रिय जीवों के सासादन सम्यक्त्व भी होता है परन्तु वह निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था तक ही रहता है, पर्याप्त अवस्था में नहीं और चार पर्याप्तियाँ अपर्याप्तावस्था में नहीं हैं।

४. प्रश्न : **क्या चार पर्याप्ति वाले मिथ्यात्व से रहित भी हो सकते हैं?**

उत्तर : नहीं, चार पर्याप्ति वाले मिथ्यात्व से रहित नहीं हो सकते हैं, क्योंकि चार पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही उनके मिथ्यात्व के उदय से रहित सासादन गुणस्थान समाप्त होकर मिथ्यात्व का उदय आ जाता है, क्योंकि तब तक सासादन सम्यक्त्व का काल समाप्त हो जाता है इसलिए चार पर्याप्ति वालों के मिथ्यात्व से रहित स्थान नहीं बनता है।

५. प्रश्न : **क्या चार पर्याप्ति वालों में सभी एकेन्द्रिय जीव आ जाते हैं?**

उत्तर : नहीं, चार पर्याप्ति वालों में सभी एकेन्द्रिय जीव नहीं आते हैं, क्योंकि सभी एकेन्द्रिय जीव पर्याप्तक ही हों ऐसा कोई नियम नहीं है। कोई एकेन्द्रिय जीव ऐसे भी होते हैं जिनके चार पर्याप्तियाँ नहीं होती हैं जैसे -

(१) लब्ध्यपर्याप्तक - ये पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं।
(२) निर्वृत्यपर्याप्तक - आहार और शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने से पहले निर्वृत्यपर्याप्तक कहलाते हैं तब तक उनके चार पर्याप्तियाँ कैसे हो सकती हैं?

६. प्रश्न : **चार पर्याप्ति वालों के औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग क्यों नहीं होता है?**

उत्तर : चार पर्याप्तियाँ पर्याप्त अवस्था में ही होती हैं, निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने तक ही रहती है, इस अवस्था में जीव के औदारिकमिश्र काययोग रहता है तथा विग्रह गति में कार्मण काययोग होता है वहाँ पर्याप्तियाँ नहीं होती हैं। इसलिए चार पर्याप्ति वालों के औदारिकमिश्र तथा कार्मणकाय योग नहीं होता है।

समुच्चय प्रश्नोत्तर

१. प्रश्न : किस पर्याप्ति में कितने योग होते हैं?

उत्तर : पर्याप्तियों में योग -

पर्याप्तियाँ		**योग**
४ पर्याप्तियों में	-	१ योग (औदारिक काययोग)
५ पर्याप्तियों में	-	२ योग (औदारिक एवं अनुभय वचन योग)
६ पर्याप्तियों में	-	११ योग (४ म.४ व. औदारिक, वैक्रियिक, आहारक काययोग)

अथवा -

आहार पर्याप्ति	-	१४ (कार्मण काययोग बिना)
शरीर पर्याप्ति	-	१४ (४ म. ४ व. ६ काययोग)
इन्द्रिय आदि शेष पर्याप्ति में	-	११ (४ म. ४ व. ३ काययोग) (औदारिक, वैक्रियिक, आहारक काययोग)

नोट - (१) कार्मण काययोग में कोई पर्याप्ति नहीं होती है।

(२) आहारादि पर्याप्तियाँ पूर्ण होने के पश्चात् जीवनभर रहती हैं।

२. प्रश्न : निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के कितने योग होते हैं?

उत्तर : निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के ३ योग होते हैं -

औदारिकमिश्र - मनुष्य, तिर्यःा तथा केवली भगवान के समुद्घात के समय

वैक्रियिकमिश्र - देव-नारकियों के।

आहारकमिश्र - छठे गुणस्थान वाले मुनिराज के।

नोट - निर्वृत्यपर्याप्तक जीव नियम से पर्याप्तियों को पूर्ण करेगा। इसलिए उनके औदारिकादि योग भी कहे जा सकते हैं।

३. प्रश्न : निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के कितनी कषायें होती हैं?

उत्तर : निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के अधिक-से-अधिक पच्चीस कषायें होती हैं। ये कषायें संज्ञी पंचेन्द्रिय गर्भज कर्मभूमिया मनुष्य-तिर्यःाों की अपेक्षा जाननी चाहिए।

तथा कम-से-कम ग्यारह कषायें होती हैं। ये ग्यारह कषायें आहारकमिश्र काययोग वालों की अपेक्षा जानना चाहिए।

तेरहवें गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक जीव कषाय से रहित ही होते हैं।

४. प्रश्न : लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के कितनी कषायें होती हैं?

उत्तर : लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के तेबीस कषायें होती हैं - १६ कषायें तथा ७ नोकषायें। इनके स्त्रीवेद तथा पुरुषवेद नहीं होते हैं, क्योंकि इनका सम्मूर्च्छन जन्म ही होता है।

५. प्रश्न : पर्याप्तियों में प्राणों की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : पर्याप्तियों में प्राणों की विवेचना -

६ पर्याप्ति वालों के १०, ४, ३, २, १ प्राण होते हैं -

१० प्राण - सैनी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा।

४ प्राण - सयोगकेवली की अपेक्षा।

३ प्राण - सयोगकेवली भगवान के जब वचन योग का निरोध हो जाता है तब।

२ प्राण - सयोगकेवली भगवान के जब श्वासोच्छ्वास का निरोध हो जाता है तब। **(गो.जी. ७०१)** और केवली भगवान के कार्मण काययोग में भी दो प्राण होते हैं।

१ प्राण - अयोग केवली जिन की अपेक्षा -

७ प्राण - छह अपर्याप्तियों में होते हैं।

५ पर्याप्ति वालों के ६,७,८,९ प्राण होते हैं -

क्रमश: द्वीन्द्रिय से असैनी पंचेन्द्रिय पर्यन्त पर्याप्त जीवों के होते हैं।

इनमें से ७ प्राण असैनी पंचेन्द्रिय के ५ अपर्याप्तियों में भी होते हैं।

४ पर्याप्ति वालों के ४ प्राण एकेन्द्रिय की अपेक्षा से होते हैं, इन्हीं के ३ प्राण ४ अपर्याप्तियों में होते हैं।

६. प्रश्न : निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में प्राण -

एकेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में - तीन प्राण।

द्वीन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में - चार प्राण।

त्रीन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में - पाँच प्राण।

चतुरिन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में - छह प्राण।

संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में - सात प्राण। **(पं.सं.प्रा.१/५०)**

आहारक मिश्र काययोग में - सात प्राण

तेरहवें गुणस्थानवर्ती भगवन्तों के निर्वृत्यपर्याप्तावस्था में - दो प्राण (कायबल और आयु) **(गो.जी.)**

७. प्रश्न : जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था कहाँ-कहाँ होती है?

उत्तर : जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था -

(१) पहले, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान में, (२) आहारकमिश्र काययोग में, (३) सयोग केवली भगवान के समुद्घात अवस्था में। **(गो.जी.जी. १२६)**

८. प्रश्न : केवली भगवान के अपर्याप्तपना (निर्वृत्यपर्याप्तक) कैसे सम्भव है?

उत्तर : अपूर्ण योग अर्थात् औदारिकमिश्र और कार्मण योग का सद्भाव ही उनके उपचार से अपर्याप्तपने का कारण है। मुख्य रूप से वे अपर्याप्त नहीं हैं। **(गो.जी.मं. १२७)**

९. प्रश्न : दो पर्याप्ति वालों के कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : दो पर्याप्ति वालों के पूरी अर्थात् ८४ लाख जातियाँ हो सकती हैं, क्योंकि दो पर्याप्तियाँ निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में होती हैं, निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था सभी गतियों एवं सभी इन्द्रिय वाले जीवों के होती हैं। **(गो.जी. १२१ के आधार से)**

१०.प्रश्न : जिनके श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण हो गई है उनके कितने प्राण हो सकते हैं?

उत्तर : जिनके श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण हो गई है उनके कम-से-कम चार प्राण हो सकते हैं- स्पर्शन इन्द्रिय, कायबल, श्वासोच्छ्वास, आयु।

विशेष - चौदहवें गुणस्थान में भी श्वासोच्छ्वास प्राण भले ही नहीं हो श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति रहती है क्योंकि उनके छहों पर्याप्तियाँ मानी गई हैं। उनके केवल एक आयु प्राण होता है। तथा अधिक-से-अधिक दस प्राण हो सकते हैं, क्योंकि श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के शेष दो पर्याप्तियाँ भी नियम से पूर्ण होती हैं।

११.प्रश्न : क्या ऐसे कोई पर्याप्तक जीव हैं जिनके श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं होता है?

उत्तर : हाँ (१) चौदहवें गुणस्थान वाले पर्याप्तक जीवों के श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं होता है।

(२) तेरहवें गुणस्थान वाले केवली भगवान जब श्वासोच्छ्वास का निरोध कर देते हैं तब वे शेष समय में पर्याप्त होते हुए भी श्वासोच्छ्वास प्राण से रहित होते हैं।

(३) शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद जब तक श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तब तक।

प्रश्न पत्र

१. प्रश्न : उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये -

(i) **पर्याप्तियाँ कहाँ नहीं होती हैं?**

(अ) चौदहवें गुणस्थान में (ब) कार्मण काययोग में

(स) संसारी जीवों के (द) कोई नहीं।

(ii) **पाँच पर्याप्तियाँ किन जीवों के होती हैं ?**

(अ) विकलत्रय के (ब) स्थावर के

(स) मनुष्यों के (द) कोई नहीं।

(iii) **निर्वृत्यपर्याप्तक जीव किस गति में होते हैं?**

(अ) चारों गतियों में (ब) तिर्यःागति में

(स) सिद्धगति में (द) नरकगति में।

(iv) **लब्ध्यपर्याप्तक जीव किस इन्द्रिय वालों में होते हैं?**

(अ) एकेन्द्रिय (ब) द्वीन्द्रिय

(स) सभी इन्द्रिय वाले (द) त्रीन्द्रिय

(v) **पाँच पर्याप्तियों में कितनी जातियाँ होती हैं?**

(अ) ४ लाख (ब) ६२ लाख

(स) ८४ लाख (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दो -

(i) छह पर्याप्तियाँ किस गुणस्थान तक होती हैं?

(ii) चार पर्याप्ति वालों के कितनी संज्ञाएँ होती हैं?

(iii) पाँच पर्याप्तियों में कितने काय के जीव होते हैं?

(iv) पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले मर जाने वालों को क्या कहते हैं?

(v) निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के कितने गुणस्थान होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए -

(i) छह पर्याप्ति वालों के सात संयम होते हैं?

(ii) चार पर्याप्ति वालों के पाँच मिथ्यात्व होते हैं?

(iii) पाँच पर्याप्तियों में असैनी पंचेन्द्रिय भी होते हैं?

(iv) छह पर्याप्तियों में संयमी जीव ही होते हैं?

(v) अयोग केवली पर्याप्ति से रहित होते हैं?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिए -

(i) छह पर्याप्तियों में....................काय....................कषाय तथा....................संज्ञा होती हैं।

(ii) चार पर्याप्तियों में....................गति....................इन्द्रिय तथा....................जातियाँ होती हैं।

(iii) लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के....................योग....................वेद....................संयम होता है।

(iv) निर्वृत्यपर्याप्तक जीवों के............ज्ञान............दर्शन तथा अधिक-से-अधिक............प्राण होते हैं।

(v) लब्ध्यपर्याप्तक जीव....................तथा....................गति में पाये जाते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये -

	अ		**ब**
(i)	६ पर्याप्ति	-	निर्वृत्यपर्याप्तक
(ii)	५ पर्याप्ति	-	२ गुणस्थान
(iii)	४ पर्याप्ति	-	लब्ध्यपर्याप्तक
(iv)	सूक्ष्म साम्पराय	-	१४ गुणस्थान
(v)	आहारकमिश्र	-	३ योग
(vi)	२ गति	-	६ पर्याप्ति
(vii)	असैनी पंचेन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तक	-	विकलत्रय
(viii)	निर्वृत्यपर्याप्तक	-	एकेन्द्रिय

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) अ (iii) अ (iv) स (v) द

२. (i) चौदहवें (ii) चारों (iii) १ (iv) लब्ध्यपर्याप्तक (v) ५

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) ना (v) ना

४. (i) त्रस, २५,४ (ii) १,१,५२ लाख (iii) २,१,१
(iv) ६,४,७ (v) मनुष्य-तिर्यःा

५. (i) १४ गुणस्थान (ii) विकलत्रय (iii) एकेन्द्रिय (iv) ६ पर्याप्ति
(v) निर्वृत्यपर्याप्तक (vi) लब्ध्यपर्याप्तक (vii) २ गुणस्थान (viii) ३ योग

१८. प्राण

१. **प्रश्न : प्राण किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिनके द्वारा आत्मा जीवन संज्ञा को प्राप्त होता है उन्हें प्राण कहते हैं। **(ध. १/२५८)**

जो जीवन के कारण हैं उन्हें प्राण कहते हैं।

''संसारावस्था में जिसके सद्भाव में जीव जीता है'' ऐसा व्यवहार होता है तथा ''जिसके अभाव में जीव मर गया'' ऐसा व्यवहार होता है, उसे प्राण कहते हैं। **(प्र.सा. १४७)**

जिस प्रकार बहिरंग प्राणों के द्वारा जीव जीता है उसी प्रकार जिन अभ्यन्तर प्राणों के द्वारा जीता है वे प्राण हैं। **(ध. १/२५६) (पं. सं. प्रा. ४५-४६)**

२. **प्रश्न : प्राण कितने प्रकार के होते हैं?**

उत्तर : प्राण दो प्रकार के होते हैं -

(१) द्रव्य प्राण (२) भाव प्राण

(१) बाह्य प्राण (२) अभ्यन्तर प्राण

३. **प्रश्न : द्रव्य प्राण किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिनके सहयोग से यह जीव जीवन अवस्था को प्राप्त हो एवं वियोग में मरण अवस्था को प्राप्त हो उनको द्रव्य प्राण कहते हैं।

द्रव्य प्राण दस होते हैं -

५ इन्द्रिय	-	स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण
३ बल	-	मनोबल, वचनबल, कायबल
१	-	श्वासोच्छ्वास
१	-	आयु **(का.अ. १३९ टी.)**

नोट - द्रव्य प्राणों को ही बाह्य प्राण कहते हैं।

४. **प्रश्न : भाव प्राण किसे कहते हैं?**

उत्तर : आत्मा की जिस शक्ति के निमित्त से इन्द्रियादिक अपने कार्य में प्रवृत्ति करती हैं उसे भाव प्राण कहते हैं।

भाव प्राण चेतनात्मक होता है जो सिद्धों में भी पाया जाता है। **(का.अ. १३९ टी.)**

नोट - भाव प्राण को ही अभ्यन्तर प्राण कहते हैं।

५. प्रश्न : **बाह्य एवं अभ्यन्तर प्राण कौन से हैं जिनसे जीव जीता है?**

उत्तर : श्वासोच्छ्वास, नेत्र खोलना, वचनप्रवृत्ति आदि बाह्य प्राण हैं। इन्द्रियावरण का क्षयोपशम आदि अभ्यन्तर प्राण हैं। **(पं. सं. प्रा. ४५-४६)**

६. प्रश्न : **मनोबल, वचनबल तथा श्वासोच्छ्वास को प्राण कैसे कह सकते हैं, क्योंकि उनके बिना भी जीव अपर्याप्त अवस्था में जीवित रहता है?**

उत्तर : मनोबल, वचनबल तथा श्वासोच्छ्वास के बिना अपर्याप्त अवस्था के पश्चात् पर्याप्त अवस्था में जीवन नहीं पाया जाता है इसलिए उन्हें प्राण मानने में कोई विरोध नहीं है। **(ध.१/२५६)**

७. प्रश्न : **द्रव्य प्राणों की उत्पत्ति का कारण क्या है?**

उत्तर : द्रव्य प्राणों की उत्पत्ति के कारण -

प्राण		**कारण**
५ इन्द्रिय	-	मतिज्ञानावरण एवं वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम
मनोबल	-	मतिज्ञानावरण (नोइन्द्रियावरण) एवं वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम
वचनबल	-	स्वर नामकर्म का उदय
कायबल	-	शरीर नामकर्म का उदय
श्वासोच्छ्वास	-	श्वासोच्छ्वास नामकर्म का उदय
आयु	-	आयु का उदय **(गो.जी.जी.१३१)**

८. प्रश्न : **प्राण कितने होते हैं?**

उत्तर : प्राण १० होते हैं -

५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु

९. प्रश्न : **कौन-कौन से प्राण पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों के ही होते हैं?**

उत्तर : इन्द्रिय, बल और आयु ये तीन प्राण पर्याप्तक तथा अपर्याप्तक में समान रूप से होते हैं अर्थात् पाँच इन्द्रियों में से यथायोग्य एक दो आदि इन्द्रिय प्राण, कायबल प्राण एवं आयु प्राण पर्याप्त अपर्याप्त दोनों अवस्थाओं में पाये जाते हैं। **(गो.जी.जी. १३२)**

१०.प्रश्न : **कौन-कौन से प्राण पर्याप्तक अवस्था में ही पाये जाते हैं?**

उत्तर : तीन प्राण पर्याप्त अवस्था में ही पाये जाते हैं -

(१) श्वासोच्छ्वास (२) वचन बल (३) मनोबल। **(गो.जी.जी. १३२) (पं.सं.प्रा.४७)**

११.प्रश्न : ये प्राण पर्याप्तकों के ही क्यों होते हैं?

उत्तर : श्वासोच्छ्वास प्राण पर्याप्तकों में ही होता है, क्योंकि उसका कारण जो उच्छ्वास नामकर्म का उदय है, वह पर्याप्त काल में ही होता है।

द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्यन्त पर्याप्तकों में ही वचनबल प्राण होता है, क्योंकि उसका कारण स्वर नामकर्म का उदय है, वह पर्याप्त काल में ही होता है।

मनोबल प्राण पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रियों में ही होता है, क्योंकि उसका कारण नो इन्द्रियावरण कर्म का क्षयोपशम है, वह अन्य किसी के नहीं होता। **(गो.जी.जी. १३२)**

१२.प्रश्न : पाँच इन्द्रिय प्राणों का इन्द्रिय-मार्गणा में अंतर्भाव क्यों नहीं किया गया है ?

उत्तर : पाँचों इन्द्रिय प्राणों का एकेन्द्रिय जाति आदि पाँच जातियों में अंतर्भाव नहीं होता है, क्योंकि चक्षुरिन्द्रियावरण आदि कर्मों के क्षयोपशम के निमित्त से उत्पन्न हुई इन्द्रियों की एकेन्द्रिय जाति..... आदि जातियों के साथ समानता नहीं पायी जाती है। **(ध. २/४१२)**

१३.प्रश्न : अतीतप्राण किसे कहते हैं ?

उत्तर : दस प्राणों के अभाव को अतीतप्राण कहते हैं। **(ध. २/४१९)**

१४.प्रश्न : कौन-कौन से प्राण सभी जीवों के होते हैं ?

उत्तर : केवल एक आयु प्राण सभी जीवों के होता है।

यह कथन संसारी जीवों की अपेक्षा जानना चाहिए क्योंकि सिद्ध भगवान प्राणातीत हैं।

१५.प्रश्न : प्राणों के अभाव में सिद्ध भगवान कैसे जीवित रहते हैं ?

उत्तर : सिद्ध भगवान के द्रव्यात्मक प्राण नहीं होते हैं, क्योंकि द्रव्यप्राण कर्म-सापेक्ष होते हैं, और सिद्ध भगवान के आठों कर्म नष्ट हो चुके हैं। सिद्ध भगवान शुद्ध ज्ञान-दर्शन मय शुद्ध चैतन्य प्राणों से जीते हैं। कहा भी है-

णिच्छयणयदो दु चेदणा जस्स निश्चय नय से जीव चैतन्य प्राणों से जीता है। **(बृ.द्र.सं.३)**

शुद्ध जीव शुद्ध निश्चय नय से यद्यपि शुद्ध चैतन्य लक्षण रूप निश्चय प्राणों से जीता है, तथापि अशुद्ध जीव अशुद्ध नय से द्रव्य व भाव प्राणों से जीता है। **(पं.का.ता. २७)**

तालिका संख्या ७४

१० प्राण

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	११	४ म. ४ व. ३ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत जीव भी होते हैं।
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	कषायातीत जीव भी होते हैं।
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	७	सा.छे.परि.सू.य.संय. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	१	आहारक	
१५.	गुणस्थान	१२	पहले से बारहवें तक	तेरहवाँ चौदहवाँ गुणस्थान नहीं है।
१६.	जीवसमास	१	सैनी पःोन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	–	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१४	४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शु.	अन्तिम दो शुक्लध्यान नहीं हैं।
२२.	आस्रव	५३	५मि. १२अवि. २५क. ११यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	पःोन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८$\frac{१}{२}$ ला.क.	पःोन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : दस प्राण वालों के नौ योग कौन-कौन सी गति में होते हैं?

उत्तर : दस प्राण वालों के नौ योग तीन गतियों में होते हैं -

नरकगति, तिर्यःागति, देवगति।

मनुष्यगति में भोगभूमिया जीवों के भी नौ योग ही होते हैं।

२. प्रश्न : दस प्राण वालों के औदारिकमिश्रादि योग क्यों नहीं होते हैं?

उत्तर : दस प्राण वालों के औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र तथा आहारकमिश्र काययोग में श्वासोच्छ्वास, वचनबल तथा मनोबल की कारणभूत क्रमश: श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति तथा मन:पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है। इन पर्याप्तियों के पूर्ण हुए बिना दस प्राण नहीं होते हैं।

कार्मण काययोग में पर्याप्तियों का प्रारम्भ ही नहीं होता है इसलिए दस प्राण वालों के कार्मण काययोग नहीं होता है।

३. प्रश्न : दस प्राण वालों के कौन-कौन सा योग नहीं होता है ?

उत्तर : दस प्राण वालों के चार योग नहीं होते हैं –

(१) औदारिक मिश्र काययोग। (२) वैक्रियिक मिश्र काययोग।

(२) आहारक मिश्र काययोग। (४) कार्मण काययोग।

४. प्रश्न : क्या कोई ऐसे दस प्राण वाले हैं जिनके अवधिज्ञान नहीं हो सकता है?

उत्तर : दस प्राण वाले वे जीव जिनके अवधिज्ञान नहीं हो सकता है –

(१) सम्मूर्च्छन जन्म वाले सम्यग्दृष्टि एवं संयतासंयत तिर्यंच।

(२) म्लेच्छखण्ड में रहने वाले मनुष्य एवं पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च।

(३) जो अवधिज्ञान को लेकर नहीं गया है उस सम्यग्दृष्टि देव-नारकी के पर्याप्त होने के बाद अन्तर्मुहूर्त्त पर्यन्त अवधिज्ञान नहीं हो सकता है।

(४) प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय गुणस्थान में अवधिज्ञान प्राप्त करने की योग्यता ही नहीं है।

५. प्रश्न : दस प्राण वालों के द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व कितनी गतियों में होता है ?

उत्तर : दस-प्राण वालों के द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व केवल एक गति में होता है- मनुष्य गति में।

यद्यपि देव गति में भी द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व होता है लेकिन उनके १० प्राण होने के पहले ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के काल से छह पर्याप्तियों के पूरा होने का काल अधिक होता है। **(ध. ४/७/५६९)**

६. प्रश्न : दस प्राण वाले कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि के कितनी जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : दस प्राण वाले कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि के १४ लाख जातियाँ होती हैं- मात्र मनुष्य गति सम्बन्धी।

यद्यपि कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि चारों गतियों में होते हैं- तथापि यदि वह छहों पर्याप्ति पूर्ण करके क्षपणा का निष्ठापक होता है तो उस १० प्राण वाले कृतकृत्य वेदक के पंचेन्द्रिय सम्बन्धी २६ लाख जातियाँ होंगी और यदि वह छह पर्याप्तियाँ पूर्ण होने के पहले ही निष्ठापक हो जाता है, तो उसके मात्र मनुष्य गति सम्बन्धी १४ लाख जातियाँ ही होती हैं। **(ल.सा.)**

७. प्रश्न : दस प्राण वालों के कौन-कौन से गुणस्थान नहीं हो सकते हैं?

उत्तर : दस प्राण वालों के दो गुणस्थान नहीं होते हैं -

तेरहवाँ तथा चौदहवाँ।

८. प्रश्न : दस प्राण वाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : दस प्राण वाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कम-से-कम आस्रव के ९ प्रत्यय होते हैं -

ग्यारहवें बारहवें गुणस्थानवर्ती जीवों की अपेक्षा

तथा अधिक-से-अधिक आस्रव के ४४ प्रत्यय होते हैं -

२१ कषाय - अनन्तानुबन्धी चतुष्क के बिना,

१२ अविरति - षट्कायिक की हिंसा तथा पाँच इन्द्रिय और मन वश में नहीं होना,

११ योग - ४ म. ४ व. ३ काययोग (औदारिक, वैक्रियिक, आहारक काययोग)

९. प्रश्न : दस प्राण वालों के सात ध्यान कहाँ-कहाँ होते हैं?

उत्तर : दस प्राण वालों के सात ध्यान केवल एक गुणस्थान में होते हैं -

छठे गुणस्थान में (४ धर्मध्यान तथा निदान के बिना ३ आर्त्तध्यान)

१०. प्रश्न : दस प्राण वालों के कितने ध्यान होते हैं?

उत्तर : दस प्राण वालों के १४ ध्यान होते हैं -

४ आ. ४ रौ. ४ ध. २ शुक्ल।

अन्तिम के दो शुक्ल ध्यान नहीं होते हैं।

तालिका संख्या ७५

७ प्राण

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	२	त्री. पं.	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	६	१ व. ५ का.	अनुभय वचन योग होता है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	५	२ कुज्ञान ३ ज्ञान	विभंगावधिज्ञान नहीं है।
८.	संयम	३	सा.छे.असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	५	क्षा.क्षायो.उप.सा.मि.	मिश्र सम्यक्त्व नहीं होता है।
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	४	पहला, दूसरा, चौथा, छठा	
१६.	जीवसमास	३	त्रीन्द्रिय, असैनी पं., सैनी पं.	
१७.	पर्याप्ति	५	आ.श.इ. श्वा.भा.	त्रीन्द्रिय की अपेक्षा पाँच पर्याप्ति है।
१८.	प्राण	७	५ इन्द्रिय, १ बल, आयु	कायबल होता है।
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	८	५ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१२	४ आ. ४ रौ. ४ ध.	
२२.	आस्रव	४८	५मि. १२अवि. २५क. ६यो.	
२३.	जाति	२८ ला.	पंचेन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	११६ $\frac{१}{२}$ ला.क.	पंचेन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यहाँ कौन-कौन से सात प्राण ग्रहण करने चाहिए?

उत्तर : यहाँ निम्नलिखित सात प्राणों को ग्रहण करना चाहिए -

५ इन्द्रिय प्राण - स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु तथा कर्ण।

१ बल - कायबल।

१ आयु - चार आयु में से कोई भी एक आयु।

अथवा - ३ इन्द्रिय, २ बल, श्वासोच्छ्वास, आयु, ये सात प्राण त्रीन्द्रिय जीवों के जानना चाहिए।

२. प्रश्न : सात प्राण वालों के कौन-कौन से योग नहीं होते हैं?

उत्तर : सात प्राण वालों के नौ योग नहीं होते हैं -

४ म. ३ व. २ का. (वैक्रियिक काययोग एवं आहारक काययोग)

ये योग जीवों के पर्याप्त अवस्था में ही होते हैं इसलिए ये सात प्राण में नहीं होते हैं। त्रीन्द्रिय जीव पर्याप्त होने पर भी उनके ये योग मूल से ही नहीं होते हैं।

३. प्रश्न : सात प्राण वाले जीवों के कौन-कौन सा वेद पाया जाता है?

उत्तर : सात प्राण वाले जीवों के वेद -

(१) त्रीन्द्रिय, सम्मूर्च्छन संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यःा, लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य, संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यःा तथा नारकियों के नपुंसक वेद।

(२) आहारकमिश्र योग वाले - पुरुष वेद।

(३) सोलहवें स्वर्ग से ऊपर तथा लौकान्तिक देवों के - पुरुष वेद।

(४) प्रथम-द्वितीय गुणस्थानवर्ती कर्मभूमिया मनुष्य-तिर्यःाों के - तीनों वेद।

(५) प्रथम-द्वितीय गुणस्थानवर्ती देव एवं भोगभूमिया जीवों के - स्त्रीवेद पुरुषवेद।

(६) म्लेच्छ खण्ड वालों के - स्त्री एवं पुरुषवेद।

(७) सम्यग्दृष्टि मनुष्य, देव एवं भोगभूमिया जीवों के-पुरुषवेद।

(८) शलाका पुरुषों के - पुरुषवेद।

४. प्रश्न : सात प्राण वालों के कितनी कषायें होती हैं?

उत्तर : सात प्राण वालों के कषायों के भंग -

२५, २४, २३, १९, ११

(१) **२५ कषायें** - गर्भज संज्ञी-असंज्ञी तिर्य:ा तथा मनुष्यों के।

(२) **२४ कषायें** - देव, म्लेच्छ खण्डज तथा भोगभूमिया जीवों के।

(३) **२३ कषायें** - नारकी, सम्मूर्च्छन मनुष्य। त्रीन्द्रिय तथा सम्मूर्च्छन संज्ञी-असंज्ञी तिर्य:ा।

(४) **१९ कषायें** - सम्यग्दृष्टि देव नारकी भोगभूमिया मनुष्य तिर्य:ा तथा कर्मभूमिया मनुष्य।

(५) **११ कषायें** - आहारकमिश्र काययोग में।

५. प्रश्न : सात प्राण वालों के संयम मार्गणा में से कितने संयम होते हैं?

उत्तर : सात प्राण वालों के संयम मार्गणा में से तीन संयम होते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना तथा असंयम।

सामायिक छेदोपस्थापना - आहारकमिश्र काययोग की अपेक्षा।

असंयम - (१) त्रीन्द्रिय के पर्याप्तावस्था में (२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय के निर्वृत्यपर्याप्त तथा विग्रहगति में (३) प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती संज्ञी पंचेन्द्रिय के निर्वृत्य...। (४) लब्ध्यपर्याप्तक पंचेन्द्रिय के भी असंयम पाया जाता है।

६. प्रश्न : सात प्राण वालों के छहों लेश्याएँ किस अपेक्षा पाई जाती हैं?

उत्तर : सात प्राण वालों के छहों लेश्याएँ - (१) मिथ्यादृष्टि देवों के । (२) सम्यग्दृष्टि कर्मभूमिया मनुष्यों के।

इनके तीन शुभ लेश्याएँ - (१) वैमानिक देवों के

तथा तीन अशुभ लेश्याएँ - (१) नारकियों के, (२) तिर्य:ाों के, (३) भवनत्रिक देवों के, (४) त्रीन्द्रिय जीवों के।

नोट - यहाँ सात प्राण यथायोग्य अवस्था में ही समझने चाहिए।

७. प्रश्न : सात प्राण वालों में सम्यक्त्व मार्गणा की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : सात प्राण वालों में सम्यक्त्व मार्गणा की विवेचना -

(१) क्षायिक सम्यक्त्व - चतुर्थ तथा छठे गुणस्थान में।

(२) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व - चतुर्थ गुणस्थानवर्ती मनुष्य और देवों के तथा आहारकमिश्र काययोग में।

(३) कृतकृत्यवेदक - चतुर्थ गुणस्थान में।

(४) द्वितीयोपशम सम्यक्त्व - चतुर्थगुणस्थानवर्ती देवों में।

(५) सासादन सम्यक्त्व - द्वितीय गुणस्थानवर्ती तीन (नरक बिना) गति में।

(६) मिथ्यात्व - मिथ्यादृष्टि संज्ञी-असंज्ञी तथा त्रीन्द्रिय पर्याप्त में।

नोट - (१.) प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थगुणस्थानवर्ती के निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था तथा कार्मण काययोग में सात प्राण होते हैं।

(२.) छठे गुणस्थान में आहारकमिश्र के समय सात प्राण होते हैं।

८. प्रश्न : **सात प्राण वालों के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?**

उत्तर : सात प्राण वालों के आस्रव के कम-से-कम १२ प्रत्यय होते हैं -

४ कषाय - संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।

७ नोकषाय - हास्य-रति-अरति-शोक-भय-जुगुप्सा तथा पुरुषवेद।

१ योग - आहारकमिश्र काययोग।

ये प्रत्यय छठे गुणस्थान में होते हैं तथा अधिक-से-अधिक ४८ प्रत्यय होते हैं -

५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय, ६ योग (औदारिकद्विक, आहारकमिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्मणकाययोग तथा अनुभय वचनयोग)

९. प्रश्न : **सात प्राण वालों के कितनी जातियाँ होती हैं?**

उत्तर : सात प्राण वालों के अट्ठाईस (२८) लाख जातियाँ होती हैं -

त्रीन्द्रिय जीवों की - २ लाख नारकियों की - ४ लाख

पंचेन्द्रिय तिर्यःंचों की - ४ लाख मनुष्यों की - १४ लाख

देवों की - ४ लाख।

१०. प्रश्न : **सात प्राण वालों के कितने कुल होते हैं?**

उत्तर : सात प्राण वालों के ११६$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -

त्रीन्द्रिय जीवों के - ८ ला.क. नारकियों के - २५ लाख करोड़

पंचेन्द्रिय तिर्यःंचों के - ४३$\frac{१}{२}$ ला.क. मनुष्यों के १४ लाख करोड़

देवों के - २६ ला.क.।

तालिका संख्या ७६

४ प्राण

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	२	तिर्यञ्च, मनुष्य	
२.	इन्द्रिय	३	एके.द्वी.पंचे.	पंचेन्द्रिय केवलीभगवान की अपेक्षा है।
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि, १ त्रस	
४.	योग	७	२ म. २ व. ३ का.	मन एवं वचन योग तेरहवें गुण. की अपेक्षा है।
५.	वेद	१	नपुंसक	वेदातीत भी है।
६.	कषाय	२३	१६ क. ७ नोक.	स्त्री.पुरु.वेद नहीं हैं। कषायातीत भी हैं।
७.	ज्ञान	३	कुम.कुश्रु.केवल.	
८.	संयम	२	यथा. असं.	
९.	दर्शन	२	अच.केवल.	
१०.	लेश्या	४	कृ.नी.का.शु.	शुक्ल लेश्या तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा है।
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	३	क्षा. सा. मि.	
१३.	संज्ञी	१	असैनी	सैनी-असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	अनाहारक द्वीन्द्रिय जीव के विग्रहगति की अपेक्षा।
१५.	गुणस्थान	३	पहला दूसरा तेरहवाँ	
१६.	जीवसमास	१६	१४ एके. १ द्वी. १ पंचे.	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	४	-	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	५	३ ज्ञानो. २ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	८	४ आ. ४ रौ.	
२२.	आस्रव	४३	५मि. ८अवि. २३क. ७यो.	२ म. २ व.३ का.
२३.	जाति	६८ला.	एके.द्वी. तथा मनुष्य सम्बन्धी	
२४.	कुल	८८ला.क.	एके.द्वी. तथा मनुष्य सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यहाँ किन-किन चार प्राणों को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : स्पर्शन इन्द्रिय, कायबल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु - पर्याप्तक एकेन्द्रिय के।

२ इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना), कायबल तथा आयु - द्वीन्द्रिय की अपेक्षा।

वचनबल, कायबल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु - तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा।

२. प्रश्न : चार प्राण किस-किस इन्द्रिय वाले के होते हैं?

उत्तर : चार प्राण इन्द्रिय मार्गणा के तीन भेदों में पाये जाते हैं -

एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, पंचेन्द्रिय।

एकेन्द्रियों में - पर्याप्तकों के।

द्वीन्द्रियों में - निर्वृत्यपर्याप्तक, लब्ध्यपर्याप्तक तथा कार्मणकाययोग में स्थित जीवों के।

पंचेन्द्रिय - सयोग केवली भगवान के पर्याप्त अवस्था में।

नोट - केवली भगवान समुद्घात अवस्था में निर्वृत्यपर्याप्त..... भी होते हैं।

३. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितने योग होते हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के योग - १, २, ५

१ योग - औदारिककाय योग (एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवों के)

२ योग - औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग (द्वीन्द्रिय अपर्याप्त जीवों के)

५ योग - २ मनोयोग (सत्य एवं अनुभय) २ वचनयोग (सत्य एवं अनुभय) १ काययोग (औदारिक)- सयोग केवली भगवान के।

४. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितने दर्शन होते हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के दो दर्शन होते हैं -

अचक्षुदर्शन तथा केवलदर्शन

अचक्षुदर्शन - एकेन्द्रिय तथा द्वीन्द्रिय के।

केवलदर्शन - केवली भगवान के तेरहवें गुणस्थान में।

५. प्रश्न : चार प्राण वालों में आहार मार्गणा किस प्रकार लगानी चाहिए?

उत्तर : चार प्राण वालों में आहार मार्गणा -

आहारक - एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तक तथा सयोग केवली भगवान।

अनाहारक - द्वीन्द्रिय जीवों के कार्मण काययोग में।

६. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के पर्याप्तियाँ - ४, २, ६, ०

एकेन्द्रिय के - ४ पर्याप्तियाँ (आ.श.इ.श्वा.)

द्वीन्द्रियों के - २ पर्याप्तियाँ (आहार और शरीर)

पंचेन्द्रिय के - ६ पर्याप्तियाँ (आ.श.इ.श्वा.भा.म.)

द्वीन्द्रिय के कार्मणयोग में - ० पर्याप्ति

नोट - (१) द्वीन्द्रिय के श्वासोच्छ्वास तथा भाषा पर्याप्ति पूर्ण होने पर चार प्राण नहीं होते हैं। (२) पञ्चेन्द्रियों में छह पर्याप्तियाँ सयोग केवली के होती हैं।

७. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितने ध्यान होते हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के ८ ध्यान होते हैं -

४ आर्त्तध्यान, ४ रौद्रध्यान

सयोगकेवली भगवान के जब शुक्ल ध्यान होता है तब उनके कायबल एवं आयु, ये दो प्राण ही होते हैं।

८. प्रश्न : चार प्राण वालों के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के आस्रव के प्रत्यय - ३६, ३८, ५

३६ प्रत्यय - एकेन्द्रिय के (५ मि. ७ अवि. २३ क. १ योग)

३८ प्रत्यय - द्वीन्द्रिय के (५ मि. ८ अवि. २३ क. २ योग - औदारिकमिश्र और कार्मण)

५ प्रत्यय - सयोग केवली के (२ म. २ व. १ काययोग-औदारिक)

९. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितनी जातियाँ होती हैं -

उत्तर : चार प्राण वालों के ६८ लाख जातियाँ होती हैं -

पृथ्वीकायिक की - ७ लाख

जलकायिक की - ७ लाख

अग्निकायिक की - ७ लाख

वायुकायिक की - ७ लाख

नित्यनिगोद की - ७ लाख

इतरनिगोद की - ७ लाख

वनस्पतिकायिक की - १० लाख

द्वीन्द्रिय की - २ लाख

पञ्चेन्द्रिय की - १४ लाख

१०. प्रश्न : चार प्राण वालों के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : चार प्राण वालों के ८८ लाख करोड़ कुल होते हैं -

पृथ्वीकायिक के - २२ लाख करोड़
जलकायिक के - ७ लाख करोड़
अग्निकायिक के - ३ लाख करोड़
वायुकायिक के - ७ लाख करोड़
वनस्पतिकायिक के - २८ लाख करोड़
द्वीन्द्रिय के - ७ लाख करोड़
पञ्चेन्द्रिय के - १४ लाख करोड़

नोट - पञ्चेन्द्रिय में मनुष्य सम्बन्धी कुल ही लेने चाहिए।

समुच्चय प्रश्नोत्तर

१. प्रश्न : प्राणों के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : प्राणों के दस स्थान होते हैं -

१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०

२. प्रश्न : तीन प्राणों के स्थान में कौन-कौन से प्राणों को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : तीन प्राण - स्पर्शन इन्द्रिय, कायबल तथा आयु

अथवा - कायबल, श्वासोच्छ्वास आयु।

३. प्रश्न : छह तथा सात प्राणों के स्थान में कौन-कौन से प्राणों को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : छह प्राण - २ इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना) २ बल (वचन तथा काय बल) श्वासोच्छ्वास तथा आयु (द्वीन्द्रिय के)

अथवा ४ इन्द्रिय (स्पर्शनादि), कायबल, आयु (चतुरिन्द्रिय जीवों के)

सात प्राण - ५ इन्द्रिय, कायबल तथा आयु (सैनी-असैनी पंचेन्द्रिय के)

अथवा - ३ इन्द्रिय, २ बल (वचन तथा कायबल) श्वासोच्छ्वास तथा आयु (त्रीन्द्रिय के)

४. प्रश्न : प्राणों के किस-किस स्थान में कौन-कौन सी गति होती है?

उत्तर : प्राणों में गति -

प्राणों के स्थान	**गति**
१ (आयु)	मनुष्यगति (अयोगकेवली)
२ (कायबल, आयु)	मनुष्यगति (सयोग केवली)

३	तिर्यञ्च एवं मनुष्य
४	तिर्यञ्च एवं मनुष्य
५ (३ इन्द्रिय कायबल आ.)	तिर्यञ्चगति
६	तिर्यञ्चगति
७	चारों गतियों में
८ (४ इन्द्रिय २ ब.श्वा.आ.)	तिर्यञ्चगति
९ (५ इन्द्रिय २ ब.श्वा.आ.)	तिर्यञ्चगति
१० (५ इन्द्रिय ३ ब.श्वा.आ.)	चारों गतियों में

५. **प्रश्न : जिसके जीभ होती है उसके कितने प्राण होते हैं?**

उत्तर : जिसके जीभ होती है उसके कम-से-कम ६ प्राण होते हैं -

२ इन्द्रिय, वचनबल, कायबल, श्वासोच्छ्वास, आयु

नोट - चौदहवें गुणस्थान में भी द्रव्य से शरीर पाया जाता है तो जीभ भी अवश्य होती है। उनके मात्र एक प्राण पाया जाता है लेकिन रसनेन्द्रियावरण का क्षयोपशम नहीं होने से रसना इन्द्रिय नहीं होती है इसलिए इन्द्रिय प्राण नहीं होता है। तथा अधिक-से-अधिक १० प्राण होते हैं - ५ इन्द्रिय ३ बल श्वा. आयु। ये दस प्राण संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के होते हैं।

६. **प्रश्न : प्राणों के कितने स्थानों में केवल मिथ्यात्व ही पाया जाता है?**

उत्तर : प्राणों के दो स्थानों में केवल मिथ्यात्व ही पाया जाता है -

८ प्राणों में - चतुरिन्द्रिय पर्याप्तक के।

९ प्राणों में - असंज्ञी पर्याप्तक के।

जो आचार्य सासादन सम्यग्दृष्टि का एकेन्द्रियादि में गमन नहीं मानते हैं उनकी अपेक्षा ४ स्थानों में मिथ्यात्व ही होता है - ५, ६, ८, ९।

नोट - ३ और ४ प्राण केवली भगवान के भी होते हैं इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

७. **प्रश्न : चार, सात तथा दस प्राणों के स्थानों में सम्यक्त्व मार्गणा में से कितने भेद होते हैं?**

उत्तर : चार, सात तथा दस प्राणों के स्थानों में सम्यक्त्व मार्गणा का विवेचन -

स्थान	सम्यक्त्व	विशेष
४ प्राण	२ अथवा ३	क्षायिक सम्यक्त्व एवं मिथ्यात्व (क्षा.सासा.मि.)
७ प्राण	५	(क्षा.क्षायो.द्वितीयोपशम, सासा.मि.)
१० प्राण	६	(सभी)

८. प्रश्न : दो प्राण कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं?

उत्तर : (१) सयोगकेवली भगवान के प्रतर तथा लोकपूरण समुद्घात में।

(२) सयोगकेवली भगवान जब श्वासोच्छ्वास का भी निरोध कर देते हैं तब; इन दोनों अवस्थाओं में उनके कायबल और आयु ये दो प्राण रहते हैं।

९. प्रश्न : क्या ऐसे भी जीव हैं जिनके श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं होता है?

उत्तर : हाँ, ऐसे भी जीव हैं जिनके श्वासोच्छ्वास प्राण नहीं पाया जाता है -

(१) अयोगकेवली भगवन्तों के।

(२) कार्मण काययोग तथा निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

(३) सभी लब्ध्यपर्याप्तक जीवों के।

(४) जब तक श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है।

(५) सयोगकेवली भगवान जब श्वासोच्छ्वास का निरोध कर देते हैं।

१०.प्रश्न : प्राणों के कितने स्थान अनाहारक जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : प्राणों का एक स्थान अनाहारक जीवों के ही होता है, १ प्राण रूप - चौदहवें गुणस्थानवर्ती भगवन्तों के।

११.प्रश्न : प्राणों के कितने स्थान आहारक जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : प्राणों के ३ स्थान आहारक जीवों के ही होते हैं - ८, ९, १०

८ प्राण - चतुरिन्द्रिय जीवों के।

९ प्राण - असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के।

१० प्राण - संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के।

१२.प्रश्न : प्राणों के कितने स्थान आहारक एवं अनाहारक दोनों जीवों के होते हैं?

उत्तर : प्राणों के छह स्थान आहारक एवं अनाहारक दोनों के पाये जाते हैं-२, ३, ४, ५, ६, ७

२ प्राण - केवली भगवान

३ प्राण - एकेन्द्रिय के

४ प्राण - द्वीन्द्रिय के

५ प्राण - त्रीन्द्रिय के

६ प्राण - चतुरिन्द्रिय के

७ प्राण - संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय के

१३.प्रश्न : प्राणों के कौन-कौन से स्थान पर्याप्त अवस्था में ही होते हैं?

उत्तर : प्राणों के चार स्थान पर्याप्त अवस्था में ही होते हैं - १, ८, ९, १०

१ प्राण (आयु) - चौदहवें गुणस्थान के।

८ प्राण - चतुरिन्द्रिय पर्याप्तक के।

९ प्राण - असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक के।

१० प्राण - संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक के।

१४.प्रश्न : जिसके दो प्राण होते हैं उनके आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : दो प्राण वालों के आस्रव के तीन प्रत्यय होते हैं -

औदारिक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग।

औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग समुद्घात की अपेक्षा होते हैं तथा औदारिक काययोग सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान के समय होता है।

१५.प्रश्न : छह प्राण वालों के कितनी जाति एवं कुल होते हैं?

उत्तर : छह प्राण वालों के जाति एवं कुल -

छह प्राण वाले जीव	**जाति**	**कुल**
• द्वीन्द्रिय की	२ लाख	७ लाख करोड़
• चतुरिन्द्रिय की	२ लाख	९ लाख करोड़

१६.प्रश्न : क्या ऐसे कोई प्राण हैं जो केवल असैनी जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : नहीं, ऐसे कोई प्राण नहीं हैं जो केवल असैनी जीवों के ही होते हों।

१७.प्रश्न : प्राणों के ऐसे कौन से स्थान हैं जो केवल भव्य जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : प्राणों के केवल दो स्थान ऐसे हैं जो भव्य जीवों के ही होते हैं- १ प्राण रूप, २ प्राण रूप

१ प्राण (आयु) - चौदहवें गुणस्थान में।

२ प्राण (आयु, कायबल) - तेरहवें गुणस्थान में।

नोट - चार और तीन प्राणों का स्थान एकेन्द्रिय जीवों (भव्य-अभव्य दोनों) के होता है, लेकिन वचन बल, कायबल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु रूप चार प्राणों का स्थान और कायबल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु रूप तीन प्राणों का स्थान अभव्यों के नहीं होता है।

१८. प्रश्न : तीन प्राण कौन से वेद वालों के होते हैं?

उत्तर : तीन प्राण नपुंसक वेद एवं अपगतवेद वालों के होते हैं-

नपुंसक वेद वाले एकेन्द्रिय जीवों की निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में तथा अपगतवेद वाले केवली भगवान के।

१९. प्रश्न : चौबीस स्थानों के किस-किस उत्तर भेद में दस प्राण ही होते हैं?

उत्तर : चौबीस स्थानों के वे उत्तर भेद जिनमें दस प्राण ही होते हैं -

स्थान		**उत्तर भेद**
योग	६	(२ म. २ व. २ का.) (असत्य उभय मन एवं वचन तथा वैक्रियिक एवं आहारक काययोग)
कषाय	४	(प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ)
ज्ञान	२	(मन:पर्यय एवं विभंगावधिज्ञान)
संयम	३	(संयमासंयम, परिहारविशुद्धि एवं सूक्ष्म साम्पराय)
सम्यक्त्व	२	(सम्यग्मिथ्यात्व एवं प्रथमोपशम)
गुणस्थान	८	(तीसरे, पाँचवें, सातवें से बारहवें तक)
प्राण	१	(मनोबल में)
उपयोग	२	(मन:पर्ययज्ञानोपयोग एवं विभंगावधिज्ञानोपयोग)
ध्यान	२	(आदि के २ शुक्ल ध्यान)
आस्रव के प्रत्यय	१०	(४ कषाय ६ योग)

प्रश्न - पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये -

(i) **चार प्राण वालों के कौन-कौन सा गुणस्थान होता है?**

(अ) पहला तथा दूसरा (ब) पहला, दूसरा, तेरहवाँ

(स) पहला, दूसरा, चौथा (द) कोई नहीं

(ii) **दस प्राण कितने गुणस्थानों में नहीं होते हैं?**

(अ) दो (ब) तीन

(स) पाँच (द) एक

(iii) **सात प्राण वालों के कितने संयम होते हैं?**

(अ) पाँच (ब) तीन

(स) चार (द) सभी

(iv) **तीन प्राण कितने इन्द्रिय जीव के होते हैं?**

(अ) एकेन्द्रिय (ब) द्वीन्द्रिय

(स) चतुरिन्द्रिय (द) कोई नहीं

(v) **प्राणातीत जीव किस गुणस्थान में होते हैं?**

(अ) चौदहवें में (ब) तेरहवें-चौदहवें में

(स) किसी में नहीं (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) दस प्राण में कितने जीव-समास होते हैं?

(ii) दो प्राण कौनसे गुणस्थान में होते हैं?

(iii) सात प्राण वालों के कितनी गतियाँ होती हैं?

(iv) कौनसी गति में प्राणों के सबसे ज्यादा स्थान पाये जाते हैं?

(v) कितने प्राण वालों की दिव्य देशना हो सकती है?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) दो प्राण वालों के एक जीवसमास होता है?

(ii) चार प्राण वालों के चार एवं छह पर्याप्तियाँ होती हैं?

(iii) सात प्राण संज्ञी जीवों के पर्याप्त अवस्था में भी होते हैं?

(iv) दस प्राण वालों के आहारक काययोग भी होता है?

(v) छह प्राण द्वीन्द्रिय एवं चतुरिन्द्रिय दोनों के होते हैं?

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) दस प्राण वालों के..........गति..........संयम मार्गणा के भेद तथा..........जातियाँ होती हैं।

(ii) एक प्राण वालों के..........पर्याप्तियाँ..........संज्ञा तथा..........काय होती है।

(iii) सात प्राणों में..........योग..........कषायें तथा..........वेद होते हैं।

(iv) नौ प्राण वालों के..........जीवसमास..........योग..........कुल होते हैं।

(v) आठ प्राण वालों के..........आस्रव के प्रत्यय..........उपयोग तथा..........ध्यान होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	२ प्राण	-	अयोग केवली
(ii)	१ प्राण	-	सयोग केवली
(iii)	१० प्राण	-	असंज्ञी पंचेन्द्रिय
(iv)	५ प्राण	-	सिद्ध भगवान
(v)	सम्यग्मिथ्यात्व	-	८ प्राण
(vi)	९ प्राण	-	सूक्ष्म साम्पराय
(vii)	चतुरिन्द्रिय पर्याप्तक	-	१० प्राण
(viii)	प्राणातीत	-	निर्वृत्यपर्याप्तक-त्रीन्द्रिय

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) अ (iii) ब (iv) अ (v) स

२. (i) १ (ii) १३ वें (iii) ४ (iv) तिर्यःगति (v) ४

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) ना (iv) हाँ (v) हाँ

४. (i) ४,७,२६ लाख (ii) ६,०, त्रस (iii) ६,२५,३
(iv) १, २, ४३$\frac{१}{२}$ ला.क. (v) ४०,४,८

५. (i) सयोग केवली (ii) अयोग केवली (iii) सूक्ष्म साम्पराय (iv) निर्वृत्यपर्याप्तक त्रीन्द्रिय
(v) १० प्राण (vi) असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय (vii) ८ प्राण (viii) सिद्ध भगवान।

१९. संज्ञा

१. **प्रश्न : संज्ञा किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिनसे पीड़ित जीव इस भव में उन विषयों का सेवन करते हुए भी इस लोक और परलोक में उनके प्राप्त होने तथा न होने पर भी दारुण दु:ख पाते हैं उन चार वांछाओं को संज्ञा कहते हैं। **(गो.जी. १३४)**

आहार आदि विषयों की वाँछा को संज्ञा कहते हैं। **(सर्वा. २/२४)**

वाञ्छा के संस्कार को संज्ञा कहते हैं।

२. **प्रश्न : संज्ञाएँ कितनी होती हैं?**

उत्तर : संज्ञाएँ चार होती हैं -

(१) आहार संज्ञा (२) भय संज्ञा (३) मैथुन संज्ञा (४) परिग्रह संज्ञा तथा क्षीण संज्ञा वाले भी होते हैं। **(ध. २/४१९)**

३. **प्रश्न : आहार संज्ञा किसे कहते हैं?**

उत्तर : आहार अर्थात् विशिष्ट अन्न आदि की वाञ्छा को आहार संज्ञा कहते हैं। **(गो.जी. १३५)**

४. **प्रश्न : आहार संज्ञा की उत्पत्ति किस प्रकार से होती है?**

उत्तर : आहार संज्ञा की उत्पत्ति के कारण -

(१) खाद्य स्वाद्य लेह्य पेय आदि चार प्रकार के आहार को देखने से,

(२) भोजन का स्मरण करने से,

(३) उनकी कथा के श्रवण आदि रूप उपयोग से,

(४) पेट खाली होने से,

(५) असातावेदनीय कर्म की उदीरणा या तीव्र उदय से

इनमें चार बाह्य कारण हैं तथा पाँचवाँ अन्तरंग कारण है। **(गो.जी. १३५)**

५. **प्रश्न : भय संज्ञा किसे कहते हैं?**

उत्तर : भय से उत्पन्न हुई भागने की इच्छा को भय संज्ञा कहते हैं। **(गो.जी. १३६)**

६. **प्रश्न : भय संज्ञा की उत्पत्ति किस-किस कारण से होती है?**

उत्तर : भय संज्ञा की उत्पत्ति के कारण -

(१) अति भयंकर व्याघ्र आदि या क्रूर मृगारि को देखने से,

(२) भयंकर व्याघ्र आदि की कथा सुनने से,

(३) भयंकर व्याघ्र आदि की ओर उपयोग जाने से (उनकी स्मृति से)

(४) शक्ति की कमी होने से,

(५) भय नामक नोकषाय के तीव्र उदय-उदीरणा से। **(गो.जी. १३६)**

इनमें से आदि के चार बाह्य कारण तथा पाँचवाँ अन्तरंग कारण है।

७. प्रश्न : मैथुन संज्ञा किसे कहते हैं?

उत्तर : कामसेवन रूप मिथुन कर्म में संज्ञा-वाँछा मैथुन संज्ञा है। **(गो.जी. १३७)**

८. प्रश्न : मैथुन संज्ञा किस कारण से उत्पन्न होती है?

उत्तर : मैथुन संज्ञा की उत्पत्ति के कारण -

(१) कामोत्पादक गरिष्ठ भोजन करने से,

(२) कामकथा को सुनने से,

(३) अनुभूत काम-विषय के स्मरण आदि में उपयोग जाने से,

(४) दुराचारी वेश्यागामी कामी पुरुषों की संगति-गोष्ठी से,

(५) स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद में से किसी एक वेदरूप नोकषाय की उदीरणा से, इनमें से आदि के चार बाह्य कारण हैं तथा पाँचवाँ अन्तरंग कारण है **(गो.जी. १३७)**

९. प्रश्न : परिग्रह संज्ञा किसे कहते हैं?

उत्तर : परिग्रह को अर्जन करने की वाँछा को परिग्रह संज्ञा कहते हैं। **(गो.जी. १३८)**

१०. प्रश्न : परिग्रह संज्ञा किस कारण से उत्पन्न होती है?

उत्तर : परिग्रह संज्ञा की उत्पत्ति के कारण -

(१) बाह्य धन, धान्य आदि उपकरणों को देखने से,

(२) उनकी कथा आदि सुनने से, कहने से

(३) मूर्च्छा परिणाम से,

(४) परिग्रह आदि के उपार्जन करने की आसक्ति के सम्बन्ध से,

(५) लोभ कषाय की उदीरणा से

इनमें से चार कारण बाह्य तथा पाँचवाँ अन्तरंग कारण है। **(गो.जी. १३८)**

११.प्रश्न : क्षीण संज्ञा किसे कहते हैं?

उत्तर : इन चारों संज्ञाओं के अभाव को क्षीण संज्ञा कहते हैं। **(ध. २/४१९)**

१२.प्रश्न : आहारादि को संज्ञा क्यों कहा गया है?

उत्तर : इन आहारादि चारों ही विषयों की प्राप्ति और अप्राप्ति दोनों ही अवस्थाओं में यह जीव संक्लिष्ट और पीड़ित रहा करता है। इस भव में भी दु:खों का अनुभव करता है और उनके द्वारा अर्जित पाप कर्म के उदय से पर-भव में भी सांसारिक दु:खों को भोगता है इसलिए इन्हें संज्ञा कहा गया है।

१३.प्रश्न : यदि चारों संज्ञाएँ बाह्य पदार्थों के संसर्ग से उत्पन्न होती हैं तो अप्रमत्तादि गुणस्थानों में संज्ञाओं का अभाव हो जाना चाहिए?

उत्तर : नहीं, क्योंकि अप्रमत्तों में उपचार से संज्ञाओं का सद्भाव स्वीकार किया गया है। भय आदि संज्ञाओं के कारणभूत कर्मों का उदय संभव है। इसलिए उपचार से भय और मैथुन संज्ञाएँ हैं। **(ध. २/४१३-३३)**

अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीवों के पहली आहार संज्ञा नहीं होती, क्योंकि आहारसंज्ञा का अन्तरंग कारण असातावेदनीय की उदीरणा है और उसकी उदीरणा व्युच्छित्ति प्रमत्त गुणस्थान में ही हो जाती है। अत: कारण का अभाव होने से कार्य का भी अभाव होता है। इस प्रकार प्रमादरहित संयमियों में पहली संज्ञा नहीं है। उक्त आहार आदि चारों संज्ञाएँ मिथ्यादृष्टि से लेकर प्रमत्तगुणस्थान पर्यन्त होती हैं। **(गो.जी. १३९)**

१४.प्रश्न : मैथुन संज्ञा का वेद में अन्तर्भाव क्यों नहीं किया गया है?

उत्तर : नहीं, क्योंकि तीनों वेदों के उदय सामान्य के निमित्त से उत्पन्न हुई मैथुन संज्ञा और वेद के उदयविशेष स्वरूप वेद, इन दोनों में एकत्व नहीं बन सकता है। **(ध. २/४१५)**

१५.प्रश्न : परिग्रह संज्ञा में लोभ कषाय का अन्तर्भाव क्यों नहीं किया गया है?

उत्तर : परिग्रह संज्ञा भी लोभ कषाय के साथ एकत्व को प्राप्त नहीं होती है, क्योंकि बाह्य पदार्थों को विषय करने वाला होने के कारण परिग्रह संज्ञा को धारण करने वाले लोभ से लोभ कषाय के उदय रूप सामान्य लोभ का भेद है। अर्थात् बाह्य पदार्थों के निमित्त से जो लोभ विशेष होता है उसे परिग्रह संज्ञा कहते हैं और लोभ कषाय के उदय से उत्पन्न परिणामों को लोभ कहते हैं। **(ध. २/४१६)**

तालिका संख्या ७७

चार संज्ञा

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पंच	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि, १ त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं होता है।
८.	संयम	६	सा.छे.प.सू.संय. असं.	यथाख्यात संयम नहीं है।
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	केवलदर्शन नहीं होता है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	संज्ञी जीव संज्ञातीत भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	१०	पहले से दसवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ स्थावर ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१३	४ आ. ४ रौ. ४ ध. १ शु.	पहला शुक्लध्यान होता है।
२२.	आस्रव	५७	५ मि.१२ अवि. २५ क. १५ यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : संज्ञा के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : संज्ञा के चार स्थान होते हैं -

(१) चार संज्ञा रूप (२) तीन संज्ञा रूप (३) दो संज्ञा रूप (४) एक संज्ञा रूप

४ संज्ञा - पहले से छठे गुणस्थान तक

३ संज्ञा - सातवें आठवें गुणस्थान में

२ संज्ञा - नौवें गुणस्थान में

१ संज्ञा - नवें तथा दसवें गुणस्थान में

नोट - यद्यपि भय आदि संज्ञाएँ पहले आदि गुणस्थानों में भी पाई जाती हैं, लेकिन आहार संज्ञा से रहित भय आदि संज्ञाएँ, भय संज्ञा से रहित मैथुनादि संज्ञाएँ तथा केवल परिग्रह संज्ञा इन्हीं गुणस्थानों में पाई जाती है इसलिए यहाँ इस प्रकार से कथन किया है।

२. प्रश्न : चार आदि संज्ञा स्थानों में कौन-कौनसी संज्ञा को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : चार संज्ञा - आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा

तीन संज्ञा - भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा

दो संज्ञा - मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा

एक संज्ञा - परिग्रह संज्ञा

३. प्रश्न : एक संज्ञा वालों के कौन-कौन से योग हो सकते हैं?

उत्तर : एक संज्ञा वालों के नौ योग हो सकते हैं -

४ मनोयोग ४ वचनयोग, औदारिक काययोग।

४. प्रश्न : संज्ञातीत जीवों के कितने योग होते हैं?

उत्तर : संज्ञातीत जीवों के ग्यारह योग होते हैं -

४ मनोयोग ४ वचनयोग, औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग।

औदारिक मिश्र एवं कार्मण काययोग केवली समुद्घात की अपेक्षा जानना चाहिए।

संज्ञातीत जीव अयोगी भगवान भी होते हैं।

५. प्रश्न : दो संज्ञा वालों के कौन-कौन सा ज्ञान नहीं पाया जाता है?

उत्तर : दो संज्ञा वालों के चार ज्ञान नहीं पाये जाते हैं -

कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, केवलज्ञान

नोट - इसी प्रकार तीन एवं एक संज्ञावालों के भी ये ज्ञान नहीं पाये जाते हैं। चार संज्ञा वालों के मात्र केवलज्ञान नहीं पाया जाता है।

६. प्रश्न : **आहार संज्ञा में संयम मार्गणा में से कौन-कौन से संयम हो सकते हैं?**

उत्तर : आहार संज्ञा में पाँच संयम हो सकते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, संयमासंयम तथा असंयम।

७. प्रश्न : **कितनी संज्ञा वालों के संयम-मार्गणा के कितने भेद होते हैं?**

उत्तर : संज्ञा वालों में संयम -

संज्ञा के स्वामी	संयम	विशेष
४ संज्ञा वाले	५	सा.छेदो.परि.संयमासंयम असंयम
३ संज्ञा वालों के	३	सामा.छेदो.परिहारविशुद्धि
२ संज्ञा वालों के	२	सामायिक, छेदोपस्थापना
१ संज्ञा वालों के	३	सामा., छेदो. सूक्ष्मसाम्पराय
संज्ञातीत जीवों के	१	यथाख्यात संयम

८. प्रश्न : **संज्ञातीत जीवों के कितने दर्शन होते हैं?**

उत्तर : संज्ञातीत जीवों के चारों दर्शन होते हैं -

ग्यारहवें - बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा तीन दर्शन - चक्षु, अचक्षु तथा अवधिदर्शन
तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान में तथा सिद्ध भगवान के - केवलदर्शन

९. प्रश्न : **संज्ञा के किस-किस स्थान में शुक्ल लेश्या भी होती है?**

उत्तर : संज्ञा के दो स्थानों में शुक्ल लेश्या भी होती है -

४ संज्ञा के स्थान में - पहले से छठे गुणस्थान तक की अपेक्षा

३ संज्ञा के स्थान में - ७ वें गुणस्थान की अपेक्षा

१०. प्रश्न : **दो संज्ञा वाले अचक्षुदर्शनी जीवों के कितनी लेश्याएँ होती हैं?**

उत्तर : दो संज्ञा वाले अचक्षुदर्शनी जीवों के केवल एक लेश्या होती है -

शुक्ललेश्या- क्योंकि दो संज्ञा वाले श्रेणी में ही पाये जाते हैं।

इसी प्रकार चक्षुदर्शनी एवं अवधिदर्शनी के भी जानना चाहिए।

११.प्रश्न : संज्ञा के किस-किस स्थान में कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं?

उत्तर : संज्ञा के स्थानों में सम्यक्त्व -

स्थान	सम्यक्त्व की संख्या	विशेष
४ संज्ञा	६	क्योंकि छठे गुणस्थान तक चारों संज्ञाएँ होती हैं।
३ संज्ञा	३	क्षायिक, क्षायोपशमिक एवं उपशम सम्यक्त्व
२ एवं १ संज्ञा में	२	क्षायिक एवं उपशम सम्यक्त्व (द्वितीयोपशम की अपेक्षा)
संज्ञातीत	२	क्षायिक एवं उपशम सम्यक्त्व

नोट - २,१ तथा संज्ञातीत जीवों के क्षपक श्रेणी की अपेक्षा एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है। बारहवें आदि गुणस्थान वाले संज्ञातीत जीवों के एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है।

१२.प्रश्न : संज्ञा के कितने स्थानों में अनाहारक अवस्था भी होती है?

उत्तर : संज्ञा के केवल एक स्थान में अनाहारक अवस्था भी होती है-

४ संज्ञा के स्थान में। यह स्थान पहले, दूसरे तथा चौथे गुणस्थान की अनाहारक अवस्था में भी पाया जाता है।

नोट : तेरहवें गुणस्थानवर्ती संज्ञातीत जीवों के समुद्घात अवस्था में अनाहारक अवस्था भी होती है।

१३.प्रश्न : संज्ञातीत जीवों के कितने प्राण होते हैं?

उत्तर : संज्ञातीत जीवों के कम-से-कम एक प्राण होता है - आयु

तथा अधिक-से-अधिक दस प्राण होते हैं -

५ इन्द्रिय, ३ बल, श्वासोच्छ्वास तथा आयु। ये दस प्राण ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा जानना चाहिए।

१४.प्रश्न : संज्ञातीत जीवों के कितने ध्यान होते हैं?

उत्तर : संज्ञातीत जीवों के चार शुक्ल ध्यान होते हैं -

पृथक्त्ववितर्कवीचार, एकत्ववितर्क अवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती तथा व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

१५. प्रश्न : तीन संज्ञा वालों के आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : तीन संज्ञा वाले जीवों के आस्रव के कम-से-कम बीस प्रत्यय होते हैं -

४ संज्वलन कषाय ७ नोकषाय तथा ९ योग

ये प्रत्यय मन:पर्यय ज्ञानी आदि जिनके केवल एक पुरुष वेद ही होता है, उनके होते हैं।

तथा अधिक-से-अधिक इनके आस्रव के बाईस प्रत्यय होते हैं -
४ संज्वलन ९ नोकषाय तथा ९ योग।

१६. प्रश्न : मैथुन संज्ञा में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : मैथुन संज्ञा में आस्रव के कम-से-कम चौदह प्रत्यय होते हैं -
४ संज्वलन कषाय १ वेद ९ योग
ये प्रत्यय नवें गुणस्थान में जब एक वेद शेष रहता है तब होते हैं।
तथा अधिक-से-अधिक ५७ प्रत्यय होते हैं क्योंकि मैथुन संज्ञा पहले गुणस्थान से नौवें गुणस्थान तक होती है।

१७. प्रश्न : संज्ञातीत जीवों के कितनी जाति एवं कितने कुल होते हैं?

उत्तर : संज्ञातीत जीवों के चौदह लाख जाति एवं चौदह लाख करोड़ कुल होते हैं। इनके मात्र मनुष्य गति सम्बन्धी जाति एवं कुल होते हैं क्योंकि मनुष्य गति को छोड़कर शेष गतियों में संज्ञातीत जीव नहीं पाये जाते हैं।

१८. प्रश्न : संज्ञावान जीवों के कितनी मार्गणाओं का अभाव हो सकता है?

उत्तर : संज्ञावान जीवों के केवल एक मार्गणा का अभाव हो सकता है -
वेद मार्गणा (नवें गुणस्थान के अवेद भाग से दसवें गुणस्थान तक)

१९. प्रश्न : संज्ञा के दो स्थान किस गुणस्थान में पाये जाते हैं?

उत्तर : संज्ञा के दो स्थान नौवें गुणस्थान में पाये जाते हैं -

दो संज्ञा रूप - सवेद भाग तक।
एक संज्ञा रूप - अवेद भाग में।

२०. प्रश्न : संज्ञा के किस स्थान में आर्त्त एवं धर्म दोनों ध्यान पाये जाते हैं?

उत्तर : चार संज्ञा रूप स्थान में आर्त्त एवं धर्म दोनों ध्यान पाये जाते हैं।
यहाँ तीसरे गुणस्थान से छठे गुणस्थान को ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि पहले-दूसरे गुणस्थान में धर्मध्यान नहीं पाया जाता है।

२१. प्रश्न : किस संज्ञा में जीव अपगत वेदी भी होता है?

उत्तर : परिग्रह संज्ञा में जीव वेदातीत भी होता है क्योंकि परिग्रह संज्ञा वेद का नाश होने पर भी नौवें गुणस्थान की अवेद अवस्था तथा दसवें गुणस्थान में भी होती है।

२२.प्रश्न : संज्ञा के किस स्थान में नोकषायें नहीं होती हैं?

उत्तर : एक परिग्रह संज्ञा रूप स्थान में नोकषायें नहीं होती हैं, क्योंकि नोकषायों का उदय नौवें गुणस्थान तक रहता है।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये -

(i) **तीन संज्ञा के स्थान में कौन-कौन सी संज्ञाएँ होती हैं?**

(अ) आहार भय परिग्रह (ब) आहार भय मैथुन

(स) आहार मैथुन परिग्रह (द) भय मैथुन परिग्रह

(ii) **चारों संज्ञाएँ कौन से गुणस्थान तक होती हैं?**

(अ) पाँचवें (ब) चौथे

(स) छठे (द) सातवें

(iii) **संज्ञातीत जीवों के कितने गुणस्थान होते हैं?**

(अ) ४ (ब) ५

(स) १० (द) कोई नहीं

(iv) **आहार संज्ञा कौनसी गति में नहीं होती है?**

(अ) देवगति (ब) नरकगति

(स) मनुष्यगति (द) कोई नहीं।

(v) **आहार संज्ञा का अभाव कौनसे योग में हो सकता है?**

(अ) आहारकद्विक (ब) वैक्रियिक

(स) औदारिक (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) भय संज्ञा कितने गुणस्थानों में नहीं होती है?

(ii) तीन संज्ञाओं का स्थान कौनसी गति में होता है?

(iii) मैथुन संज्ञा में कितने योग पाये जाते हैं?

(iv) परिग्रह संज्ञा कितने गुणस्थानों में पाई जाती है?

(v) संज्ञातीत जीवों के कितने ज्ञान होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) मैथुन संज्ञा सर्वार्थसिद्धि के देवों में नहीं होती है?

(ii) भोजन का त्याग कर देने पर आहार संज्ञा का अभाव हो जाता है?

(iii) गाय-भैंस आदि के परिग्रह संज्ञा नहीं होती है?

(iv) चारों संज्ञाओं में सभी गति के जीव होते हैं?

(v) संज्ञातीत जीवों के कषायें भी नहीं पाई जाती हैं?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) भय संज्ञा में.......................इन्द्रियाँ.........................कषायें तथा......................योग होते हैं।

(ii) चारों संज्ञाओं में......................ज्ञान..................संयम तथा..................दर्शन नहीं होता है।

(iii) खाने की इच्छा करने वालों के...............संज्ञाएँ...............गतियाँ तथा............वेद होते हैं।

(iv) जिसके पत्नी होती है उसके ....लेश्या...............पर्याप्ति तथा.............प्राण होते हैं।

(v) दो संज्ञा के स्थान में................गुणस्थान...............जाति तथा...........जीवसमास होता है।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	४ संज्ञा	-	चार गुणस्थान
(ii)	१ संज्ञा	-	संज्ञातीत
(iii)	आठवाँ गुणस्थान	-	४ संज्ञा
(iv)	संज्ञातीत	-	मैथुन संज्ञा
(v)	आस्रव के ११ प्रत्यय	-	सातवें गुणस्थान में
(vi)	छठे गुणस्थान तक	-	चारों गति
(vii)	नौ गुणस्थान	-	३ संज्ञा
(viii)	आहार संज्ञा से रहित	-	आस्रव के १० प्रत्यय

– उत्तरमाला –

१.	(i) द	(ii) स	(iii) अ	(iv) द	(v) स
२.	(i) ६	(ii) मनुष्य	(iii) १५	(iv) १०	(v) ५
३.	(i) ना	(ii) ना	(iii) ना	(iv) हाँ	(v) हाँ
४.	(i) ५, २५, १५	(ii) १, २, १	(iii) ४, ४, ३	(iv) ६, ६, १०	
	(v) १, १४ ला. १(संज्ञी पंचेन्द्रिय)				
५.	(i) चारों गति	(ii) आस्रव के १०प्र.	(iii) ३ संज्ञा	(iv) चार गुणस्थान	
	(v) संज्ञातीत	(vi) ४ संज्ञा	(vii) मैथुन संज्ञा	(viii) सातवें गुणस्थान में	

२०. उपयोग

१. प्रश्न : उपयोग किसे कहते हैं?

उत्तर : बाह्य और अभ्यन्तर कारणों से चेतना गुण की जो साकार या निराकार परिणति होती है उसे उपयोग कहते हैं। चैतन्य के अनुविधायी परिणामों को उपयोग कहते हैं। जो चैतन्य की आज्ञा के अनुसार चलता है या उसके अन्वय रूप से परिणमन करता है उसे उपयोग कहते हैं। अथवा पदार्थ परिच्छित्ति के समय यह घट है, यह पट है इस प्रकार अर्थ ग्रहण रूप से व्यापार करता है वह चैतन्य का अनुविधायी है। **(पं.का.ता.वृ.४०)**

२. प्रश्न : उपयोग कितने होते हैं?

उत्तर : उपयोग दो प्रकार के होते हैं -

(१) ज्ञानोपयोग (२) दर्शनोपयोग **(सर्वा.सि. २/९)**

(२) साकारोपयोग (२) अनाकार उपयोग **(सर्वा.सि. २ /९)**

३. प्रश्न : ज्ञानोपयोग किसे कहते हैं?

उत्तर : मति श्रुत अवधि तथा मन:पर्ययज्ञान के द्वारा जो अपने-अपने विषय का विशेष विज्ञान होता है उसे साकार उपयोग कहते हैं जो अन्तर्मुहूर्त्त काल तक रहता है। **(पं.सं.प्रा. १/१७९)**

घट-पटादि की व्यवस्था लिये हुए किसी वस्तु के भेद ग्रहण करने को आकार कहते हैं। अर्थात् ज्ञानोपयोग वस्तु को भेदपूर्वक ग्रहण करता है इसलिए वह साकार अर्थात् सविकल्प उपयोग कहलाता है। **(म.पु. २४/१०२)**

आकारं विकल्पं... केन रूपेण? शुक्लोऽयं कृष्णोऽयं दीर्घोऽयं ह्रस्वोऽयं घटोऽयं पटोऽयं आदि कर्म-कर्तृ भाव का नाम आकार है। उस आकार के साथ जो उपयोग रहता है उसका नाम साकार उपयोग है। **(वृ.द्र.सं.टी. ४३)**

४. प्रश्न : ज्ञानोपयोग कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : ज्ञानोपयोग आठ प्रकार के होते हैं -

(१) **मत्यज्ञान** (कुमति) ज्ञानोपयोग (२) **श्रुताज्ञान** (कुश्रुत) ज्ञानोपयोग (३) **विभंगज्ञान** (कुअवधि) ज्ञानोपयोग (४) मतिज्ञानोपयोग (५) श्रुत ज्ञानोपयोग (६) अवधिज्ञानोपयोग (७) मन:पर्ययज्ञानोपयोग (८) केवलज्ञानोपयोग। **(सर्वा.सि. २/९)**

५. प्रश्न : दर्शनोपयोग किसे कहते हैं?

उत्तर : सामान्य-विशेषात्मक पदार्थों के आकार विशेष को ग्रहण न करके जो केवल निर्विकल्प रूप से अंश का या स्वरूपमात्र का सामान्य ग्रहण होता है उसे परमागम में दर्शन कहा गया है। **(पं.सं.प्रा. १/१३८)** अनाकार दर्शनोपयोग है। **(सर्वा.सि. २/१२)**

पदार्थों की विशेषता न समझकर जो केवल सामान्य का अथवा सत्ता-स्वभाव का ग्रहण करता है उसे दर्शन कहते हैं उसे निराकार कहने का भी यही प्रयोजन है कि वह ज्ञेय वस्तुओं की आकृति विशेष को ग्रहण नहीं कर पाता। **(त.सा. २/१२)**

६. प्रश्न : दर्शनोपयोग कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है -

(१) चक्षु दर्शनोपयोग (२) अचक्षुदर्शनोपयोग (३) अवधिदर्शनोपयोग (४) केवल दर्शनोपयोग। **(सर्वा.सि. २/९)**

७. प्रश्न : उपयोग और ज्ञानदर्शन मार्गणा में क्या अन्तर है?

उत्तर : स्व और पर को ग्रहण करने वाले परिणाम विशेष को उपयोग कहते हैं। वह उपयोग ज्ञान मार्गणा और दर्शन मार्गणा में अन्तर्भूत नहीं होता है, क्योंकि ज्ञान और दर्शन इन दोनों के कारण रूप ज्ञानावरण और दर्शनावरण के क्षयोपशम को उपयोग मानने में विरोध आता है। **(ध. २/४१३)**

साकार उपयोग ज्ञान मार्गणा में और अनाकार उपयोग दर्शन मार्गणा में अन्तर्भूत होते हैं, क्योंकि वे दोनों ज्ञान और दर्शन रूप ही हैं।

विशेष - ज्ञान और दर्शन मार्गणा का अर्थ क्षयोपशम सामान्य या लब्धि है और उपयोग उसका कार्य है। अत: इन दोनों में भेद है, परन्तु जब इन दोनों के स्वरूप को देखा जाये तो दोनों में कोई भेद नहीं है, क्योंकि उपयोग भी ज्ञान दर्शन स्वरूप है और मार्गणा भी। **(ध. २/४१५)**

८. प्रश्न : उपयोग के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : उपयोग के नौ स्थान होते हैं -

	उपयोग रूप स्थान	**विवरण**	**विशेष**
(१)	२	केवलज्ञानो.केवलदर्शनो.	केवली भगवान के
(२)	३	कुमतिज्ञानो.कुश्रुतज्ञानो. अचक्षुदर्शनो.	एकेन्द्रिय जीवों के
(३)	४	कुमतिज्ञानो.कुश्रुतज्ञानो.चक्षुदर्शनो. अचक्षुदर्शनो.	चतुरिन्द्रिय तथा असंज्ञी जीवों के
(४)	५	कुमति आदि तीन ज्ञानो. तथा चक्षु आदि दो दर्शनोपयोग	संज्ञी पंचेन्द्रिय के
(५)	६	मति आदि तीन ज्ञानो. तथा चक्षु आदि तीन दर्शनो.	सम्यग्दृष्टि तथा संयतासंयत के

(६)	७	मति आदि चार ज्ञानो. तथा चक्षु आदि तीन दर्शनो.	मुनिराज के
(७)	९	५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	क्षायिक सम्यग्दृष्टि मुनिराज के
(८)	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो. **अथवा**	छद्मस्थ मनुष्यों के
		६ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	विभंगावधि तथा मन:पर्ययज्ञानो. के बिना पर्याप्त मनुष्यों के
(९)	१२	८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	मनुष्यों के

नोट - (१) स्वकीय ज्ञानोपयोग एवं स्वकीय दर्शनोपयोग को ग्रहण करने पर और भी स्थान बन सकते हैं, उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है। जैसे - चक्षुदर्शनोपयोग में सात ज्ञानोपयोग एवं एक चक्षुदर्शनोपयोग।

(२) ५ उपयोग के स्थान में मतिज्ञानो. श्रुतज्ञानो. मन:पर्ययज्ञानो. तथा चक्षु-अचक्षु दर्शनो. भी बन जाते हैं, लेकिन वहाँ अवधिज्ञानो. एवं अवधिदर्शनो. भी हो सकते हैं इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है। ऐसे और भी स्थानों को समझ लेना चाहिए।

९. प्रश्न : क्या दोनों उपयोग एक साथ होते हैं ?

उत्तर : नहीं, संसारी छद्मस्थ जीवों के दर्शनोपयोग पूर्वक ही ज्ञानोपयोग होता है। उनके दोनों उपयोग एक साथ नहीं होते हैं। केवली भगवान के दर्शनोपयोग एवं ज्ञानोपयोग एक साथ होते हैं। **(वृ. द्र. सं. ४४)**

१०. प्रश्न : कौन-कौन से उपयोग संसारी एवं सिद्ध दोनों के होते हैं ?

उत्तर : दो उपयोग संसारी एवं सिद्ध दोनों के होते हैं।

केवल ज्ञानोपयोग केवल दर्शनोपयोग।

ये दोनों उपयोग संसारी जीवों में - सयोग एवं अयोग केवली भगवान के होते हैं।

इन दोनों गुणस्थान वाले संसारी हैं क्योंकि कहा भी है- **''संसारिणस्त्रसस्थावरा:'' (त.सू. २/१२)** इन भगवंतों के भी त्रस नाम कर्म का उदय होता है, इसलिए इन्हें भी संसारी कहा गया है, तथा सिद्ध भगवान के भी ये दोनों उपयोग होते हैं, क्योंकि उपयोग जीव का लक्षण है।

तालिका संख्या ७८

ज्ञानोपयोग

संकेत – तालिका में प्रथम अंक उपयोग की संख्या का तथा द्वितीय अंक मार्गणा के भेदों का जानना चाहिए। प्रथम अंक में क्रमशः कुमति कुश्रुत कुअवधि मति.... आदि का जोड़ कहा गया है। जैसे - ६-४ में छह ज्ञानोपयोग अर्थात् कुमति से लेकर अवधिज्ञानोपयोग तक तथा ४ से चारों गति लेना चाहिए।

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	६-४, २-१	
२.	इन्द्रिय	२-५, ६-१	
३.	काय	२-६, ६-१	
४.	योग	२-१३, १-१०, ३-१५, १-९, १-७	
५.	वेद	६-३, १-१, १-०	मनःपर्ययज्ञानोपयोग में पुरुष वेद ही होता है।
६.	कषाय	३-२५, ३-२१, १-११, १-०	
७.	ज्ञान	मतिज्ञान में मतिज्ञानोपयोग, श्रुतज्ञान.....	
८.	संयम	३-१, ३-७, १-४, १-१	
९.	दर्शन	३-२, ४-३, १-१	
१०.	लेश्या	६-६, १-३, १-१	
११.	भव्य	३-२, ५-१	
१२.	सम्यक्त्व	३-२, ४-३, १-१	तीन मिश्रज्ञानो. में मिश्र सम्यक्त्व होता हैं।
१३.	संज्ञी	२-२, ५-१, १-पंचेन्द्रिय	केवलज्ञानो. में संज्ञी-असंज्ञी से रहित है।
१४.	आहार	६-२, २-१	विभंगावधि तथा मनःपर्ययज्ञानो. में आहारक ही होते हैं।
१५.	गुणस्थान	३-२, ३-९, १-७, १-२	
१६.	जीवसमास	२-१९, ५-१, १-पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	२-४, ५,६, ६-६	
१८.	प्राण	२-३ आदि,२-१०,३-७,१०,१-१ आदि	
१९.	संज्ञा	७-४, १-०	केवलज्ञानो. में संज्ञाएँ नहीं होती हैं।
२०.	उपयोग	स्वकीय	
२१.	ध्यान	३-८, ३-१४, १-९, १-२	
२२.	आस्रव	२-५५, १-५२, ३-४८, १-२०, १-७	
२३.	जाति	२-८४ला. ४-२६ला.,२-१४ ला.	
२४.	कुल	२-१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क. ४-१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क., २-१४ ला.क.	

१. प्रश्न : कुअवधिज्ञानोपयोग के पहले क्या दर्शनोपयोग होता है?

उत्तर : छद्मस्थ जीवों के दर्शनोपयोग पूर्वक ही ज्ञानोपयोग होता है। सामान्य सत्तावलोकन रूप दर्शनोपयोग में समीचीन और मिथ्या भेद नहीं है। चक्षु-अचक्षुदर्शन पूर्वक विभंगज्ञान नहीं है। विभंगदर्शन को पृथक् नहीं कहा है। इसलिए विभंगज्ञान के पूर्व में होने वाले दर्शन का अवधिदर्शन में अन्तर्भाव हो जाता है। **(ध. १/३८५)** अर्थात् कुअवधिज्ञानोपयोग के पूर्व में अवधिदर्शनोपयोग ही होता है।

२. प्रश्न : अवधिदर्शन तो चतुर्थ गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक होता है फिर कुअवधि ज्ञानोपयोग के पूर्व होने वाला अवधिदर्शनोपयोग इस ज्ञान में कैसे घटित होता है?

उत्तर : सम्यग्दृष्टि अवधिज्ञानी मनुष्य या तिर्यञ्चों के सम्यक्त्व छूट जाने पर अवधिज्ञान संक्लेश परिणामों के कारण सर्वथा नष्ट भी हो जाता है और यदि नष्ट नहीं हुआ तो मिथ्यात्व के कारण वह अवधिज्ञान कुअवधिज्ञान हो जाता है। सम्यग्दर्शन आदि की विशुद्धता के अभाव के कारण कुअवधिज्ञान का उत्कृष्ट काल एक अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण हो जाता है, उसके बाद वह छूट जाता है। इस प्रकार अवधिदर्शनोपयोग के बिना कुअवधिज्ञानोपयोग प्रथम गुणस्थान में घटित होता है। दूसरे मनुष्य एवं तिर्यञ्चों के अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से मिथ्यात्व गुणस्थान में भी कुअवधिज्ञान की उत्पत्ति होती है, उस समय अवधिदर्शन पूर्वक कुअवधिज्ञान होता है। यहाँ इस विवक्षा को ग्रहण नहीं किया है अत: कुअवधिज्ञान में भी दो ही दर्शन लिये हैं।

३. प्रश्न : ज्ञानोपयोग में योगों की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : ज्ञानोपयोग में योगों का विवेचन

	ज्ञानोपयोग	**योग**
(१)	कुमति-कुश्रुत	१३ (आहारकद्विक बिना)
(२)	कुअवधि	१० (औ.मि., वै.मि., आहारकद्विक एवं कार्मण बिना)
(३)	मति श्रुत अवधि	१५
(४)	मन:पर्यय	९ (४ म. ४ व. एवं औदारिक काययोग)
(५)	केवलज्ञान	७ (२ म. २ व. ३ का.)

४. प्रश्न : कितने ज्ञानोपयोगों में पच्चीस कषायें ही होती हैं?

उत्तर : तीन ज्ञानोपयोगों में पच्चीस कषायें ही होती हैं, क्योंकि ये तीनों उपयोग प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थान में होते हैं -

कुमतिज्ञानोपयोग, कुश्रुतज्ञानोपयोग तथा कुअवधिज्ञानोपयोग।

नोट – यह सामान्य कथन है। मार्गणाओं के उत्तरभेदों में कुछ अन्तर भी होता है। जैसे- नारकियों के इन उपयोगों में तेबीस कषायें ही होती हैं, क्योंकि उनके स्त्री एवं पुरुष वेद नहीं होता है।

५. प्रश्न : ज्ञानोपयोगों में संयम मार्गणा किस प्रकार लगाना चाहिए?

उत्तर : ज्ञानोपयोगों में संयम मार्गणा -

	ज्ञानोपयोग	**संयम**
(१)	कुमति कुश्रुत कुअवधि	असंयम
(२)	मति श्रुत अवधि	सातों संयम
(३)	मन:पर्यय	चार (सा.छे.सू.य.)
(४)	केवलज्ञान	१ (यथाख्यात)

६. प्रश्न : कितने ज्ञानोपयोगों में अशुभ लेश्याएँ नहीं होती हैं?

उत्तर : दो ज्ञानोपयोग में अशुभ लेश्याएँ नहीं होती हैं -

मन:पर्यय ज्ञानोपयोग एवं केवलज्ञानोपयोग।

७. प्रश्न : ज्ञानोपयोग में लेश्याएँ किस प्रकार घटित होती हैं?

उत्तर : ज्ञानोपयोग में लेश्याएँ -

	ज्ञानोपयोग	**लेश्या**	**विशेष**
(१)	कुमति कुश्रुत कुअवधि	छह	प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थान की अपेक्षा
(२)	मति श्रुत अवधि	छह	चौथे गुणस्थान की अपेक्षा
(३)	मन:पर्यय	तीन (शुभ)	छठे-सातवें गुणस्थान की अपेक्षा
(४)	केवलज्ञान	१ शुक्ल	तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा

८. प्रश्न : किस ज्ञानोपयोग में सम्यक्त्व मार्गणा में से कौनसा सम्यक्त्व होता है?

उत्तर : ज्ञानोपयोग में सम्यक्त्व -

	ज्ञानोपयोग	**सम्यक्त्व**
(१)	कुमति कुश्रुत कुअवधि	२ (मिथ्यात्व एवं सासादन)
(२)	मति श्रुत अवधि	३ (क्षायिक, क्षायोपशमिक एवं उपशम)

(३)	मन:पर्यय	३ (क्षा.क्षायो. तथा द्वितीयोपशम)
(४)	केवलज्ञान	१ (क्षायिक)
(५)	मति आदि मिश्रज्ञान	१ (मिश्र सम्यग्मिथ्यात्व)

९. प्रश्न : किस ज्ञानोपयोग में कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : ज्ञानोपयोग में जीवसमास -

	ज्ञानोपयोग	**जीवसमास**
(१)	कुमति कुश्रुत	१९
(२)	कुअवधि तथा मति आदि चार	१ (सैनी पंचेन्द्रिय)
(३)	केवलज्ञान	१ (पंचेन्द्रिय, क्योंकि यह संज्ञी-असंज्ञी से रहित भगवन्तों के होता है।)

१०.प्रश्न : किस-किस ज्ञानोपयोग में पर्याप्ति के सभी स्थान होते हैं?

उत्तर : कुमति एवं कुश्रुत ज्ञानोपयोग में पर्याप्ति के सभी स्थान होते हैं, क्योंकि ये दोनों उपयोग एकेन्द्रिय से लेकर सभी संज्ञी मिथ्यादृष्टि तथा सासादन सम्यग्दृष्टि के पाये जाते हैं।

११.प्रश्न : किस ज्ञानोपयोग में प्राणों के कौनसे स्थान पाये जाते हैं?

उत्तर : ज्ञानोपयोग में प्राणों के स्थान

	ज्ञानोपयोग	**प्राणों के स्थान**	**विशेष**
(१)	कुमति कुश्रुत	एक एवं दो प्राण के स्थान को छोड़कर शेष सभी स्थान होते हैं।	३ प्राण का स्थान एकेन्द्रिय तथा ४ प्राण का स्थान एकेन्द्रिय एवं द्वीन्द्रिय की अपेक्षा जानना चाहिए।
(२)	कुअवधि एवं मन:पर्यय	१ (१० प्राण रूप)	
(३)	मति श्रुत अवधि	२ (७ एवं १० प्राण रूप)	
(४)	केवलज्ञान	४ (१,२,३,४ प्राण सम्बन्धी)	एक प्राण का स्थान अयोगकेवली भगवान की अपेक्षा जानना चाहिए।

१२.प्रश्न : किस ज्ञानोपयोग में नौ ध्यान होते हैं?

उत्तर : मात्र मन:पर्यय ज्ञानोपयोग में नौ ध्यान हैं -

३ आर्त्तध्यान (निदान बिना) ४ धर्मध्यान तथा २ शुक्लध्यान
(पृथक्त्ववितर्कवीचार तथा एकत्ववितर्क अवीचार)

१३.प्रश्न : कौन से ज्ञानोपयोग में आस्रव के बावन प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : मात्र एक ज्ञानोपयोग में आस्रव के बावन प्रत्यय होते हैं -
कुअवधिज्ञानोपयोग में - ५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय तथा १० योग
(इसमें औ.मि., वै. मि., आहारकद्विक तथा कार्मण काययोग नहीं है)

१४.प्रश्न : कितने ज्ञानोपयोग में २६ लाख जातियाँ होती हैं ?

उत्तर : चार ज्ञानोपयोग में २६ लाख जातियाँ होती हैं।
(१) विभंगावधिज्ञानोपयोग। (२) मतिज्ञानोपयोग।
(३) श्रुतज्ञानोपयोग। (४) अवधिज्ञानोपयोग।
इनमें पंचेन्द्रिय सम्बन्धी जातियाँ होती हैं, क्योंकि चारों ज्ञानोपयोग संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के ही होते हैं।

१५.प्रश्न : कौन-कौन से ज्ञानोपयोग में संयम-मार्गणा के बराबर-बराबर पद पाये जाते हैं?

उत्तर : चार ज्ञानोपयोग में संयम-मार्गणा के बराबर-बराबर पद पाये जाते हैं।
(१) कुमति ज्ञानो. (२) कुश्रुत ज्ञानो. (३) कुअवधिज्ञानो - १ असंयम
(४) केवलज्ञानोपयोग - १ यथाख्यात संयम।

१६.प्रश्न : कौन-कौन से ज्ञानोपयोग छद्मस्थ एवं वीतराग भगवन्त दोनों के पाये जाते हैं?

उत्तर : एक भी ज्ञानोपयोग ऐसा नहीं है जो छद्मस्थों के भी हो और वीतराग-भगवंतों के भी होता हो। क्योंकि छद्मस्थों के क्षायोपशमिक ज्ञानोपयोग होते हैं और वीतराग-भगवंतों के क्षायिक ज्ञानोपयोग होता है। क्षायिक और क्षायोपशमिक ज्ञानोपयोग एक साथ नहीं रह सकते हैं, क्योंकि क्षायिक ज्ञानोपयोग ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से होता है तथा क्षायोपशमिक ज्ञानोपयोग ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होते हैं।

तालिका संख्या ७९

दर्शनोपयोग

संकेत - तालिका में प्रथम अंक उपयोग एवं द्वितीय अंक मार्गणा के भेदों का जानना चाहिए। प्रथम अंक में क्रमश: चक्षु-अचक्षु आदि उपयोगों का जोड़ कहा गया है एवं द्वितीय अंक में मार्गणा के उत्तर भेदों की संख्या का जोड़ है। जैसे - ३-४ में ३ दर्शनोपयोग अर्थात् चक्षु-अचक्षु तथा अवधिदर्शनोपयोग एवं ४ से चारों गतियाँ लेनी चाहिए।

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	३-४, १-१	केवलदर्शनो. में एक मनुष्य गति है।
२.	इन्द्रिय	१-५, १-२, २-१	
३.	काय	१-६, ३-१	अचक्षुदर्शनो. में षट्काय के जीव होते हैं।
४.	योग	३-१५, १-७	
५.	वेद	३-३, १-०	
६.	कषाय	२-२५, १-२१, १-०	
७.	ज्ञान	२-७, १-४, १-१	अवधिदर्शनो. में चार ज्ञान होते हैं।
८.	संयम	३-७, १-१	
९.	दर्शन	चक्षुदर्शन में चक्षुदर्शनोपयोग..........	
१०.	लेश्या	३-६, १-१	
११.	भव्य	२-२, २-१	
१२.	सम्यक्त्व	२-६, १-४, १-१	
१३.	संज्ञी	२-२, १-१, १-दोनों से रहित	
१४.	आहार	४-२	
१५.	गुणस्थान	२-१२, १-१०, १-२	
१६.	जीवसमास	१-१९, १-३, १-१, १-१	केवलदर्शनो. में पंचेन्द्रिय जीवसमास है।
१७.	पर्याप्ति	१-४, ५,६, १-५, ६ २-६	
१८.	प्राण	३-१०, १-४	
१९.	संज्ञा	३-४, १-०	
२०.	उपयोग	-	
२१.	ध्यान	३-१४, १-२	केवलदर्शनो. में दो शुक्लध्यान होते हैं।
२२.	आस्रव	२-५७, १-४८, १-७	
२३.	जाति	१-८४ला.१-२८ला.,१-२६ला.१-१४ला.	
२४.	कुल	१-१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क. १-११७ $\frac{१}{२}$ ला.क., १-१०८ $\frac{१}{२}$ ला.क. १-१४ ला.क.	

१. प्रश्न : **क्या केवलदर्शनोपयोग के समान और किसी दर्शनो. में भी वेद नहीं पाया जाता है?**

उत्तर : नहीं, केवलदर्शनोपयोग के समान और कोई दर्शनोपयोग नहीं है जिसमें वेद नहीं पाया जाता हो, लेकिन शेष तीनों दर्शनों में नौवें गुणस्थान के अवेद भाग से वेद का अभाव अवश्य हो सकता है।

२. प्रश्न : **दर्शनोपयोग में कषायों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?**

उत्तर : दर्शनोपयोग में कषायों का विवेचन -

चक्षु तथा अचक्षुदर्शनोपयोग में - पहले और दूसरे गुणस्थान की अपेक्षा पच्चीस कषायें होती हैं तथा आगे के गुणस्थानों में कषायें कम होती जाती हैं।

अवधिदर्शनोपयोग में - तीसरे - चौथे गुणस्थान की अपेक्षा इक्कीस कषायें होती हैं तथा आगे के गुणस्थानों में कषायों के शेष विकल्प भी होते हैं।

इन तीनों में कषायातीत जीव भी होते हैं।

केवलदर्शनोपयोग में कषायातीत जीव ही होते हैं।

३. प्रश्न : **कौनसे दर्शनोपयोग में सम्यक्त्व-मार्गणा में से चार सम्यक्त्व पाये जाते हैं?**

उत्तर : अवधिदर्शनोपयोग में चार सम्यक्त्व पाये जाते हैं -

क्षायिक, क्षायोपशमिक, औपशमिक तथा सम्यग्मिथ्यात्व।

यह कथन तीसरे गुणस्थान से अवधिदर्शनोपयोग मानने वालों की अपेक्षा जानना चाहिए।

४. प्रश्न : **क्या ऐसा कोई दर्शनोपयोग है जिसमें न संज्ञी सम्बन्धी जीवसमास होता है न असंज्ञी सम्बन्धी?**

उत्तर : हाँ, केवलदर्शनोपयोग में न संज्ञी सम्बन्धी जीवसमास होता है न असंज्ञी सम्बन्धी, क्योंकि यह उपयोग केवली भगवान के होता है वे न संज्ञी होते हैं न असंज्ञी ही होते हैं।

५. प्रश्न : **कितने दर्शनोपयोगों में संज्ञी-असंज्ञी दोनों सम्बन्धी जीवसमास होते हैं?**

उत्तर : दो दर्शनोपयोगों में संज्ञी-असंज्ञी दोनों सम्बन्धी जीवसमास होते हैं -

चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग।

६. प्रश्न : **कितने दर्शनोपयोगों में पाँच पर्याप्तियाँ भी होती हैं?**

उत्तर : दो दर्शनोपयोगों में पाँच पर्याप्तियाँ भी होती हैं -

चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग

चक्षुदर्शनोपयोग चतुरिन्द्रिय एवं असंज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा।

अचक्षुदर्शनोपयोग द्वीन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय की अपेक्षा होते हैं।

७. प्रश्न : ऐसा कौनसा दर्शनोपयोग है जिसमें छब्बीस लाख जातियाँ होती हैं?

उत्तर : अवधिदर्शनोपयोग में छब्बीस लाख जातियाँ होती हैं।

८. प्रश्न : चक्षुदर्शनोपयोग की अपेक्षा अचक्षुदर्शनोपयोग में क्या-क्या विशेषता हो सकती है?

उत्तर : चक्षुदर्शनोपयोग की अपेक्षा अचक्षुदर्शनोपयोग में विशेषता -

(१) अचक्षुदर्शनोपयोग में - एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय जीव भी होते हैं।

(२) पृथ्वीकायिकादि पाँच कायिक जीव भी होते हैं।

(३) एकेन्द्रियादि सोलह जीवसमास भी होते हैं।

(४) एकेन्द्रिय-द्वीन्द्रिय तथा त्रीन्द्रिय सम्बन्धी जातियाँ एवं कुल भी होते हैं।

समुच्चय प्रश्नोत्तर

१. प्रश्न : कौन सा उपयोग किस-किस के होता है?

उत्तर : उपयोगों के स्वामी -

उपयोग		**स्वामी**
कुमति-कुश्रुतज्ञानो.	-	एकेन्द्रिय आदि जीवों के
मतिश्रुत अवधिज्ञानो.	-	सम्यग्दृष्टि जीवों के (चौथे से बारहवें गुण. तक)
मन:पर्यय ज्ञानो.	-	छठे से बारहवें गुणस्थान तक
केवलदर्शनो. केवलज्ञानो.	-	जिनेन्द्र भगवान के
अचक्षुदर्शनो.	-	एकेन्द्रियादि बारहवें गुणस्थान तक
चक्षु-दर्शनो.	-	चतुरिन्द्रियादि बारहवें गुणस्थान तक
अवधिदर्शनो.	-	तीसरे से बारहवें गुणस्थान तक

२. प्रश्न : उपयोगों में सम्यक् एवं मिथ्यापने का विभाजन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : उपयोगों में सम्यक् एवं मिथ्यापन का विभाजन -

उपयोग	**सम्यक्/मिथ्या**
कुमति.कुश्रुत.कुअव.	मिथ्या होते हैं।

मति.श्रुत.अवधि.	सम्यक् होते हैं।
मन:पर्यय. एवं केवलज्ञानो.	सम्यक् ही होते हैं।
चक्षु आदि दर्शनोपयोग	सम्यक्-मिथ्या का विभाजन नहीं है।

नोट - (१) मति, श्रुत तथा अवधिज्ञानोपयोग जब सम्यक्त्व के साथ नहीं रहते हैं तो मिथ्या रूप एवं सम्यक्त्व के साथ रहने पर सम्यक् रूप होते हैं।

(२) अवधिदर्शनोपयोग अवधिज्ञानोपयोग के साथ एवं केवलदर्शनोपयोग केवलज्ञानोपयोग के साथ पाया जाता है इसलिए उन्हें सम्यक् माना जा सकता है, लेकिन ऐसी विवक्षा मेरे पढ़ने में नहीं आयी है।

३. प्रश्न : **उपयोगों के कितने स्थानों में एक ही गति होती है?**

उत्तर : उपयोगों के सात स्थानों में एक ही गति होती है -

उपयोग के स्थान	**गति**
२ (केवलज्ञानो. केवलदर्शनो.)	मनुष्यगति
३ (कुमति. कुश्रुत. अचक्षु.)	तिर्यःगगति
४ (२ ज्ञानो. २ दर्शनो.)	तिर्यञ्चगति
७ (४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.)	मनुष्यगति
९ (५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.)	मनुष्यगति
१० (७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.)	मनुष्यगति
१२ (८ ज्ञानो. ४ दर्शनो.)	मनुष्यगति

४. प्रश्न : **सात उपयोग वालों के कितने योग हो सकते हैं?**

उत्तर : सात उपयोग वालों के नौ योग हो सकते हैं -

४ मनो. ४ वच. १ औदारिकयोग

ये योग छठे से बारहवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के होते हैं उनके -

४ ज्ञानो. तथा ३ दर्शनो. होते हैं।

५. प्रश्न : **कितने उपयोग वालों के सभी योग हो सकते हैं?**

उत्तर : छह उपयोग वालों के सभी योग हो सकते हैं -

मति. श्रुत. अवधिज्ञानोपयोग, चक्षु. अचक्षु. अवधिदर्शनोपयोग

६. प्रश्न : **जिसके चार उपयोग होते हैं उनके सम्यक्त्व-मार्गणा में से कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं?**

उत्तर : जिनके चार उपयोग अर्थात् कुमति. कुश्रुतज्ञानोपयोग चक्षुदर्शनो. अचक्षुदर्शनो. वालों के २ सम्यक्त्व हो सकते हैं - मिथ्यात्व, सासादन।

ये चार उपयोग चतुरिन्द्रिय एवं असंज्ञी जीवों के होते हैं उनके विभंगावधिज्ञानोपयोग भी नहीं हो सकता है।

नोट - जिसके अवधिज्ञान नहीं होता है उसके भी मति-श्रुतज्ञानो. तथा चक्षु-अचक्षु दर्शनो. रूप भी चार उपयोग हो सकते हैं। उनके सम्यक्त्व मार्गणा के ३ भेद हो सकते हैं।

७. प्रश्न : **कौन-कौन से उपयोग आहारक-अनाहारक दोनों अवस्था में होते हैं?**

उत्तर : दस उपयोग आहारक-अनाहारक दोनों अवस्था में होते हैं।

कुमतिज्ञानो. कुश्रुतज्ञानो. मतिज्ञानो. श्रुतज्ञानो. अवधिज्ञानो. केवलज्ञानो.

चक्षुदर्शनो. अचक्षुदर्शनो. अवधिदर्शनो. केवलदर्शनो.

अर्थात् मनःपर्ययज्ञानो. तथा कुअवधिज्ञानो. को छोड़कर शेष सभी उपयोग आहारक-अनाहारक दोनों अवस्था में होते हैं।

८. प्रश्न : **जिनके दो उपयोग होते हैं उनके प्राणों के कितने स्थान होते हैं?**

उत्तर : जिनके दो उपयोग होते हैं उनके प्राणों के चार स्थान हो सकते हैं - १, २, ३, ४

नोट - एक प्राण का स्थान अयोगकेवली भगवान के जानना चाहिए।

९. प्रश्न : **कितने उपयोगों में तीन प्राण हो सकते हैं?**

उत्तर : पाँच उपयोगों में तीन प्राण हो सकते हैं -

कुमति. कुश्रुत. अचक्षुदर्शनो. - एकेन्द्रिय जीवों के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में।

केवलज्ञानो. केवलदर्शनो. - केवली भगवान के वचनबल का निरोध होने पर।

१०. प्रश्न : **ऐसे कौन से उपयोग हैं जिनमें केवल योग सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय होते हैं?**

उत्तर : दो उपयोगों में केवल योग सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय होते हैं -

केवलज्ञानो. केवलदर्शनो.

११. प्रश्न : **दस उपयोग के स्थान में कौनसे दस उपयोग ग्रहण करने चाहिए?**

उत्तर : दस उपयोग के स्थान में उपयोग -

७ ज्ञानो. ३ दर्शनो. केवलज्ञानो. तथा केवलदर्शनो. के बिना। ये उपयोग चार योग, पुरुषवेद,

हास्यादि छह नोकषाय आदि मार्गणा के उत्तर भेदों में पाये जाते हैं।

अथवा - ६ ज्ञानो.४ दर्शनो. - मन:पर्यय तथा विभंगावधिज्ञानो. के बिना, ये दस उपयोग औदारिकमिश्र, कार्मणकाययोग तथा अनाहारक अवस्था में पाये जाते हैं।

१२.प्रश्न : उपर्युक्त दस उपयोगों में कितने योग होते हैं?

उत्तर : उपर्युक्त ७ ज्ञानो. तथा ३ दर्शनो. रूप दस उपयोगों में चार योग होते हैं -

असत्य मनोयोग, उभय मनोयोग, असत्य वचनयोग, उभय वचनयोग।

६ ज्ञानोपयोग ४ दर्शनोपयोग रूप दस उपयोगों में दो योग होते हैं।

औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग

इस प्रकार दस उपयोग के स्थान में छह योग होते हैं।

१३.प्रश्न : कितने उपयोगों में सभी कुल एवं सभी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : तीन उपयोगों में सभी कुल एवं सभी जातियाँ होती हैं -

कुमतिज्ञानो. कुश्रुतज्ञानो. तथा अचक्षुदर्शनो.

१४.प्रश्न : नौ उपयोग वालों के कौन-कौनसा संयम हो सकता है?

उत्तर : नौ उपयोग वालों के दो संयम हो सकते हैं-

(i) **असंयम** (ii) **यथाख्यात**

असंयम - ३ कुज्ञानो. ३ ज्ञानो. ३ दर्शनो.
यथाख्यात - ५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.

१५.प्रश्न : चौबीस स्थानों के कितने उत्तर भेदों में नौ उपयोग होते हैं?

उत्तर : चौबीस स्थानों के ११ उत्तरभेदों में नौ उपयोग होते हैं -

स्थान	भेद	विशेष
गति	४	भोगभूमिया मनुष्यों की अपेक्षा
योग	१	वैक्रियिक काययोग
वेद	२	स्त्रीवेद, नपुंसकवेद
संयम	२	असंयम, यथाख्यात
लेश्या	३	कृष्ण, नील, कापोत,
सम्यक्त्व	१	क्षायिक
कषाय	१०	४ अप्र. ४ प्रत्या. २ वेद (स्त्री. नपुं.)

ध्यान	५	निदान आर्त्तध्यान, ४ रौद्र.
प्रत्यय	२३	१० क. १२ अवि. १ वैक्रि. काययोग
जाति	१२ लाख	४ लाख नरक, ४ लाख देव, ४ लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय
कुल	९४ $\frac{१}{२}$ ला.क.	२५ ला.क. नरक, २६ ला.क.देव, ४३ $\frac{१}{२}$ ला.क.ति.पंचे.

१६. प्रश्न : नौ उपयोग में किस-किस उपयोग को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : नौ उपयोग में -

५ ज्ञानोपयोग - मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय तथा केवलज्ञानोपयोग

४ दर्शनोपयोग - चक्षु अचक्षु अवधि तथा केवलदर्शनोपयोग

ये उपयोग मनुष्यगति वाले जीवों के होते हैं।

अथवा - ३ कुज्ञानोपयोग - कुमति कुश्रुत तथा कुअवधिज्ञानोपयोग

३ ज्ञानोपयोग - मति श्रुत अवधि ज्ञानोपयोग, मति श्रुत मन:पर्यय ज्ञानोपयोग

३ दर्शनोपयोग - चक्षु अचक्षु तथा अवधिदर्शनोपयोग।

१७. प्रश्न : उपयोग के कौन-कौन से स्थान असंज्ञी जीवों के ही होते हैं ?

उत्तर : उपयोग के मात्र दो स्थान असंज्ञी जीवों के ही होते हैं।

तीन उपयोग रूप तथा चार उपयोग रूप।

तीन उपयोग रूप स्थान एकेन्द्रिय जीवों के तथा चार उपयोग रूप स्थान चतुरिन्द्रिय एवं असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के होते हैं। ये सब जीव असंज्ञी ही होते हैं।

नोट : यद्यपि ये उपयोग संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के भी होते हैं लेकिन उनके, इनके साथ दूसरे उपयोग भी होते हैं।

१८. प्रश्न : कितने उपयोग भव्य एवं अभव्य दोनों जीवों के पाये जाते हैं ?

उत्तर : पाँच उपयोग भव्य एवं अभव्य दोनों जीवों के पाये जाते हैं-

(१) कुमति ज्ञानोपयोग (२) कुश्रुत ज्ञानोपयोग (३) कुअवधि ज्ञानोपयोग

(४) चक्षु दर्शनोपयोग (५) अचक्षु दर्शनोपयोग।

जो आचार्य अवधिदर्शन पहले गुणस्थान से मानते हैं उनकी अपेक्षा ६ उपयोग भव्य-अभव्य दोनों के हो जायेंगे।

ये उपयोग पहले गुणस्थान में भी होते हैं, इसलिए अभव्य जीवों के भी हो जायेंगे।

प्रश्न पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **कितने उपयोग सम्यक् ही होते हैं?**

(अ) ८ (ब) ९
(स) ४ (द) कोई नहीं

(ii) **मन:पर्यय ज्ञानोपयोग कितने गुणस्थान में होता है?**

(अ) ७ (ब) ९
(स) २ (द) कोई नहीं

(iii) **९ उपयोग किस सम्यक्त्व में होते हैं?**

(अ) उपशम (ब) क्षयोपशम
(स) द्वितीयोपशम (द) क्षायिक

(iv) **कितने ज्ञानोपयोग में १३ योग होते हैं?**

(अ) २ (ब) ५
(स) ७ (द) कोई नहीं

(v) **अचक्षुदर्शनोपयोग कितनी गतियों में होता है?**

(अ) ४ (ब) २
(स) १ (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए -

(i) १२ उपयोग किस गति वालों के होते हैं?
(ii) केवलदर्शनोपयोग कितने काय योग में नहीं होता है?
(iii) कितने उपयोगों में सभी कुल होते हैं?
(iv) कितने उपयोगों में अनाहारक अवस्था नहीं होती है?
(v) कितने उपयोग सम्यक् एवं मिथ्या दोनों होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए -

(i) चार उपयोगों में सम्यक् एवं मिथ्या का विभाजन नहीं है?
(ii) मति एवं श्रुत ज्ञानोपयोग मुनिराज के भी होते हैं?
(iii) चक्षु दर्शनोपयोग में एकेन्द्रिय सम्बन्धी जीवसमास भी होते हैं?
(iv) सिद्ध भगवान उपयोगातीत होते हैं?
(v) छह ज्ञानोपयोग चारों गतियों में पाये जाते हैं?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) चक्षुदर्शनोपयोग में.........गति.........कुल तथा सम्यक्त्व मार्गणा के ....भेद होते हैं।

(ii) केवल ज्ञानोपयोग में................काय................योग तथा..........................संज्ञा होती है।

(iii) अवधि दर्शनोपयोग में...............ज्ञान.........................संयम तथा..................लेश्या होती है।

(iv) कुअवधि ज्ञानोपयोग.........गुणस्थान से.........गुणस्थान तक.........गति के जीवों के होता है।

(v) दो उपयोग वालों के....................कुल...................दर्शन तथा...................ध्यान होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये -

	अ		ब
(i)	९ गुणस्थान	-	छठे से बारहवें गुणस्थान तक
(ii)	अचक्षु दर्शनोपयोग	-	अवधि दर्शनोपयोग
(iii)	१० गुणस्थान	-	चक्षु दर्शनोपयोग
(iv)	२८ लाख जाति	-	अवधिज्ञानोपयोग
(v)	मति श्रुत अवधिज्ञानोपयोग	-	तेरहवें चौदहवें गुणस्थान में
(vi)	कुमति कुश्रुत ज्ञानोपयोग	-	१२ गुणस्थान
(vii)	मन:पर्यय ज्ञानोपयोग	-	मिथ्यादृष्टि
(viii)	केवलदर्शनोपयोग	-	परिहारविशुद्धि संयम

– उत्तरमाला –

१. (i) द (ii) अ (iii) द (iv) अ (v) अ

२. (i) मनुष्यगति (ii) ४ (iii) ३ (iv) २ (v) ३

३. (i) हाँ (ii) हाँ (iii) ना (iv) ना (v) हाँ

४. (i) ४, ११७ $\frac{१}{२}$ ला.क., ६ (ii) त्रस, ७, ० (iii) ४, ७, ६ (iv) पहले, दूसरे, चारों (v) १४ ला.क., १, २।

५. (i) अवधिज्ञानोपयोग (ii) १२ गुणस्थान (iii) अवधि दर्शनोपयोग (iv) चक्षुदर्शनोपयोग (v) परिहारविशुद्धि संयम (vi) मिथ्यादृष्टि (vii) छठे से बारहवें गुणस्थान तक (viii) तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान में।

२१. ध्यान

१. प्रश्न : ध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : चित्त को अन्य विकल्पों से हटाकर एक ही अर्थ में लगाने को ध्यान कहते हैं।

चित्त के विक्षेप का त्याग करना ध्यान है। **(सर्वा. ९/२०)**

ध्यान के लक्षण में जो एकाग्र का ग्रहण है वह व्यग्रता की निवृत्ति के लिए है। ज्ञान ही वस्तुत: व्यग्र होता है ध्यान नहीं। ध्यान को तो एकाग्र कहा है। **(त.अ. ५९)**

२. प्रश्न : ध्यान कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : ध्यान चार प्रकार के होते हैं -

(१) आर्त्तध्यान (२) रौद्र ध्यान (३) धर्म्य ध्यान (४) शुक्ल ध्यान

अथवा ध्यान दो प्रकार के होते हैं-

(१) प्रशस्त ध्यान (२) अप्रशस्त ध्यान। **(चा.सा.)**

अथवा - ध्यान तीन प्रकार का होता है क्योंकि जीव का आशय तीन प्रकार का ही होता है। (१) पुण्य रूप आशय (२) पाप रूप आशय (३) शुद्धोपयोग रूप आशय **(ज्ञा.३/२७-२८)**

३. प्रश्न : आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : ऋत, दु:ख और अर्दन को आर्त्ति कहते हैं और आर्त्ति से होने वाला ध्यान आर्त्तध्यान है। **(रा.वा.१)** आर्त्ति का अर्थ दु:ख है, दु:ख असातावेदनीय के उदय से प्राप्त विष, कण्टकादि कारणों से होता है। जिस प्रकार गीला वस्त्र धूलि को आश्रय देता है, उसी प्रकार यह आर्त्तध्यान पाप को ग्रहण करता है। **(आ.सा. १०/१९)**

४. प्रश्न : आर्त्तध्यान कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : आर्त्तध्यान चार प्रकार के होते हैं -

(१) इष्ट वियोग (२) अनिष्ट संयोग (३) वेदना (४) निदान। **(ज्ञा. २५/२४)**

(१) किसी भी प्रकार के अमनोज्ञ विषयों की उत्पत्ति नहीं हो, इस प्रकार बार-बार चिन्ता करना।

(२) किसी प्रकार के अमनोज्ञ विषयों की उत्पत्ति हो गई हो तो उसका अभाव किस प्रकार हो ऐसा निरन्तर संकल्प करना।

(३) मेरे इहलोक सम्बन्धी और परलोक सम्बन्धी इष्ट विषय का वियोग न हो ऐसा बार-बार चिन्तन करना।

(४) पहले उत्पन्न इष्ट विषय के अभाव का बार-बार चिन्तन। **(हरि. पु. ५६/१२-१७)**

अथवा आर्त्तध्यान दो प्रकार का है -

(१) बाह्य आर्त्तध्यान (२) अभ्यन्तर आर्त्तध्यान। **(चा.सा. २२५)**

५. प्रश्न : बाह्य आर्त्तध्यान के चिह्न कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : शोक करना, रोना, विलाप करना, खूब जोर से रोना, विषयों की इच्छा करना, तिरस्कार करना तथा अभिमान करना आदि **बाह्य आर्त्तध्यान** कहलाता है। **(चा.सा. २२५)**

परिग्रह में अत्यन्तासक्ति होना, कुशील रूप प्रवृत्ति होना, कृपणता करना, ब्याज लेकर आजीविका करना, अत्यन्त लोभ करना, भय करना और अतिशय शोक करना ये आर्त्तध्यान के बाह्य चिह्न हैं। **(म.पु. ५६/४)**

६. प्रश्न : अभ्यन्तर आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसे केवल अपनी ही आत्मा जान सके उसे **आध्यात्मिक आर्त्तध्यान** कहते हैं। **(चा.सा. २२५)**

जो अन्तरंग में अधिक तीव्र कलुषता करने वाला है उसे **अभ्यन्तर आर्त्तध्यान** कहते हैं। **(मू.प्र. २००४)**

७. प्रश्न : रौद्रध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिसका भाव अत्यन्त क्रूर है तथा जिसकी दया नष्ट हो गई है, ऐसा प्राणी रुद्र कहलाता है और रुद्र में जो हो वह रौद्र कहलाता है। जिस प्रकार गीला चमड़ा बहुत भारी धूलि का घर होता है उसी प्रकार यह रौद्र ध्यान पाप कर्मों का घर होता है। **(आ.सा. १०/२३)**

रुलाने वाले को रुद्र या क्रूर कहते हैं, उस रुद्र का कर्म या भाव रौद्रध्यान कहलाता है। **(रा.वा.२)**

चोर, जार, शत्रुजनों के वध-बन्धन सम्बन्धी महाद्वेष से उत्पन्न होने वाला रौद्रध्यान है। **(नि.सा. ८९)**

८. प्रश्न : रौद्रध्यान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : रौद्रध्यान दो प्रकार का होता है-

(१) बाह्य रौद्रध्यान (२) अभ्यन्तर रौद्रध्यान **अथवा**

रौद्रध्यान **चार** प्रकार का होता है -

(१) हिंसानन्द (२) मृषानन्द (३) स्तेयानन्द (४) विषयसंरक्षणानन्द। **(म.पु. २१/४३)**

९. प्रश्न : बाह्य रौद्रध्यान के चिह्न कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : लाल नेत्र होना, कठिन वचन कहना, किसी की निन्दा करना, किसी का तिरस्कार करना, किसी को मारना, बाँधना वा और भी किसी प्रकार की पीड़ा देना बाह्य रौद्रध्यान है और वह अनेक प्रकार का होता है। **(मू.प्र. २०२२)**

भौहें टेढ़ी हो जाना, मुख का विकृत हो जाना, पसीना आने लगना, शरीर काँपने लगना और नेत्रों का अतिशय लाल हो जाना आदि रौद्रध्यान के बाह्य चिह्न हैं। **(म.पु.२१/५३)**

हिंसा के उपकरण शस्त्र आदिक का संग्रह करना, क्रूर जीवों का अनुग्रह करना और निर्दयता आदि भाव रौद्रध्यान के देहधारियों के बाह्य चिह्न हैं। **(ज्ञा. २६/१४)**

१०.प्रश्न : अभ्यन्तर रौद्रध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : हिंसा आदि कार्यों में जो संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ रूप प्रवृत्ति है वह अभ्यन्तर रौद्रध्यान है। **(मू.प्र. २०२३)**

जो पुरुष निरन्तर निर्दय स्वभाववाला हो तथा स्वभाव से ही क्रोधकषाय से प्रज्वलित हो तथा मद से उद्धत हो, जिसकी बुद्धि पाप रूप हो तथा कुशील हो, व्यभिचारी हो, नास्तिक हो वह रौद्रध्यान का घर है। **(ज्ञा. २६/६)**

जो अन्य का बुरा चाहे तथा पर को कष्ट आपदा रूप बाणों से भेदा हुआ दुःखी देखकर सन्तुष्ट हो तथा गुणों से गुरुता देखकर अथवा अन्य की सम्पदा देखकर द्वेष रूप हो, अपने हृदय में शल्य सहित हो सो निश्चय करके रौद्रध्यान का चिह्न है। **(ज्ञा. २६/१३)**

११.प्रश्न : धर्म्यध्यान के लक्षण कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : व्रतों में दृढ़ रहना, सदाचार का पालन करना और तत्त्वों का चिन्तन करना धर्म्यध्यान का लक्षण है। **(मू.प्र. २०४१)**

समस्त पदार्थों के स्वभाव में लगा हुआ साम्य भाव से स्थित जो चित्त है, वह धर्म्य है। **अथवा** समता भाव से समस्त पदार्थों का चिन्तन करना धर्म्य ध्यान है।

१२.प्रश्न : धर्म्यध्यान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : धर्म्यध्यान दो प्रकार का होता है-

(१) बाह्य धर्म्यध्यान (२) अभ्यन्तर धर्म्यध्यान। **अथवा -** (१) मुख्य धर्म्यध्यान (२) उपचार धर्म्यध्यान **(वृ.द्र.सं.टी. ४८)**

अथवा - धर्म्यध्यान चार प्रकार का होता है -

(१) आज्ञाविचय (२) अपायविचय (३) विपाकविचय (४) संस्थान विचय। **(त.सू.४/३६)**

(१) आज्ञाविचय स्मृतिसमन्वाहार (२) अपायविचय स्मृतिसमन्वाहार

(३) विपाकविचय स्मृतिसमन्वाहार (४) संस्थानविचय स्मृति समन्वाहार। **(रा.वा. ९/३६)**

१३. प्रश्न : बाह्य धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : ध्यान करते समय सज्जन लोगों के मन-वचन-काय की क्रियाओं का जो बन्द हो जाना है उसको बाह्य धर्म्यध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०४१-४२)**

जिसे अन्य लोग भी अनुमान से जान सकें उसे बाह्य धर्म्यध्यान कहते हैं। **(चा.सा.२३१)**

शास्त्र के अर्थ की खोज करना, शीलव्रत का पालन करना, गुणों के समूह में अनुराग रखना, अँगड़ाई, जंभाई, छींक-डकार और श्वासोच्छ्वास में मन्दता होना, शरीर को निश्चल रखना तथा आत्मा को व्रतों से युक्त करना, ये धर्म्यध्यान के बाह्य लक्षण हैं। **(हरि.पु. ५६/३६-३८)**

पंच परमेष्ठी में भक्ति रखना, उनके अनुकूल प्रवृत्ति करना बहिरंग धर्म्यध्यान है। **(का.अ. ४८२ टी.)**

१४. प्रश्न : अभ्यन्तर धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो अपने आत्मा के ही गोचर है और अन्त:करण को शुद्ध करने वाला है उसको अन्तरंग धर्म्यध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०४१-४२)**

जिसे केवल अपना ही आत्मा जान सके उसे आध्यात्मिक धर्मध्यान कहते हैं। **(चा.सा.२३१)**

सहज शुद्ध चैतन्य से सुशोभित और आनन्द से भरपूर अपनी आत्मा में उपादेय बुद्धि करके पुन: मैं अनन्त ज्ञान वाला हूँ, मैं अनन्त सुख स्वरूप हूँ आदि भावना करना अभ्यन्तर धर्म्यध्यान है। **(का.अ. ४८२ टी.)**

१५. प्रश्न : शुक्लध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जहाँ गुण अतिविशुद्ध होते हैं, जहाँ कर्मों का क्षय और उपशम होता है, जहाँ लेश्या भी शुक्ल होती है उसे शुक्ल ध्यान कहते हैं। **(का.अ. ४८३)** जिसमें कषायों की लालिमा न हो वह शुक्लध्यान है। **(ध. १३/७७)**

जो निष्क्रिय है, इन्द्रियातीत है और ध्यान की धारणा से रहित है अर्थात् मैं इसका ध्यान करूँ ऐसी इच्छा से रहित है और जिसमें चित्त अन्तर्मुख होता है उसको शुक्लध्यान कहते हैं। **(ज्ञा. ४२/४)**

हे भव्य ! कुछ भी चेष्टा मत कर, कुछ भी मत बोल और कुछ भी चिन्तन मत कर, जिससे आत्मा निजात्मा में तल्लीन होकर स्थिर हो जावे, आत्मा में लीन होना ही परम ध्यान है। **(द्र.सं. ५६)**

१६.प्रश्न : शुक्लध्यान कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : शुक्लध्यान दो प्रकार का होता है -

(१) बाह्य शुक्लध्यान (२) आध्यात्मिक शुक्लध्यान

(१) शुक्लध्यान (२) परम शुक्लध्यान। **(चा.सा. १७१)**

अथवा - शुक्लध्यान चार प्रकार का है -

(१) पृथक्त्व वितर्कवीचार (२) एकत्ववितर्क अवीचार (३) सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती (४) व्युपरतक्रियानिवृत्ति **(त.सू. ९/३९)**।

१७.प्रश्न : बाह्य शुक्लध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिस ध्यान में अत्यन्त उत्कृष्ट साम्य भाव प्रगट हो जाये, नेत्रों का स्पंदन आदि सब छूट जाये, सज्जनों के सब संकल्प-विकल्प छूट जायें और जो सज्जनों को प्रकट मालूम हो उसको बाह्य शुक्ल ध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०७५-७९)**

शरीर और नेत्रों को परिस्पन्दन रहित रखना, जंभाई-जंभा उद्गार आदि नहीं होना, प्राणापान का प्रचार व्यक्त न होना अथवा प्राणापान का प्रचार नष्ट हो जाना और किसी के द्वारा जीता न जाना बाह्य शुक्लध्यान है। **(चा.सा.)**

१८.प्रश्न : अभ्यन्तर शुक्लध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो अपने आत्मा के ही गोचर है और मन को शुद्ध करने वाला है, उस महान् शुक्लध्यान को अभ्यन्तर शुक्लध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०७५-७९)**

जो केवल आत्मा को स्वसंवेद्य हो वह आध्यात्मिक शुक्लध्यान कहा जाता है। **(चा.सा.)**

तालिका संख्या ८०

तीन आर्त्तध्यान

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पंच	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि, १ त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	७	३ कुज्ञान ४ ज्ञान	केवलज्ञान नहीं है।
८.	संयम	५	सा.छे.प.संय. असं.	सूक्ष्म. एवं यथा. संयम नहीं हैं।
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	केवलदर्शन नहीं है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	६	पहले से छठे तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ एके. ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	१०	७ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	स्वकीय	
२२.	आस्रव	५७	५मि. १२अवि. २५क. १५यो.	
२३.	जाति	८४ ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यहाँ कौन-कौन से आर्त्तध्यानग्रहण करने चाहिए?

उत्तर : यहाँ पर (१) अनिष्ट संयोगज (२) इष्ट वियोगज और (३) वेदना आर्त्तध्यान को ग्रहण करना चाहिए।

२. प्रश्न : अनिष्ट संयोगज आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : विष, कण्टक, शत्रु और शस्त्र आदि जो अप्रिय पदार्थ हैं वे बाधा के कारण होने से अमनोज्ञ कहे जाते हैं। उनका संयोग होने पर 'वे मेरे कैसे न हों' इस प्रकार संकल्प चिन्ता प्रबन्ध स्मृति समन्वाहार यह अनिष्ट संयोगज नाम का आर्त्तध्यान कहलाता है। **(सर्वा.सि.९/३०)**

दुखकारी विषयों का संयोग होने पर "यह कैसे दूर हो" इस प्रकार विचारता हुआ जो विक्षिप्त चित्त हो चेष्टा करता है उसके अनिष्ट संयोग आर्त्तध्यान होता है। **(का.अ. ४७३)**

३. प्रश्न : आत्मा को अनिष्ट लगने वाले दुखकारी विषयों के साधन कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : आत्मा को अनिष्ट लगने वाले दुखकारी विषयों के साधन दो प्रकार के हैं –

(१) बाह्य-साधन (२) अंतरंग साधन।

बाह्य-साधन भी दो प्रकार के हैं।

(१) चेतन साधन - मनुष्य आदि।

(२) अचेतन साधन - विष, शस्त्र.........आदि।

अंतरंग-साधन भी दो प्रकार के हैं।

(१) शारीरिक साधन - वात आदि के प्रकोप से उत्पन्न उदर-शूल, नेत्र-शूल, दंत-शूल आदि नाना प्रकार की दुस्सह बीमारियाँ........आदि।

(२) मानसिक साधन - शोक, अरति, भय, उद्वेग, विषाद आदि विष से दूषित जो जुगुप्सा तथा दौर्मनस्य, बेचैनी........आदि विकार हैं, वे सभी दु:खों के मानसिक साधन हैं। **(हरि पु. ५६/९-११)**

४. प्रश्न : इष्ट वियोगज आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : मनोज्ञ वस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति की सतत चिन्ता करना दूसरा आर्त्तध्यान है। **(त.सू. ९/३१)**

मनोज्ञ अर्थात् अपने इष्ट पुत्र, स्त्री और धनादिक के वियोग होने पर उनकी प्राप्ति के लिए संकल्प अर्थात् निरन्तर चिन्ता करना दूसरा **इष्ट वियोगज** नाम का आर्त्तध्यान जानना चाहिए। **(सर्वा.सि. ९/३१)**

मनोहर विषय का वियोग होने पर 'कैसे इसे प्राप्त करूँ' इस प्रकार विचारता हुआ जो दु:ख से प्रवृत्ति करता है यह भी आर्त्तध्यान है। **(का.अ. ४७४)**

स्वदेश के त्याग से, द्रव्य के नाश से, मित्रजन के विदेश गमन से, कमनीय कामिनी के वियोग से उत्पन्न होने वाला इष्ट वियोगज आर्त्तध्यान है। **(नि.सा.ता. ८९)**

५. प्रश्न : आत्मा को इष्ट लगने वाले मनोज्ञ सुख के साधन कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : आत्मा को इष्ट लगने वाले मनोज्ञ सुख के साधन दो प्रकार के हैं –

(१) बाह्य साधन और (२) अंतरंग साधन

बाह्य-साधन भी दो प्रकार के हैं –

(१) चेतन साधन - पशु, स्त्री, पुत्र........ आदि चेतन साधन हैं।

(२) अचेतन साधन - धन-धान्यादि अचेतन साधन हैं।

अंतरंग-साधन भी दो प्रकार के हैं –

(१) शारीरिक साधन - पित्त आदि सात धातुओं की समानता से जो आरोग्य अवस्था है, वह शारीरिक साधन है।

(२) मानसिक साधन - रति, अशोक, (शोक नहीं होना) अभय आदि से उत्पन्न जो सौमनस्य आदि हैं, वे मानसिक साधन हैं। **(हरि. पु. ५६/१४-१५)**

६. प्रश्न : वेदना आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : वात पित्त कफ के प्रकोप से उत्पन्न हुए शरीर को नाश करने वाले वीर्य से प्रबल और क्षण-क्षण में उत्पन्न होने वाले कास, श्वास, भगन्दर, जलोदर, जरा, कोढ़, अतिसार, ज्वरादिक रोगों से मनुष्यों के जो व्याकुलता होती है, उसे अनिन्दित पुरुषों ने रोग-पीड़ा-चिन्तन नामका आर्त्तध्यान कहा है। **(ज्ञा. २५/३२)**

७. प्रश्न : किस आर्त्तध्यान वाले के पाँच काययोग होते हैं?

उत्तर : पहले, दूसरे तथा चौथे इन तीन गुणस्थान वाले आर्त्तध्यानी के पाँच काययोग होते हैं। यहाँ आहारकद्विक बिना पाँच काययोग को ग्रहण करना चाहिए।

८. प्रश्न : आर्त्तध्यानी जीवों के कितनी कषायों का अभाव हो सकता है?

उत्तर : आर्त्तध्यानी जीवों के चार कषायों का अभाव (सत्ता का) हो सकता है।

अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ (क्षायिक सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा)

आस्रव के प्रत्यय की अपेक्षा संज्वलन चौकड़ी के बिना तीन चौकड़ी कषाय सम्बन्धी आस्रव के प्रत्ययों का अभाव हो सकता है। (छठे गुणस्थान की अपेक्षा)

९. प्रश्न : तीन आर्त्तध्यानी के कौन-कौन सा संयम नहीं हो सकता है?

उत्तर : तीन आर्त्तध्यान वालों के दो संयम नहीं हो सकते हैं -

(१) सूक्ष्म साम्पराय (२) यथाख्यात

१०. प्रश्न : आर्त्तध्यानी सम्यग्दृष्टि जीव के आहारक अवस्था कहाँ-कहाँ पाई जाती है?

उत्तर : आर्त्तध्यानी सम्यग्दृष्टि जीव के आहारक अवस्था चौथे, पाँचवें, छठे इन तीन गुणस्थानों में पाई जाती है।

११. प्रश्न : उपर्युक्त तीन आर्त्तध्यान किस-किस गुणस्थान में होते हैं?

उत्तर : उपर्युक्त तीन आर्त्तध्यान प्रथम छह गुणस्थानों में होते हैं -

प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ।

१२. प्रश्न : आर्त्तध्यानी चक्षुदर्शनी के कितने प्राण हो सकते हैं?

उत्तर : आर्त्तध्यानी चक्षुदर्शनी के कम-से-कम छह प्राण होते हैं -

४ इन्द्रियाँ, १ बल (काय) तथा आयु (चतुरिन्द्रिय की निर्वृत्यपर्याप्तावस्था अपेक्षा) तथा अधिक-से-अधिक १० प्राण होते हैं - संज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा।

१३. प्रश्न : आर्त्तध्यानी के किस-किस गुणस्थान में दस प्राण ही होते हैं?

उत्तर : आर्त्तध्यानी के दो गुणस्थानों-तीसरे तथा पाँचवें में दस प्राण ही होते हैं।

१४. प्रश्न : क्या किसी धार्मिक ग्रन्थ के खो जाने पर उसे प्राप्त करने के लिए बार-बार चिन्तन करना भी आर्त्तध्यान है?

उत्तर : हाँ, धार्मिक ग्रन्थ खो जाने पर उसकी प्राप्ति के लिए व्याकुल होना भी इष्ट वियोगज आर्त्तध्यान है, लेकिन यह आर्त्तध्यान पापास्रव का कारण नहीं बनता है इसलिए इसे प्रशस्त आर्त्तध्यान कहा जा सकता है। ऐसा आर्त्तध्यान तो मुनिराज के भी हो सकता है।

इसी प्रकार धार्मिक आयतन देव-शास्त्र-गुरु का विनाश करने वाले आतताइयों का संयोग हो जाने पर उन्हें दूर करने के लिए भी अनिष्ट संयोगज आर्त्तध्यान हो जाता है, वह भी मेरे विचार से दुर्गति का कारण नहीं बनता है।

१५. प्रश्न : इष्टवियोग आर्त्तध्यान एवं निदान आर्त्तध्यान में क्या अन्तर है?

उत्तर : इष्ट वस्तुओं के वियोग से होने वाले दु:ख के समय जो ध्यान होता है वह इष्ट वियोगज आर्त्त ध्यान कहलाता है और प्राप्त नहीं हुए इष्ट पदार्थ के चिन्तन से जो आर्त्तध्यान होता है वह निदान आर्त्तध्यान है। यह दूसरे पुरुषों की भोगोपभोग की सामग्री देखने से संक्लिष्ट चित्त वाले जीव के होता है। **(म.पु. २१/३३-३४)**

तालिका संख्या ८१

५ ध्यान

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	५	ए.द्वी.त्री.चतु.पंच	
३.	काय	६	५ पृथ्वी आदि, १ त्रस	
४.	योग	१३	४ म. ४ व. ५ का.	आहारकद्विक नहीं है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२५	१६ क. ९ नोक.	
७.	ज्ञान	६	३ कुज्ञान ३ ज्ञान	मन:पर्यय तथा केवलज्ञान नहीं हैं।
८.	संयम	२	संयमा. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	केवलदर्शन नहीं होता है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	२	भव्य, अभव्य	
१२.	सम्यक्त्व	६	क्षा.क्षायो.उप.सा.मिश्र.मि.	
१३.	संज्ञी	२	सैनी, असैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	५	पहले से पाँचवें तक	
१६.	जीवसमास	१९	१४ एके. ५ त्रस सम्बन्धी	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	९	६ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	स्वकीय	एक समय में एक ही ध्यान होता है।
२२.	आस्रव	५५	५मि. १२अवि. २५क. १३यो.	
२३.	जाति	८४ला.	चारों गति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१९९ $\frac{१}{२}$ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : यहाँ पर कौनसे पाँच ध्यानों को ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर : यहाँ एक आर्त्तध्यान एवं चार रौद्रध्यानों को ग्रहण करना चाहिए -

(१) निदान आर्त्तध्यान (२) हिंसानन्द रौद्रध्यान (३) मृषानन्द रौद्रध्यान

(४) चौर्यानन्द रौद्रध्यान (५) परिग्रहसंरक्षणानन्द रौद्रध्यान।

२. प्रश्न : निदान आर्त्तध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो प्राणी पुण्याचरण के समूह से तीर्थंकर के अथवा देवों के पद की वांछा करे अथवा उन्हीं पुण्याचरणों से अत्यन्त कोप के कारण शत्रुसमूह रूपी वृक्षों को उच्छेदने की वाँछा करे तथा उन विकल्पों से अपनी पूजा प्रतिष्ठा लाभ आदिक की याचना करे, उसको निदानजनित आर्त्तध्यान कहते हैं। मनुष्यों के इष्ट भोगादिक की सिद्धि के लिए तथा शत्रु के घात के लिए जो निदान हो, सो चौथा आर्त्तध्यान है। **(ज्ञा. २५/३५-३६)**

३. प्रश्न : हिंसानन्द रौद्रध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : छहकाय के जीवों की विराधना, असि-मसि आदि आरम्भ में आनन्द मानना **हिंसानन्द रौद्रध्यान** है। **(भ.आ. १७०३)**

तीव्र कषाय के उदय से हिंसा करके आनन्द मानना पहला रौद्रध्यान है। **(चा.सा.)**

जीवों के समूह को अपने से तथा अन्य के द्वारा मारे जाने पर तथा पीड़ित किये जाने पर तथा ध्वंस करने पर और घात करने के सम्बन्ध मिलाए जाने पर जो हर्ष माना जाये उसे **हिंसानन्द** नामका रौद्रध्यान कहते हैं। **(ज्ञा. २६/४)**

बलि आदि देकर यशलाभ का चिन्तन करना, जीवों को खण्ड करने व दग्ध करने आदि को देखकर खुश होना, युद्ध में हार-जीत सम्बन्धी भावना करना, वैरी से बदला लेने की भावना, परलोक में बदला लेने की भावना **हिंसानन्दी रौद्रध्यान** है। **(म.पु. २१/४५)**

४. प्रश्न : मृषानन्द रौद्रध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जो मनुष्य असत्य झूठी कल्पनाओं के समूह से पाप रूपी मैल से मलिन चित्त होकर जो कुछ चेष्टा करे उसे निश्चय करके **मृषानन्द रौद्रध्यान कहते हैं।** जो ठगाई के शास्त्र रचने आदि के द्वारा दूसरों को आपदा में डालकर धन आदि संचय करे, असत्य बोलकर अपने शत्रु को दण्ड दिलावे, वचन चातुर्य से मनवांछित प्रयोजनों की सिद्धि तथा अन्य व्यक्तियों को ठगने की भावनाएँ बनाये रखना मृषानन्दी रौद्रध्यान है। **(ज्ञा. २६/१६-२१)**

असत्य बोलने में आनन्द मानना **मृषानन्द रौद्रध्यान है। (का.अ. ४७६)**

जिन पर दूसरों को श्रद्धान हो सके ऐसी बुद्धि के द्वारा कल्पना की हुई युक्तियों के द्वारा दूसरों को ठगने के लिए झूठ बोलने के संकल्प का बार-बार चिन्तन करना मृषानन्द रौद्रध्यान है। **(चा.सा.)**

५. प्रश्न : **चौर्यानन्द रौद्रध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : जीवों के चौर्यकर्म के लिए निरन्तर चिन्ता उत्पन्न हो तथा चौर्य कर्म करके भी निरन्तर अतुल हर्ष माने, आनन्दित हो, अन्य कोई चोरी के द्वारा परधन को हरे तो उसमें हर्ष माने उसे निपुण पुरुष चौर्यकर्म से उत्पन्न हुआ रौद्रध्यान कहते हैं। अमुक स्थान में बहुत धन है जिसे मैं तुरन्त हरण करके लाने में समर्थ हूँ। दूसरों के द्वीप आदि सबको मेरे ही आधीन समझो, क्योंकि मैं जब चाहूँ उनको हरण करने जा सकता हूँ, इत्यादि रूप चिन्तन **चौर्यानन्द रौद्रध्यान** है। **(ज्ञा. २६/२५-२८)**

जबरदस्ती अथवा प्रमाद की प्रतीक्षापूर्वक दूसरे के धन को हरण करने के संकल्प का बार-बार चिन्तन करना तीसरा रौद्रध्यान है। **(चा.सा.)**

दूसरे पुरुषों की विषय सामग्री को हरने के स्वभाव वाला चौर्यानन्द रौद्रध्यान है। **(का.अ. ४७६)**

६. प्रश्न : **परिग्रहसंरक्षणानन्द रौद्रध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : जब प्राणी रौद्रचित्त होकर बहुत आरम्भ-परिग्रहों की रक्षार्थ नियम से उद्यम करे और उसी में संकल्प की परम्परा का विस्तार करे तथा रौद्र चित्त होकर ही महत्ता का अवलम्बन करके उन्नतचित्त होकर, ऐसा माने कि मैं राजा हूँ, ऐसे परिणाम को निर्मल बुद्धि वाले महापुरुष संसार की वांछा करने वाले कहते हैं, ऐसे जीवों के चौथा रौद्रध्यान होता है। मैं बाहुबल से, सैन्यबल से सम्पूर्ण पुर-ग्रामों को दग्ध करके असाध्य ऐश्वर्य प्राप्त कर सकता हूँ। मेरे धन पर दृष्टि रखने वालों को मैं क्षण-भर में दग्ध कर दूँगा। मैंने यह राज्य शत्रु के मस्तक पर पाँव रखकर उसके दुर्ग में प्रवेश करके पाया है। इसके अतिरिक्त जल, अग्नि, सर्प, विषादि के प्रयोगों द्वारा भी मैं समस्त शत्रुसमूह का नाश करके अपना प्रताप स्फुरायमान कर सकता हूँ। इस प्रकार चिन्तन करना **विषय संरक्षणानन्द रौद्रध्यान** है। **(ज्ञा. २६/२९-३५)**

जो अपनी विषयसामग्री की रक्षा करने में चतुर है तथा निरन्तर जिसका चित्त इन कामों में लगा रहता है वह भी विषय संरक्षणानन्दी रौद्रध्यानी है। **(का.अ. ४७६)**

चेतन-अचेतन रूप अपने परिग्रह में यह मेरा परिग्रह है, मैं इसका स्वामी हूँ, इस प्रकार ममत्व रखकर उसके अपहरण करने वाले का नाश करने के संकल्प का बार-बार चिन्तन करना विषयसंरक्षणानन्द नामका चौथा रौद्रध्यान है। **(चा.सा.)**

७. प्रश्न : रौद्रध्यानी जीवों के कौन-कौन से ज्ञान नहीं होते हैं?

उत्तर : रौद्रध्यानी जीवों के दो ज्ञान नहीं हो सकते हैं -

(१) मन:पर्यय ज्ञान (२) केवलज्ञान

क्योंकि ये दोनों ज्ञान मुनिमहाराज के ही होते हैं।

८. प्रश्न : रौद्रध्यान किन लेश्याओं में होता है?

उत्तर : रौद्रध्यान अत्यन्त अशुभ है। यह कृष्णादि खोटी लेश्याओं में उत्पन्न होता है। **(म.पु. २१/४४)**

९. प्रश्न : रौद्रध्यान किस गुणस्थान में होता है?

उत्तर : रौद्रध्यान मिथ्यादृष्टि से पंचमगुणस्थान तक के जीवों के तरतमता से होता है। **(वृ.द्र.सं.टी.४८)**

यह ध्यान छठे गुणस्थान के पहले-पहले पाँच गुणस्थानों में होता है। **(म.पु. २१/४३)**

१०.प्रश्न : रौद्रध्यान मुनियों के अर्थात् प्रमत्तादि गुणस्थान में क्यों नहीं होता?

उत्तर : संयत के रौद्रध्यान नहीं होता, क्योंकि रौद्रध्यान में संयतपने से च्युत हो जाते हैं वा हिंसादि के आवेश में संयम नहीं रह सकता, क्योंकि जब आत्मा रौद्रध्यान से युक्त होता है तब उसके संयम नहीं रह सकता। **(रा.वा. ९/३५)**

११.प्रश्न : पंचम गुणस्थान वाले तो संयतासंयत होते हैं, फिर उनके रौद्रध्यान कैसे हो सकते हैं ?

उत्तर : हिंसादि के आवेश से या धन आदि से परतंत्र होने के कारण कभी संयमासंयमी देशव्रती के भी रौद्र ध्यान हो सकता है। किन्तु यहाँ होने वाला रौद्रध्यान नरकादि दुर्गतियों का कारण नहीं है, क्योंकि सम्यग्दर्शन का ऐसा ही सामर्थ्य है। **(सर्वा. ९/४५)**

रौद्रध्यान का वर्णन प्रधानता से मिथ्यात्व की अपेक्षा है। जबकि पाँचवें गुणस्थान में सम्यक्त्व की सामर्थ्य से ऐसे रौद्रपरिणाम नहीं होते हैं। कुछ गृहकार्य के संस्कार से किंचित् लेशमात्र होता है। उसकी अपेक्षा से कहा है सो यह नरकगति का कारण नहीं है। **(ज्ञा. २६/३६ के विशेषार्थ से)**

पंचम गुणस्थानवर्ती यद्यपि संयतासंयत होते हैं, फिर भी अपनी सम्पत्ति की रक्षा के लिए, धार्मिक आयतनों पर आये हुए उपसर्गों (बाधाओं) को दूर करने के लिए उसके रौद्रध्यान हो जाते हैं। लेकिन अति संक्लेश का अभाव होने से उनका रौद्रध्यान नरक गति में ले जाने वाला नहीं होता है।

तालिका संख्या ८२

धर्म्य ध्यान

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	४	न. ति. म. देव	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	१५	४ म. ४ व. ७ का.	
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	
६.	कषाय	२१	१२ क. ९ नोक.	अनन्तानुबन्धी नहीं है।
७.	ज्ञान	४	म. श्रु. अव. मनः.	
८.	संयम	५	सा. छे. प. संय. असं.	
९.	दर्शन	३	चक्षु. अचक्षु. अवधि	केवलदर्शन नहीं होता है।
१०.	लेश्या	६	कृ.नी.का.पी.प.शु.	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	४	क्षा.क्षायो.उप.मिश्र.	सासादन एवं मिथ्यात्व नहीं है।
१३.	संज्ञी	१	सैनी	
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	५	तीसरे से सातवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पंचेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	
२०.	उपयोग	७	४ ज्ञानो. ३ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	स्वकीय	आज्ञाविचय में आज्ञाविचय······
२२.	आस्रव	४८	१२ अवि. २१ क. १५ यो.	
२३.	जाति	२६ ला.	पंचेन्द्रिय सम्बन्धी	
२४.	कुल	१०८ १/२ ला.क.	चारों गति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : आज्ञाविचय धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिस ध्यान में सर्वज्ञ की आज्ञा को अग्रेसर करके पदार्थों का सम्यक् प्रकार चिन्तन किया जाता है वह आज्ञाविचय धर्म्यध्यान है। **(ज्ञा. ३३/२२)**

सर्वज्ञदेव की आज्ञा में जो कहा गया है वह मिथ्या नहीं है, इस प्रकार वस्तु सूक्ष्म, अन्तरित, दूरवर्ती पदार्थ का विचार करना आज्ञाविचय नामका पहला धर्म्यध्यान है।

सूक्ष्म - जो आँखों से दिखाई नहीं देते हैं ऐसे परमाणु आदि सूक्ष्म हैं।

अन्तरित - जो काल की अपेक्षा परोक्ष हैं वे अन्तरित हैं जैसे-राम, रावण आदि।

दूरवर्ती - जो क्षेत्र की अपेक्षा दूर स्थित हैं वे दूरवर्ती हैं सुमेरु पर्वत, आदि।

२. प्रश्न : अपायविचय धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : जिनागम में कल्याण, सुख की प्राप्ति का जो उपाय बताया है उसका चिन्तन करना अथवा शुभ-अशुभ कर्मों का अभाव कैसे हो, शुभ-अशुभ कर्म इन जीवों का कितना अपाय (अहित) कर रहे हैं, इत्यादि विचार करना अपायविचय धर्म्यध्यान है। **(म.क. १७९७)**

पाप का त्याग करने वाला साधु राग-द्वेष, कषाय और आस्रव आदि क्रियाओं में विद्यमान जीवों के इहलोक और परलोक से अपाय का चिंतन करे। **(ध. १३/७२)**

३. प्रश्न : विपाकविचय धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : ज्ञानावरणादि आठ प्रकार के कर्मों के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव के कारण होने वाले फलानुभव का विचार करना विपाक विचय धर्म्यध्यान है। **(रा.वा. ९/३६)**

एक और अनेक भवों में संचित हुए पुण्य-पाप कर्मों की उदय-उदीरणा, बन्ध, सत्त्व आदि का बुद्धिमान को विचार करना चाहिए। वह विचार विपाक विचय धर्म्यध्यान है। **(म.क. १७९८)**

४. प्रश्न : संस्थान विचय धर्म्यध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर : लोक के अवयव द्वीप-समुद्र आदि के स्वभाव का चिन्तन करना संस्थान विचय धर्म्यध्यान है। **(रा.वा.१०)** तीन लोकों के संस्थान, प्रमाण और आयु आदि का चिन्तन करना संस्थान विचय नामका चौथा धर्म्यध्यान है। **(ध. १३/७२)**

५. प्रश्न : कौनसा धर्म्यध्यान किस गति में होता है?

उत्तर :

धर्म्यध्यान	**गति**
• आज्ञाविचय	चारों गतियों में
• अपायविचय	तीन गतियों में (नरकगति बिना)

- विपाक विचय — दो गतियों (तिर्यञ्च एवं मनुष्य) में
- संस्थान विचय — एक गति (मनुष्यगति) में

६. प्रश्न : **कौन-कौन सा धर्म्यध्यान किस-किस गुणस्थान में होता है?**

उत्तर :

धर्म्यध्यान	**गुणस्थान**
• आज्ञाविचय	तीसरे से सातवें तक।
• अपायविचय	चौथे से सातवें तक।
• विपाक विचय	पाँचवें से सातवें तक।
• संस्थान विचय	छठे-सातवें में।

यह मान्यता वर्तमान में प्रचलित 'चउवीस ठाणा' की है।

धर्म्यध्यान दसवें गुणस्थान तक होता है। यह **धवलाकार आ. वीरसेन स्वामी** एवं **मूलाचारकार आ. वट्टकेर स्वामी** आदि की मान्यता है।

चतुर्थादि सप्तम गुणस्थान तक धर्म्यध्यान होता है, यह **सर्वार्थसिद्धि** आदि की मान्यता है।

७. प्रश्न : **यहाँ किस अपेक्षा से वर्णन किया गया है?**

उत्तर : यहाँ चउवीस ठाणा की मान्यता को मुख्य बनाकर वर्णन किया गया है।

८. प्रश्न : **किस-किस ध्यान में कार्मण काययोग नहीं हो सकता है?**

उत्तर : दो धर्म्यध्यानों में कार्मण काययोग नहीं हो सकता है। विपाकविचय एवं संस्थान विचय में क्योंकि ये दोनों ध्यान क्रमश: संयमासंयम एवं सकलसंयम में होते हैं और विग्रहगति में कार्मण काययोग होता है वहाँ संयम नहीं होता है। केवली भगवान के कार्मण काययोग में कोई ध्यान नहीं होता है।

९. प्रश्न : **किस धर्म्यध्यान में कितनी कषायें होती हैं?**

उत्तर :

धर्म्यध्यान	**कषाय**
• पहला-दूसरा	२१ (अनन्तानुबन्धी बिना)
• तीसरा	१७ (अनन्ता. एवं अप्रत्या. चतुष्क बिना)
• चौथा	१३ (संज्वलन चतुष्क एवं ९ नोक.)

नोट - जिनके केवल पुरुष वेद के साथ ही चौथा धर्म्यध्यान होता है उनके संज्वलन चतुष्क एवं ७ नोकषाय रूप ११ कषाय भी रह सकती हैं।

१०.प्रश्न : धर्म्यध्यान में कौन-कौन से ज्ञान नहीं पाये जाते हैं?

उत्तर : चारों ही धर्म्यध्यानों में ४ ज्ञान नहीं पाये जाते हैं -

कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, केवलज्ञान।

११.प्रश्न : किस धर्म्यध्यान में कितने संयम होते हैं?

उत्तर : आदि के दो धर्म्यध्यानों में पाँच संयम होते हैं-

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, संयमासंयम एवं असंयम।

तीसरे विपाक विचय धर्म्यध्यान में चार संयम होते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, संयमासंयम।

चौथे संस्थानविचय धर्म्यध्यान में तीन संयम होते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि।

१२.प्रश्न : धर्म्यध्यान में कितनी लेश्याएँ होती हैं?

उत्तर : धर्म्यध्यान में तीन लेश्याएँ होती हैं- धर्म्यध्यान को प्राप्त हुए जीव के तीव्र-मन्द आदि भेदों को लिये हुए क्रम से विशुद्धि को प्राप्त हुई पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याएँ होती हैं। **(ध. १३/५३)**

सभी धर्म्यध्यानों में शुभ लेश्याएँ होती हैं। **(चा.सा. २०३)**

१३.प्रश्न : यदि धर्म्यध्यान में शुभ लेश्याएँ ही होती हैं तो नारकियों के धर्म्यध्यान कैसे होता होगा, क्योंकि वहाँ तो अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं?

उत्तर : यद्यपि धर्म्यध्यान में शुभ लेश्याएँ ही होती हैं, लेकिन नारकियों में शुभ लेश्याओं का सद्भाव ही नहीं है इसलिए वहाँ अशुभलेश्या में धर्म्यध्यान होना यह एक अपवाद है। अथवा यों समझना चाहिए कि जहाँ शुभ और अशुभ दोनों लेश्याएँ होती हैं वहाँ शुभ लेश्याओं में ही धर्म्यध्यान होता है। (उपशम सम्यक्त्व शुभ लेश्याओं में उत्पन्न होता है।) लेकिन नारकियों के अशुभ लेश्याओं में भी उपशम सम्यक्त्व उत्पन्न होता है।

जब उपरितन अर्थात् छठे आदि गुणस्थानवर्ती जीवों के जैसे साधु के उपकरणादि की आसक्तिवश आर्त्तध्यान होता है, तब ही आर्त्तध्यान से तीन अशुभ लेश्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं **(त.वृ. ९/४७)** न कि धर्म्यध्यान में। अत: धर्म्यध्यान में शुभ लेश्याएँ ही संभव हैं। चौथे आदि गुणस्थानों में अशुभ लेश्याओं के समय आर्त्तध्यान ही होता है, धर्म्यध्यान नहीं।

१४. प्रश्न : धर्म्यध्यान में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : धर्म्यध्यान में सात गुणस्थान होते हैं -

असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, क्षपक एवं उपशामक अपूर्वकरणसंयत, क्षपक एवं उपशामक अनिवृत्तिकरणसंयत, क्षपक एवं उपशामक सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवों के धर्म्यध्यान की प्रवृत्ति होती है, ऐसा जिनदेव का उपदेश है। **(ध. १३/७४)**

धर्म्यध्यान में चार गुणस्थान होते हैं -

चौथा, पाँचवाँ, छठा और सातवाँ। **(रा.वा. ९/३६)**

१५. प्रश्न : धर्म्यध्यान में कितनी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : धर्म्यध्यान में जातियाँ -

प्रथम धर्म्यध्यान में - २६ लाख

दूसरे धर्म्यध्यान में - २२ लाख (नरकगति सम्बन्धी जाति के बिना)

तीसरे धर्म्यध्यान में - १८ लाख (तिर्यञ्च और मनुष्य गति सम्बन्धी)

चौथे धर्म्यध्यान में - १४ लाख (मनुष्य की जातियाँ)

१६. प्रश्न : धर्म्यध्यान में कितने कुल होते हैं?

उत्तर : धर्म्यध्यान में कुल -

प्रथम धर्म्यध्यान में - १०८ $\frac{1}{2}$ लाख करोड़

दूसरे धर्म्यध्यान में - ८३ $\frac{1}{2}$ लाख करोड़

तीसरे धर्म्यध्यान में - ५७ $\frac{1}{2}$ लाख करोड़

चौथे धर्म्यध्यान में - १४लाख करोड़

तालिका संख्या ८३

शुक्ल ध्यान

क्र.	स्थान	भेद	विवरण	विशेष
१.	गति	१	मनुष्यगति	
२.	इन्द्रिय	१	पंचेन्द्रिय	
३.	काय	१	त्रस	
४.	योग	९	४ म. ४ व. १ का.	औदारिक काययोग है।
५.	वेद	३	स्त्री. पु. नपुं.	वेदातीत भी होते हैं।
६.	कषाय	१३	४ क. ९ नोक.	संज्वलन चतुष्क।
७.	ज्ञान	५	म.श्रु.अ.मनः. के.	
८.	संयम	४	सा.छे.सू.य.	
९.	दर्शन	४	चक्षु. अचक्षु. अवधि. के.	
१०.	लेश्या	१	शुक्ल	
११.	भव्य	१	भव्य	
१२.	सम्यक्त्व	२	क्षायिक उपशम	
१३.	संज्ञी	१	सैनी	सैनी-असैनी से रहित भी होते हैं।
१४.	आहार	२	आहारक, अनाहारक	
१५.	गुणस्थान	७	आठवें से चौदहवें तक	
१६.	जीवसमास	१	सैनी पञ्चेन्द्रिय	
१७.	पर्याप्ति	६	आ.श.इ. श्वा.भा.म.	
१८.	प्राण	१०	५ इन्द्रिय.३ बल.श्वा.आ.	
१९.	संज्ञा	४	आ. भ. मै. परि.	संज्ञातीत जीव भी होते हैं।
२०.	उपयोग	९	५ ज्ञानो. ४ दर्शनो.	
२१.	ध्यान	१	स्वकीय	प्रथम में प्रथम...
२२.	आस्रव	२२	९ योग १३ कषाय	
२३.	जाति	१४ला.	मनुष्यगति सम्बन्धी	
२४.	कुल	१४ला.क.	मनुष्यगति सम्बन्धी	

१. प्रश्न : **पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्ल ध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : **पृथक्त्व** - पृथक्त्ववितर्कवीचार ध्यान में अनेक द्रव्यों का वा अनेक प्रकार के द्रव्यों का ध्यान होता है। यह मन, वचन, काय तीनों योगों से होता है इसलिए इसे पृथक्त्व कहते हैं।

वितर्क - वितर्क का अर्थ श्रुतज्ञान है। इस ध्यान को नौ, दश या चौदह पूर्व को जानने वाला ही प्रारम्भ करता है।

वीचार - अर्थ, शब्द और योगों के संक्रमण को **वीचार** कहते हैं। इस ध्यान में शब्द से शब्दान्तर, योग से योगान्तर और अर्थ से अर्थान्तर का चिन्तन होता है इसलिए यह सवीचार है।

आत्मा को जानने वाले जो मुनिराज पृथक्त्व वितर्क और वीचार के साथ-साथ ध्यान करते हैं उसे ''पृथक्त्ववितर्कवीचार'' नामक शुक्ल ध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०८०-८१)**

२. प्रश्न : **एकत्व वितर्क अवीचार शुक्लध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : मोहनीय कर्म का क्षय करने वाले मुनिराज शब्द, अर्थ और योग के संक्रमण से रहित तथा नौ, दस वा चौदह पूर्व श्रुतज्ञान के साथ-साथ किसी एक-एक ही द्रव्य का निश्चल ध्यान करते हैं उसे **एकत्ववितर्क अवीचार** नामक शुक्लध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०८२)**

एक के भाव को एकत्व कहते हैं अर्थात् क्षीणकषाय जीव एक ही द्रव्य का किसी एक योग के द्वारा ध्यान करते हैं इसलिए इस ध्यान को एकत्व कहते हैं।

३. प्रश्न : **सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती शुक्लध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिस समय सयोगी केवली भगवान अत्यन्त सूक्ष्म काययोग में निश्चल विराजमान होते हैं उस समय उनके निश्चल होने को उपचार से ध्यान कहते हैं, यह तीसरा सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती नाम का शुक्लध्यान है। **(मू.प्र. २०८३)**

सूक्ष्म क्रिया होकर जो अप्रतिपाती होता है वह सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती कहलाता है।

सूक्ष्मक्रिया - जिसमें क्रिया अर्थात् योग सूक्ष्म होता है वह **सूक्ष्मक्रिया** कहलाता है।

अप्रतिपाती - क्रिया जिसके पतनशील है वह प्रतिपाती कहलाता है। इसका प्रतिपक्षी (जिसके क्रिया पतनशील न हो) वह अप्रतिपाती है। **(ध. १३/८४)**

४. प्रश्न : **व्युपरतक्रियानिवृत्ति शुक्लध्यान किसे कहते हैं?**

उत्तर : इस ध्यान को समुच्छिन्नक्रिया ध्यान भी कहते हैं।

अयोग केवली भगवान क्रियारहित और योगरहित होकर जिस ध्यान से मोक्षपद प्राप्त करते हैं उसे व्युपरतक्रियानिवृत्ति नामक शुक्लध्यान कहते हैं। **(मू.प्र. २०८४)**

इस ध्यान में योग नष्ट हो चुकता है इसलिए आत्मप्रदेश-परिस्पन्द रूप सब क्रियाएँ समुच्छिन्न हो जाने से यह समुच्छिन्नक्रिया कहलाता है। साथ ही यह अप्रतिपाती होता है अत: यह ध्यान सार्थक नाम वाला है। **(आ.सा. १०/५३)**

जिसकी क्रिया (योग) सम्यक् प्रकार से उच्छिन्न हो गई है वह समुच्छिन्न क्रिया है। यह श्रुतज्ञान से रहित होने के कारण अवितर्क है तथा जीवप्रदेशों के परिस्पन्द का अभाव होने से अवीचार है या अर्थ-व्यंजन और योग की संक्रान्ति का अभाव होने से अवीचार है। **(ध. १३/८४)**

५. प्रश्न : इस ध्यान की क्या विशेषता है?

उत्तर : यह ध्यान अवितर्क, अवीचार, अनिवृत्तिनिरुद्धयोग, अनुत्तर, शुक्ल और अविचल है, मणिशिखा के समान है। **(मू.आ. ४०५)**

अवितर्क - इस ध्यान में श्रुत का अवलम्बन नहीं है अत: अवितर्क है।

अविचार - अर्थ व्यञ्जन योग की संक्रान्ति भी नहीं है अत: अविचार है।

अनिवृत्तिनिरुद्धयोग - सम्पूर्ण योगों का-काययोग का भी निरोध हो जाने से यह अनिवृत्तिनिरोधयोग है।

अनुत्तर - सभी ध्यानों में अन्तिम है। इससे उत्कृष्ट अब और कोई ध्यान नहीं रहा है अत: यह अनुत्तर है।

शुक्लध्यान - परिपूर्णतया स्वच्छ उज्ज्वल होने से शुक्लध्यान इसका नाम है।

अविचल - यह मणि के दीपक की शिखा के समान होने से पूर्णतया अविचल है। **(मू.आ.वि. ४०५)**

६. प्रश्न : प्रथम शुक्लध्यान में होने वाले कौन-कौन से योग तीसरे शुक्लध्यान में भी होते हैं?

उत्तर : प्रथम शुक्लध्यान में होने वाला केवल एक योग तीसरे शुक्लध्यान में भी होता है- औदारिक काययोग।

७. प्रश्न : शुक्लध्यान में ग्यारहयोग क्यों नहीं कहे हैं?

उत्तर : यद्यपि शुक्लध्यान में गुणस्थानों की अपेक्षा ११ योग बन जाते हैं। तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग होता है लेकिन जब तेरहवें गुणस्थान में शुक्लध्यान होता है तब औदारिक काययोग ही होता है, क्योंकि औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग समुद्घात में होते हैं। इसलिए यहाँ शुक्लध्यान में ग्यारह योग न कहकर नौ योग ही कहे हैं।

८. प्रश्न : कितने शुक्लध्यान कषायातीत जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : तीन शुक्लध्यान कषायातीत जीवों के ही होते हैं -

दूसरा, तीसरा एवं चौथा।

पहला शुक्लध्यान कषायवान एवं कषायातीत दोनों के होता है।

आठवें से दसवें गुणस्थान की अपेक्षा कषायवान तथा ग्यारहवें एवं बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा कषायातीत जीवों के होता है।

९. प्रश्न : किस शुक्लध्यान में कौनसे ज्ञान होते हैं?

उत्तर : आदि के दो शुक्ल ध्यानों में चार ज्ञान होते हैं -

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान तथा मन:पर्ययज्ञान।

तथा अन्त के दो शुक्लध्यानों में एक ज्ञान होता है- केवलज्ञान।

१०. प्रश्न : कौन-कौनसे शुक्लध्यानों में शुक्ल लेश्या ही होती है?

उत्तर : आदि के तीन अर्थात् पृथक्त्ववितर्कवीचार, एकत्ववितर्क अवीचार एवं सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाती ध्यान में एक शुक्ल लेश्या ही होती है।

चौथा शुक्लध्यान लेश्यातीत (अलेश्य) जीवों के होता है।

११. प्रश्न : प्रथम शुक्लध्यान कौनसे गुणस्थान में होता है?

उत्तर : प्रथम शुक्लध्यान **उपशम श्रेणी** की विवक्षा में -

अपूर्वकरण उपशमक, अनिवृत्तिकरण उपशमक, सूक्ष्मसाम्पराय उपशमक और उपशान्त कषाय वीतराग छद्मस्थ इन चार गुणस्थानों में होता है।

क्षपक श्रेणी की विवक्षा में -

अपूर्वकरणक्षपक, अनिवृत्तिकरण क्षपक, सूक्ष्मसाम्परायक्षपक इन तीन गुणस्थानों में होता है।

प्रथम शुक्लध्यान आठवें, नौवें, दसवें, ग्यारहवें तथा बारहवें गुणस्थान में होता है। **(वृ.द्र.सं. ४८ टी.)**

प्रथम शुक्लध्यान आठवें, नौवें, दसवें, ग्यारहवें तथा बारहवें गुणस्थान में होता है।

प्रथम शुक्लध्यान आठवें गुणस्थान से क्षीणकषाय गुणस्थान के तक में होता है।

१२.प्रश्न : द्वितीय आदि शुक्लध्यानों में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : दूसरा शुक्लध्यान बारहवें गुणस्थान में होता है। **(वृ.द्र.सं. ४८ टी.)**

दूसरा शुक्लध्यान ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान में होता है। **(ध. १३/८१)**

तीसरा शुक्लध्यान तेरहवें गुणस्थान में होता है।

चौथा शुक्लध्यान चौदहवें गुणस्थान में होता है। **(ध. १३/८७)**

१३.प्रश्न : शुक्लध्यान में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : शुक्लध्यान में आस्रव के प्रत्यय -

प्रथम शुक्लध्यान में - २२ प्रत्यय (१३ कषाय एवं ९ योग)।

दूसरे शुक्लध्यान में - ९ प्रत्यय (४ म. ४ व. १ औदा.)।

तीसरे शुक्लध्यान में - १ प्रत्यय (औदारिक काययोग)।

चौथे शुक्लध्यान में - आस्रवातीत।

१४.प्रश्न : तीसरे एवं चौथे शुक्लध्यान में क्या विशेषता है?

उत्तर : तीसरे एवं चौथे शुक्लध्यान में विशेषता -

तीसरा शुक्लध्यान	**चौथा शुक्लध्यान**
• सयोग केवली के होता है।	अयोग केवली के होता है।
• शुक्ल लेश्या वालों के होता है।	लेश्यातीत जीवों के होता है।
• आहारक के ही होता है।	अनाहारक के ही होता है।
• तेरहवें गुणस्थान में होता है।	चौदहवें गुणस्थान में होता है।
• २ प्राण होते हैं।	एक आयु प्राण ही होता है।
• सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान है।	व्युपरतक्रियानिवृत्ति ध्यान है।
• आस्रव का एक प्रत्यय होता है।	आस्रवातीत जीवों के होता है।

१५.प्रश्न : चौथे शुक्लध्यान को ध्यान संज्ञा किस कारण से दी गई है?

उत्तर : एकाग्र रूप से जीव के चिंता का निरोध अर्थात् परिस्पंदन का अभाव होना ही ध्यान है। इस दृष्टि से यहाँ ध्यान संज्ञा दी गई है। **(ध. १३/८७)**

समुच्चय प्रश्नोत्तर

१. प्रश्न : किस ध्यान में कौनसा योग होता है?

उत्तर : ध्यान में योगों का विवेचन -

ध्यान	**योग**
५ ध्यान (१ आर्त्त एवं ४ रौद्र)	१३ (आहारकद्विक बिना)
५ ध्यान (३ आर्त्त २ धर्म्य)	१५ योग
२ धर्म्य (विपाक. संस्था.)	११ (वैक्रियिकद्विक, औदारिकमिश्र एवं कार्मण बिना)
२ शुक्ल (पृथ. एक.)	९ (४ म. ४ व. १ का.)
तीसरा शुक्लध्यान	१ (औदारिक)
चौथा शुक्लध्यान	अयोगकेवली

२. प्रश्न : किस-किस ध्यान में सातों काययोग होते हैं?

उत्तर : पाँच ध्यानों में सातों काययोग होते हैं -

३ आर्त्तध्यान २ धर्म्यध्यान।

तीन आर्त्तध्यान में आहारकद्विक छठे गुणस्थान की अपेक्षा होते हैं, क्योंकि छठे गुणस्थान तक तीन आर्त्तध्यान हो सकते हैं।

दो धर्म्य ध्यानों में वैक्रियिकद्विक देवों की अपेक्षा जानना चाहिए।

शेष योगों में यथायोग्य जानना चाहिए।

३. प्रश्न : कौन-कौन से ध्यान में अनुभय वचनयोग नहीं होता है?

उत्तर : केवल दो शुक्लध्यानों में अनुभय वचनयोग नहीं होता है-

(१) सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाती (२) व्युपरतक्रियानिवृत्ति

सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान केवल औदारिक काययोग में होता है तथा व्युपरतक्रिया निवृत्ति ध्यान अयोगी केवली भगवान के होता है।

४. प्रश्न : कौन-कौन से ध्यान में अपगतवेदी जीव भी पाये जाते हैं?

उत्तर : केवल एक ध्यान में अपगतवेदी जीव भी पाये जाते हैं: पृथक्त्ववितर्कवीचार में।

५. प्रश्न : आठ ध्यान किस-किस कषाय में होते हैं?

उत्तर : आठ ध्यान आठ कषायों में होते हैं -

अनन्तानुबन्धी चतुष्क में - ४ आर्त्तध्यान और ४ रौद्रध्यान

संज्वलन चतुष्क में - ३ आर्त्तध्यान (निदान बिना), ४ धर्म्यध्यान तथा एक पृथक्त्ववितर्कवीचार

६. प्रश्न : **तेरह ध्यान कौनसी कषाय में होते हैं?**

उत्तर : हास्यादि (हास्य-रति, अरति-शोक, भय-जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद तथा नपुंसकवेद) नौ नोकषायों में तेरह ध्यान होते हैं -

४ आर्त्तध्यान ४ रौद्रध्यान ४ धर्म्यध्यान तथा १ (पहला) शुक्लध्यान। क्योंकि ये कषायें पहले से आठवें-नवमें गुणस्थान तक रहती हैं।

७. प्रश्न : **ध्यानों में ज्ञान मार्गणा किस प्रकार लगानी चाहिए?**

उत्तर : ध्यान में ज्ञान मार्गणा -

- १ (निदान) आर्त्तध्यान तथा ४ रौद्रध्यानों में ६ ज्ञान
  कुमति, कुश्रत, कुअवधि, मति, श्रुत, अवधिज्ञान
- ३ आर्त्तध्यान - ७ ज्ञान - ३ कुज्ञान तथा मति आदि चारज्ञान
- ४ धर्म्यध्यान तथा पहले-दूसरे शुक्लध्यान में ४ ज्ञान -
  मति श्रुत अवधि तथा मन:पर्ययज्ञान
- अन्तिम के सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती तथा व्युपरतक्रियानिवृत्ति ध्यान में १ ज्ञान - केवलज्ञान

८. प्रश्न : **चौदह ध्यानों में कौन-कौन से ज्ञान होते हैं?**

उत्तर : चौदह ध्यानों में तीन ज्ञान होते हैं - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान।

क्योंकि ये तीनों ज्ञान चौथे से बारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

यहाँ अन्तिम के दो शुक्लध्यानों को छोड़कर शेष चौदह ध्यान ग्रहण करने चाहिए।

९. प्रश्न : **कितने ध्यानों में चार ज्ञान होते हैं?**

उत्तर : छह ध्यानों में चार ज्ञान होते हैं -

४ धर्म्यध्यान तथा २ शुक्लध्यान (पहला, दूसरा)

तीन आर्त्तध्यानों में मति आदि चार ज्ञान होते हैं लेकिन उनमें कुमति आदि तीन कुज्ञान भी होते हैं।

१०. प्रश्न : **कौनसे ध्यान में पाँच संयम होते हैं?**

उत्तर : पाँच ध्यानों में पाँच संयम होते हैं -

आदि के दो धर्म्यध्यान तथा निदान बिना ३ आर्त्तध्यानों में -

सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, संयमासंयम तथा असंयम।

११. प्रश्न : पन्द्रह ध्यान कौनसी लेश्या में हो सकते हैं?

उत्तर : पन्द्रह ध्यान केवल एक लेश्या में हो सकते हैं - शुक्ल लेश्या में।

नोट - चौथे शुक्ल ध्यान बिना १५ ध्यान।

१२. प्रश्न : ऐसे कौनसे ध्यान हैं जो भव्य जीवों के भी होते हैं?

उत्तर : आठ ध्यान भव्य जीवों के भी होते हैं -

४ आर्त्तध्यान ४ रौद्रध्यान

१३. प्रश्न : ध्यानों में संज्ञी मार्गणा का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : ध्यानों में संज्ञी मार्गणा -

ध्यान	**मार्गणा**
४ आर्त्तध्यान तथा ४ रौद्रध्यान	सैनी-असैनी दोनों के होते हैं।
४ धर्म्यध्यान तथा २ शुक्ल ध्यान	सैनी जीवों के होते हैं।
अन्त के २ शुक्लध्यान	सैनी-असैनी से रहित जीवों के होते हैं।

१४. प्रश्न : कौन-कौन से ध्यान अनाहारक जीवों के भी होते हैं?

उत्तर : दस ध्यान अनाहारक जीवों के भी होते हैं -

४ आर्त्तध्यान, ४ रौद्रध्यान, २ धर्मध्यान।

२ धर्मध्यान एवं ३ शुक्लध्यान आहारक के ही होते हैं।

अन्तिम शुक्लध्यान अनाहारक जीवों के ही होता है।

१५. प्रश्न : कितने ध्यान दस प्राण वालों के ही होते हैं?

उत्तर : दो ध्यान दस प्राण वालों के ही होते हैं -

पृथक्त्ववितर्कवीचार एवं एकत्ववितर्क अवीचार (शुक्लध्यान)

विपाकविचय एवं संस्थानविचय धर्म्यध्यान छठे गुणस्थान में सात प्राण वालों के भी होते हैं।

१६. प्रश्न : कौन से ध्यान में आहारसंज्ञा का अभाव भी होता है?

उत्तर : चार धर्म्य ध्यानों में सातवें गुणस्थान की अपेक्षा आहार संज्ञा का अभाव भी होता है।

१७.प्रश्न : किस ध्यान में केवल मनुष्यगति सम्बन्धी जातियाँ ही होती हैं?

उत्तर : पाँच ध्यानों में केवल मनुष्यगति सम्बन्धी जातियाँ ही होती हैं -

१ धर्म्यध्यान एवं ४ शुक्लध्यान

संस्थानविचय धर्म्यध्यान, पृथक्त्ववितर्कवीचार, एकत्ववितर्कअवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती तथा व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

१८.प्रश्न : धर्म्यध्यान एवं शुक्ल ध्यान में क्या अन्तर है?

उत्तर : स्वरूप की अपेक्षा धर्म्यध्यान एवं शुक्लध्यान में कोई भेद नहीं है किन्तु इतनी विशेषता है कि धर्म्यध्यान एक वस्तु में स्तोक काल तक रहता है, क्योंकि कषाय सहित परिणाम का गर्भगृह के भीतर स्थित दीपक के समान चिरकाल तक अवस्थान नहीं बन सकता। परन्तु शुक्लध्यान के एक पदार्थ में स्थित रहने का काल धर्म्यध्यान के अवस्थानकाल से संख्यातगुणा है, क्योंकि वीतराग परिणाम मणि की शिखा के समान बहुत काल के द्वारा भी चलायमान नहीं होता है। **(ध. १३/७४-७५)**

१९.प्रश्न : मुख्य एवं उपचार धर्म्यध्यान किसके होता है?

उत्तर : अप्रमत्त गुणस्थान में मुख्य धर्म्यध्यान होता है और शेष तीन गुणस्थानों में औपचारिक धर्म्यध्यान होता है। **(का.अ. ४८७ टी.)** क्योंकि सातवें गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण कषाय का तो उदय ही नहीं होता और संज्वलन कषाय का भी मन्द उदय होता है। धर्म्यध्यान अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन कषाय के उदय में होता है। इसलिए अविरत सम्यग्दृष्टि से लेकर अप्रमत्त संयत गुणस्थान तक होता है, क्योंकि इन गुणस्थानों में कषायों की मन्दता होती है। **(का.अ. ४७२ टी.)**

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **आर्त्तध्यान में कितने योग होते हैं?**

(अ) १३ (ब) १५

(स) ९ (द) १०

(ii) **शुक्लध्यान में कम-से-कम कितनी कषायें होती हैं?**

(अ) १ (ब) ४

(स) १३ (द) ९

(iii) **रौद्रध्यान में कितने दर्शन होते हैं?**

(अ) १ (ब) ३

(स) २ (द) कोई नहीं

(iv) **धर्म्यध्यान में कितनी जातियाँ होती हैं?**

(अ) २६ लाख (ब) १० ८ $\frac{१}{२}$ लाख

(स) ८४ लाख (द) २२ लाख

(v) **निदान आर्त्तध्यान में कौन-सा ज्ञान नहीं होता है?**

(अ) कुमति (ब) अवधिज्ञान

(स) मन:पर्ययज्ञान (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) निदान आर्त्तध्यान में ज्ञान मार्गणा के कितने भेद नहीं होते हैं?

(ii) कितने आर्त्तध्यान में छह गुणस्थान होते हैं?

(iii) धर्म्यध्यान में संयम मार्गणा के कितने भेद होते हैं?

(iv) रौद्रध्यानी कितनी गतियों में होते हैं?

(v) शुक्लध्यान वाले किस गति में होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) शुक्लध्यान वाले ग्यारहवें गुणस्थान में नहीं जाते हैं?

(ii) तीसरे शुक्लध्यान वाले उसी भव में मोक्ष जाते हैं?

(iii) आर्त्तध्यानी के आहारक काययोग भी हो सकता है?

(iv) १६ ध्यान त्रस जीवों के होते हैं?

(v) रौद्रध्यान मुनिराज के भी हो सकते हैं?

४. रिक्तस्थान की पूर्ति करो-

(i) वेदना आर्त्तध्यान में............योग............गति तथा............कषायें होती हैं।

(ii) व्युपरतक्रियानिवृत्ति ध्यान वाले............काय............इन्द्रिय............गति के जीव होते हैं।

(iii) संस्थानविचय धर्मध्यान में............गुणस्थान............पर्याप्ति तथा............जातियाँ होती हैं।

(iv) तीसरे शुक्लध्यान में............प्राण............योग तथा............संज्ञा होती है।

(v) तीन आर्त्त ध्यानों में............योग............कुल एवं............जीवसमास होते हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	तीसरा शुक्लध्यान	-	एकेन्द्रिय
(ii)	८ ध्यान	-	१२ वें गुणस्थान में
(iii)	दूसरा शुक्लध्यान	-	सयोगकेवली भगवान के
(iv)	तीसरा धर्मध्यान	-	सिद्ध भगवान
(v)	तीन आर्त्तध्यान	-	पाँचवें गुणस्थान से
(vi)	चौदहवें गुणस्थान में	-	सातवें गुणस्थान में
(vii)	ध्यानातीत	-	छठे गुणस्थान तक
(viii)	केवल धर्म्यध्यान	-	चौथा शुक्लध्यान

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) अ (iii) ब (iv) अ (v) स

२. (i) दो (ii) तीन (iii) पाँच (iv) चारों (v) मनुष्य

३. (i) ना (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना

४. (i) १५, ४, २५ (ii) त्रस, पंचेन्द्रिय, मनुष्य (iii) दो, छह, १४ लाख (iv) २, १, ० (v) १५, सभी. सभी।

५. (i) सयोगकेवली भगवान के (ii) एकेन्द्रिय (iii) बारहवें गुण. में (iv) पाँचवें गुण. से (v) छठे गुणस्थान तक (vi) चौथा शुक्लध्यान (vii) सिद्ध भगवान (viii) सातवें गुणस्थान में।

२२. आस्रव के प्रत्यय

१. प्रश्न : आस्रव किसे कहते हैं?

उत्तर : पुण्य-पाप रूप कर्मों के आगमन द्वार को आस्रव कहते हैं। जैसे नदियों के द्वारा समुद्र प्रतिदिन जल से भर जाता है वैसे ही मिथ्यादर्शनादि स्रोतों से आत्मा में कर्म आते हैं। **(रा.वा. ६/२)**

काय, वचन व मन की क्रिया योग है, वही आस्रव है। **(त.सू. ६/१-२)**

२. प्रश्न : प्रत्यय किसे कहते हैं?

उत्तर : प्रत्यय के अनेक अर्थ होते हैं। जैसे-''घटस्य प्रत्ययः'' घट का ज्ञान। यहाँ प्रत्यय शब्द का अर्थ ज्ञान है। प्रत्यय शब्द कारण वाचक भी है। जैसे-मिथ्यात्वप्रत्यय अनन्तसंसारः अर्थात् इस अनन्त संसार का मिथ्यात्व कारण है। प्रत्यय शब्द का श्रद्धा ऐसा भी अर्थ होता है। जैसे-''अयं अत्रास्य प्रत्ययः'' इस मनुष्य की इसके ऊपर श्रद्धा है। **(भ.आ.वि.८२)**

यहाँ प्रत्यय शब्द का अर्थ कारण ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यहाँ आस्रव के कारणों का कथन किया गया है।

३. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय हैं?

उत्तर : आस्रव के सामान्य से चार प्रत्यय हैं –

(१) मिथ्यात्व (२) अविरति (३) कषाय (४) योग।

अथवा आस्रव के पाँच प्रत्यय होते हैं –

(१) मिथ्यात्व (२) अविरति (३) प्रमाद (४) कषाय (५) योग।

इनके उत्तर भेद - ५ मिथ्यात्व + १२ अविरति + १५ प्रमाद + २५ कषाय + १५ योग = ७२

अथवा - आस्रव के तीन प्रत्यय होते हैं।

(१) राग (२) द्वेष (३) मोह। (न. च. वृ. ३०१)

आस्रव के उत्तर प्रत्यय ५७ हैं –

५ मिथ्यात्व - विपरीत, एकान्त, विनय, संशय, अज्ञान।

१२ अविरति - ५ इंद्रिय व मन को वश में नहीं करना तथा पंच स्थावर व त्रसकायिक जीवों की रक्षा नहीं करना।

२५ कषाय - ४ अनन्ता. ४ अप्रत्या. ४ प्रत्या. ४ संज्वलन, ९ नोकषाय।

१५ योग - ४ मन ४ वचन ७ काययोग। **(गो. क. ७८६)**

मिथ्यात्व का लक्षण, देखें - सम्यक्त्व मार्गणा।

कषाय का लक्षण, देखें - कषाय मार्गणा।

योग का लक्षण, देखें - योग मार्गणा।

४. प्रश्न : चउबीस ठाणा में कौनसे प्रत्ययों का ग्रहण किया गया है?

उत्तर : चउबीस ठाणा में मुख्य रूप से आस्रव के उत्तर प्रत्ययों को ग्रहण किया गया है अर्थात् यहाँ पर आस्रव के सत्तावन प्रत्ययों को आधार बनाकर कथन किया गया है।

५. प्रश्न : अविरति किसे कहते हैं?

उत्तर : व्रतों का पालन न करना, अच्छे कामों में आलस करना, निर्दय होना, सदा असन्तुष्ट रहना और इन्द्रियों की रुचि के अनुसार प्रवृत्ति करना इन सबको सज्जन पुरुष असंयम कहते हैं **(य.ति.च. ६/१२०)**

अविरति असंयम का पर्यायवाची है। पाँच पापों एवं पंचेन्द्रिय के विषय भोगों से विरक्त नहीं होना ही अविरति है।

६. प्रश्न : अविरति कितने प्रकार की होती है?

उत्तर : अविरति पाँच प्रकार की होती है -

(१) हिंसा अविरति (२) अनृत (झूठ) अविरति (३) चौर्य अविरति (४) अब्रह्म अविरति और (५) परिग्रह अविरति। **(वृ.द्र.सं. ३० टी.)**

अथवा - अविरति बारह प्रकार की होती है -

(१) पृथिवीकायिक विराधना (२) जलकायिकविराधना (३) अग्निकायिक विराधना (४) वायुकायिक विराधना (५) वनस्पतिकायिक विराधना (६) त्रसकायिक विराधना (७) स्पर्शनइन्द्रिय असंयम (८) रसना इन्द्रिय असंयम (९) घ्राण इन्द्रिय असंयम (१०) चक्षु इन्द्रिय असंयम (११) कर्णेन्द्रिय असंयम तथा (१२) मनविषयक असंयम। **(रा.वा.२९)**

अथवा - असंयम (अविरति) प्रत्यय दो प्रकार का है -

(१) इन्द्रियासंयम (२) प्राणी असंयम।

इन्द्रियासंयम - यह स्पर्श, रस, रूप, गंध, शब्द और नोइन्द्रिय (मन) जनित असंयम के भेद से छह प्रकार का है।

प्राणी असंयम - यह भी पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति और त्रस जीवों की विराधना से उत्पन्न असंयम के भेद से छह प्रकार का है। **(ध.८/२१)**

७. प्रश्न : किस गुणस्थान में आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : गुणस्थानों में आस्रव के प्रत्यय -

गुणस्थान		**प्रत्यय**
मिथ्यात्व	-	४ (मि.अवि.क.यो.)
सासादन से असंयत तक	-	३ (अवि.क.यो.)
देशसंयत में	-	२$\frac{१}{२}$(क.यो. तथा अविरति प्रत्यय से मिश्रित विरति प्रत्यय)
छठे से दसवें तक	-	२ (कषाय तथा योग)
ग्यारहवें से तेरहवें तक	-	१ (योग)

चौदहवें गुणस्थान में आस्रव के प्रत्ययों का अभाव है।

८. प्रश्न : आस्रव के प्रत्ययों के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : आस्रव के प्रत्ययों के अनेक स्थान होते हैं -

५७,५६,५५,५२,५१,४८,४५,४२,४१,४०,३८,३७,३५,२४,२२,१६..... आदि

प्रत्यय		**स्वामी**
५७	-	पञ्चेन्द्रिय त्रस आदि
५६	-	आहारक
५५	-	मनुष्यगति, पुरुष वेद आदि में
५२	-	देवगति, विभंगावधि आदि में
५१	-	नरकगति
४८	-	मति, श्रुतज्ञान आदि
४५	-	असंज्ञी
४२	-	चतुरिन्द्रिय
४१	-	त्रीन्द्रिय
४०	-	द्वीन्द्रिय
३८	-	एकेन्द्रिय
३७	-	संयमासंयम
२४	-	प्रमत्तगुणस्थान
२२	-	अप्रमत्त गुणस्थान, अपूर्वकरण गुणस्थान

१६ से........नवम दसम.......गुणस्थानों में

तालिका संख्या ८४

संकेत - तालिका में प्रथम स्थान पर आस्रव के प्रत्यय की संख्या तथा दूसरे स्थान पर गति आदि के उत्तर भेदों की संख्या कही गई है। जैसे-गति मार्गणा में ५५ का अंक आस्रव के प्रत्यय की संख्या का तथा एक का अंक गति की संख्या का है।

आस्रव के प्रत्यय

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	५५-१, ५३-१, ५२-१, ५१-१	
२.	इन्द्रिय	३८-१, ४०-१, ४१-१, ४२-१, ५७-१	
३.	काय	३८-५, ५७-१	
४.	योग	४३-१३, १२-२	१२ प्रत्यय में आहारकद्विक योग है।
५.	वेद	५३-२, ५५-१	५५ प्रत्यय पुरुष वेद में होते हैं।
६.	कषाय	४०-४, ३५-४, ३०-४, २१-४, ५५-५ ५३-२, ५७-२	
७.	ज्ञान	५५-२, ५२-१, ४८-३, २०-१, ७-१	
८.	संयम	२४-२,२०-१,१०-१,११-१,३७-१,५५-१	
९.	दर्शन	५७-२, ४८-१, ७-१	सात आस्रव के प्रत्यय में केवलदर्शन है।
१०.	लेश्या	५५-३, ५७-३	
११.	भव्य	५७-१, ५५-१	५७ प्रत्यय भव्य जीवों के होते हैं।
१२.	सम्यक्त्व	४५-१, ४८-२, ५०-१, ४३-१, ५५-१	
१३.	संज्ञी	५७-१, ४५-१	पैंतालीस प्रत्यय असंज्ञी के होते हैं।
१४.	आहार	५६-१, ४३-१	
१५.	गुणस्थान	५५-१.........	
१६.	जीवसमास	३८-१४,४०-१,४१-१,४२-१,४५-१,५७-१	आस्रव के ५७ प्रत्यय पंचेन्द्रिय जीवों के होते हैं।
१७.	पर्याप्ति	५७-६, ३८-४, ४०,४१,४२,४५-५	
१८.	प्राण	५३-१०, ४८-७	
१९.	संज्ञा	५७-४	
२०.	उपयोग	५७-२,५५-२,५२-१,४८-४,२०-१,७-२	
२१.	ध्यान	५७-३, ५५-५, ४८-२, ३७-१, २४-१ २२-१, ९-१, १-१, ०-१	आस्रवातीत अयोगी केवली भगवान के एक अन्तिम ध्यान होता है।
२२.	आस्रव	– – –	
२३.	जाति	३८-५२ला. ४०-२ला.,४१-२ला.,४२-२ला....	
२४.	कुल	यथायोग्य	

१. प्रश्न : यहाँ आस्रव के ५७ प्रत्ययों में प्रमाद का ग्रहण क्यों नहीं किया है ?

उत्तर : कषायों में प्रमाद का अंतर्भाव होता है, क्योंकि कषायों से पृथक् प्रमाद नहीं पाया जाता है। **(ध. ७/१६)** अत: यहाँ आस्रव के ५७ प्रत्ययों में प्रमाद का ग्रहण नहीं किया है।

२. प्रश्न : यदि कषायों में प्रमाद का अंतर्भाव होता है, तो कषायों में अविरति का भी अंतर्भाव कर देना चाहिए ?

उत्तर : ऐसा नहीं है, क्योंकि इनमें कार्य कारण की दृष्टि से भेद है। कषाय कारण है और हिंसादि अविरति कार्य है। **(रा.वा. ८/१)**

यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि व्यवहार नय की अपेक्षा उसका पृथक् उपदेश किया गया है। **(ध. ७/१३)**

३. प्रश्न : आस्रव के ५१ प्रत्यय किन-किन जीवों के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ५१ प्रत्यय स्थानों के स्वामी -

(१) सम्मूर्च्छन संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च (२ वेद, वैक्रियिकद्विक एवं आहारकद्विक बिना)

(२) नारकी (२ वेद, औदारिकद्विक एवं आहारकद्विक बिना)

४. प्रश्न : आस्रव के ५२ प्रत्यय कहाँ-कहाँ होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ५२ प्रत्ययों के स्वामी -

(१) भोग भूमिया मनुष्य-तिर्यञ्च इनके आहारकद्विक, वैक्रियिकद्विक एवं नपुंसक वेद नहीं हैं।

(२) देव गति (औदारिकद्विक, आहारकद्विक एवं नपुंसक वेद बिना)

(३) म्लेच्छ खण्ड (वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक एवं नपुंसक वेद बिना)

(४) विभंगावधिज्ञानी (५ मि. १२ अवि. २५ क. १० योग)

५. प्रश्न : आस्रव के ४२ प्रत्यय किन मनुष्यों के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ४२ प्रत्यय लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य के होते हैं -

५ मि. १२ अवि. २३ क. (स्त्री एवं पुरुषवेद बिना), २ यो. (औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग) इनका पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही मरण हो जाने के कारण ४ मनोयोग, ४ वचनयोग तथा ३ काययोग नहीं हो पाते हैं।

६. प्रश्न : आस्रव के सत्तावन प्रत्यय किस मार्गणा के किस उत्तरभेद में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के सत्तावन प्रत्यय मार्गणाओं के ११ उत्तरभेदों में होते हैं -

मार्गणा	**उत्तर भेद**
इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
काय	त्रस
कषाय	भय-जुगुप्सा
दर्शन	चक्षु तथा अचक्षु दर्शन
लेश्या	पीत, पद्म, शुक्ल
भव्य	भव्य
संज्ञी	सैनी

७. प्रश्न : **आस्रव के ४३ प्रत्यय योग मार्गणा के अलावा किस मार्गणा के उत्तरभेद में पाये जाते हैं ?**

उत्तर : आस्रव के ४३ प्रत्यय योग मार्गणा के अलावा दो स्थानों में पाये जाते हैं -

(१) प्रथमोपशम सम्यक्त्व (२) अनाहारक

नोट - असैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक के भी ४३ प्रत्यय होते हैं।

८. प्रश्न : **आस्रव के ५३ प्रत्यय क्या किसी मनुष्य के भी हो सकते हैं?**

उत्तर : हाँ, कर्मभूमिया मिथ्यादृष्टि मनुष्यों के भी आस्रव के ५३ प्रत्यय हो सकते हैं -

५ मिथ्यात्व १२ अविरति २५ कषाय तथा ११ योग (आहारकद्विक एवं वैक्रियिकद्विक बिना)

९. प्रश्न : **आस्रव के ३७ प्रत्यय कौन-कौनसी गति में पाये जाते हैं?**

उत्तर : आस्रव के ३७ प्रत्यय मुख्य रूप से दो गतियों में पाये जाते हैं -

मनुष्यगति एवं तिर्यञ्चगति।

इन दोनों के पंचम गुणस्थान में ११ अविरति १७ कषाय तथा ९ योग रूप आस्रव के ३७ प्रत्यय होते हैं।

१०.प्रश्न : **आस्रव के प्रत्ययों में से कौन-कौन से स्थान मनुष्यों के ही पाये जाते हैं?**

उत्तर : आस्रव के प्रत्ययों में से १२ स्थान मनुष्यों के ही पाये जाते हैं -

७,९,१०,११,१२,१३,१४,१५,१६,२०,२२,२४

क्योंकि ये प्रत्यय छठे गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक ही होते हैं। ये गुणस्थान मनुष्यों (मुनिराज) के ही होते हैं।

११.प्रश्न : आस्रव के किस-किस प्रत्यय स्थान में कौन-कौन सी कषायें होती हैं?

उत्तर : आस्रव के प्रत्यय स्थानों में कषायें -

आस्रव के प्रत्यय	कषाय
५७	२ (भय-जुगुप्सा)
५५ (आहारकद्विक बिना)	५ (हास्य-रति, अरति-शोक तथा पुरुषवेद)
५३ (आहारकद्विक तथा दो वेद बिना)	२ (स्त्रीवेद, नपुंसकवेद)
४० (५ मि. १२ अवि. १० क. १३ यो.)	अनन्तानुबन्धी चतुष्क
३५ (१२ अवि. १० क. १३ यो.)	अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क
३० (११ अवि. १० क. ९ यो.)	प्रत्याख्यानावरण चतुष्क
२१ (१० क. ११ यो.)	संज्वलन चतुष्क

१२.प्रश्न : आस्रव के योग सम्बन्धी १३ प्रत्यय कितनी कषायों में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के योग सम्बन्धी १३ प्रत्यय १० कषायों में होते हैं -

४ अनन्तानुबन्धी, ४ अप्रत्याख्यानावरण, स्त्रीवेद तथा नपुंसक वेद।

१३.प्रश्न : आस्रव के किस-किस प्रत्यय स्थान में कौनसा ज्ञान होता है?

उत्तर : आस्रव के प्रत्यय स्थानों में ज्ञान -

आस्रव के प्रत्यय	ज्ञान	विवरण
५५	२	कुमति-कुश्रुतज्ञान
५२ (५ योग बिना)	१	कुअवधिज्ञान
४८ (५ मि. एवं अनन्तानुबन्धी चतुष्क बिना)	३	मति श्रुत एवं अवधिज्ञान
२० (४ क. ७ नोक. ९ यो.)	१	मन:पर्यय ज्ञान
७ (२ म. २ व. ३ काययोग)	१	केवलज्ञान

१४. प्रश्न : आस्रव के १० प्रत्यय कौन-कौन से संयम में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के १० प्रत्यय तीन संयम में हो सकते हैं -

सामायिक-छेदोपस्थापना - नौवें गुणस्थान में जब केवल संज्वलन लोभ शेष बचता है।

सूक्ष्मसाम्पराय - दसवें गुणस्थान में।

१५. प्रश्न : आस्रव के ११ प्रत्यय किस-किस संयम में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ११ प्रत्यय तीन संयम में होते हैं -

सामायिक, छेदोपस्थापना तथा यथाख्यात।

सामायिक-छेदोपस्थापना-संज्वलन माया, लोभ तथा ९ योग (नौवें गुणस्थान में)

यथाख्यात संयम - ११ योग (४ म. ४ व. ३ काययोग)

१६. प्रश्न : आस्रव के किस-किस प्रत्यय स्थान में कौन-कौन सा संयम होता है?

उत्तर : आस्रव के प्रत्यय स्थानों में संयम -

प्रत्यय स्थान	संयम	विवरण
५५	१	असंयम
३७	१	संयमासंयम
२४	२	सामा.छेदो. (छठे गुणस्थान की अपेक्षा)
२०	१	परिहारविशुद्धि
११	१	यथाख्यात
१०	१	सूक्ष्म साम्पराय

१७. प्रश्न : आस्रव के कौन-कौन से प्रत्यय संयमी एवं असंयमी दोनों के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के २८ प्रत्यय संयमी और असंयमी दोनों के होते हैं -

१७ कषाय - प्रत्याख्यानावरण चतुष्क, संज्वलन चतुष्क एवं ९ नोकषाय

११ योग - ४ मनो. ४ वच. औदारिकद्विक एवं कार्मण

औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग केवली भगवान के यथाख्यात संयम की अपेक्षा जानना चाहिए।

१८. प्रश्न : कौन से आस्रव के प्रत्यय चक्षु-अचक्षु दर्शन में होते हैं, लेकिन अवधिदर्शन में नहीं होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ९ प्रत्यय चक्षु-अचक्षुदर्शन में होते हैं लेकिन अवधिदर्शन में नहीं होते हैं -

५ मिथ्यात्व ४ अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ

जो आचार्य प्रथम गुणस्थान में अवधिदर्शन मानते हैं उनकी अपेक्षा तीनों दर्शनों में बराबर आस्रव के प्रत्यय होते हैं।

१९.प्रश्न : ऐसे कौन-कौन से आस्रव के प्रत्यय हैं जो चारों दर्शनों में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के सात प्रत्यय ऐसे हैं जो चारों दर्शनों में होते हैं -

२ मनोयोग - सत्यमनोयोग, अनुभय मनोयोग।

२ वचनयोग - सत्यवचनयोग, अनुभय वचनयोग।

३ काययोग - औदारिक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग।

२०.प्रश्न : आस्रव के ऐसे कौनसे प्रत्यय हैं जो सभी सम्यग्दृष्टियों के नहीं होते हैं?

उत्तर : आस्रव के छह प्रत्यय गति अपेक्षा सभी सम्यग्दृष्टियों के नहीं होते हैं, क्योंकि वे छह प्रत्यय सभी जीवों के नहीं पाये जाते हैं -

औदारिकद्विक, वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक -

औदारिकद्विक - देव-नारकियों के नहीं होते हैं।

वैक्रियिकद्विक - मनुष्य-तिर्यञ्चों के नहीं होते हैं।

आहारकद्विक - मात्र छठे गुणस्थानवर्ती क्षायिक एवं क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि के होते हैं।

कार्मण काययोग - द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा उपशम सम्यक्त्व में पाया जाता है।

यहाँ क्षायिक, क्षायोपशमिक तथा उपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा ही समझना चाहिए। सम्यक्त्व मार्गणा की अपेक्षा नहीं।

नोट - ५ मिथ्यात्व, ४ अनंतानुबंधी (सम्बन्धी आस्रव) प्रत्यय किसी भी सम्यग्दृष्टि के नहीं होते हैं।

२१.प्रश्न : आस्रव के किस-किस प्रत्यय स्थान में कौन-कौन सा सम्यक्त्व होता है?

उत्तर : आस्रव के प्रत्यय स्थानों में सम्यक्त्व -

आस्रव के प्रत्यय	संख्या	विवरण
५५ (आहारक द्विक बिना)	१	मिथ्यात्व
५० (५ मि. एवं आहारकद्विक बिना)	१	सासादन
४५ (५ मि. ४ क. ३ यो. बिना)	१	(सामान्य) उपशम सम्यक्त्व
४३ (५ मि. ४ क. ५ यो.बिना)	२	प्रथमोपशम सम्य. एवं सम्यग्मिथ्यात्व

४४ (१२ अवि. २१ क. ११ यो.)	१ द्वितीयोपशम सम्यक्त्व
४८ (५ मि. ४ क. बिना)	२ क्षायिक एवं क्षायोपशमिक सम्यक्त्व

२२.प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय सैनी जीवों के होते हैं, लेकिन असैनी जीवों के नहीं होते हैं?

उत्तर : आस्रव के १२ प्रत्यय सैनी जीवों के होते हैं लेकिन असैनी जीवों के नहीं होते हैं -

१ अविरति - मन सम्बन्धी

११ योग - ४ म. ३ व. ४ काययोग (औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग बिना)

२३.प्रश्न : आस्रव के ५६ प्रत्यय कौन सी मार्गणा के किस भेद में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ५६ प्रत्यय आहार मार्गणा के भेद आहारक में पाये जाते हैं।

इसमें १ योग (कार्मणकाययोग) सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय नहीं होता है।

२४.प्रश्न : आस्रव के ९ प्रत्यय किस-किस गुणस्थान में होते हैं -

उत्तर : आस्रव के ९ प्रत्यय दो गुणस्थानों में होते हैं। (१) उपशान्त कषाय (२) क्षीणकषाय

इनमें ४ म. ४ व. १ काययोग (औदारिक काययोग) होते हैं।

२५.प्रश्न : सबसे ज्यादा प्रत्ययस्थान कौन से गुणस्थान में होते हैं?

उत्तर : सबसे ज्यादा प्रत्यय स्थान नवें गुणस्थान में होते हैं। यहाँ ७ प्रत्यय स्थान होते हैं -

१६,१५,१४,१३,१२,११,१०

१६. संज्वलन चतुष्क, ३ वेद, ९ योग।

१५. संज्वलन चतुष्क, २ वेद, ९ योग।

१४. संज्वलन चतुष्क, १ वेद, ९ योग।

१३. संज्वलन चतुष्क, ० वेद, ९ योग।

१२. क्रोध बिना ३ संज्वलन तथा ९ योग।

११. क्रोध-मान बिना २ संज्वलन तथा ९ योग।

१०. संज्वलन लोभ एवं ९ योग।

२६.प्रश्न : नौवें गुणस्थान में १० प्रत्यय किस समय होते हैं?

उत्तर : जब नौवें गुणस्थान में ३ वेदों का और संज्वलन क्रोध, मान, माया का भी अभाव हो

जाता है तब उनके १ कषाय एवं ९ योग रूप आस्रव के १० प्रत्यय होते हैं।

२७. प्रश्न : जिसके अविरति नहीं है उसके आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : जिसके अविरति नहीं है उसके आस्रव के कम-से-कम सात प्रत्यय होते हैं -

२ म. २ व. ३ काययोग **अथवा** सयोग केवली भगवान के सूक्ष्म काययोग के समय एक योग होता है।

ये प्रत्यय तेरहवें गुणस्थान की अपेक्षा जानने चाहिए। अथवा अविरति से रहित चौदहवें गुणस्थान वाले अयोग केवली भगवान आस्रव के प्रत्यय स्थानों से रहित भी हैं।

तथा अधिक से अधिक आस्रव के २४ प्रत्यय होते हैं -

संज्वलन चतुष्क, ९ नोकषाय, ११ योग।

ये प्रत्यय छठे गुणस्थान की अपेक्षा जानने चाहिए।

२८. प्रश्न : आस्रव के किस-किस प्रत्यय स्थान में कौन-कौन सा उपयोग होता है?

उत्तर : आस्रव के प्रत्यय स्थानों में उपयोग -

आस्रव के प्रत्यय	**उपयोग**
५७	२ (चक्षु और अचक्षु दर्शनो.)
५५	२ (कुमति कुश्रुत ज्ञानोपयोग)
५२	१ (विभंगावधि ज्ञानोपयोग)
४८	४ (मति श्रुत अवधि ज्ञानोपयोग एवं अवधिदर्शनोपयोग)
२०	१ (मन:पर्यय ज्ञानोपयोग)
७	२ (केवल ज्ञानोपयोग एवं केवलदर्शनोपयोग)

२९. प्रश्न : आस्रव के प्रत्ययों में ध्यान का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : आस्रव के प्रत्ययों में ध्यान -

आस्रव के प्रत्यय	**ध्यान**
५७	३ (निदान बिना ३ आर्त्तध्यान)
५५	५ (निदान एवं ४ रौद्रध्यान)
४८	२ (आज्ञाविचय एवं अपाय विचय धर्म्यध्यान)
३७ (११ अवि. १७ क.९ यो.)	१ (विपाकविचय धर्म्यध्यान)

२४ (१३ क. ११ यो.)	१ (संस्थानविचय धर्म्यध्यान)
२२ (१३ क. ९ यो.)	१ (पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्लध्यान)
९ (योग)	१ (एकत्ववितर्क अवीचार शुक्लध्यान)
१ (योग)	१ (तीसरा शुक्लध्यान)
आस्रव के प्रत्यय से रहित	१ (व्युपरतक्रियानिवृत्ति शुक्लध्यान)

३०.प्रश्न : आस्रव के प्रत्ययों में कितने जाति एवं कुल होते हैं?

उत्तर : आस्रव के प्रत्ययों में जाति एवं कुल

आस्रव के प्रत्यय	**जाति**	**कुल**
५५ (वैक्रियिकद्विक बिना)	१४ लाख	१४ ला.क.
५३ (पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च)	४ लाख	४३ $\frac{१}{२}$ ला.क.
५२ (देवगति)	४ लाख	२६ ला.क.
५१ (४ योग एवं दो वेद बिना)	४ लाख	२५ ला.क.
४२ (५मि. १०अवि. २३क. ४यो.)	२ लाख	९ ला.क.
४१ (५मि. ९अवि. २३क. ४यो.)	२ लाख	८ ला.क.
४० (५मि. ८अवि. २३क. ४यो.)	२ लाख	७ ला.क.
३८ (५मि. ७अवि. २३क. ३ यो.)	५२ लाख	६७ ला.क.
३७ (११ अवि. १७ क. ९ यो.)	१८ लाख	५७ $\frac{१}{२}$ ला.क.
२४ आदि शेष प्रत्ययों में	१४ लाख	१४ ला.क.

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **आस्रव के २४ प्रत्यय कौनसी गति में होते हैं?**

(अ) छठा गुणस्थान (ब) मनुष्यगति

(स) मुनिराज (द) देवगति

(ii) **आस्रव के ५५ प्रत्यय कौनसे वेद में होते हैं?**

(अ) स्त्री-पुरुष (ब) स्त्री-नपुंसक

(स) पुरुष (द) पुरुष-नपुंसक

(iii) **आस्रव के ९ प्रत्यय कितने गुणस्थान में होते हैं?**

(अ) २ (ब) ४

(स) ७ (द) कोई नहीं

(iv) **१० योग सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय किस गुणस्थान में होते हैं?**

(अ) छठे (ब) पहले

(स) चौदहवें (द) तीसरे

(v) **आहारकद्विक सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय कितने संयम में नहीं होते हैं?**

(अ) ५ (ब) २

(स) ३ (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) नपुंसक वेद सम्बन्धी आस्रव का प्रत्यय किस गति में नहीं है?

(ii) मिथ्यात्व सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय कितनी जातियों में होते हैं?

(iii) अविरति सम्बन्धी आस्रव के सबसे कम प्रत्यय कितनी काय वालों के होते हैं?

(iv) आस्रव के ५२ प्रत्यय किस सम्यग्दृष्टि के होते हैं?

(v) आस्रव के ५७ प्रत्यय कितने दर्शनों में होते हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) आस्रव के ५५ प्रत्यय कार्मण काययोग में होते हैं?

(ii) आस्रव के ५३ प्रत्यय स्त्रीवेद में होते हैं?

(iii) आस्रव के ५७ प्रत्ययों में एक जीवसमास होता है?

(iv) मिथ्यात्व सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय एकेन्द्रिय जीवों के नहीं होते हैं?

(v) १२ अविरति सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय भव्य जीवों के होते हैं?

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) आस्रवातीत जीवों के..................गति..................काय तथा...............योग होते हैं।

(ii) आस्रव के ५७ प्रत्यय.............कषाय में.............लेश्या में तथा............संज्ञा में होते हैं।

(iii) आस्रव के २४ प्रत्यय में..........गुणस्थान ....कुल ....जाति होती हैं।

(iv) आस्रव के १६ प्रत्यय में ....ज्ञान ....वेद तथा ....गति होती हैं।

(v) आस्रव के ११ प्रत्यय में ....संयम .... लेश्या होती हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		**ब**
(i)	११ प्रत्यय	-	सयोग केवली
(ii)	५७ प्रत्यय	-	नवें गुणस्थान तक
(iii)	४८ प्रत्यय	-	कषाय सम्बन्धी एक प्रत्यय
(iv)	३८ प्रत्यय	-	चौदहवाँ गुणस्थान
(v)	आस्रवातीत	-	यथाख्यात संयम
(vi)	एक प्रत्यय	-	अग्निकायिक
(vii)	वेद सम्बन्धी प्रत्यय	-	संज्ञी जीव
(viii)	सूक्ष्म साम्पराय संयम	-	क्षायिक सम्यक्त्व

– उत्तरमाला –

१. (i) ब (ii) स (iii) अ (iv) द (v) अ

२. (i) देवगति (ii) ८४ ला. (iii) ५ (iv) किसी के नहीं (v) २

३. (i) ना (ii) हाँ (iii) हाँ (iv) ना (v) ना

४. (i) मनुष्यगति, त्रस, ० (ii) भय-जुगुप्सा ३, ४ (iii) छठा, १४ ला.क., १४ ला., (iv) ४, ३, १ (v) यथाख्यात, शुक्ल

५. (i) यथाख्यात संयम (ii) संज्ञी जीव (iii) क्षायिक सम्यक्त्व (iv) अग्निकायिक (v) चौदहवाँ गुणस्थान (vi) सयोग केवली (vii) नवें गुणस्थान तक (viii) कषाय सम्बन्धी एक प्रत्यय

२३. जाति

१. प्रश्न : जाति किसे कहते हैं?

उत्तर : यहाँ योनि को ही जाति के नाम से कहा गया है।

उपपाद देश के पुद्गल प्रचय रूप योनि है। **(सर्वा. २/३२)**

जिसमें जीव आकर उत्पन्न हो उसका नाम योनि है। **(रा.वा. २/३२)**

योनि अर्थात् मिश्ररूप होना है। जिसमें जीव औदारिकादि नोकर्म वर्गणारूप पुद्गलों के साथ सम्बन्ध को प्राप्त होता है, जीव के उपजने के ऐसे स्थान का नाम योनि है। **(गो.जी.जी.८१)** शरीर की रचना से जीवों की जाति में जो विभिन्नता आती है उसे योनि कहते हैं। **(पा.च. २०/३६)**

२. प्रश्न : योनि (जाति) कितने प्रकार की होती है?

उत्तर : योनि तीन प्रकार की होती है -
(१) शंखावर्तयोनि (२) कूर्मोन्नत योनि (३) वंशपत्र योनि **(मू.आ. ११०२)**
अथवा - योनि नौ प्रकार की होती है -
(१) सचित्त (२) अचित्त (३) सचित्ताचित्त (४) शीत (५) उष्ण (६) शीतोष्ण (७) संवृत (८) विवृत (९) संवृतविवृत। **(त.सू. २/३२)**

अथवा - योनियाँ चौरासी लाख होती हैं -

नित्य निगोद की - ७ लाख	द्वीन्द्रिय की - २ लाख
इतर निगोद की - ७ लाख	त्रीन्द्रिय की - २ लाख
पृथ्वीकायिक की - ७ लाख	चतुरिन्द्रिय की - २ लाख
जलकायिक की - ७ लाख	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की - ४ लाख
अग्निकायिक की - ७ लाख	देवों की - ४ लाख
वायुकायिक की - ७ लाख	नारकियों की - ४ लाख
वनस्पतिकायिक की - १० लाख	मनुष्यों की - १४ लाख

३. प्रश्न : यहाँ कौन से भेद की अपेक्षा कथन है?

उत्तर : यहाँ मुख्य रूप से चौरासी लाख भेदों की अपेक्षा कथन किया गया है।

४. प्रश्न : निगोदिया जीव किसे कहते हैं?

उत्तर : पुलवियों को निगोद कहते हैं। **(ध. १४/८४)**

साधारण नामकर्म के उदय से जीव निगोदशरीर होता है। नि अर्थात् अनन्तपना है निश्चित

जिनका ऐसे जीवों को ''गो'' अर्थात् एक ही क्षेत्र ''द'' अर्थात् देता है उसको निगोद कहते हैं। अर्थात् जो अनन्त जीवों को एक निवास दे उसको निगोद कहते हैं। **(गो.जी. १९१)**

साधारण नामकर्म के उदय से साधारण वनस्पति कायिक जीव होते हैं उन्हें निगोदिया भी कहते हैं। **(का.अ. १२५)**

५. प्रश्न : **निगोद जीव कितने प्रकार के होते हैं?**

उत्तर : निगोद जीव दो प्रकार के होते हैं -

(१) नित्य निगोद (२) चतुर्गति निगोद।

ये दोनों बादर एवं सूक्ष्म होते हैं। **(का.अ. १२५)**

६. प्रश्न : **नित्य निगोद किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिन्होंने अतीत काल में त्रस भाव को नहीं पाया है ऐसे अनन्त जीव हैं, क्योंकि वे भावकलंक प्रचुर होते हैं इसलिए निगोदवास को नहीं त्यागते हैं। **(ध.१४/२३३)**

जो कभी त्रस पर्याय को प्राप्त करने योग्य नहीं होते, वे नित्य निगोद हैं। **(रा.वा. २/३२)**

जो सदा निगोदों में ही रहते हैं वे **नित्यनिगोद** हैं। **(ध. १४/२३६)**

जो अनादिकाल से एकेन्द्रिय कर्म के उदय से सदा स्थावर गति (पर्याय) में जन्म-मरण करते रहें तथा जो भूत-भविष्यत्-वर्तमान किसी भी काल में कभी द्वीन्द्रियादि पर्याय धारण न करें। जिनकी स्थावर गति का न आदि है न अन्त है, सदा अनन्तकाय के आश्रित जन्म-मरण धारण करते रहें। ऐसे जीवों को नित्य निगोदिया कहते हैं।

७. प्रश्न : **चतुर्गति निगोद किसे कहते हैं?**

उत्तर : जिन्होंने त्रस पर्याय पहले पाई थी अथवा पायेंगे, वे अनित्यनिगोद हैं। **(रा.वा. २/३२)**

जो देव, नारकी, तिर्यञ्च और मनुष्यों में उत्पन्न होकर पुन: निगोदों में प्रवेश करते हैं वे चतुर्गति निगोद कहे जाते हैं। **(ध.१४/२३६)**

जिससे निकलकर त्रसगति को प्राप्त करे अथवा त्रस गति पाकर फिर निगोद में जाय उसको इतर निगोद कहते हैं।

नोट - इन निगोदों में रहने वालों को निगोदिया कहते हैं।

८. प्रश्न : **सूक्ष्म जीव किसे कहते हैं?**

उत्तर : सर्वत्र जल-स्थल-आकाश में बिना आधार के रहने वाले जीव सूक्ष्मकाय कहलाते हैं। **(मू. २१५ आ.)**

जिन जीवों का पृथ्वी से, जल से, आग से और वायु से प्रतिघात नहीं होता, उन्हें सूक्ष्मकायिक जानो। **(का.अ. १२७)**

जिनका शरीर अन्य पुद्गलों से प्रतिघात रहित है वे सूक्ष्म जीव हैं, यह अर्थ यहाँ पर सूक्ष्म शब्द से लेना। **(रा.वा. ८/११)**

९. प्रश्न : बादर जीव किसे कहते हैं?

उत्तर : आठ प्रकार की पृथिवी और विमान आदि का आश्रय लेकर उत्पन्न होते हैं वे बादरकाय हैं। **(मू. आ. १२०४)** काई, पणक, कचरे में होने वाली वनस्पति, छत्राकार आदि फफूंदी ये बादर वनस्पति हैं।

जिन जीवों का शरीर बादर, स्थूल अर्थात् प्रतिघात सहित होता है, उन्हें बादर काय कहते हैं। **(ध. ३/२७६)**

१०. प्रश्न : गर्भज जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : वीर्य और रक्त का मिश्रण होना गर्भ है। स्त्री के गर्भाशय में उपगत पिता का वीर्य और माता के रक्त का मिश्रण गर्भ कहलाता है। **(रा.वा. २)**

उत्पन्न होने वाले जीव के द्वारा रज और वीर्य रूप पिण्ड का 'गरण' अर्थात् शरीर रूप से ग्रहण करना गर्भ है। **(गो.जी.जी. ८३)**

गर्भ में उत्पन्न होने वाले जीवों को गर्भज जीव कहते हैं।

११. प्रश्न : सम्मूर्च्छन जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर : चारों तरफ से मूर्च्छन को सम्मूर्च्छन कहते हैं। तीनों लोकों में ऊपर, नीचे, तिरछे सभी दिशाओं से पुद्गल परमाणुओं का इकट्ठा होकर शरीर रूप अवयवों की रचना होना सम्मूर्च्छन जन्म है। **(रा.वा. १)**

बिना माता-पिता के जहाँ कहीं द्रव्य-क्षेत्र-कालादि के मिलने से जो जीव उत्पन्न होते हैं, उन्हें सम्मूर्च्छन जीव कहते हैं।

सम्मूर्च्छन जीव जैसे- जूँ, चींटी, खटमल........ आदि।

तालिका संख्या ८५

जाति

संकेत - तालिका में प्रथम स्थान पर जातियों की संख्या तथा दूसरे स्थान पर मार्गणा के उत्तर भेद की संख्या कही गई है। जैसे - गति मार्गणा में ४ का अंक ४ लाख जाति का १ का अंक गति का है।

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	४-१, ४-१, ६२-१, १४-१	
२.	इन्द्रिय	५२-१, २-१, २-१, २-१, २६-१	
३.	काय	५२-५, ३२-१	
४.	योग	५२-३, ६-४, १४-१३, १२-११	
५.	वेद	१८-३, ६२-१, ४-२	
६.	कषाय	१८-२५, ६२-२३, ४-२४	
७.	ज्ञान	१४-८, ५८-२, १२-६	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की ४ लाख जातियों में भी २ कुज्ञान होते हैं।
८.	संयम	१४-७, ४-२, ६६-१	संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च के ही दो संयम होते हैं।
९.	दर्शन	१४-४, ५६-१, २-२, १२-३	
१०.	लेश्या	२२-६, ६२-३	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की चार लाख जातियों में चार लेश्या वाले भी होते हैं।
११.	भव्य	८४-२	
१२.	सम्यक्त्व	२६-६, २८-१, ३०-२	
१३.	संज्ञी	२६-१, ५८-१	पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की ४ लाख जातियों में असंज्ञी भी होते हैं।
१४.	आहार	८४-२	
१५.	गुणस्थान	१४-१४, ४-५, ८-४, २८-१, ३०-२	
१६.	जीवसमास	२२-१, ४-२,२-१, २-१, २-१, ५२-१४	
१७.	पर्याप्ति	५२-४, ६-५, ४-५,६, २२-६	
१८.	प्राण	२२-१०,४-९,१०,५२-४,२-६,२-७,२-८	निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में भी ये जातियाँ होती हैं। उनके भी यथायोग्य प्राण जानने चाहिए।
१९.	संज्ञा	८४-४	
२०.	उपयोग	१४-१२, ५६-३, २-४, १२-९	
२१.	ध्यान	१४-१६, ४-९, ४-१०, ४-११,५८-८	४ लाख जातियों में ८ ध्यान वाले भी होते हैं।
२२.	आस्रव	१४-५५, ५२-३८, २-४०, २-४१ २-४२, ४-५२, ४-५१, ४-५३	
२३.	जाति	स्वकीय	
२४.	कुल	१४ला.-१४ला.क., ५२ला.-६७ला.क., २ला.-७ला.क., २ला.-८ला.क., २ला.-९ला.क., ४ला.-२५ला.क., ४ला.-२६ला.क., ४ला.-४३ $\frac{१}{२}$ ला.क.	

१. प्रश्न : ८४ लाख आदि जातियों में कौन-कौन सी जातियाँ ग्रहण करना चाहिए?

उत्तर :

जातियाँ		स्वामी
८४ लाख	-	चारों गति सम्बन्धी
६६ लाख	-	एकेन्द्रिय की ५२ ला. विकलत्रय की ६, देवों की ४ला., नारकियों की ४ लाख।
६२ लाख	-	एकेन्द्रिय की ५२ ला. विकलत्रय की ६, नारकियों की ४ लाख।
५८ लाख	-	एकेन्द्रिय की ५२ ला. विकलत्रय की ६।
५२ लाख	-	एकेन्द्रिय की।
३२ लाख	-	त्रस जीवों की।
२२ लाख	-	मनुष्यों की १४ ला., देवों की ४ ला., पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की ४ लाख।
१८ लाख	-	मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की।
१२ लाख	-	देव नारकी तथा पंचेन्द्रियतिर्यञ्च की।

२. प्रश्न : जातियों में योगों की प्ररूपणा किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : जातियों में योगों की प्ररूपणा -

जाति	योग	विवरण
५२ लाख	३	औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग
६ लाख (विकलत्रय)	४	औदारिकद्विक, कार्मणकाययोग तथा अनुभय वचनयोग,
१२ लाख	११	देव-नारकी के औदा.द्विक, आहा.द्विक बिना, पंचेन्द्रिय तिर्यंच के वैक्रि. द्विक आहा. द्विक बिना।
१४ लाख (मनुष्य)	१३	वैक्रियिकद्विक बिना

नोट - पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों की चार लाख जातियों में चार योग (औदारिकद्विक, कार्मणकाययोग तथा अनुभय वचन योग) भी होते हैं, क्योंकि असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के ये चार योग ही होते हैं।

३. प्रश्न : कितनी जातियों में तेरह योग होते हैं?

उत्तर : मनुष्य सम्बन्धी १४ लाख जातियों में तेरह योग होते हैं -

४ म. ४ व. ५ काययोग (वैक्रियिकद्विक बिना)

नोट - यहाँ कर्मभूमिया मनुष्यों को ही ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि भोगभूमि आदि में आहारकद्विक काययोग नहीं है।

४. प्रश्न : कितनी जातियों में अनुभय वचन योग भी होता है?

उत्तर : ३२ लाख जातियों में अनुभय वचन योग भी होता है -

६ लाख विकलत्रय की, ४ लाख पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की, ४ लाख देवों की, ४ लाख नरक की तथा १४ लाख मनुष्य की।

५. प्रश्न : कितनी जातियों में एक वेद ही होता है?

उत्तर : ६२ लाख जातियों में एक नपुंसक वेद ही होता है।

एके., विक. तथा नारकियों की जातियाँ ग्रहण करना चाहिए।

६. प्रश्न : कितनी जातियों में नपुंसक वेद नहीं होता है?

उत्तर : देव सम्बन्धी चार लाख जातियों में नपुंसक वेद नहीं होता है।

७. प्रश्न : अठारह लाख जाति के स्थान में कौनसी कषायें नहीं पाई जाती हैं?

उत्तर : अठारह लाख जाति के स्थान में १२ कषायें नहीं पाई जाती हैं।

अनन्तानुबन्धी चतुष्क, अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क तथा संज्वलन चतुष्क।

क्योंकि यह स्थान संयतासंयत गुणस्थान/संयम तथा प्रत्याख्यानावरण चतुष्क में बनता है। इनके मुख्य रूप से प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय पाया जाता है।

नौ नोकषायों में से ६ कषायें आठवें गुणस्थान तक तथा ३ वेद का उदय नौवें गुणस्थान तक होता है।

८. प्रश्न : जातियों में वेद एवं कषाय की प्ररूपणा किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : जातियों में वेद एवं कषाय

जाति	**वेद**	**कषाय**
१८ लाख	३	२५
६२ लाख	१ (नपुंसक)	२३ (२ वेद बिना)
४ लाख (देवों की)	२ (नपुंसक बिना)	२४

९. प्रश्न : कितनी जातियों में छह ज्ञान होते हैं?

उत्तर : देवों की ४ लाख, नारकियों की ४ लाख तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च की ४ लाख, इन १२ लाख जातियों में छह ज्ञान होते हैं -

कुमति कुश्रुत कुअवधिज्ञान, मति श्रुत तथा अवधिज्ञान।

नोट - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की ४ लाख जातियों में २ ज्ञान वाले भी होते हैं -

कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान।

ये दो ज्ञान असंज्ञी पंचेन्द्रिय के होते हैं।

इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की ४ लाख जातियों में तीन दर्शन वाले (चक्षु, अचक्षु तथा अवधिदर्शन) तथा चक्षु अचक्षु दो दर्शन वाले भी होते हैं।

१०.प्रश्न : जातियों में संयम की विवेचना किस प्रकार करनी चाहिए?

उत्तर : जातियों में संयम -

जाति	**संयम**
१४ लाख	७
४ लाख (पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च)	२ (संयमासंयम एवं असंयम)
६६ लाख	१ असंयम

नोट - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की ४ लाख जातियों में केवल एक असंयम भी होता है। यह असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च के होता है।

११.प्रश्न : कितनी जातियों में चक्षुदर्शन नहीं होता है?

उत्तर : ५६ लाख जातियों में चक्षुदर्शन नहीं होता है -

एकेन्द्रिय की ५२ लाख, द्वीन्द्रिय की २ लाख तथा त्रीन्द्रिय की २ लाख।

१२.प्रश्न : कितनी जातियों में शुक्ल लेश्या नहीं हो सकती है?

उत्तर : ६२ लाख जातियों में शुक्ल लेश्या नहीं हो सकती है -

एकेन्द्रिय, विकलत्रय तथा नारकियों की ६२ लाख जातियों में अशुभ लेश्याएँ ही होती हैं।

१३.प्रश्न : कितनी जातियाँ सैनी असैनी दोनों के होती हैं?

उत्तर : पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी चार लाख जातियाँ सैनी असैनी दोनों के होती हैं।

१४. प्रश्न : कितनी जातियाँ सैनी जीवों के ही होती हैं?

उत्तर : २२ लाख जातियाँ केवल सैनी जीवों के ही होती हैं-

देवों की ४ लाख, नारकियों की ४ लाख तथा मनुष्यों की १४ लाख।

१५. प्रश्न : २२ लाख जातियों में किस-किस की जातियाँ लेनी चाहिए?

उत्तर : (१) देवों की ४ लाख, नारकियों की ४ लाख तथा मनुष्यों की १४ लाख।

(२) देवों की ४ लाख, पंचेन्द्रियतिर्यञ्च की ४ लाख तथा मनुष्यों की चौदहलाख।

१६. प्रश्न : चौदह लाख जातियों में कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : चौदह लाख जातियों में सभी गुणस्थान होते हैं। विशेष रूप से छठे गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान में १४ लाख जातियाँ ही होती हैं। शेष गुणस्थानों में नरक आदि शेष गति सम्बन्धी जातियाँ भी होती हैं।

१७. प्रश्न : कितनी जातियों में पाँच पर्याप्तियाँ भी होती हैं?

उत्तर : मात्र पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च की ४ लाख जातियों में ५ पर्याप्तियाँ भी होती हैं क्योंकि इनमें सैनी तथा असैनी दोनों प्रकार के जीव पाये जाते हैं।

१८. प्रश्न : कितनी जातियों में १० प्राण भी पाये जाते हैं?

उत्तर : २६ लाख जातियों में १० प्राण भी पाये जाते हैं।

४ लाख देवों की, ४ लाख नारकियों की, १४ लाख मनुष्यों की तथा ४ लाख पंचेन्द्रिय तिर्यंच की। इनके निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में सात प्राण भी पाये जाते हैं।

मनुष्यों के १,२ आदि प्राण भी पाये जाते हैं।

१९. प्रश्न : कितनी जातियों में केवल तीन उपयोग ही होते हैं?

उत्तर : ५६ लाख जातियों में तीन उपयोग ही होते हैं -

५२ लाख एकेन्द्रिय की, २ लाख द्वीन्द्रिय की तथा २ लाख त्रीन्द्रिय की।

इनके कुमति, कुश्रुत ज्ञानोपयोग तथा अचक्षुदर्शनोपयोग होता है।

२०. प्रश्न : किस-किस जाति में कौन-कौन सा ध्यान होता है?

उत्तर : जातियों में ध्यान -

जाति	ध्यान
१४ लाख	१६

४ लाख (नारकी)	९ (४ आ. ४ रौ. १ धर्म्य)
४ लाख (देव)	१० (४ आ. ४ रौ. २ धर्म्य)
४ लाख (पंचे.ति.)	११ (४ आ. ४ रौ. ३ धर्म्य)

इनमें असंज्ञी जीवों के ४ आ. ४ रौ. ये आठ ध्यान होते हैं।

५८ लाख	८ (४ आ. ४ रौ.)

२१. प्रश्न : कितनी जातियों में आठ अविरतियाँ होती हैं?

उत्तर : द्वीन्द्रिय सम्बन्धी दो लाख जातियों में आठ अविरतियाँ होती हैं - षट्कायिक जीवों की हिंसा एवं स्पर्शन तथा रसना इन्द्रिय सम्बन्धी अविरति।

२२. प्रश्न : कितनी जातियों में अनन्तानुबन्धी सम्बन्धी आस्रव के प्रत्यय समाप्त नहीं हो सकते?

उत्तर : ५८ लाख जातियों में अनन्तानुबन्धी सम्बन्धी आस्रव के प्रत्ययों का अभाव नहीं हो सकता है- एकेन्द्रिय सम्बन्धी ५२ लाख तथा विकलत्रय सम्बन्धी ६ लाख। क्योंकि इन्हें कभी भी सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं होता है अर्थात् इनके तीसरा आदि गुणस्थान नहीं होता है।

२३. प्रश्न : २२ लाख जाति रूप स्थान किस मार्गणा के उत्तरभेद में पाया जाता है?

उत्तर : २२ लाख जाति रूप स्थान लेश्या मार्गणा के तीन उत्तरभेदों में पाया जाता है पीतलेश्या, पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या।

क्योंकि ये तीनों लेश्याएँ देव, मनुष्य तथा संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के होती हैं। पीत लेश्या असंज्ञी पंचेन्द्रिय के भी होती है।

२४. प्रश्न : कितनी जातियों में एक गुणस्थान ही होता है?

उत्तर : २८ लाख जातियों में केवल एक गुणस्थान ही होता है-

अग्निकायिक की - ७ लाख	नित्यनिगोद की - ७ लाख
वायुकायिक की - ७ लाख	इतर निगोद की - ७ लाख

नोट - सभी सूक्ष्म जीवों के भी एक ही गुणस्थान होता है लेकिन उनकी जातियाँ अलग नहीं बताई गई हैं।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **१४ लाख जातियाँ किस योग में नहीं होती हैं?**
(अ) औदारिक (ब) वैक्रियिकद्विक
(स) कार्मण (द) कोई नहीं

(ii) **८४ लाख जाति किस वेद में होती हैं?**
(अ) नपुंसक (ब) स्त्री-पुरुष
(स) स्त्री-नपुंसक (द) कोई नहीं

(iii) **जाति से अतीत जीव कौनसे गुणस्थान में होते हैं?**
(अ) सब में (ब) चौदहवाँ
(स) तेरहवाँ-चौदहवाँ (द) कोई नहीं

(iv) **सबसे कम जाति किस काय में होती है?**
(अ) अग्निकायिक (ब) त्रस कायिक
(स) द्वीन्द्रिय (द) सबके बराबर

(v) **कितनी जातियों में पाँच गुणस्थान होते हैं?**
(अ) २६ लाख (ब) १८ लाख
(स) ३२ लाख (द) ४ लाख

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) ६२ लाख जाति कौनसी गति में होती हैं?

(ii) ८४ लाख जाति कितनी कषायों में हैं?

(iii) कितनी जातियों में छह पर्याप्तियाँ ही होती हैं?

(iv) कितनी जातियों में ३ और ४ प्राण ही होते हैं?

(v) ८४ लाख जातियों में भव्य होते हैं या अभव्य?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) ७६ लाख जातियाँ औदारिक काययोग में होती हैं?

(ii) ३२ लाख जातियाँ पञ्चेन्द्रिय जीवों की होती हैं?

(iii) ८० लाख जातियाँ एक वेद में होती हैं?

(iv) २६ लाख जातियों में छहों सम्यक्त्व होते हैं?

(v) ५२ लाख जातियों में १९९ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं?

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) ८ लाख जाति में..................गति..................वेद...............गुणस्थान होते हैं।

(ii) ८४ लाख जाति..............योग में..............ज्ञान में तथा..............गुणस्थान में होती हैं।

(iii) १४ लाख जाति..............संयम में..............दर्शन में तथा..............लेश्या में होती हैं।

(iv) ४ लाख जाति..............गति में..............पंचे.गति में तथा..............तिर्यंचों में होती हैं।

(v) १० लाख जाति वालों के..............योग..............प्राण तथा..............पर्याप्तियाँ होती हैं।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	७ लाख जाति	-	औदारिक काय
(ii)	१४ लाख जाति	-	नरक गति
(iii)	२ लाख जाति	-	७ लाख जाति
(iv)	अग्निकायिक	-	कार्मण काययोग
(v)	४ लाख जाति	-	१४ लाख जाति
(vi)	८४ लाख जाति	-	सूक्ष्म साम्पराय संयम
(vii)	७६ लाख जाति	-	पृथ्वीकायिक
(viii)	आहारक काययोग	-	त्रीन्द्रिय

– उत्तरमाला –

१. (i) द (ii) द (iii) द (iv) स (v) द

२. (i) तिर्यञ्चगति (ii) १० (iii) २२ लाख (iv) ५२ लाख (v) दोनों

३. (i) हाँ (ii) ना (iii) हाँ (iv) हाँ (v) ना

४. (i) २,३,४ (ii) कार्मण, कुमति, कुश्रुत, पहले (iii) ७,४,६ (iv) नरक, देव पंचेन्द्रिय (v) ३,४,४

५. (i) पृथ्वीकायिक (ii) सूक्ष्मसाम्पराय (iii) त्रीन्द्रिय (iv) ७ लाख (v) नरकगति (vi) कार्मण काययोग (vii) औदारिक काय (viii) १४ लाख।

२४. कुल

१. प्रश्न : कुल किसे कहते हैं?

उत्तर : भिन्न-भिन्न शरीरों की उत्पत्ति के कारणभूत नोकर्म वर्गणाओं के भेदों को कुल कहते हैं। **(मू.आ.)** ऊँच और नीच गोत्र रूप उत्तरोत्तर प्रकृति विशेषों के उदय से जो वंशों की उत्पत्ति होती है वे ही कुल हैं।

शरीर के भेद के कारणभूत नोकर्मवर्गणा के भेद को कुल कहते हैं।

जिन परमाणुओं में जीवों के शरीर की रचना होती है उन्हें कुलकोटि कहते हैं।

(पा.च. २०/३६)

२. प्रश्न : कुल कितने होते हैं?

उत्तर : कुल १९९$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ होते हैं -

पृथ्वीकायिक के	-	२२ ला.क.	जलचरों के	-	१२$\frac{१}{२}$ला.क.
जलकायिक के	-	७ ला.क.	थलचरों में चौपायों के	-	१० ला.क.
अग्निकायिक के	-	३ ला.क.	सर्पादि के	-	९ ला.क.
वायुकायिक के	-	७ ला.क.	नभचर के	-	१२ ला.क.
वनस्पतिकायिक के	-	२८ ला.क.	नारकियों के	-	२५ ला.क.
द्वीन्द्रिय के	-	७ ला.क.	मनुष्यों के	-	१४ ला.क.
त्रीन्द्रिय के	-	८ ला.क.	देवों के	-	२६ ला.क.
चतुरिन्द्रिय के	-	९ ला.क.			

३. प्रश्न : कुल और योनि (जाति) में क्या अन्तर है ?

उत्तर : जाति के भेद को कुल कहते हैं और उत्पत्ति के कारण को योनि कहते हैं। बड़, पीपल, कृमि-सीप, खटमल, चींटी, भ्रमर, मक्खी, गौ, अश्व, क्षत्रिय आदि ये कुल हैं। कन्द, मूल, अंड, गर्भ, रस, पसीना आदि योनि कहलाते हैं **(मू. २२० आ.)**

तालिका संख्या ८६

कुल

संकेत - तालिका में प्रथम स्थान पर कुलों की संख्या तथा दूसरे स्थान पर गति आदि मार्गणा के उत्तर भेदों की संख्या कही गई है। जैसे - गति मार्गणा में २५ का अंक २५ ला. क. कुल का तथा एक का अंक गति का जानना चाहिए।

क्र.	स्थान	विवरण	विशेष
१.	गति	२५-१, १३४$\frac{१}{२}$-१, १४-१, २६-१	१३४$\frac{१}{२}$ला.क. में तिर्यञ्च गति होती है।
२.	इन्द्रिय	६७-ए. ७-द्वी, ८-त्रि., ९-चतु. १०८$\frac{१}{२}$-पंचे.	
३.	काय	६७-५, १३२$\frac{१}{२}$-१	१३२ $\frac{१}{२}$ ला.क. कुल में एक त्रसकाय होते हैं।
४.	योग	६७-३, २४-४, ९४$\frac{१}{२}$-११, १४-१३	
५.	वेद	११६-१, २६-२, ५७$\frac{१}{२}$-३	
६.	कषाय	५७$\frac{१}{२}$-२५, २६-२४, ११६-२३	
७.	ज्ञान	९१-२, ९४$\frac{१}{२}$-६, १४-८	मनुष्यों में आठों ज्ञान होते हैं।
८.	संयम	१४२-१, ४३$\frac{१}{२}$-२, १४-७	
९.	दर्शन	८२-१, ९-२, ९४$\frac{१}{२}$-३, १४-४	
१०.	लेश्या	११६-३, ८३$\frac{१}{२}$-६	
११.	भव्य	१९९$\frac{१}{२}$-२	
१२.	सम्यक्त्व	१०-१, ८१-२, १२$\frac{१}{२}$-५, ९६-६	
१३.	संज्ञी	६५-१, ४३$\frac{१}{२}$-२, ९१-१	९१ ला.क. में असंज्ञी ही होते हैं।
१४.	आहार	१९९$\frac{१}{२}$-२	
१५.	गुणस्थान	१०-१, ८१-२, ४३$\frac{१}{२}$-५, ५१-४, १४-१४	
१६.	जीवसमास	२२-२, ७-७-५, ३-२, २८-६, ८-१, ९-१ ६५-१, ४३ $\frac{१}{२}$ - २	जलकायिक वायुकायिक तथा द्वीन्द्रिय के ७-७ ला.क. कुल होते हैं।
१७.	पर्याप्ति	६५-६, ४३$\frac{१}{२}$-६,५, ६७-४, २४-५	
१८.	प्राण	६५-१०,७, ६७-४, ४३$\frac{१}{२}$-१०,९,७ ७-६, ८-७, ९-८	४३$\frac{१}{२}$ ला.क. कुल में असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपेक्षा ९ प्राण होते हैं।
१९.	संज्ञा	१९९$\frac{१}{२}$ला.क.-४	
२०.	उपयोग	९४$\frac{१}{२}$-९, ९-४, ८२-३, १४-१२	
२१.	ध्यान	१४-१६, ४३$\frac{१}{२}$-११, ९१-८, २६-१०, २५-९	
२२.	आस्रव	६७-३८, ७-४०, ८-४१, ९-४२, २६-५२, २५-५१, ४३$\frac{१}{२}$-५३, १४-५५	
२३.	जाति	यथायोग्य जानना चाहिए।	
२४.	कुल	यथायोग्य जानना चाहिए।	

१. प्रश्न : १३४१/२ लाख करोड़ कुल कौनसी गति में होते हैं?

उत्तर : १३४१/२ लाख करोड़ कुल तिर्यञ्च गति में होते हैं -

६७ लाख करोड़ - एकेन्द्रिय सम्बन्धी

२४ लाख करोड़ - विकलत्रय सम्बन्धी

४३१/२ लाख करोड़ - पंचेन्द्रिय सम्बन्धी

२. प्रश्न : १०८१/२ ला.क. कुल कौनसी इन्द्रिय वालों के होते हैं?

उत्तर : १०८१/२ कुल पंचेन्द्रिय जीवों के होते हैं -

२५ ला.क. - नारकियों के

४३१/२ ला.क. - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च के

१४ ला.क. - मनुष्य के

२६ ला.क. - देवों के

३. प्रश्न : १३२१/२ ला.क. कुल किस काय वालों के होते हैं?

उत्तर : १३२१/२ ला.क. कुल त्रस काय वालों के होते हैं -

७ ला.क. - द्वीन्द्रिय के

८ ला.क. - त्रीन्द्रिय के

९ ला.क. - चतुरिन्द्रिय के

१०८१/२ ला.क. - पंचेन्द्रिय के

४. प्रश्न : कौन से ९४१/२ ला.क. कुलों में ११ योग होते हैं?

उत्तर : २५ ला.क. - नारकियों के

२६ ला.क. - देवों के

४३१/२ ला.क. - पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के

इनमें से देव-नारकियों के कुलों में - ४ म. ४ व. वैक्रियिकद्विक तथा कार्मण काययोग

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के - ४ म. ४ व. औदारिकद्विक तथा कार्मण काययोग

लेकिन दोनों में ११-११ योग ही होते हैं।

५. प्रश्न : कौनसे २४ लाख करोड़ कुलों में ४ योग होते हैं?

उत्तर : ७ ला.क. - द्वीन्द्रिय के

८ ला.क. - त्रीन्द्रिय के

९ ला.क. - चतुरिन्द्रिय के

इनके औदारिकद्विक, कार्मण काययोग तथा अनुभय वचन योग, ये चार योग होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी ४३$\frac{१}{२}$ ला.क. कुलों में जो असंज्ञी जीव हैं उनके भी उर्पयुक्त चार योग होते हैं।

६. प्रश्न : कितने कुलों में तीनों वेद होते हैं?

उत्तर : ५७$\frac{१}{२}$ला.क. कुलों में तीनों वेद होते हैं -

४३$\frac{१}{२}$ला.क. - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च के

१४ ला.क. - मनुष्यों के

इनके स्त्रीवेद, पुरुषवेद तथा नपुंसक वेद, ये तीनों वेद हैं।

७. प्रश्न : कितने कुलों में २३ कषायें होती हैं -

उत्तर : ११६ ला.क. कुलों में २३ कषायें होती हैं -

६७ ला.क. - एकेन्द्रिय के

२४ ला.क. - विकलत्रय के

२५ ला.क. - नारकियों के

इन कुलों में स्त्रीवेद, पुरुषवेद बिना २३ कषायें होती हैं।

८. प्रश्न : कौन-कौन से कुलों में छह ज्ञान ही होते हैं?

उत्तर : ९४$\frac{१}{२}$ला.क. कुलों में छह ज्ञान होते हैं -

४३$\frac{१}{२}$ला.क. - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के

२५ ला.क. - नारकियों के

२६ ला.क. - देवों के

नोट - पंचेन्द्रिय के ४३$\frac{१}{२}$ला.क. कुलों में असंज्ञी भी होते हैं। उनके कुमति और कुश्रुत ये दो ही ज्ञान होते हैं।

९. प्रश्न : किन कुलों में दो ज्ञान ही होते हैं?

उत्तर : ९१ ला.क. कुलों में दो ज्ञान ही होते हैं -

६७ ला.क. - एकेन्द्रिय सम्बन्धी

२४ ला.क. - विकलत्रय सम्बन्धी

इनके कुमति एवं कुश्रुत ये दो ही ज्ञान होते हैं।

१०. प्रश्न : किन-किन कुलों में एक असंयम ही होता है?

उत्तर : १४२ ला.क. कुलों में एक असंयम ही होता है -

६७ ला.क. - एकेन्द्रिय सम्बन्धी

२४ ला.क. - विकलत्रय सम्बन्धी

२५ ला.क. - नारकियों के

२६ ला.क. - देवों के

नोट - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के कुलों में संज्ञी जीवों के संयमासंयम भी होता है इसलिए उनका यहाँ ग्रहण नहीं किया है।

११. प्रश्न : कितने कुलों में एक ही दर्शन होता है?

उत्तर : ८२ ला.क. कुलों में एक अचक्षुदर्शन ही होता है?

६७ ला.क. - एकेन्द्रिय सम्बन्धी

७ ला.क. - द्वीन्द्रिय सम्बन्धी

८ ला.क. - त्रीन्द्रिय सम्बन्धी

१२. प्रश्न : किन कुलों में दो दर्शन भी होते हैं?

उत्तर : पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी ४३$\frac{१}{२}$ला.क. कुलों में दो दर्शन भी होते हैं -

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन

ये दो दर्शन असंज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा जानने चाहिए।

१३. प्रश्न : कुलों में संज्ञी मार्गणा किस प्रकार लगानी चाहिए?

उत्तर : कुलों में संज्ञी मार्गणा - ६५ लाख क. कुलों में संज्ञी जीव ही हैं।

२५ ला.क. - नारकियों के

२६ ला.क. - देवों के

१४ ला.क. - मनुष्यों के

• ९१ ला.क. कुलों में असंज्ञी ही होते हैं -

६७ ला.क. - एकेन्द्रिय सम्बन्धी

२४ ला.क. - विकलत्रय सम्बन्धी

• ४३$\frac{१}{२}$ला.क. कुलों में संज्ञी-असंज्ञी दोनों होते हैं -

पंचेन्द्रियतिर्यञ्च सम्बन्धी

जलचरों के - १२$\frac{१}{२}$ला.क.

चौपायों के - १० ला.क.

सर्पादि के - ९ ला.क.

नभश्चर के - १२ ला.क.

१४.प्रश्न : कितने कुलों में केवल एक गुणस्थान होता है?

उत्तर : १० ला.क. कुलों में केवल एक पहला गुणस्थान होता है -

३ ला.क. - अग्निकायिक के

७ ला.क. - वायुकायिक के

नोट - पृथ्वीकायिकादि के सूक्ष्म जीवों में, नित्य निगोद आदि के भी एक ही गुणस्थान होता है लेकिन उनके कुल अलग से नहीं कहे गये हैं।

१५.प्रश्न : कितने कुलों में दो गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : ८१ ला.क. कुलों में दो गुणस्थान होते हैं -

२२ ला.क. - पृथ्वीकायिक के   ७ ला.क. - द्वीन्द्रिय के

७ ला.क. - जलकायिक के   ८ ला.क. - त्रीन्द्रिय के

२८ ला.क. - वनस्पति कायिक   ९ ला.क. - चतुरिन्द्रिय के

इनके मिथ्यात्व एवं सासादन ये दो गुणस्थान होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों में असंज्ञी.....।

१६.प्रश्न : कितने कुलों में चौथा गुणस्थान भी होता है?

उत्तर : १०८$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुलों में चौथा गुणस्थान भी होता है।

४३$\frac{१}{२}$ला.क. - पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के

५१ ला.क. - देव-नारकियों के

१४ ला.क. - मनुष्यों के

१७. प्रश्न : किन-किन कुलों में केवल एक जीवसमास ही होता है?

उत्तर : वे कुल जिनमें एक ही जीव समास होता है -

कुल	**जीवसमास**
७ ला.क.	- द्वीन्द्रिय सम्बन्धी
८ ला.क.	- त्रीन्द्रिय सम्बन्धी
९ ला.क.	- चतुरिन्द्रिय सम्बन्धी
२५ ला.क.	- सैनी पंचेन्द्रिय
२६ ला.क.	- सैनी पंचेन्द्रिय
१४ ला.क.	- सैनी पंचेन्द्रिय

१८. प्रश्न : ७ लाख करोड़ कुलों में कितने जीवसमास होते हैं?

उत्तर : ७ लाख करोड़ कुलों में पाँच जीवसमास होते हैं -
जलकायिक-सूक्ष्म, बादर; वायुकायिक-सूक्ष्म, बादर और द्वीन्द्रिय जीव इन पाँचों के ७-७ लाख करोड़ कुल होते हैं।

१९. प्रश्न : १९९$\frac{१}{२}$ला.क. कुल किस कषाय में पाये जाते हैं?

उत्तर : १९९$\frac{१}{२}$ला.क. कुल २२ कषायों में पाये जाते हैं -
अनन्तानुबन्धी चतुष्क आदि तथा हास्यादि षट्क (तीन वेद बिना)।
इसी प्रकार १९९$\frac{१}{२}$ला.क. कुल कुमति, कुश्रुतज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन आदि अनेक स्थानों में लगा लेने चाहिए।

२०. प्रश्न : जिनके आठ लाख करोड़ कुल होते हैं उनके आस्रव के कितने प्रत्यय होते हैं?

उत्तर : जिनके आठ लाख करोड़ कुल होते हैं उनके आस्रव के ४१ प्रत्यय होते हैं -
५ मि. ९ अविरति २३ कषाय तथा ४ योग।

२१. प्रश्न : किस-किस कुल के भेद में ४ लाख जातियाँ हो सकती हैं?

उत्तर : २५ लाख करोड़ में, २६ लाख करोड़ में तथा ४३$\frac{१}{२}$लाख करोड़ कुलों में ४ लाख जातियाँ होती हैं।

प्रश्न-पत्र

१. उपयुक्त विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइये-

(i) **९ लाख करोड़ कुल किस इन्द्रिय वाले के होते हैं?**
(अ) द्वीन्द्रिय (ब) त्रीन्द्रिय
(स) चतुरिन्द्रिय (द) तिर्यञ्चगति

(ii) **१४ लाख करोड़ कुल किस संयम में होते हैं?**
(अ) असंयम (ब) संयमासंयम
(स) असंयम और संयमासंयम (द) परिहारविशुद्धि

(iii) **२२ लाख करोड़ कुल वालों के कौनसी गति होती है?**
(अ) पृथ्वीकायिक (ब) तिर्यञ्चगति
(स) स्थावर (द) कोई नहीं

(iv) **१९९$\frac{१}{२}$लाख करोड़ कुल कौन से योग में होते हैं?**
(अ) औदारिक (ब) ४ वचनयोग
(स) कार्मण (द) तिर्यञ्चगति

(v) **७-७ लाख करोड़ कुल कहाँ-कहाँ होते हैं?**
(अ) जलकायिक वायुकायिक (ब) जल.वायु. द्वीन्द्रिय
(स) तीन स्थावर (द) कोई नहीं

२. एक शब्द में उत्तर दीजिए-

(i) २५ लाख करोड़ कुल वाले सासादन सम्यग्दृष्टि के कितने योग होते हैं?
(ii) ९ लाख करोड़ कुल वालों के कितने गुणस्थान होते हैं?
(iii) २८ लाख करोड़ कुल कौनसी इन्द्रिय वालों के होते हैं?
(iv) ४३$\frac{१}{२}$लाख करोड़ कुल वालों के संयम मार्गणा के कितने भेद होते हैं?
(v) १४ लाख करोड़ कुल में कितनी जातियाँ नहीं हैं?

३. हाँ या ना में उत्तर दीजिए-

(i) २६ लाख करोड़ कुल में सासादन गुणस्थान भी होता है।
(ii) ३ लाख करोड़ कुल वालों के भी दूसरा गुणस्थान होता है।
(iii) १९९$\frac{१}{२}$लाख करोड़ कुल में आहारक-अनाहारक दोनों होते हैं।

(iv) १०८$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल पञ्चेन्द्रिय जीवों के होते हैं।

(v) १४ लाख करोड़ कुल में समुद्घातगत केवली नहीं होते हैं।

४. रिक्तस्थानों की पूर्ति करो-

(i) १२ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल वालों के............गति..............वेद तथा..............योग होते हैं।

(ii) ८ लाख करोड़ कुल में..............इन्द्रिय..............कषाय तथा..............काय होती है।

(iii) १४ लाख करोड़ कुल में............पर्याप्ति............प्राण............और अनाहारक भी होते हैं।

(iv) ४३$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल वालों के ...... गुणस्थान ...... लेश्या तथा ज्ञान मार्गणा के ......भेद होते हैं।

(v) २६ लाख करोड़ कुल वालों के ...... लेश्या, संयम मार्गणा के ...... भेद तथा ...... संज्ञा होती है।

५. सही जोड़ी बनाइये-

	अ		ब
(i)	१४ लाख करोड़ कुल	-	अग्निकायिक
(ii)	१०८ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल	-	६७ $\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल
(iii)	२८ लाख करोड़ कुल	-	वैक्रियिकद्विक
(iv)	१२ लाख करोड़ कुल	-	यथाख्यात संयम
(v)	३ लाख करोड़ कुल	-	एकेन्द्रिय
(vi)	६७ लाख करोड़ कुल	-	कबूतर
(vii)	५१ लाख करोड़ कुल	-	वनस्पतिकायिक
(viii)	५ पर्याप्ति	-	पञ्चेन्द्रिय

– उत्तरमाला –

१.	(i) स	(ii) द	(iii) ब	(iv) स	(v) ब
२.	(i) ९	(ii) २	(iii) एकेन्द्रिय	(iv) २	(v) ७०लाख जाति
३.	(i) हाँ	(ii) ना	(iii) हाँ	(iv) हाँ	(v) ना

४. (i) १,३,११ (ii) त्रीन्द्रिय, २३, त्रस (iii) ६,१०, आहारक (iv) ५,६,६ (v) ६,१,४

५. (i) यथाख्यात संयम (ii) पञ्चेन्द्रिय (iii) वनस्पति कायिक (iv) कबूतर (v) अग्निकायिक (vi) एकेन्द्रिय (vii) वैक्रियिकद्विक (viii) ६७ $\frac{१}{२}$ ला.क.

समुच्चय प्रश्नोत्तर

१. **प्रश्न : कौनसी गति में कौनसा वेद पाया जाता है?**

उत्तर : गतियों में वेद -

१) नरकगति में मात्र नपुंसक वेद है।

२) सम्मूर्च्छन तिर्यञ्च अर्थात् एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक तथा पञ्चेन्द्रिय सम्मूर्च्छन तिर्यञ्च में मात्र नपुंसक वेद पाया जाता है।

३) गर्भस्थ तिर्यञ्च में तीनों वेद पाये जाते हैं।

४) कर्मभूमि सम्बन्धी आर्यखण्ड के मनुष्यों में तीनों वेद पाये जाते हैं।

५) कर्मभूमि के म्लेच्छ खण्डों में नपुंसक वेद नहीं होता।

६) भोगभूमिज और कुभोगभूमिज मनुष्यों में स्त्री और पुरुष दो ही वेद होते हैं।

७) सम्मूर्च्छन मनुष्यों के मात्र नपुंसक वेद होता है।

८) देवों में मात्र पुरुषवेद और स्त्रीवेद पाया जाता है।

९) मनुष्यों में नौवें गुणस्थान के सवेद भाग के बाद कोई भी वेद नहीं पाया जाता है।

२. **प्रश्न : कौन से मनुष्य नरक में जाते ही निश्चित रूप से सम्यग्दर्शन को प्राप्त कर लेते हैं?**

उत्तर : तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाले क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव जब नरक में जाते हैं तब सम्यक्त्व छूट जाता है लेकिन नरक में जाते ही वे अन्तर्मुहूर्त्त काल के पश्चात् सम्यक्त्व को प्राप्त कर लेते हैं।

३. **प्रश्न : किस गति के क्षायिक सम्यग्दृष्टि एक भवावतारी होते हैं?**

उत्तर : केवल दो गतियों के क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव एक भवावतारी अर्थात् वहाँ से मरकर मात्र एक भव लेकर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं - नरकगति, देवगति।

कर्मभूमिया क्षायिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य तद्भव मोक्षगामी हो सकते हैं, एक भवावतारी नहीं।

४. **प्रश्न : देवों के द्वितीयोपशम सम्यक्त्व आहारक अवस्था में होता है या अनाहारक अवस्था में?**

उत्तर : देवों के द्वितीयोपशम सम्यक्त्व आहारक में भी होता है और अनाहारक अवस्था में भी होता है -

कार्मण काययोग की अपेक्षा - अनाहारक अवस्था में।

वैक्रियिकमिश्र काययोग की अपेक्षा - आहारक अवस्था में।

वैक्रियिक काययोग होने तक द्वितीयोपशम सम्यक्त्व समाप्त हो जाता है।

५. **प्रश्न : गाय को कितने सम्यक्त्व होते हैं?**

उत्तर : गाय को दो सम्यक्त्व हो सकते हैं -

प्रथमोपशम सम्यक्त्व एवं क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।

गाय के भोगभूमि की अपेक्षा भी क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि स्त्री

पर्याय में उत्पन्न नहीं होता है। सम्यक्त्व मार्गणा की अपेक्षा क्षायिक सम्यक्त्व के बिना शेष सभी सम्यक्त्व हो सकते हैं।

६. प्रश्न : **कौनसी गति में पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों अवस्थाएँ होती हैं?**

उत्तर : दो गतियों में पर्याप्त तथा अपर्याप्त (लब्ध्यपर्याप्तक) दोनों अवस्थाएँ होती हैं -
तिर्यञ्चगति और मनुष्यगति
निर्वृत्यपर्याप्तक की अपेक्षा अपर्याप्तकपना चारों गतियों में होता है।
गर्भज जीव पर्याप्तक ही होते हैं।
देव-नारकी पर्याप्तक ही होते हैं।

७. प्रश्न : **नरकगति में कितने धर्म ध्यान होते हैं?**

उत्तर : वैसे **चउबीस ठाणा** के अनुसार तो नरकगति में १ धर्म ध्यान होता हैं। लेकिन आचार्य प्रणीत ग्रन्थों में धर्मध्यानों को कहीं गति एवं गुणस्थानों में विभाजित नहीं किया है। **पं. रतनचन्द जी मुख्तार** का कहना है कि नरकों में भी यदि चारों धर्म ध्यान मान लिये जायें तो कोई बाधा नहीं है। उन्होंने अपनी **गुणस्थान-मार्गणा चर्चा** पुस्तक में नारकी एवं तिर्यञ्चों के भी चारों धर्मध्यान स्वीकार किये हैं।

८. प्रश्न : **नरकगति में नारकियों के परस्पर उपकार की भावना नहीं होती है फिर वहाँ अपायविचय धर्मध्यान कैसे होता है?**

उत्तर : तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाले असंयत सम्यग्दृष्टि नारकी जीवों में दर्शन-विशुद्धि भावना के साथ अपायविचय धर्मध्यान घटित हो सकता है।
अथवा - अनन्तानुबन्धी विसंयोजक नारकी जीवों के भाव उच्चस्तरीय होते हैं। उनमें भी अपायविचय का अस्तित्व सम्भव है, क्योंकि अपायविचय धर्मध्यान जघन्य मध्यम उत्कृष्ट, प्रगट-अप्रगट आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। इसी प्रकार विपाक विचय और संस्थान विचय धर्मध्यान भी घटित होते हैं, क्योंकि इनमें भी प्रगट-अप्रगट आदि अनेक भेद होते हैं।

९. प्रश्न : **तिर्यञ्चगति में चार धर्मध्यान कैसे घटित होते हैं?**

उत्तर : तिर्यञ्चगति में प्रथमादि ५ गुणस्थान होते हैं, अत: चतुर्थ, पंचम गुणस्थान की अपेक्षा यहाँ पर भी उपचार से चार धर्मध्यान घटित होते हैं। तिर्यञ्च जीवों के सात तत्त्व या नौ पदार्थ आदि के नाम की जानकारी नहीं होते हुए भी सर्वज्ञ प्रतिपादित तत्त्वों में भावात्मक श्रद्धान हो जाता है अत: यहाँ सम्यग्दर्शन होता है। तिर्यञ्च जीवों में परस्पर उपकार की भावना होती है, कर्मों के फल आदि के चिन्तन की अपेक्षा यहाँ ४ धर्मध्यान उपचार से घटित होते हैं।

१०. प्रश्न : **शुक्लध्यान आठवें आदि ऊपर के गुणस्थानों में ही क्यों होता है?**

उत्तर : यह शुक्लध्यान आठवें अपूर्वकरण आदि गुणस्थानों में होता है क्योंकि आठवें, नौवें और

दसवें गुणस्थान में संज्वलन कषाय का उत्तरोत्तर मन्द उदय रहता है तथा सातवें गुणस्थान की अपेक्षा मन्दतम उदय रहता है। किन्तु शुक्लध्यान कषाय के केवल मन्दतम उदय में ही नहीं होता बल्कि कषाय के उदय से रहित उपशान्त कषाय नामक ११ वें गुणस्थान में तथा क्षीणकषाय नामक बारहवें गुणस्थान में भी होता है तथा तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान के भी होता है। **(का.अ. ४७२ टी.)**

११. प्रश्न : कितनी गतियों में बराबर जातियाँ होती हैं?

उत्तर : दो गतियों के जीवों की बराबर जातियाँ होती हैं - देवगति, नरकगति।
इन दोनों के ४-४ लाख जातियाँ हैं।
पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों की भी ४ लाख जातियाँ होती हैं लेकिन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च कोई गति नहीं है।

१२. प्रश्न : भोग भूमि में पंचेन्द्रिय सम्बन्धी कितने कुल नहीं होते हैं?

उत्तर : भोग भूमि में पंचेन्द्रिय सम्बन्धी ६३$\frac{१}{२}$ ला. क. कुल नहीं होते हैं -
नारकी के - २५ लाख करोड़, देवों के - २६ लाख करोड़
तिर्यञ्चों के - १२$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ (जलचर जीवों सम्बन्धी)

१३. प्रश्न : नरकगति के बराबर गुणस्थान कौन से योग में होते हैं?

उत्तर : नरकगति के बराबर गुणस्थान तीन योगों में होते हैं -
वैक्रियिककाययोग, कार्मण काययोग एवं औदारिक मिश्र काययोग।
वैक्रियिक काययोग - पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा।
कार्मण काययोग तथा औदारिकमिश्र में - पहला, दूसरा, चौथा तथा तेरहवाँ।

१४. प्रश्न : पंचेन्द्रिय जीवों में सबसे कम योग किसके होते हैं?

उत्तर : पंचेन्द्रिय में असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के सबसे कम योग होते हैं -
इनके ४ योग हैं - औदारिकद्विक, कार्मणकाययोग तथा अनुभय वचन योग।
अथवा - केवली भगवान जब अन्तिम शुक्लध्यान में स्थित होते हैं तब उनके केवल एक औदारिक काययोग होता है।
अथवा - पंचेन्द्रिय जीवों में अयोग केवली भगवान योगों से रहित होते हैं।
अथवा - लब्ध्यपर्याप्तक पंचेन्द्रिय जीवों के दो योग होते हैं - कार्मणकाययोग तथा औदारिकमिश्र काययोग।

१५. प्रश्न : पृथ्वीकायिकादि के चार भेदों में से किस-किस में दो गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : पृथ्वीकायिकादि के दो भेदों में दो गुणस्थान होते हैं - पृथ्वीजीव, पृथ्वीकायिक।
पृथ्वी जीव विग्रहगति में स्थित होते हैं।
पृथ्वीकायिक जीव जब तक निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था में रहता है तब तक दूसरा गुणस्थान बन जाता है। इसी प्रकार जलजीव, जलकायिक, वनस्पतिजीव, वनस्पतिकायिक जीवों

के भी जानना चाहिए। अग्निकायिक, वायुकायिक के किसी भी अवस्था में दूसरा गुणस्थान नहीं होता है।

१६. प्रश्न : त्रसकायिक जीवों के कितने उपयोग होते हैं?

उत्तर : त्रसकायिक जीवों के सभी उपयोग होते हैं, क्योंकि त्रस नामकर्म का उदय प्रथम गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

१७. प्रश्न : त्रसकायिक के बराबर जातियाँ किन योग वालों के होती हैं?

उत्तर : त्रसकायिक के बराबर जातियाँ केवल अनुभय वचनयोग वालों के होती हैं, क्योंकि यह योग द्वीन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक पाया जाता है।
इन दोनों की ३२ लाख जातियाँ होती हैं।

१८. प्रश्न : त्रसकायिक जीवों के कितने ध्यान का अभाव हो सकता है?

उत्तर : त्रसकायिक जीवों के १५ ध्यानों का अभाव हो सकता है -
इनके पाँचवें गुणस्थान के बाद - ४ रौद्रध्यान तथा निदान आर्त्तध्यान का।
छठे गुणस्थान के बाद - तीन आर्त्तध्यानों का।
सातवें गुणस्थान के बाद - धर्मध्यानों का।
बारहवें अथवा ग्यारहवें गुणस्थान के बाद - प्रथम शुक्लध्यान एवं द्वितीय शुक्लध्यान का।
तेरहवें गुणस्थान के बाद - तीसरे शुक्लध्यान का।
चौदहवें गुणस्थान में - चतुर्थ शुक्लध्यान का अभाव नहीं हो सकता है, क्योंकि चौदहवें गुणस्थान के अंत समय तक त्रस नाम कर्म का उदय पाया जाता है।
नोट - अन्तिम के दो शुक्लध्यान एक-एक गुणस्थान में ही होते हैं।

१९. प्रश्न : योगनिरोध किसे कहते हैं?

उत्तर : योगों के विनाश की योगनिरोध संज्ञा है।
जिस प्रकार मंत्र के द्वारा सब शरीर में भिदे हुए विष का डंक के स्थान में निरोध करते हैं और प्रधान क्षरण करने वाले मंत्र के बल से उसे पुन: निकालते हैं उसी प्रकार ध्यान रूपी मंत्र के बल से युक्त हुआ यह सयोग केवली जिन रूपी वैद्य बाहर शरीर विषयक योग विष को पहले रोकता है और इसके बाद उसे निकाल फेंकता है। **(ध. १३/८४)**

२०. प्रश्न : किस-किस काययोग में सभी सम्यक्त्व होते हैं?

उत्तर : केवल दो काययोगों में सभी सम्यक्त्व होते हैं - औदारिक तथा वैक्रियिक काययोग।
नोट - वैक्रियिकमिश्र काययोग और कार्मण काययोग में द्वितीयोपयोग सम्यक्त्व की अपेक्षा औपशमिक सम्यक्त्व बन जाता है लेकिन सम्यग्मिथ्यात्व नहीं हो सकता है इसलिए इनका ग्रहण नहीं किया है।

२१. प्रश्न : कितने योग सैनी-असैनी तथा दोनों से रहित जीवों के भी पाये जाते हैं?

उत्तर : चार योग सैनी-असैनी तथा दोनों से रहित जीवों के भी पाये जाते हैं -
औदारिक काययोग, औदारिक मिश्र काययोग।
कार्मण काययोग, अनुभय वचन योग।
औदारिक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग -
असैनी में - एकेन्द्रियादि असैनी पंचेन्द्रिय पर्यन्त असंज्ञी जीवों के।
सैनी में - सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों तथा मनुष्यों में।
सैनी-असैनी से रहित में - सयोग केवली भगवान के।
औदारिकमिश्र एवं कार्मण काययोग - लब्ध्यपर्याप्तक सैनी तिर्यञ्च तथा लब्ध्यपर्याप्तक असैनी द्वीन्द्रिय आदि... पंचेन्द्रिय तक होते हैं एवं सैनी-असैनी से रहित १३वें गुणस्थान में भी होते हैं।
अनुभय वचन योग - द्वीन्द्रिय से असैनी-पंचेन्द्रिय के एवं सैनी पंचेन्द्रिय तथा सैनी-असैनी से रहित तेरहवें गुणस्थान में भी होता है।

२२.प्रश्न : कितने योग संज्ञातीत जीवों के होते हैं लेकिन एक संज्ञा वालों के नहीं होते हैं?

उत्तर : दो योग संज्ञातीत जीवों के होते हैं, लेकिन एक संज्ञा वालों के नहीं होते हैं -
औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग।
इसी प्रकार दो एवं तीन संज्ञा वालों के भी जानना चाहिए।

२३.प्रश्न : कितने योग चार संज्ञा वालों के ही होते हैं?

उत्तर : चार योग चार संज्ञा वालों के ही होते हैं -
आहारकद्विक (आहारक एवं आहारकमिश्र)
वैक्रियिकद्विक - (वैक्रियिक एवं वैक्रियिकमिश्र)

२४.प्रश्न : कौन से योग ७ प्राण वालों के ही होते हैं?

उत्तर : दो योग ७ प्राण वालों के ही होते हैं -
(१) आहारकमिश्र (२) वैक्रियिकमिश्र।

२५.प्रश्न : कौन से योग सभी उपयोगों में पाये जाते हैं?

उत्तर : पाँच योग सभी उपयोगों में पाये जाते हैं -
२ मनोयोग - सत्यमनोयोग, अनुभय मनोयोग
२ वचनयोग - सत्य वचनयोग, अनुभय वचन योग
१ काययोग - औदारिक काय योग।

२६.प्रश्न : कितने योगों में चौदह ध्यान होते हैं?

उत्तर : आठ योगों में चौदह ध्यान होते हैं -
४ मनोयोग ४ वचनयोग में– ४ आर्त्तध्यान ४ रौद्रध्यान ४ धर्मध्यान तथा २ शुक्लध्यान।

२७.प्रश्न : ऐसा कौनसा योग है जिसमें सभी ध्यान होते हैं?

उत्तर : ऐसा कोई भी योग नहीं है जिसमें सभी ध्यान होते हों, क्योंकि चौथा शुक्लध्यान अयोगी केवली भगवान के होता है।

२८.प्रश्न : किस-किस योग में आर्त्तध्यान का अभाव हो सकता है?

उत्तर : ११ योगों में आर्त्तध्यान का अभाव भी हो जाता है -
४ मनोयोग ४ वचनयोग ३ काययोग (औदारिकद्विक, कार्मण)
क्योंकि ये योग छठे गुणस्थान के आगे भी पाये जाते हैं।

२९.प्रश्न : चार योग वालों के कितने कुल होते हैं?

उत्तर : चार योग वालों के ६७$\frac{१}{२}$ लाख करोड़ कुल होते हैं -
विकलत्रय के - २४ लाख करोड़।
पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के - ४३$\frac{१}{२}$लाख करोड़।
यहाँ पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों में असंज्ञी जीवों को ग्रहण करना चाहिए।
चार योगों में-औदारिकद्विक, कार्मण काययोग तथा अनुभय वचन योग लेना चाहिए।

३०.प्रश्न : क्या वेद और कषाय से रहित अनाहारक जीव भी होते हैं?

उत्तर : हाँ, वेद और कषाय से रहित अनाहारक जीव भी होते हैं, वे हैं -
(१) तेरहवें गुणस्थान वाले समुद्घात अवस्था में जब कार्मण योग में स्थित होते हैं।
(२) चौदह गुणस्थान वाले अयोग केवली भगवान।
(३) सिद्ध परमेष्ठी भगवान।

३१.प्रश्न : क्या द्रव्य वेद के समान भाव वेद भी जीवन भर परिवर्तित नहीं होता है?

उत्तर : हाँ, देव, नारकी, भोगभूमिया आदि जीवों के तो जैसा द्रव्य वेद होता है वैसा ही भाव वेद भी होता है लेकिन कर्मभूमिया जीवों के वेद की विषमता होती है। उनके भी कषायवन्नान्तर्मुहूर्त्तस्थायिनो वेदा: आजन्मन आमरणात्तदुयस्य सत्त्वात्। **(ध.१/३४६)**
अर्थात् कषाय के समान वेद भी अन्तर्मुहूर्त्तपर्यन्त नहीं रहते, क्योंकि जन्म से लेकर मरण तक एक ही वेद का उदय पाया जाता है।
इस कथन से लगता है कि कर्मभूमि में जिसके जन्म से यदि द्रव्य से स्त्री वेद और भाव से पुरुषवेद है तो जीवन पर्यन्त उनके यही स्थिति रहेगी, इसमें परिवर्तन नहीं होगा।

३२.प्रश्न : कौन से वेद के बराबर कुल अशुभ लेश्याओं में होते हैं?

उत्तर : नपुंसक वेद में जितने कुल होते हैं उतने ही कुल अशुभ लेश्याओं में होते हैं। क्योंकि दोनों ही एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय पर्यन्त तथा नारकियों के होते हैं।

३३.प्रश्न : कषायों का उदय किस गुणस्थान में होता है?

उत्तर : कषायों के उदय में गुणस्थान -

अनन्तानुबन्धी	-	दूसरे गुणस्थान तक
अप्रत्याख्यानावरण	-	चौथे गुणस्थान तक

प्रत्याख्यानावरण	-	पाँचवें गुणस्थान तक
संज्वलन त्रिक	-	नवें गुणस्थान तक
संज्वलन लोभ	-	दसवें गुणस्थान तक
हास्यादि छह नोकषाय	-	आठवें गुणस्थान तक
तीन वेद	-	नवें गुणस्थान तक

३४. प्रश्न : क्या पहले दूसरे गुणस्थान में पच्चीस कषायों का उदय होता है?

उत्तर : हाँ, पहले-दूसरे गुणस्थान में एक जीव के एक समय में यदि अनन्तानुबन्धी क्रोध कषाय का उदय है तो उस समय अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन क्रोध इन तीनों का भी उदय रहता है। इस प्रकार प्रथम २ गुणस्थानों में एक जीव के एक समय में ४ क्रोध अथवा ४ मान अथवा ४ माया अथवा ४ लोभ कषाय का उदय होता है

नाना जीवों की अपेक्षा नौ नोकषाय का एक समय में उदय होता है। एक जीव अपेक्षा हास्य-रति और अरति-शोक में से किसी एक युगल का, स्त्री-पुरुष-नपुंसक वेद में से किसी एक वेद का, भय या जुगुप्सा या भय-जुगुप्सा का उदय होता है। अर्थात् एक जीव के एक समय में ४ अथवा ५ नोकषाय घटित होती है।

विशेष - यहाँ अनन्तानुबंधी चतुष्क में २४ स्थान घटाये हैं। पूर्व की मार्गणाओं के समान यहाँ पर भी स्वकीय कषाय ही घटाना चाहिए। परन्तु मात्र अनन्तानुबन्धी क्रोध या मान या माया या लोभ कषाय का उदय कहीं नहीं होता है अत: यहाँ पर ४ क्रोध/४ मान/४माया/४लोभ कषाय का ग्रहणकर १६ कषाय को लिया है। इसी प्रकार ९ नोकषाय को ग्रहणकर २५ कषाय घटित किये हैं।

३५. प्रश्न : किस-किस ज्ञान में दस प्राण भी होते हैं?

उत्तर : पाँच ज्ञानों में दस प्राण भी होते हैं -

कुमति-कुश्रुत-ये एकेन्द्रियादि के ३,४ आदि प्राण भी होते हैं।

मति, श्रुत, अवधिज्ञान - ये निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था में ७ प्राण भी होते हैं।

इसलिए इन पाँच ज्ञानों में दस प्राण तथा प्राणों के अन्य स्थान भी होते हैं।

विभंगावधिज्ञान तथा मन:पर्ययज्ञान में १० प्राण ही होते हैं।

३६. प्रश्न : कितने ज्ञान न सैनी के होते हैं और न असैनी के होते हैं?

उत्तर : मात्र एक ज्ञान न सैनी के होता है और न असैनी के होता है - केवलज्ञान

३७. प्रश्न : कितने ज्ञान सम्यक्त्व मार्गणा के मात्र एक भेद में पाये जाते हैं?

उत्तर : मात्र एक ज्ञान है जो सम्यक्त्व मार्गणा के केवल एक भेद में पाया जाता है-

केवलज्ञान - क्षायिकसम्यक्त्व

तीन मिश्रज्ञान भी केवल सम्यग्मिथ्यात्व में ही पाये जाते हैं।

३८. प्रश्न : किस संयम में कितने सम्यक्त्व होते हैं?

उत्तर : **संयम में सम्यक्त्व**

संयम	**सम्यक्त्व**
• सामायिक छेदोपस्थापना तथा संयमासंयम	क्षायिक, क्षायोपशमिक तथा उपशम
• परिहारविशुद्धि	क्षायिक, क्षायोपशमिक
• सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यात	क्षायिक, उपशम
• असंयम	क्षा.क्षायो.उ.मि.सा.मि.

३९.प्रश्न : कितने संयम सवेद एवं अवेद दोनों अवस्थाओं में होते हैं?

उत्तर : दो संयम सवेद एवं अवेद दोनों अवस्थाओं में होते हैं - सामायिक एवं छेदोपस्थापना

४०.प्रश्न : किस-किस संयम में दस प्राण ही होते हैं?

उत्तर : तीन संयम में दस प्राण ही होते हैं -
(१) परिहारविशुद्धि संयम (२) सूक्ष्मसाम्पराय संयम (३) संयमासंयम। **(गो.जी.जी.आ.अ.)**

४१.प्रश्न : संयम मार्गणा के कितने भेदों में सभी संज्ञाएँ होती हैं?

उत्तर : संयम मार्गणा के पाँच भेदों में सभी संज्ञाएँ होती हैं -
(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापना (३) परिहारविशुद्धि (४) संयमासंयम (५) असंयम
सामायिकादि तीन संयमों में छठे गुणस्थान की अपेक्षा सभी संज्ञाएँ होती हैं।

४२.प्रश्न : कौन-कौन से संयम आर्त्तध्यान से रहित जीवों के भी होते हैं?

उत्तर : तीन संयम आर्त्तध्यान से रहित जीवों के भी होते हैं -
(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापना (३) परिहारविशुद्धि

४३.प्रश्न : संयम मार्गणा के कितने भेदों में आर्त्तध्यान समाप्त नहीं होते हैं?

उत्तर : संयममार्गणा के दो भेदों में आर्त्तध्यान समाप्त नहीं होते हैं -
(१) संयमासंयम (२) असंयम

४४.प्रश्न : सामायिक छेदोपस्थापना संयम में आस्रव के प्रत्ययों के कितने स्थान होते हैं?

उत्तर : सामायिक छेदोपस्थापना संयम में आस्रव के प्रत्ययों के १० स्थान होते हैं।
२४,२२,२०,१६,१५,१४,१३,१२,११,१०
२४ - छठे गुणस्थान की अपेक्षा
२२ - ७ वें ८ वें गुणस्थान की अपेक्षा
२० - मन:पर्ययज्ञानी आदि की अपेक्षा
१६, १५ आदि स्थान नवमें गुणस्थान की अपेक्षा जानने चाहिए।

४५.प्रश्न : सामायिक-छेदोपस्थापना संयम में कितने ध्यान होते हैं?

उत्तर : सामायिक-छेदोपस्थापना संयम में आठ ध्यान होते हैं -
निदान बिना तीन आर्त्तध्यान - छठे गुणस्थान में
चार धर्म ध्यान - छठे सातवें गुणस्थान में
पहला शुक्लध्यान - आठवें-नवमें गुणस्थान में

४६. प्रश्न : असंयम कितने प्रकार का होता है?

उत्तर : असंयम तीन प्रकार का होता है -
(१) अनन्तानुबन्धी के उदय से होने वाला (२) अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय से होने वाला तथा (३) प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय से होने वाला। **(सर्वा. ९/१)**

४७. प्रश्न : किस-किस दर्शन में संज्ञा वाले एवं संज्ञातीत जीव भी होते हैं?

उत्तर : तीन दर्शनों में संज्ञा वाले भी होते हैं और संज्ञातीत भी होते हैं -
चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन में पहले से दसवें गुणस्थान तक संज्ञा वाले तथा ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान में संज्ञातीत जीव होते हैं। अवधिदर्शन में चौथे से अथवा तीसरे से दसवें गुणस्थान तक संज्ञा वाले तथा.........।

४८. प्रश्न : कितनी लेश्याओं में संज्ञा के सभी स्थान होते हैं?

उत्तर : केवल एक लेश्या में संज्ञा के सभी स्थान होते हैं -
शुक्ल लेश्या, क्योंकि यह लेश्या पहले गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान तक पाई जाती है।

४९. प्रश्न : सम्यग्दृष्टि नारकी मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लेश्याओं को क्यों नहीं छोड़ते हैं?

उत्तर : नारकी जीवों के स्वभावत: संक्लेश की अधिकता होती है। इस कारण मरण काल में भी वे उन अशुभ लेश्याओं को नहीं छोड़ते हैं अर्थात् उन्हीं अशुभ लेश्याओं सहित ही यहाँ मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं।

५०. प्रश्न : सम्यग्दृष्टि देव अन्तर्मुहूर्त तक अपनी-अपनी पूर्व लेश्याओं को क्यों नहीं छोड़ते हैं?

उत्तर : पंच परमेष्ठी के स्वरूप-चिन्तन में जिनकी बुद्धि लगी हुई है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवों के मरणकाल में मिथ्यादृष्टि देवों के समान संक्लेश नहीं पाया जाता है अत: अपर्याप्त काल के इस योग में पूर्व की शुभ लेश्याएँ यथावत् बनी रहती हैं।

५१. प्रश्न : किस सम्यक्त्व की उत्पत्ति के पहले कौनसे ज्ञान होते हैं?

उत्तर : क्षायिक एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति के पूर्व नियम से सम्यग्ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय में से यथायोग्य) ही होते हैं, क्योंकि ये दोनों क्षायोपशमसम्यग्दृष्टि के ही होते हैं।
प्रथमोपशम सम्यक्त्व के पूर्व नियम से मिथ्याज्ञान ही होते हैं, क्योंकि वह मिथ्यादृष्टि को ही प्राप्त होता है।
क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के पूर्व सम्यग्ज्ञान भी हो सकते हैं और मिथ्याज्ञान भी हो सकते हैं, क्योंकि सादि मिथ्यादृष्टि को भी क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है तथा उपशम सम्यग्दृष्टि को भी क्षयोपशम प्राप्त हो सकता है। यदि उपशम सम्यग्दृष्टि को क्षयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त होता है तो पूर्व में सम्यग्ज्ञान होंगे तथा यदि सादि मिथ्यादृष्टि को होगा तो मिथ्याज्ञान होंगे।

५२.प्रश्न : किस सम्यक्त्व से कौनसा सम्यक्त्व हो सकता है?

उत्तर : (१) प्रथमोपशम सम्यक्त्व से - क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है, क्षायिक एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व नहीं।

(२) द्वितीयोपशम सम्यक्त्व से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व हो सकता है, प्रथमोपशम सम्यक्त्व एवं क्षायिक सम्यक्त्व नहीं।

(३) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व से - क्षायिक एवं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व हो सकते हैं, प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं।

(४) क्षायिक सम्यक्त्व के बाद अन्य किसी की आवश्यकता नहीं रहती है, अत: अन्य कोई सम्यक्त्व नहीं हो सकता है।

विशेष - मिथ्यात्व से - प्रथमोपशम, क्षायोपशमिक एवं सम्यग्मिथ्यात्व हो सकता है।
सासादन से - मिथ्यात्व ही होता है।
सम्यग्मिथ्यात्व - क्षायोपशमिक एवं मिथ्यात्व।

५३.प्रश्न : उपशम सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा क्षायिक सम्यग्दृष्टि के कितने ध्यान ज्यादा होते हैं?

उत्तर : उपशम सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा क्षायिक सम्यग्दृष्टि के दो ध्यान ज्यादा होते हैं - सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती, व्युपरतक्रियानिवृत्ति।

५४.प्रश्न : कौनसा सम्यक्त्व सम्यग्दृष्टि को ही होता है?

उत्तर : केवल क्षायिक सम्यक्त्व सम्यग्दृष्टि को ही होता है, क्योंकि क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि को ही होती है।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि को ही होता है।

सासादन सम्यक्त्व भी सम्यग्दृष्टि को ही होता है, क्योंकि उपशम सम्यग्दृष्टि ही अनन्तानुबन्धी में से किसी एक का उदय आने पर सासादन सम्यग्दृष्टि होता है। **(गो.जी.जी.)**

मिथ्यात्व भी सम्यक्त्व मार्गणा का भेद है। वह भी सम्यग्दृष्टि को हो सकता है क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि को छोड़कर शेष सभी सम्यक्त्व वाले मिथ्यात्व में आ सकते हैं।

५५.प्रश्न : कौन-कौन से सम्यक्त्व में संज्ञा वाले जीव ही होते हैं?

उत्तर : चार सम्यक्त्वों में संज्ञा वाले जीव ही होते हैं -
क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, सासादन सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्व।
प्रथमोपशम सम्यक्त्व में भी संज्ञा वाले जीव ही होते हैं।

५६.प्रश्न : कितने गुणस्थानों में संज्ञी जीव भव्य ही होते हैं?

उत्तर : ग्यारह गुणस्थानों में संज्ञी जीव भव्य ही होते हैं -
दूसरे गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक।

५७.प्रश्न : सासादन गुणस्थान विपरीत अभिप्राय से दूषित है अत: उसके सम्यग्दृष्टिपना कैसे बन सकता है?

उत्तर : नहीं, क्योंकि पहले वह सम्यग्दृष्टि था इसलिए भूतपूर्व नय की अपेक्षा उसकी सम्यग्दृष्टि संज्ञा बन जाती है। **(ध. १/१६९)**

५८.प्रश्न : छठे गुणस्थान में आर्त्तध्यान किस कारण होते हैं?

उत्तर : कभी-कभी ये आर्त्त परिणाम पूर्व कर्म की विचित्रता से मुनियों के भी हो जाते हैं। **(ज्ञा. २६/४१-४२)**

बकुश और प्रतिसेवना कुशील मुनि के उपकरणों के प्रति आसक्ति भाव की संभावना होने से कदाचित् आर्त्तध्यान सम्भव है। **(सर्वा. ९/४६२)**

५९.प्रश्न : सबसे ज्यादा गुणस्थान किस ध्यान में होते हैं?

उत्तर : ३ आर्त्तध्यानों में सबसे ज्यादा अर्थात् ६ गुणस्थान होते हैं - पहले से छठा।

अथवा सामान्य से शुक्ल ध्यान में सबसे ज्यादा अर्थात् ७ गुणस्थान होते हैं - ८ वें से चौदहवाँ।

६०.प्रश्न : किस गुणस्थान में सबसे ज्यादा ध्यान होते हैं?

उत्तर : पाँचवें गुणस्थान में सबसे ज्यादा ध्यान अर्थात् ११ ध्यान होते हैं - ४ आर्त्तध्यान ४ रौद्रध्यान ३ धर्म्यध्यान। संस्थानविचय धर्म्यध्यान नहीं है।

६१.प्रश्न : मिथ्यादृष्टि के धर्म्यध्यान क्यों नहीं होता है?

उत्तर : जो पुरुष साक्षात् रत्नत्रय को प्राप्त न होकर ध्यान करना चाहता है, वह मूर्ख आकाश के फूलों से वन्ध्यापुत्र के लिए सेहरा बनाना चाहता है। **(ज्ञा. ६/४)** दृष्टि की विकलता से वस्तुसमूह को अपनी इच्छानुसार ग्रहण करने वाले मिथ्यादृष्टियों के ध्यान की सिद्धि स्वप्न में भी नहीं होती है। सिद्धान्त में ध्यानमात्र मिथ्यादृष्टियों के ही निषेध नहीं किया है, किन्तु जो जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा से प्रतिकूल है तथा जिनका चित्त चलित है और जैन साधु कहाते हैं उनके भी ध्यान का निषेध किया जाता है, क्योंकि उनके ध्यान की सिद्धि नहीं होती है। **(ज्ञा. ४/१८,३०)**

जो प्रमाण व नय के द्वारा वस्तु का निश्चय करके उसे नहीं जानता, वह ध्यान की भावना के द्वारा भी आराधक नहीं हो सकता। ऐसा नियम है। **(न.च.वृ. १७९ के आधार)**

६२.प्रश्न : कौन-कौन से गुणस्थान में केवल एक ध्यान होता है?

उत्तर : पाँच गुणस्थानों में केवल एक ही ध्यान होता है -

आठवें, नवमें, दसवें में - पृथक्त्ववितर्कवीचार शुक्लध्यान
१३ वें में - सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती शुक्लध्यान
१४ वें में - व्युपरतक्रियानिवृत्ति शुक्लध्यान

नोट - जो आचार्य ग्यारहवें में दूसरा शुक्लध्यान नहीं मानते हैं उनकी अपेक्षा ग्यारहवें गुणस्थान में भी पहला शुक्लध्यान ही होता है।

६३.प्रश्न : क्षपणा और विसंयोजना में क्या अन्तर है?

उत्तर : अनन्तानुबन्धी के स्कन्धों को अन्य प्रकृति रूप से परिणमाने को **विसंयोजना** कहते हैं। जिन कर्मों की क्षपणा होती है उनकी पुन: उत्पत्ति नहीं होती, किन्तु अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना करने के बाद सम्यग्दृष्टि यदि मिथ्यात्व को प्राप्त होता है तो प्रथम समय में ही चारित्र मोहनीय कर्म के स्कन्ध अनन्तानुबन्धी रूप से परिणत होते हैं।

६४.प्रश्न : पर्याप्ति और प्राण में क्या अन्तर है?

उत्तर : पर्याप्ति और प्राण में अन्तर -

(१) इन्द्रियादि में विद्यमान जीवन के कारणपने की अपेक्षा न करके इन्द्रियादि रूप शक्ति की पूर्णता को पर्याप्ति कहते हैं और जो जीवन के कारण हैं उन्हें प्राण कहते हैं। **(ध.१/२५९-६०)**

(२) पर्याप्ति और प्राण में कारण और कार्य के भेद से भी भेद है, पर्याप्तियाँ कारण हैं और प्राण कार्य हैं।

तथा पर्याप्तियों में आयु का सद्भाव नहीं होने से और मनोबल, वचनबल तथा श्वासोच्छ्वास इन प्राणों के अपर्याप्त अवस्था में नहीं पाये जाने से भी पर्याप्ति और प्राणों में भेद समझना चाहिए। **(ध.१/२५९)**

(३) इनमें हिमवान और विंध्याचल के समान भेद पाया जाता है। आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासो-च्छ्वास भाषा और मन रूप शक्तियों की पूर्णता के कारण को पर्याप्ति कहते हैं और जिनके द्वारा जीवन संज्ञा को प्राप्त होता है उन्हें प्राण कहते हैं। **(ध.१/२५८)**

६५.प्रश्न : सबसे कम प्राण भव्य के होते हैं या अभव्य के?

उत्तर : सबसे कम प्राण भव्य जीवों के होते हैं - १ आयु प्राण, चौदहवें गुणस्थान की अपेक्षा।

६६.प्रश्न : प्राणों के कौन-कौन से स्थान दो गतियों में पाये जाते हैं?

उत्तर : प्राणों के केवल दो स्थान दो गतियों में पाये जाते हैं - तीन एवं चार का।
ये दो स्थान मनुष्य एवं तिर्यञ्च दोनों गतियों में पाये जाते हैं।
मनुष्यों में - सयोग केवली भगवान के।
तिर्यञ्चों में - एकेन्द्रिय के तथा ४ प्राण का स्थान द्वीन्द्रिय के भी होता है।

६७.प्रश्न : कौनसी संज्ञा किस कषाय के उदय से होती है?

उत्तर : आहार संज्ञा - मान एवं लोभ के उदय से।
भय संज्ञा - भय नोकषाय के उदय से द्वेष रूप होने से क्रोध एवं मान में गर्भित है।
मैथुनसंज्ञा - वेदकर्म की उदीरणा से।
परिग्रह संज्ञा - लोभ की उदीरणा से **(गो.जी.)**

६८.प्रश्न : कितने उपयोगों में ९ योग ही होते हैं?

उत्तर : केवल एक उपयोग में ही ९ योग होते हैं - मन:पर्यय ज्ञानोपयोग
इसमें ४ मनोयोग, ४ वचनयोग एवं १ औदारिककाययोग होता है।

६९. प्रश्न : कितने उपयोगों में १४ लाख जातियाँ ही होती हैं?

उत्तर : तीन उपयोगों में १४ लाख जातियाँ ही होती हैं -
मन:पर्ययज्ञानोपयोग, केवलज्ञानोपयोग एवं केवलदर्शनोपयोग।
इनमें मनुष्यसम्बन्धी १४ लाख जातियाँ ही होती हैं।
नोट - सर्वावधिज्ञान, परमावधिज्ञान में भी १४ लाख जातियाँ ही होती हैं लेकिन उनका उपयोगों में अलग से ग्रहण नहीं किया है।

७०. प्रश्न : सबसे ज्यादा ध्यान जिस योग में होते हैं उस योग वाले के कम-से-कम कितने प्राण हो सकते हैं?

उत्तर : सबसे ज्यादा ध्यान औदारिक काययोग में होते हैं, उस औदारिक काययोग में कम-से-कम दो प्राण हो सकते हैं - कायबल और आयु।
ये दो प्राण केवली भगवान की अपेक्षा कहे गये हैं।

७१. प्रश्न : कितने ध्यानों में केवल मनुष्य सम्बन्धी जातियाँ होती हैं?

उत्तर : पाँच ध्यानों में केवल मनुष्य सम्बन्धी जातियाँ होती हैं -
संस्थानविचय धर्मध्यान, पृथक्त्ववितर्कवीचार, एकत्ववितर्कअवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती तथा व्युपरतक्रियानिवृत्ति शुक्लध्यान।

७२. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय संयमी एवं असंयमी दोनों के होते हैं?

उत्तर : आस्रव के २८ प्रत्यय संयमी एवं असंयमी दोनों के होते हैं -
१७ कषाय - ४ प्रत्याख्यानावरण ४ संज्वलन तथा ९ नोकषाय।
११ योग - ४ मनोयोग ४ वचनयोग, औदारिकद्विक एवं कार्मण काययोग।
४ प्रत्याख्यानावरण कषाय संयमासंयम में होने के कारण ग्रहण की गई हैं।

७३. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय केवल आहारक अवस्था में ही पाये जाते हैं?

उत्तर : आस्रव के १४ प्रत्यय केवल आहारक अवस्था में ही पाये जाते हैं -
१४ योग - ४ म. ४ व. कार्मणकाययोग बिना ६ काययोग।

७४. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय चारों गतियों में होते हैं?

उत्तर : आस्रव के ४८ प्रत्यय चारों गतियों में होते हैं -
५ मिथ्यात्व १२ अविरति,
२२ कषाय - (३ वेद बिना)
९ योग - ४ म. ४ व. १ कार्मण काययोग

७५. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्यय केवल पंचेन्द्रिय जीवों के ही होते हैं?

उत्तर : आस्रव के १५ प्रत्यय केवल पंचेन्द्रिय जीवों के ही होते हैं।
२ अविरति - कर्ण इन्द्रिय एवं मन सम्बन्धी।
२ कषाय - स्त्रीवेद एवं पुरुषवेद।

११ योग - ४ म. ३ वचनयोग (अनुभयवचन बिना) ४ काययोग (वैक्रियिकद्विक एवं आहारकद्विक)।

७६. प्रश्न : आस्रव के कितने प्रत्ययों में शुक्ल ध्यान नहीं होता है?

उत्तर : आस्रव के ३५ प्रत्ययों में शुक्ल ध्यान नहीं होता है -
५ मिथ्यात्व, १२ अविरति,
१२ कषाय - ४ अनन्तानुबन्धी ४ अप्रत्या. ४ प्रत्याख्या.।
६ योग - वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक, औदारिकमिश्र तथा कार्मण काययोग।

७७. प्रश्न : आस्रव के प्रत्ययों में कषायों का विवेचन किस प्रकार करना चाहिए?

उत्तर : आस्रव के प्रत्ययों में कषायों का विवेचन -

(१) जहाँ ५५ प्रत्यय कहे गये हैं वहाँ २५ कषायों को ग्रहण किया गया अर्थात् अनन्तानुबन्धी क्रोध का वर्णन करते समय भी २५ कषायों को ग्रहण किया गया है, यहाँ आहारकद्विक नहीं है।

(२) जहाँ ४५ प्रत्यय कहे गये हैं वहाँ विवक्षित कषाय में से अर्थात् जैसे क्रोध में लगाना है तो मात्र चारों प्रकार के क्रोध और ९ नोकषायोंको ही ग्रहण करके मात्र १३ कषायों का ग्रहण किया है।

(३) जहाँ ४० प्रत्यय कहे गये हैं वहाँ विवक्षित कषाय में मात्र अनन्तानुबन्धी क्रोध है तो उसका ही स्वकीय एक क्रोध तथा ९ नोकषायों को ही ग्रहण करके १० कषायों को ही ग्रहण किया गया है।

७८. प्रश्न : ७६ लाख जातियाँ कौनसे योग में होती हैं?

उत्तर : ७६ लाख जातियाँ केवल दो योगों में होती हैं -
औदारिक एवं औदारिकमिश्र काययोग।
इनमें देव नारकी सम्बन्धी आठ लाख जातियाँ नहीं होती हैं।

७९. प्रश्न : कितनी जातियों में सैनी एवं असैनी दोनों जीव होते हैं?

उत्तर : ४ लाख जातियों में सैनी एवं असैनी दोनों जीव होते हैं -
पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च सम्बन्धी जातियाँ।

८०. प्रश्न : केवली भगवान संज्ञी-असंज्ञी दोनों व्यपदेशों से रहित है इसलिए उन्हें अतीत जीवसमास वाला मानना चाहिए?

उत्तर : नहीं, क्योंकि द्रव्य मन के अस्तित्व और भाव मनोगत पूर्वगति अर्थात् भूतपूर्व नय के आश्रय से सयोगी केवली के संज्ञीपना माना गया है। **अथवा** पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, प्रत्येकशरीर वनस्पति कायिक, साधारण शरीर वनस्पति कायिक, जीवों के पर्याप्त और अपर्याप्त सम्बन्धी चौदह जीवसमास में से सात, अपर्याप्त

जीवसमासों में कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात सयोगकेवली का सत्त्व माना जाने से उन्हें अतीत जीवसमास वाला नहीं कहा जा सकता है। **(ध.२/६५३)**

८१. प्रश्न : चींटी आदि भी अपने प्रतिकूल भोजन-पानी आदि से अपना रास्ता मोड़ लेती है अत: उसे असंज्ञी कैसे कह सकते हैं?

उत्तर : प्रतिकूल सामग्रियों से अपने को बचाना मात्र मन का कार्य ही नहीं है, यह कार्य तो इन्द्रियों के माध्यम से भी हो जाता है, क्योंकि इन्द्रियों के इष्ट विषयों में जीव की प्रवृत्ति बिना किसी प्रयास के देखी जाती है। मन का कार्य तो हेय-उपादेय, शिक्षा, उपदेश को ग्रहणकरना, बुलाने पर आजाना, हित-अहित को समझना आदि है। यह कार्य चींटी आदि असैनी पर्यन्त जीवों के नहीं देखे जाते हैं इसलिए ये जीव असंज्ञी ही कहे गये हैं।

चींटी आदि गंध के विषय में जाति स्वभाव से ही आहारादि रूप संज्ञा में चतुर होती है, परंतु अन्यत्र कारण कार्य व्याप्ति रूप ज्ञान के विषय में चतुर नहीं होती, (इसलिए उन्हें असंज्ञी ही जानना चाहिए) इसी प्रकार अन्य भी असंज्ञी जीवों के जानना। **(पं.का.ता. ११७)**

दूसरी बात, जिनेन्द्र भगवान ने एकेन्द्रिय से लेकर असैनी पञ्चेन्द्रिय पर्यन्त जीवों को असंज्ञी ही कहा है इसलिए प्रतिकूल सामग्री के मिलने पर रास्ता मोड़ लेने वाली चींटी आदि भी असंज्ञी ही है।

८२. प्रश्न : ४० लाख करोड़ कुल कितने सम्यक्त्व में होते हैं?

उत्तर : ४० लाख करोड़ कुल केवल एक सम्यक्त्व में होते हैं-द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में। २६ लाख करोड़ देव सम्बन्धी तथा १४ लाख करोड़ मनुष्य सम्बन्धी।

८३. प्रश्न : म्लेच्छ खण्डों के जीवों की क्या विशेषताएँ हैं?

उत्तर : (१) म्लेच्छ खण्डों में सम्मूर्च्छन मनुष्य नहीं होते हैं अर्थात् जिस प्रकार आर्यखण्ड की स्त्रियों की योनि आदि में सम्मूर्च्छन मनुष्य उत्पन्न होते हैं ऐसे वहाँ की स्त्रियों के शरीर में नहीं होते हैं।

(२) म्लेच्छ खण्डों में नपुंसक वेद नहीं होता है।

(३) म्लेच्छ खण्डों में एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है।

(४) म्लेच्छ खण्ड के मनुष्य यहाँ आकर देशव्रती तथा महाव्रती भी बन सकते हैं।

(५) म्लेच्छ खण्डों में आत्मकल्याण अर्थात् धर्म सम्बन्धी कुछ भी कार्य नहीं होता है।

नोट - यहाँ अन्तरद्वीपज म्लेच्छों का ग्रहण नहीं करना चाहिए।

८४. प्रश्न : म्लेच्छ खण्ड कहाँ एवं कितने होते हैं?

उत्तर : म्लेच्छ खण्ड भरत, ऐरावत तथा विदेह क्षेत्र में स्थित हैं। इन क्षेत्रों में ८५० म्लेच्छ खण्ड हैं। ५ भरत क्षेत्र, ५ ऐरावत क्षेत्र तथा ५ विदेह क्षेत्र की १६० नगरियों में अर्थात् एक-एक विदेह क्षेत्र में ३२-३२ नगरियाँ हैं। प्रत्येक में ५-५ म्लेच्छ खण्ड हैं अत: ५+५+१६० = १७० × ५ = ८५० म्लेच्छ खण्ड **(का.अ. १३२ टी.)**।

८५.प्रश्न : किस गुणस्थान में किस लेश्या की अपेक्षा ९ योग होते हैं?

उत्तर :

गुणस्थान	**लेश्या**
५ वाँ ७ वाँ	पीत, पद्‌म, शुक्ल
८ वें से १२ वें तक	शुक्ल

८६.प्रश्न : लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों से सहित क्षेत्र ज्यादा हैं या रहित क्षेत्र?

उत्तर : लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों से रहित क्षेत्र ज्यादा हैं, क्योंकि मात्र १७० आर्य खण्डों में ही लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य होते हैं म्लेच्छ खण्डों में नहीं। कहा भी है -
म्लेच्छ खण्डों में लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य नहीं होते हैं।

८७.प्रश्न : जितने गुणस्थान कुज्ञानों में होते हैं उतने गुणस्थान और किस ज्ञान में हो सकते हैं?

उत्तर : ३ कुज्ञानों में पहला एवं दूसरा, दो गुणस्थान होते हैं। इतने ही अर्थात् दो गुणस्थान (तेरहवाँ एवं चौदहवाँ) केवलज्ञान में भी होते हैं।

८८.प्रश्न : कितने योगों में ८ ज्ञानोपयोग होते हैं?

उत्तर : ५ योगों में ८ ज्ञानोपयोग होते हैं -
२ मनोयोग - सत्य मनोयोग एवं अनुभय मनोयोग।
२ वचनयोग - सत्य वचनयोग एवं अनुभय वचनयोग।
१ काययोग - औदारिक काययोग।

८९.प्रश्न : दो उपयोग वालों के कितने गुणस्थान होते हैं?

उत्तर : दो उपयोग वालों के दो गुणस्थान होते हैं तेरहवाँ और चौदहवाँ।

९०.प्रश्न : गति मार्गणा में सिद्ध गति का ग्रहण क्यों नहीं किया गया है?

उत्तर : सांसारिक गति की अपेक्षा गति मार्गणा चार प्रकार की कही गई है मोक्ष अर्थात् सिद्धगति इन गतियों की अपेक्षा विलक्षण होने के कारण यहाँ (गतिमार्गणा में) उसका ग्रहण नहीं किया गया है। **(गो.जी.जी. १५२)**

९१.प्रश्न : कौनसी संज्ञा किस गुणस्थान तक होती है ?

उत्तर : संज्ञाओं में गुणस्थान

संज्ञा	**गुणस्थान**
आहार संज्ञा	पहले से छठे तक
भय संज्ञा	पहले से आठवें तक
मैथुन संज्ञा	पहले से नौवें तक
परिग्रह संज्ञा	पहले से दसवें तक **(गो. जी. १३९ के आधार से)**

❋ ❋ ❋

भेदात्मक शब्द

❁ ❁ ❁